हिन्दी अनुसंधान ग्रन्थमाला—२

अक्षय रस

[गुजरात के महान् संतकवि अखा की हिन्दी—वाणी]

सम्पादक
कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह
आचार्य तथा अध्यक्ष,
हिन्दी विभाग
महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा ।



महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा ।

प्रकाशक—
हिन्दी विभाग,
महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय,
बड़ौदा।

प्रथम संस्करण सन १९६२ ई०
प्रति संख्या ५००
मूल्य पंद्रह रुपया

प्राप्ति स्थान
युनिवर्सिटी पुस्तक विक्रय विभाग
महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी प्रेस
राजमहल दरवाजे के पास राजमहल रोड
बड़ौदा।

श्री व्यवस्थापक गंगा फाइन आर्ट प्रेस २६ माडल हाउस लखनऊ, ने
पृष्ठ १-२७६ और भूमिका पृ १ से ८० तक श्री अरविंद म पालेकर
जागृति प्रि. प्रेस रावपुरा बड़ौदा ने युनिवर्सिटी प्रेसकी ओरसे
मुद्रित किया। प्रकाशक: कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह, आचार्य एवं
अध्यक्ष हिन्दी विभाग, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय,
बड़ौदा।

विषय सूची

निवेदन

कई शताब्दियों के पूर्ण विस्मरण के पश्चात् अखा को हिन्दी के संत कवियों के बीच प्रतिष्ठित करते हुए मुझे अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है। अखा गुजराती काव्य के अन्यतम आधार हैं, वे गुजरात के सशक्त रसस्रोत माने जाते हैं। गुजरात में उनकी रचना विद्वज्जन एवं जनसाधारण दोनों में समानरूप से समादृत है। गुजरात में अखाजी की रचनाओं की असाधारण लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि जब हिन्दी प्रदेश में अखा की हिन्दी रचनाओं के अस्तित्व की चेतना भी किसी को नहीं थी, उन दिनों भी गुजरात में उनकी ये रचनायें बड़े चाव और मनोयोग के साथ पढ़ी और सुनी जाती थीं। अखा की वाणी के गुजराती ग्रन्थों में उनकी कई हिंदी रचनाओं का संग्रह मिलता है। उनसे सहारा मुझे उनकी हिंदी रचनाओं के अन्वेषण, संकलन और संपादन की प्रेरणा मिली। अखा के निम्नलिखित हिंदी ग्रंथ उनके गुजराती के 'अखानी वाणी' संग्रह से लिये गये हैं।—

१ ब्रह्मलीला।
२ अखाजी के पद।
३ संतप्रिया (पचीसी प्रकरण)

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित पाँच ग्रंथ 'अप्रसिद्ध अक्षयवाणी अर्थात् 'अखाकृत काव्यो भाग १' से लिए गए हैं। इस ग्रंथ का संग्रह कहानवा के आश्रम के श्री मगनरामजी महाराज ने किया है और इसके टीकाकार तथा संशोधक प्रसिद्ध संत श्री सागर महाराज हैं—

१ एकलक्ष रमणी।
२ कुंडलिया।
३ ककरी।
४ झूलना।
५ भजन।

इन ग्रंथों की हस्तलिखित प्रतियाँ मुझे प्राप्त नहीं हो पाई हैं इसलिए उनमें पाठभेद नहीं दिये जा सके। [illegible] लिपि के दोषों के कारण जो शब्द या अक्षर अशुद्ध अथवा सार्थक नहीं प्रतीत हुए, उनमें कहीं-कहीं सुधार अवश्य किया गया है।

अखाजी की साखियों की कुछ पुरानी महत्त्वपूर्ण हस्तलिखित प्रतियाँ मुझ दो स्थानों पर देखने को मिल गईं जिनकी मैंने प्रतिलिपियाँ करवाईं और उन्हीं के आधार पर साखी भाग का सपादन किया गया। जो हस्तलिखित प्रतियाँ मुझे प्राप्त हुई, उनमें तीन फार्बस पुस्तकालय बम्बई से मिलीं। उक्त पुस्तकालय में इन प्रतियों की संख्या २६७ ६६१ तथा १७० है। इन प्रतियों के अंत में लिपि का नाम और लिपिकाल नहीं दिया गया है। ग्रंथों में थोड़े क्रम पद हैं, थोड़-थोड़ अंश त्रुटित भी है। सभी प्रतियों में साखियों का अंगक्रम एक जैसा नहीं है। एक ही अंग की साखियाँ सभी जगह नहीं हैं, कुछ दूसरे दूसरे अंगों में भी संकलित हो गई हैं। यह भी है कि उसी अंग की साखियाँ दूसरी प्रतिलिपि में संख्या में भी अधिक हैं, जैसे हस्तलिखित प्रति सं० १७० में दो 'शोधन को अंग' दिये गए हैं, एक में १२ साखियाँ हैं और दूसरे में केवल ५। इसी प्रकार गुजरात विद्यासभा अहमदाबाद में भी मुझे साखियों की दो प्रतियाँ प्राप्त हुईं। इनमें से एक प्रति तो पूरी है और दूसरी खंडित। ये दोनों प्रतियाँ गुजरात विद्यासभा के हस्तलिखित ग्रंथों के २२११ संख्यावाले बस्त में मिली हैं। किसी में भी लिपिक ने लिपिकाल नहीं दिया है। अतएव मुद्रित एवं सभी हस्तलिखित प्रतियों में जो साखियाँ मुझे एक जैसी मिलीं मैंने उनको यथावत् ग्रहण कर लिया है और उनमें किसी प्रकार का पाठभेद नहीं दिया है। शेष साखियों में मैंने पुरानी प्रतीत होनेवाली प्रति को ही आधार माना है। यद्यपि लिपिकाल का उल्लेख मुझे किसी प्रति में नहीं मिला पर मुझे फार्बस की प्रतियाँ अधिक प्राचीन लगीं।

सामीभाव के सपादन में जिस तीसरी महत्त्वपूर्ण हस्तप्रति का उपयोग किया गया है वह सागर महाराज के हाथ की लिखी हुई है। यह मुझे सागर महाराज के पुत्र डॉ० योगेन्द्र जयदास त्रिपाठी महोदय से प्राप्त हुई। सागर महाराज की प्रति को ही आधार मानकर अखा के प्रसिद्ध अभ्यासी डॉ० योगेन्द्रलाल ठक्कर ने 'अखाजीनी साखियो' नाम का गुजराती-हिंदी साखी संग्रह प्रकाशित करवाया है। उसको मैंने ध्यान से देखा। इसमें और सागर महाराज की हस्तप्रति में कोई विशेष अंतर न होने के कारण मैंने सागर महाराज की हस्तलिखित प्रति से ही पाठभेद लिए हैं। पाठभेदों के संकेत इस प्रकार हैं—

१ फार्बस लायब्रेरी बम्बई की प्रति—(फ)
२ गुजरात विद्यासभा प्रति —(गु)

३ गुजरात विद्यासभा संचित प्रति —(गु. वि.)
४ सागर महाराज की हस्तप्रति —(सा)
५. अखाजी साखियां —(अ)

इस संग्रह में अखाजी का 'संतप्रिया' नाम का एक महत्वपूर्ण हिंदी ग्रंथ भी संकलित है। यह ग्रंथ 'अखाजीनी वाणी' नाम से गुजराती समाज में प्रकाशित है किन्तु मुझे 'संतप्रिया' की एक पुरानी प्रति फार्बस लायब्रेरी में मिली जिसको देखते हुए 'अखानी वाणी' में संकलित 'संतप्रिया' अपूर्ण है। 'अखानी वाणी' में प्रकाशित 'संतप्रिया' में केवल 'सर्वांगी प्रकरण' के १०७ छंद हैं, फार्बस वाली प्रति में कुल मिलाकर ११८ छंद हैं। इसका कारण यह है कि इसमें 'सर्वांगी प्रकरण' के अतिरिक्त दूसरा 'अन्वय व्यतिरेक प्रकरण' भी है। 'संतप्रिया' का 'अन्वय व्यतिरेक प्रकरण' प्रस्तुत ग्रंथ में पहले-पहल प्रकाशित हो रहा है। फार्बस वाली प्रति को आधार बनाकर मैंने इस ग्रंथ में संकलित 'संतप्रिया' के १०८ छंदों तक 'अखानी वाणी' से मिलाकर पाठभेद दिये हैं। जिस समय इस संग्रह का 'संतप्रिया' वाला भाग छप चुका था उन्हीं दिनों बड़ौदा विश्वविद्यालय के गुजराती विभाग के विद्वान् प्राध्यापक डॉ. योगीन्द्र जयचन्द्र त्रिपाठी की 'संतप्रिया' की एक ऐसी प्रति भी प्राप्त हुई जिसमें सर्वांगी प्रकरण के साथ 'अन्वय व्यतिरेक' प्रकरण भी है। डॉ. त्रिपाठी की 'संतप्रिया' की प्रति में कुल ११५ छंद हैं पहला 'सर्वांगी प्रकरण' १०६ छंदों तक चलता है और दूसरे 'अन्वय व्यतिरेक प्रकरण' में कुल ११ छंद हैं। यह छंद संख्या १०७ से आरम्भ होकर ११५ पर समाप्त होता है। यह प्रति बम्बई की फार्बस लायब्रेरी वाली प्रति की अपेक्षा अधिक अच्छी हालत में है, लिपि भी साफ और सुन्दर है। 'संतप्रिया' छप जाने के पश्चात् डॉ. त्रिपाठी की यह प्रति देखने को मिली इसलिए पाठभेद की दृष्टि से उसका उपयोग नहीं किया जा सका। अगले संस्करण में इस सामग्री का समुचित उपयोग अवश्य किया जायगा। जहाँ तक मेरी जानकारी है [illegible]' नाम का अखाजी का हिंदी ग्रंथ भी इस संग्रह में पहले-पहल प्रकाशित हो रहा है। साधन एवं समय की सीमाओं के कारण अखाजी के संबंध में हमारा काम बहुत-कुछ वैसा ही प्रारम्भिक माना जा सकता है जैसा हमारे पुण्यश्लोक गुरुदेव आचार्य श्यामसुंदरदास जी ने कबीर ग्रंथावली को प्रकाशित करके कबीर के संबंध में किया था। जिस प्रकार 'कबीर ग्रंथावली' ने कबीर के अध्ययन के अनेकानेक मार्ग उद्घाटित

किये उसी प्रकार मुझे विश्वास है अखा की कृतियों का यह हिंदी संग्रह भी
शोधकर्ताओं और अध्येताओं के लिए गंभीर अध्ययन की पुष्कल सामग्री प्रस्तुत
करेगा। मैंने अपनी पुस्तक की प्रस्तावना में अखा के अध्ययन की महत्त्वपूर्ण
समस्याओं का विवरण दिया है। अखा की वाणी का यह संग्रह हिंदी साहित्य
की श्रीवृद्धि करेगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

मैं गुजराती के उन श्रेष्ठ विद्वानों का हृदय से आभार स्वीकार करता
हूँ जिनके ग्रंथों को पढ़कर मैंने अखा के महत्त्व की झलक पायी है। इनमें सर्व
म मैं गुजरात के यशस्वी एवं सौम्यशील कवि श्री उमाशंकर जोशी जी का
हृदय से आभार मानता हूँ। हमारे मित्र डा. योगीन्द्र जयनाथ त्रिपाठी जी
ने अपनी सब सामग्री सुलभ बनाकर जिस सुखभाव और सौहार्द से मेरी
समय समय पर सहायता की है उसके प्रति शब्दों द्वारा कृतज्ञता-ज्ञापन
करने में मैं समर्थ नहीं। अखा के साहित्य के मर्म को समझने के लिए मैंने
गुजराती के जिन विद्वानों की कृतियों का स्वाध्याय किया है, उन सब का भी
मैं हृदय से आभारी हूँ। मैंने प्रस्तावना में उनके नामों का यथास्थान उल्लेख
किया है।

अंत में अपने सहयोगी डा. मदनगोपाल गुप्त के प्रति आभार प्रकट करना
भी अपना परम कर्तव्य समझता हूँ। यदि मेली से लगाकर अंतिम प्रूफ तक
के संशोधन में उन्होंने दिनरात श्रम न किया होता तो इस ग्रन्थ के मुद्रित
होकर प्रकाश में आने में अभी कम से कम एक वर्ष और लग जाता। मैं अपने
उन सब बंधुओं और सहयोगियों का भी हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने इस
कार्य में मेरी छोटी-बड़ी सभी प्रकार की सहायता की और यथावसर हार्दिक
सहयोग किया।

हमारी शोधयोजना की सफलता हमारे उपकुलपति डा. ज्योतीन्द्र मेहता
तथा उपकुलपति डॉ॰ मधुरभाई पटेल के उदार सहयोग और संरक्षण
पर अवलंबित रही है। मैं उनका हृदयसे आभारी हूँ।

—कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह

प्रस्तावना

(१)

व्यापारिक दृष्टिकोण से देखने पर हमें गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी ऊपर से समृद्धि का युग[1] जान पड़ती है। इसमें संदेह नहीं कि सूरत और अहमदाबाद जैसे व्यापारिक केन्द्रों में धन-धान्य का बाहुल्य था। विदेशी पर्यटकों एवं भारतीय इतिहासकारों ने इन नगरों की व्यापारिक समृद्धि की भूरि भूरि प्रशंसा की है।

परंतु सांस्कृतिक दृष्टि से देखने पर हमें स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि भारत के अन्यान्य प्रदेशों के समान ही गुजरात का भी दिवाला निकल चुका था।[2] जिस भौतिक उन्नति के आभास से इतिहासकार गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी को शांति का युग मानते हैं, उसकी जड़ें खोखली थीं और उनमें दीमक लग चुकी थी। उपर्युक्त तथाकथित समृद्धि के कारण समाज में एक जड़ता, अलस असमर्थता तथा नैतिक एवं सांस्कृतिक दरिद्रता छाती जा रही थी। समाज की विपन्नता, शून्यता एवं व्यथा पर इतिहासकार की दृष्टि नहीं पड़ी। जीवन में व्याप्त संदेह, भय, क्षोभ, विषाद और निर्वेद की अवस्था पर अंतर्द्रष्टा संतों ने ही विचार किया, इतिहासकारों ने नहीं।

---

1 As a province of the Mogal Empire it (Gujrat) settled existence and grew prosperous once again. The people succeeded in confining political influences to limited spheres, and stiffened social barriers so as to secure contentment and happiness within narrow grooves (page 173, Gujrat and its literature by K. M. Munshi)

2 During this period men were being driven into progressively narrowing communities social barriers were stiffened, the individual was sacrificed to the group, untouchability came into existence K. M. Munshi—Gujrat and its literature page 147

किये। इसी प्रकार मुझे विश्वास है अखा की कृतियों का यह हिंदी संग्रह भी शोधकर्ताओं और अध्येताओं के लिए गंभीर अध्ययन की पुष्कल सामग्री प्रस्तुत करेगा। मैंने अस्सी पृष्ठों की प्रस्तावना में अखा के अध्ययन की महत्त्वपूर्ण समस्याओं का विवेचन किया है। अखा की वाणी का यह संग्रह हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि करेगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

मैं गुजराती के उन अनेक विद्वानों का हृदय से आभार स्वीकार करता हूँ जिनके ग्रंथों को पढ़कर मैंने अखा के महत्त्व की झलक पायी है। इनमें सर्व प्र थम मैं गुजरात के यशस्वी एवं सौम्यशील कवि श्री उमाशंकर जोशी का हृदय से आभार मानता हूँ। हमारे मित्र डॉ. योगेन्द्र [illegible] त्रिपाठी जी ने अपनी सब सामग्री सुलभ बनाकर जिस मुक्तभाव और औदार्य से मेरी समय समय पर सहायता की है उसके प्रति शब्दों द्वारा कृतज्ञता ज्ञापन करने में मैं समर्थ नहीं। अखा के साहित्य के मर्म को समझने के लिए मैंने गुजराती के जिन विद्वानों की कृतियों का स्वाध्याय किया है, उन सब का भी मैं हृदय से आभारी हूँ। मैंने प्रस्तावना में उनके नामों का यथास्थान उल्लेख किया है।

अन्त में अपने सहयोगी डॉ. मदनगोपाल गुप्त के प्रति आभार प्रकट करना भी अपना परम कर्तव्य समझता हूँ। यदि प्रेस से लेकर अंतिम प्रूफ तक के संशोधन में उन्होंने दिनरात श्रम न किया होता तो इस ग्रन्थ के मुद्रित होकर प्रकाश में आने में अभी कम से कम एक वर्ष और लग जाता। मैं अपने उन सब बंधुओं और सहयोगियों का भी हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने इस कार्य में मेरी छोटी-बड़ी सभी प्रकार की सहायता की और यथावसर हार्दिक सहयोग किया।

हमारी शोधयोजना की सफलता हमारे उपकुलपति डॉ. ज्योतीन्द्र मेहता तथा प्र. उपकुलपति डा० मधुभाई पटेल के उदार सहयोग और संरक्षण पर अवलम्बित रही है। मैं उनका हृदयसे आभारी हूँ।

—कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह

प्रस्तावना

(१)

व्यापारिक दृष्टिकोण से देखने पर हमें गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी स्वर्ण से समृद्धि का युग[1] जान पड़ती है। इसमें संदेह नहीं कि सूरत और अहमदाबाद जैसे व्यापारिक केन्द्रों में धन-धान्य का बाहुल्य था। विदेशी पर्यटकों एवं भारतीय इतिहासकारों ने इन नगरों की व्यापारिक समृद्धि की भूरि भूरि प्रशंसा की है।

परंतु सांस्कृतिक दृष्टि से देखने पर हमें स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि भारत के अन्यान्य प्रदेशों के समान ही गुजरात का भी दिवाला निकल चुका था।[2] जिस भौतिक उन्नति के आभास से इतिहासकार गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी को शांति का युग मानते हैं, उसकी जड़ें खोखली थीं और उनमें दीमक लग चुकी थी। उपर्युक्त तथाकथित समृद्धि के कारण समाज में एक जड़ता, अलम असमर्थता तथा नैतिक एवं सांस्कृतिक दरिद्रता छाती जा रही थी। समाज की विपन्नता क्षुब्धता एवं व्यथा पर इतिहासकार की दृष्टि नहीं पड़ी। जीवन में व्याप्त संदेह भय, उद्वेग, विषाद और निर्वाण व्याकुलता पर आत्मद्रष्टा संतों ने ही विचार किया, इतिहासकारों ने नहीं।

---

1 As a province of the Mogal Empire it (Gujrat) settled existence and grew prosperous once again. The people succeeded in confining political influences to limited spheres, and stiffened social barriers so as to secure contentment and happiness within narrow grooves (page 173 Gujrat and its literature by K. M. Munshi)

2 During this period men were being driven into progressively narrowing communities, social barriers were stiffened, the individual was sacrificed to the group, untouchability came into existence K. M. Munshi—Gujrat and its literature page 147

किये उसी प्रकार मुझे विश्वास है अखा की कृतियों का यह हिंदी संग्रह भी शोधकर्ताओं और अध्येताओं के लिए गंभीर अध्ययन की पुष्कल सामग्री प्रस्तुत करेगा। मैंने अस्सी पृष्ठों की प्रस्तावना में अखा के अध्ययन की महत्त्वपूर्ण समस्याओं का विवरण दिया है। अखा की वाणी का यह संग्रह हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि करेगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

मैं गुजराती के उन मूर्धन्य विद्वानों का हृदय से आभार स्वीकार करता हूँ जिनके ग्रंथों को पढ़कर मैंने अखा के महत्त्व की समझ पायी है। इनमें सर्वप्रथम मैं गुजरात के यशस्वी एवं लोकप्रिय कवि श्री उमाशंकर जोशी जी का हृदय से आभार मानता हूँ। हमारे मित्र डॉ॰ योगीन्द्र जयनाथ त्रिपाठी जी ने अपनी सब सामग्री सुलभ बनाकर जिस सद्भाव और उदारता से मेरी समय समय पर सहायता की है उसके प्रति शब्दों द्वारा कृतज्ञता ज्ञापन करने में मैं समर्थ नहीं। अखा के साहित्य के मर्म को समझने के लिए मैंने गुजराती के जिन विद्वानों की कृतियों का स्वाध्याय किया है, उन सब का भी मैं हृदय से आभारी हूँ। मैंने प्रस्तावना में उनके नामों का यथास्थान उल्लेख किया है।

अंतमें अपने सहयोगी श्री मदनगोपाल गुप्त के प्रति आभार प्रकट करना भी अपना परम कर्तव्य समझता हूँ। यदि गैली से लेकर अंतिम प्रूफ तक के संशोधन में इन्होंने दिनरात श्रम न किया होता तो इस ग्रन्थ के मुद्रित होकर प्रकाश में आने में कम से कम एक वर्ष और लग जाता। मैं अपने उन सब बंधुओं और सहयोगियों का भी हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने इस कार्य में मेरी छोटी-बड़ी सभी प्रकार की सहायता की और यथावसर हार्दिक सहयोग किया।

हमारी शोधयोजना की सफलता हमारे उपकुलपति डॉ॰ ज्योतीन्द्र मेहता तथा भू. उपकुलपति डॉ॰ चतुरभाई पटेल के सतत सहयोग और संरक्षण पर अवलम्बित रही है। मैं उनका हृदयसे आभारी हूँ।

—कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह

प्रस्तावना

(१)

व्यापारिक दृष्टिकोण से देखने पर हमें गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी ऊपर से समृद्धि का युग¹ जान पड़ती है। इसमें संदेह नहीं कि सूरत और अहमदाबाद जैसे व्यापारिक केन्द्रों में धन-धान्य का बाहुल्य था। विदेशी पर्यटकों एवं भारतीय इतिहासकारों ने इन नगरों की व्यापारिक समृद्धि की भूरि भूरि प्रशंसा की है।

परंतु सांस्कृतिक दृष्टि से देखने पर हमें स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि भारत के अन्यान्य प्रदेशों के समान ही गुजरात का भी दिवाला निकल चुका था।² जिस भौतिक उन्नति के अभ्यास से इतिहासकार गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी को शांति का युग मानते हैं, उसकी जड़ें खोखली थीं और उनमें दीमक लग चुकी थी। उपर्युक्त तथाकथित समृद्धि के कारण समाज में एक कायरता, असम असमर्थता तथा नैतिक एवं सांस्कृतिक दरिद्रता छाती जा रही थी। समाज की विपन्नता क्षुब्धता एवं व्यथा पर इतिहासकार की दृष्टि नहीं पड़ी। जीवन में व्याप्त संदेह भय, उद्वेग, विषाद और निर्बोध अवस्था पर आत्मद्रष्टा संतों ने ही विचार किया, इतिहासकारों ने नहीं।

---

1 As a province of the Mogal Empire it (Gujrat) settled existence and grew prosperous once again. The people succeeded in confining poli tical influences to limited spheres, and stiffened social barriers so as to secure contentment and happiness within narrow grooves (page 173 Gujrat and its literature by K. M. Munshi)

2 During this period men were being driven into progressively narrowing communities, social barriers were stiffened the individual was sacrificed to the group untouchability came into existence K. M. Munshi—Gujrat and its literature page 147

लिये उसी प्रकार मुझे विश्वास है अखा की कृतियों का यह हिंदी संग्रह भी शोधकर्ताओं और अध्येताओं के लिए गंभीर अध्ययन की पुष्कल सामग्री प्रस्तुत करेगा। मैंने अस्सी पृष्ठों की प्रस्तावना में अखा के अध्ययन की महत्वपूर्ण समस्याओं का विवरण दिया है। अखा की वाणी का यह संग्रह हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि करेगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

मैं गुजराती के उन अनेक विद्वानों का हृदय से आभार स्वीकार करता हूँ जिनके ग्रंथों को पढ़कर मैंने अखा के महत्व की झलक पायी है। इनमें सर्व श्र म मैं गुजरात के यशस्वी एवं सौम्यशील कवि श्री उमाशंकर जोशी जी का हृदय से आभार मानता हूँ। हमारे मित्र डा. योगीन्द्र जगन्नाथ त्रिपाठी जी ने अपनी सब सामग्री सुलभ बनाकर जिस सुखभाव और सौहार्द से मेरी समय समय पर सहायता की है उसके प्रति शब्दों द्वारा कृतज्ञता-ज्ञापन करने में मैं समर्थ नहीं। अखा के साहित्य के मर्म को समझने के लिए मैंने गुजराती के जिन विद्वानों की कृतियों का स्वाध्याय किया है, उन सब का भी मैं हृदय से आभारी हूँ। मैंने प्रस्तावना में उनके नामों का यथास्थान उल्लेख किया है।

इसमें अपने सहयोगी डॉ. मदनगोपाल गुप्त के प्रति आभार प्रकट करना भी अपना परम कर्तव्य समझता हूँ। यदि तेजी से क्याकर अंतिम प्रूफ तक के संशोधन में उन्होंने दिनरात श्रम न किया होता तो इस ग्रन्थ के मुद्रित होकर प्रकाश में आने में अभी कम से कम एक वर्ष और लग जाता। मैं अपने उन सब बंधुओं और सहयोगियों का भी हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने इस कार्य में मेरी छोटी-बड़ी सभी प्रकार की सहायता की और यथावसर हार्दिक सहयोग किया।

हमारी शोधयोजना की सफलता हमारे उपकुलपति श्री ज्योतीन्द्र मेहता तथा श्र उपकुलपति श्री चतुरभाई पटेल के उदार सहयोग और संरक्षण पर अवलम्बित रही है। मैं उनका हृदयसे आभारी हूँ।

—कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह

प्रस्तावना

(१)

व्यापारिक दृष्टिकोण से देखने पर हमें गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी ऊपर से समृद्धि का युग[1] जान पड़ती है। इसमें संदेह नहीं कि सूरत और अहमदाबाद जैसे व्यापारिक केन्द्रों में धन-धान्य का बाहुल्य था। विदेशी पर्यटकों एवं भारतीय इतिहासकारों ने इन नगरों की व्यापारिक समृद्धि की भूरि भूरि प्रशंसा की है।

परंतु सांस्कृतिक दृष्टि से देखने पर हमें स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि भारत के अन्यान्य प्रदेशों के समान ही गुजरात का भी दिवाला निकल चुका था।[2] जिस भौतिक उन्नति के आधार से इतिहासकार गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी को शांति का युग मानते हैं, उसकी जड़ें खोखली थीं और उनमें लोनी लग चुकी थी। उपर्युक्त तथाकथित समृद्धि के कारण समाज में एक जड़ता, अक्षम असमर्थता तथा नैतिक एवं सांस्कृतिक दरिद्रता छाती जा रही थी। समाज की विषमता क्षुब्धता एवं व्यथा पर इतिहासकार की दृष्टि नहीं पड़ी। जीवन में व्याप्त संदेह भय, क्लेश विषाद और निर्वेद अवस्था पर लोकप्रिय सन्तों ने ही विचार किया, इतिहासकारों ने नहीं।

---

1 As a province of the Mogal Empire it (Gujrat) settled existence and grew prosperous once again. The people succeeded in confining poli tical influences to limited spheres, and stiffened social barriers so as to secure contentment and happiness within narrow grooves (page 173 Gujrat and its literature by K. M. Munshi)

2 During this period men were being driven into progressively narrowing communities, social barriers were stiffened the individual was sacri ficed to the group untouchability came into existence K. M Munshi—Gujrat and its literature page 147

किये उसी प्रकार मुझे विश्वास है अखा की कृतियों का यह हिंदी संग्रह भी शोधकर्ताओं और अध्येताओं के लिए गंभीर अध्ययन की पुष्कल सामग्री प्रस्तुत करेगा। मैंने अस्सी पृष्ठों की प्रस्तावना में अखा के अध्ययन की महत्वपूर्ण समस्याओं का विवरण दिया है। अखा की वाणी का यह संग्रह हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि करेगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

मैं गुजराती के उन वरेण्य विद्वानों का हृदय से आभार स्वीकार करता हूँ जिनके ग्रंथों को पढ़कर मैंने अखा के महत्व की झलक पायी है। इनमें सर्वप्रथम मैं गुजरात के यशस्वी एवं सौम्यदर्शन कवि श्री उमाशंकर जोशी जी का हृदय से आभार मानता हूँ। हमारे मित्र डा. भोगीन्द्र जगन्नाथ त्रिपाठी जी ने अपनी सब सामग्री सुलभ बनाकर जिस मुक्तभाव और सौहार्द से मेरी समय समय पर सहायता की है उसके प्रति शब्दों द्वारा कृतज्ञता-ज्ञापन करने में मैं समर्थ नहीं। अखा के साहित्य के मर्म को समझने के लिए मैंने गुजराती के जिन विद्वानों की कृतियों का स्वाध्याय किया है, उन सब का भी मैं हृदय से आभारी हूँ। मैंने प्रस्तावना में उनके नामों का यथास्थान उल्लेख किया है।

इसमें अपने सहयोगी डॉ. मदनगोपाल गुप्त के प्रति आभार प्रकट करना अपना परम कर्तव्य समझता हूँ। यदि गैली से लेकर अंतिम प्रूफ तक संशोधन में उन्होंने दिनरात श्रम न किया होता तो इस ग्रन्थ के मुद्रित होकर प्रकाश में आने में अभी कम से कम एक वर्ष और लग जाता। मैं अपने उन सब बंधुओं और सहपाठियों का भी हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने इस कार्य में मेरी छोटी-बड़ी सभी प्रकार की सहायता की और यथावसर हार्दिक सहयोग दिया।

हमारी शोधयोजना की सफलता हमारे कुलपति डॉ. ज्योतीन्द्र मेहता तथा प्र-उपकुलपति डॉ. चतुरभाई पटेल के उदार सहयोग और संरक्षण पर अवलंबित रही है। मैं उनका हृदयसे आभारी हूँ।

—कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह

प्रस्तावना

(१)

व्यापारिक दृष्टिकोण से देखने पर हमें गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी ऊपर से समृद्धि का युग[1] जान पड़ती है। इसमें संदेह नहीं कि सूरत और अहमदाबाद जैसे व्यापारिक केन्द्रों में धन-धान्य का बाहुल्य था। विदेशी पर्यटकों एवं भारतीय इतिहासकारों ने इन नगरों की व्यापारिक समृद्धि की भूरि भूरि प्रशंसा की है।

परंतु सांस्कृतिक दृष्टि से देखने पर हमें स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि भारत के अन्यान्य प्रदेशों के समान ही गुजरात का भी दिवाला निकल चुका था।[2] जिस भौतिक उन्नति के आभास से इतिहासकार गुजरात के लिए सत्रहवीं शताब्दी को शांति का युग मानते हैं, उसकी जड़ें खोखली थीं और उनमें दीमक लग चुकी थी। उपर्युक्त तथाकथित समृद्धि के कारण समाज में एक अकर्मण्यता, आलस्य असमर्थता तथा नैतिक एवं सांस्कृतिक दरिद्रता छाती जा रही थी। समाज की विषमता कुरूपता एवं व्यथा पर इतिहासकार की दृष्टि नहीं पड़ी। जीवन में व्याप्त संदेह, भय उद्वेग, विषाद और निर्बल अक्षमता पर कोटिशः संतों ने ही विचार किया इतिहासकारों ने नहीं।

---

1 As a province of the Mogal Empire it (Gujrat) settled existence and grew prosperous once again. The people succeeded in confining political influences to limited spheres, and stiffened social barriers so as to secure contentment and happiness within narrow grooves (page 173 Gujrat and its literature by K. M. Munshi)

2 During this period men were being driven into progressively narrowing communities social barriers were stiffened the individual was sacrificed to the group, untouchability came into existence K. M. Munshi—Gujrat and its literature page 147

विशेषतः मध्यकालीन इतिहासकारों ने तो केवल बादशाहों की शानशौकत और सुख-समृद्धि ही देखी अत्याचार पीड़ित जनता की दुरवस्था नहीं। दरिद्रता के दशानन द्वारा पददलित धरती की आह-कराह यदि किसी ने सुनी तो इन संतों ने ही। इसका सबसे अच्छा प्रमाण हिंदी साहित्य से दिया जा सकता है। इतिहासकारों ने अकबर और जहाँगीर के शासनप्रबंध के जो विवरण प्रस्तुत किए हैं उनकी पुष्टि इन्हीं के समसामयिक प्रत्यक्षदर्शी गोस्वामी तुलसीदासजी की वाणी से नहीं होती—

किसबी किसान कुल बनिक भिखारी, भाट
चाकर चपल नट चोर, चार चेटकी।
पेट को पढ़त गुन गढ़त, चढ़त गिरि
अटत गहन बन अहन अखेटकी।
ऊँच नीचे करम धरम अधरम करि,
पेट ही को पचत बेचत बेटा बेटकी।
तुलसी बुझाइ एक राम घनस्याम ही तें
आगि बड़वागि तें बड़ी है आगि पेट की॥

तथा,

खेती न किसान को भिखारी को न भीख बलि
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।
जीविका बिहीन लोग सीद्यमान सोच बस
कहैं एक एकन सों कहाँ जाई का करी।
बेदहूँ पुरान कही लोकहूँ बिलोकियत
साँकरे सबै पै राम रावरे कृपा करी।
दारिद दसानन दबाई दुनी, दीनबंधु,
दुरित दहन देखि तुलसी हहाकरी॥

इन छंदों में गोस्वामी तुलसीदासजी ने देश और समाज की दुरवस्था का जो चित्र उपस्थित किया है, मुगलकाल उसका अपवाद नहीं था। वस्तुतः यह अवस्था उत्तरोत्तर बिगड़ती ही जा रही थी। अतएव अकबर ने अपने देश समाज और काल को प्रायः वैसा ही पाया होगा जैसा गोस्वामीजी ने उसे देखा था।

व्यवस्थाहीन समाज में अनीति और दुर्नीति के कारण जनसाधारण में न तो पौरुष रह गया था और न त्याग भोग का पराक्रम वरन उत्पन्न हो गई थी एक निम्न स्तर की दरबारी चाटुकारिता। तथाकथित समृद्धि के ठिकानेदारों की दिनचर्या थी हतपराक्रम, हतवीर्य, हतस्वाभिमान बने रह कर धनोपार्जन का सूत्र जोड़े रखना। शासकों का कृपा भाजन बने रहना और इसके लिए मनौतियाँ मनाना ही उनकी आध्यात्मिक और धार्मिक उन्नति का चरमोत्कर्ष था। यही थी पुंसत्वहीन समाज की धनलोलुपता अथवा इतिहासकारों द्वारा प्रशंसित लोक की सुख-शांति और समृद्धि। जहाँ इतिहासकारों ने जीवन साधना का प्राचुर्य देखा, आर्थिक समृद्धि देखी, वहाँ संतों ने धन लोलुपता, धनोपार्जन के अतिरिक्त अन्य सभी क्षेत्रों के प्रति शासकों की उदासीनता भी देखी। संतों ने यह भी देखा कि समाज भोग और पराक्रम दोनों में ही सबलों के असमर्थ अनुकरण की ओर झुक रहा है। अर्थ के प्रति उत्तरदायित्वविहीन आसक्ति का कुत्सित परिणाम भी संतों ने अच्छी तरह सोच लिया था। उन्हें भलीभाँति विदित था कि पौरुषहीन असंयम और दुर्बलताजन्य अपघात दोनों एक हैं।

संत अखा के समय की राजनीतिक सामाजिक और धार्मिक परिस्थितियों का अध्ययन करते समय हमें स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि १७ वीं शताब्दी प्रच्छन्न रूप से इन सभी क्षेत्रों की असमर्थता की कहानी है। इस शताब्दी के समाज में भौतिकता और विलासिता बढ़ गई थी। व्यक्तिगत आचरण निकृष्टता की कोटि तक पहुँच गए थे। यहाँ तक कि धर्मस्थान का भी दुरुपयोग किया जाने लगा था। समाज का बुद्धिजीवी वर्ग भी धनलोलुपता में फँसा हुआ था शिक्षित वर्ग में अध्ययन-स्वाध्याय के प्रति उदासीनता उत्पन्न हो गयी थी। पुत्र-कन्या के विवाह पर हाथ खोल कर धन का अपव्यय करना सामाजिक प्रतिष्ठा का मानदण्ड माना जाने लगा था। लोगों ने अप्रत्याशित रूप में यह धारणा बना ली थी कि पेट पालने के लिए कैसे भी अथवा अच्छे बुरे सभी प्रकार के कार्य क्षम्य हैं। व्यभिचार, रिश्वत, हत्या, जालसाजी और विश्वासघात की बातें सुनकर लोग चौंकते नहीं थे, एक प्रकार से वे उसके अभ्यस्त हो चुके थे। गुजरात पूर्णतया मुगल-साम्राज्य का अंग बन चुका था।

ज्ञात होता है कि धर्म ने भी उस समय कदाचित् लोकधर्म का स्वरूप छोड़कर व्यक्तिगत साधना का स्वरूप ले लिया था। वैष्णवीय धर्म भी मात्रा

में किसी प्रकार कम न थे। नाना प्रकार के मतों के कारण संपूर्ण धर्म मत इत्यादि की मूल भावना तिरोहित हो चुकी थी और उसके स्थान पर पाखण्डसंयुक्त मत धर्म आदि का प्रचार होता जा रहा था। आश्रमधर्मविहीन वर्णव्यवस्था एवं धर्म की वास्तविक मर्यादा की जो रूपरेखा दब पड़ती जा रही थी, उसी के कारण स्वेच्छानुसार मनमाने पंथ मत और मार्ग बनते जा रहे थे जिन पर चलने के लिए व्यक्तिगत पाखण्ड दिखाने सिवा कोई नीति ही न थी। समाज अपने दुखी विकल और भीत मनको सर्वशक्तिमान् की दयालुता का आश्वासन देता था, किन्तु यथार्थ साधन, मंत्र तंत्र बल, वचन आदि के प्रति ही अधिक आस्था प्रकट करता था। राजनीतिक दुरभिसंधियों, षड्यंत्रों और अत्याचारों के परिणामस्वरूप यह मान्यता जनसाधारण में घर करती जा रही थी कि जीवन के समस्त ऐश्वर्य, भोग एवं सांसारिक संबंधों की अपेक्षा पानी का बुलबुला कहीं अधिक स्थायी है। एक प्रकार का [illegible] [illegible] में लोक-मानस को अभिभूत करने लगा था। अतः तत्काल की [illegible] जिनकी रोगी थी, वे बहुत ऊपर से नीचे गिरकर क्षत-विक्षत होने की स्थिति से ग्रस्त हो चुके थे।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि यह युगकाल व्यापक रूप से अराजकता अव्यवस्था और असुरक्षा का युग था। अतः व्यक्ति के व्यक्तिगत संबंधों को सीमित-संकुचित करके समाज में सुख-शांति की प्राप्ति के प्रयत्न किये गये। [illegible] [illegible] और उनके कठोर अनुशासन के अनुसार नियम बालविवाह, छुआछूत धार्मिक असहिष्णुता आदि ऐसी कुछ कुरीतियाँ उत्पन्न हो गईं जो तत्कालीन परिस्थितियों में अकारण नहीं थीं। धन-माल और ईमान की असुरक्षा उस काल की एक बहुत मामूली बात थी।

विद्वानों ने जिस अकबर महान् के शासनकाल को गुजरात के लिए सुख शासन का स्वर्णिम युग माना है, वह बुधवार १५ अक्टूबर सन् १६०५ ई. को ४९ वर्ष के लम्बे शासन के बाद दिवंगत हो गया। अकबर के आँखें बंद करते ही दक्षिण के अहमदनगर के निजाम शाह के अभिभावक मलिक अंबर के हृदय में गुजरात की अकबरकालीन श्री समृद्धि का अपहरण करने की कामना जाग्रत हुई। एक बड़ी सेना एकत्र कर सन १६०९ ई. में मलिक अंबरने गुजरात पर चढ़ाई करके बड़ौदा और सूरत को लूट लिया। गुजरात के लिए यहीं से संकट का समय प्रारंभ हुआ। इन चढ़ाई और लूटपाट के

मार्ग के गाँव के गाँव तबाह किये गए, खेती नष्ट की गई। लोग अपना जीवन बचाने के लिए दर-दर की ठोकरें खाने लगे।

सत्रहवीं सदी के आरंभ से ही विदेशियों में विशेषकर अंग्रेजों का गुजरात में अभ्युदय आरंभ हुआ। अकबर के समय की सन् १५७३ ई. की संधि के अनुसार सूरत के व्यापार के शाहंशाह पुर्तगाली थे। परन्तु व्यापारिक बुद्धि की सीधी-सादी पुर्तगाली जाति अंग्रेजों के लिए नगण्य सिद्ध हुई। परिणाम स्वरूप सन् १६१२ ई. में कैप्टेन बेस्ट के नेतृत्व में इंग्लैण्ड से चार जहाजों ने आकर पुर्तगालियों को परास्त कर सूरत के व्यापार पर अधिकार का दावा किया। जहाँगीर ने विजयी का पक्ष ग्रहण कर फरवरी सन् १६१२ ई. में सूरत, खंभात, गोघा और अहमदाबाद में अंग्रेजों को कारखाने खोलने तथा व्यापार करने की आज्ञा दे दी।

अकबर की मृत्यु के पश्चात् सन् १७०७ ई. तक गुजरात पर मुगल हुकूमत के वायसराय शासन करते रहे। इन वायसरायों में शाहजहाँ और औरंगजेब भी थे, जो आगे चलकर दिल्ली के शाहंशाह बने। वायसराय अपने मातहत हाकिमों द्वारा शासन और धनोपार्जन करता था। इन लोगों का काम ही यही था कि व्यापारी वर्ग से धन का अपहरण कर भविष्य के लिए संग्रह करें। वायसराय के मातहत बड़े से लेकर छोटे तक सभी अधिकारी दोनों हाथों से धन बटोरने के फेर में रहते थे। जनता में यह साहस नहीं था कि वह शाही शासन के अदना से अदना आदमी को भी अप्रसन्न कर सके। भ्रष्टाचार यहाँ तक बढ़ा हुआ था कि अधिकारियों को प्रसन्न करने के लिए नारीत्व तक का अपमान कर दिया जाता था। ऐसी परिस्थितियों में बालविवाह एवं पर्दा जैसी कुरीतियाँ जन्मीं जिनसे तत्कालीन समाज को निश्चित रूप से लाभ ही प्रतीत हुआ होगा। रुपयों के लिए गुजरात के वायसराय मुरादबख्श ने सूरत के गवर्नर और बेगम [illegible] को जबरदस्ती फौजी ताकत लेकर लूट लिया था। अहमदाबाद के बड़े बड़े सेठों से ऋण के नाम पर उसने ऊँची ऊँची रकमें वसूल की थी और यहाँ तक कि गुजरात के कुछ जिलों की वसूली तक रेहन रखकर उसने धन एकत्र किया था। वायसरायों की धन लोलुपता का इससे बढ़कर और क्या उदाहरण हो सकता है?

जहाँगीर के प्रश्रयप्राप्त अंग्रेज एकदम दूसरी ही वेशभूषा और संस्कृति लेकर गुजरात में कौतूहल का कारण बने हुए थे। सूरत शीघ्र ही पश्चिम

भारत का प्रमुख व्यापारिक स्थान बन गया जहाँ से फारस की खाड़ी का व्यापार निरन्तर बहुत दिनों तक होता रहा। सूरत के गवर्नर को प्रसन्न रखना अंग्रेज अपना कर्तव्य समझते थे। इस प्रकार व्यापारिक सफलता का एक ऐसा गर्हित आदर्श वे देश के सम्मुख प्रस्तुत कर रहे थे जो यहाँ की सांस्कृतिक परंपरा की जड़ों पर कुठाराघात करता था। सूरत का गवर्नर भी अंग्रेजों की मित्रता का दम भरता था। जब से सन् १६१५ ई० में कुस्तुंतुनिया के दरबार से कूटनीति में पारंगत होकर सर टामस रो दिल्ली दरबार में दो वर्ष तक राजदूत रहकर लौट चुका था, सूरत के गवर्नर की नजरों में अंग्रेज का आदर दूना हो गया था। सब मिलाकर इन वाइसराय गवर्नर चौधरी और विदेशी व्यापारियों के सम्मिलित प्रभाव से समाज की चिंतनधारा की दिशा ही परिवर्तित हो गयी थी। जहाँगीर शाहजहाँ जैसे विलासी मुगल सम्राटों के समय में गुजरात की समृद्धि की जड़ें हिल गयी थीं। १६२६ ई० में शाहजहाँ दिल्ली का बादशाह बना। प्रत्येक सूबे के वाइसरायों ने प्रथा के अनुसार नजराना, और अपने अपने क्षेत्र से कैसी कैसी वस्तुएँ भेंट कर नजर-निसार किया। सन् १६३१-३२ गुजरात में इतिहासप्रसिद्ध सत्यासिया अकाल पड़ा। अकाल की भीषणता इसी से प्रकट होती है कि गली-कूचों में मनुष्यों की लाशें पड़ी रहती थीं और कीड़े-कुत्ते उन्हें वहीं नोच नोच कर खाते रहते थे। अकाल के दुष्परिणाम और वाइसरायों की धनलोलुपता और हिंसा से गुजरात में अराजकता उत्पन्न हो गयी। जनसाधारण क्या बड़े बड़ों तक के दुःख दर्द का ठिकाना नहीं रहा। १६३५ ई० में आजमखाँ ने परिस्थिति पर काबू पाने के लिए प्रयत्न किए। उसने किलों की मरम्मत करवाई, सेना और हथियारों की ओर ध्यान दिया। उसने सन् १६४० ई० में नवानगर के जाम पर चढ़ाई करके उससे चौथ वसूल की। परंतु मुसाहिबों की शिकायत पर सन् १६४२ में उसे हटाकर सूरत के गवर्नर मिर्जा इसाहार खाँ को वाइसराय बनाया गया।

वाइसराय ही क्या, उस स्वेच्छाचारी शासनकाल में छोटे से लेकर बड़े तक सभी अधिकारी यह जानते थे कि उनके कार्यकाल की कोई निश्चित अवधि नहीं है। उधर जनता के सामने उत्तरदायी रहने के लिए अधिकारियों की कोई निश्चित सीमा नहीं थी। धन की प्राप्ति से आलस्य और विलासप्रियता का प्रादुर्भाव हुआ, जिसका प्रभाव जन साधारण पर भी पड़ा। यह तो सुप्रसिद्ध सत्य था कि मुसलमानों को विशेष अधिकार प्राप्ति का गौरव मिलना चाहिए। बिना कोई विशेष

योग्यता दिखाये या बगैर किसी प्रकार का परिश्रम किए ही, राज्य के ऊंचे ऊंचे ओहदे मुसलमानों के लिए खुले थे। दुर्व्यसनों कुकर्मों और अवन्य अपराधों में आकंठनिमज्जित ये शासक उसे आम जन समुदाय को इच्छानुसार दबाते और उन पर अत्याचार करते थे। इस्लाम के अनुयायियों को छोड़कर शेष जनता पशुओं का सा जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य थी। अपने शासकों के घर पानी भरना और लकड़ी चीरना ही जो अपने प्रारब्ध का फल मान बैठे थे, वे भला निकृष्ट कोटि की चाटुकारी, चापलूसी और स्वामिभक्ति दिखाने में क्यों हिचकिचाते? उनका पतन हो गया था और उनमें ऐसी ऐसी कुंठाओं ने घर कर लिया था जिनमें आदमी का व्यक्तित्व समूल नष्ट हो जाता है। यही कारण है कि सवर्ण हिंदुओं के सामाजिक और धार्मिक जीवन में अनेक उत्पीय कलुषित प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हो गईं। इन सामाजिक परिस्थितियों में किसी भी तरह आदमी का मानसिक विकास संभव नहीं हो सकता है। और जब श्रेष्ठ विचार नहीं उत्पन्न होते हैं, जब मनुष्य विवेक-अविवेक का अंतर भूल जाता है, तभी उसके सामने अंधकार आ जाता है— एक ऐसा सर्वग्राही अंधकार जिसमें न चाहते हुए भी उसको समा जाना पड़ता है। अतः अकबर के बाद सत्रहवीं शताब्दी में गैर मुसलमानों की पदोन्नति वृद्धि या समानता का दावा इस्लाम के आधारभूत सिद्धांतों के हिसाब से एकदम नाजायज था। इसलिए ऐसी दशा में राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक अवस्था का नितांत अस्थायी और अनिश्चिततापूर्ण होना अनिवार्य था।

परवशता को आत्मसात् करने की चेष्टा में अपने धर्म के प्रति अविश्वास नास्तिकता अथवा रिश्वत देकर ठाकुरजी को प्रसन्न करना तीनों एक ही बातें हैं। सहस्त्रों की संख्या में लोगों ने इस्लाम धर्म स्वीकार करके अपने को मनुष्य के साधारण अधिकारों से वंचित न होने देने का कठोर प्रयास भी किया। राजनैतिक असमानता[1] ही उनकी इस अधोगति का मूल कारण थी। दबते दबते वे इतना दब गये थे कि उनकी आत्मा में अन्याय का विरोध करने की शक्ति ही नहीं रह गई थी।

---

1 ऐसे अनेकों हिंदू जो यह कर (जजिया) नहीं दे सकते थे कर वसूल करने वालों द्वारा किए जाने वाले अपमानों से छुटकारा पाने के लिये मुसलमान हो गए। —इतिहासकार मनुची

सन १६४४ ई में शाहजादा औरंगजेब गुजरात का बाइसराय बनाया गया। इसी वर्ष उसने सरसपुर के चिंतामणि[1] के जैन मंदिर को बलात्‌ भ्रष्ट कर देने की आज्ञा दी। हिंदू मुसलमान के बीच जो खाई उत्पन्न हो गई थी औरंगजेबने उसे चौडा करके सागर का स्वरूप दे दिया। दो वर्ष औरंगजेब गुजरात में वाइसराय रहा सन १६४६ ई में उसकी जगह शाइस्ताखां वाइसराय नियुक्त हुआ। इसी दो वर्ष के समय में शिया और सुन्नियों के बीच झगडे प्रारंभ हो गए। इस्लाम का कट्टर अनुयायी औरंगजेब मुसलमानी राज्य में धार्मिक सहनशीलता को कानून और कुरानसम्मत मत के विरुद्ध समझता था। उसकी कठोर आज्ञा थी कि सख्ती के साथ इस्लाम और कुरान की नीति का पालन हो। औरंगजेब की संपूर्ण शक्ति मुसलमान सैनिकों की तलवारों और कुरान की आज्ञा पर निर्भर थी। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ श्री यदुनाथ सरकारने औरंगजेब में लिखा है, ' ... गैर मुसलमानों की वृद्धि और उन्नति तथा उनका निरंतर बना रहना ही मुसलमानी राज्य के आधारभूत सिद्धांतों की दृष्टि से सर्वथा असंगत था। फिर ९ अप्रैल को उसने एक आम हुक्म दिया कि काफिरों के सब शिक्षालय और मंदिर गिरा दिए जावें तथा उनकी धार्मिक प्रथाओं को दबाया जावे।'[1] औरंगजेब के शासन काल में हिंदुओं को राज्य की ओरसे जीवन-यापन के निमित्त ही गई सुविधा के बदले कर देना पडता था। इस्लाम के प्रवर्तक मुहम्मद ने अपने धर्मानुयायियों को आदेश दिया था कि जो लोग इस्लाम के इस सच्चे मत को न ग्रहण करें उनसे तब तक युद्ध करो जब तक वे दीनता पूर्वक अपने ही हाथों जजिया न चुका दें। (कुरान ९, २९)। गुजरात प्रान्त से सल्तनतें सुलतानिया जजिया कर से लगभग पांच लाख रुपए वार्षिक आय होती थी। यहां यह बात विशेष रूपसे उल्लेखनीय है कि अपने शासन कालमें सम्राट् अकबर महान ने राजनैतिक असमानता के इस प्रतीक जजिया कर को समाप्त करा दिया था। श्री यदुनाथ सरकार तत्कालीन परिस्थिति के संबंधमें लिखते है[2] —

१ सन १६४४ ई में जब वह गुजरात का सुबेदार था, तब उसने अहमदाबाद में सरसपुर ही बने हुए चिंतामणि के हिंदू मंदिर में गो हत्या करवा कर उसे भ्रष्ट करवा दिया और बाद में उस मस्जिद में बदल दिया। इसी समय उसने गुजरात के और भी हिंदू मंदिरों को गिरवाया था।

१. यदुनाथ सरकार – औरंगजेब पृ १६१

२. वही पृष्ठ १६२

३ वही पृष्ठ १६५

'मारने के अतिरिक्त अन्य सारे मीरगणसे भीषण अत्याचार बिना किसी कारण के अन्य धर्मावलम्बियों पर इसीलिए किये जाने लगे कि वे अपना धर्म छोड़कर इस्लाम को ग्रहण कर लें। जज़िया कर देने और रहन-सहन तथा वेशभूषा की रोक टोक के साथ इन अन्य धर्मावलम्बियों को कई दूसरी बाधायें तथा डर भी दिखाए जाते थे। हिंदूधर्म छोड़ देने वालों को धन अथवा सरकारी नौकरी दिये जाने का प्रलोभन दिया जाता था। हिंदू धर्म और समाज के नेताओं पर दबाव डाला जाता था, जिससे वे किसी भी प्रकार की धार्मिक शिक्षा न देने पावें। हिंदुओं के धार्मिक जुलूसों और सम्मेलनों पर प्रतिबंध था कि उनमें किसी भी प्रकार का संगठन न हो सके तथा उनमें कहीं जातीय एकता की भावना न उत्पन्न हो जावे। न तो कोई नया मंदिर बनाया जा सकता था और न पुराने मंदिरों की मरम्मत ही की जा सकती थी। एवं कुछ समय बाद सारे हिंदू मंदिर एकबारगी ही मिट जावेंगे। यह एक अदूरदर्शी बात थी परंतु इस पर भी कुछ एक अधिक कट्टर इस्लामी भावना वाले मुसलमान समय से पहले ही मंदिरों का सर्वनाश करने के लिए उन्हें जबर्दस्ती गिरा देते थे।" १

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि देश में परिस्थिति कितनी संकटपूर्ण अवस्था तक पहुँची हुई थी। औरंगज़ेब के शासनकाल में गुजरात शांति से कोसों दूर चला गया था। ईडर और जूनागढ़ में गड़बड़ आरंभ हो गया, माजना और मीलापुर में नयी छावनियाँ बनाई गई। जूनागढ़ भी गुजरात की सीमा में मिला लिया गया और उसका नाम इस्लामाबाद कर दिया गया। जूनागढ़ क्षेत्र में क्या गुजरी होगी इसका अनुमान भी यदुनाथ सरकार के इस कथन से हो सकता है,— 'अपने राज्य से बाहर प्रत्येक आक्रमण और युद्ध में हिंदुओं की हत्या करना और उनके मंदिरों का विनाश करना एक पुण्यदायक कार्य माना जाता था। इस प्रकार मुसलमानों में एक ऐसी विचारधारा उत्पन्न हो गई जिसके कारण वे स्वभाव से ही लूट मार और मानव हत्या को पवित्रतम धार्मिक कार्यों में गिनने लगे।" २

अतः की सामयिक परिस्थितियों का विश्लेषण करते समय हमने देखा कि तत्कालीन समाज में असुरक्षात्मक भय जनता को आक्रान्त कर रहा था। समाज-विज्ञान तथा नृविज्ञान के अध्येताओं ने सभी तरह के [illegible] के

१ औरंगज़ेब पृ० १८५।　　२ औरंगज़ेब पृ० १८६।

मूल में भय की परिस्थिति स्वीकार की है। भावुकता भी भय से उत्पन्न होती है और दुस्साहस के आविर्भाव का मूल भी भय ही है। भयवश ही कभी कभी ऐसी भी परिस्थिति बन जाती है जब मनुष्य किसी अलक्ष्य के विरोध से बाधायें दूर करने की कामना करने लगता है। अतः झाड़-फूंक टोने-टोटके का बाजार गर्म हो उठा। गंडा तावीज बनाने और सैयद सालार की मजार पर चादर चढ़वाने वाले मुजाविर भी माल मारने लगे। जोगी अवधूत सिद्ध अघोरी आदि अपरिमित मद्य डकार कर मोटे होने लगे। जब तब धूर्त एवं सब भोली व्यक्ति देवताओं की तरह पुजने लगे। उनका नाम या हाथ की रेखाओं से सभा कर सौरमंडल स्थित ग्रहों तक की पूरी पूरी खबर देकर आदमी का आसन्न संकट से निस्तार करना। झूठ फूंक और बुध की झूठी अफवाहों का अपना हित के लिए प्रचार करना। इनमें एक से बढ़कर एक अन्धा, धूर्त और दुर्बल व्यक्ति भी थे जो अपने हित के लिए समाज को रसातल की ओर ले जाने के मंसूबे बाँधा करते थे।

भक्ता ने यह सब कुछ आँखों देखा और अंतर्मुखी होकर किसी मूल विचार की अभिव्यक्ति में लीन हो गए। साधना के किसी विशिष्ट रूप या अंग का उद्घाटन उन्होंने नहीं किया हाँ अद्वैत वेदान्त में उन्हें शांति मिली और उन्होंने उसके द्वारा अपने को आत्मप्रवंचना से मुक्त अनुभव किया। उन्हें समाज की पलायन की प्रवृत्ति से असंतोष हुआ और इतनी कठोर इतना कंटक भी निस्सार जान पड़ा। उनकी उन्होंने अपने बाहरिक न तो बचपन ही बचपन रहा न वास्तविक सुखस्वप्न। समाज की सामाजिक चेतना ने मनुष्य में अभिरुचि दिखाई और उन्होंने समाज की पलायन की प्रवृत्ति को वायवीय या अतीन्द्रियता का रूप प्रदान नहीं किया। तात्त्विकता के उनके नवीन दृष्टिकोण से अनेक व्यावहारिक प्रश्न उठाये जिनका विवेचन और समाधान भी उन्होंने तात्त्विक दृष्टि से ही किया।

देशकाल के परिप्रेक्ष्य का ध्यान रखते हुए भक्ता ने वर्जना और उसका से ग्रस्त सामाजिक चेतना को उबारने की चेष्टा की है और हम यह कहते हैं कि एक हद तक वे उसके लिए सही समाधान खोजने में समर्थ रहे हैं। भक्ता ने देखा था कि जो भी कुछ दिखाई पड़ता है वह परिस्थितिजन्य विकृति है। ह्रासोन्मुख समाज के पैरों के नीचे की भूमि पर सुगम सुविधाओं की विलासिता की काई जमी हुई है। लोभ और ऐश्वर्य के मखमल पायदानों को आराम मानकर चलने वाले पैर फिसल फिसल जाते हैं। वास्तव में समाज

निर्जीव हो गया है जो विचारों को नवीन स्फूर्ति और प्रेरणा देने में असमर्थ है। अनुदात्त एवं असंवेदनशील कुरुचि के हाथों कठपुतली बन कर लोकसंज्ञा रूठ बैठ रही है। यही सब देखकर अखाने अनुभवसिद्ध मूर्त और सत्यान्वेषी उद्भावनाएँ संसार के समक्ष प्रस्तुत कीं। समाज ने उन्हें किस रूप में और किस सीमा तक ग्रहण किया यह देखने के लिए आज भी स्थान स्थान पर अखा भगत के भजन गाते हुए मदमस्त भक्तों को देखना आवश्यक है।

अखा के काव्य में पूर्णरूप से तत्कालीन परिस्थितियों की छाप हमें मिलती है। बहुत से कवियोंने अपने समय की सामाजिक दुर्दशा का वर्णन अन्योक्तियों द्वारा किया है। कभी उन्होंने पशु-पक्षियों को संबोधित करके कहा है, कभी नदी पर्वत आदि के माध्यम से। कभी कभी कलियुग का वर्णन के माध्यम से उन्होंने अपना असंतोष प्रकट किया है। परंतु कबीर और अखा ने जो कुछ उन्हें कहना था साफ साफ और सीधे सीधे कहा है। पंडित, मौलवी, साधु-संत, सुधारक, विचारक और जनसामान्य किसी से भी वे डरे नहीं हैं, न अपनी बात कहने के लिये उन्होंने किसी कूटोक्ति की ही आवश्यकता अनुभव की। इस प्रकार जो कुछ उन्होंने कहा है डंके की चोट पर निःसंकोच होकर कहा है। तभी उन दिव्यात्मा की वाणी काव्य और व्याकरण के नियमों से शिथिल होते हुये भी पत्थर की लकीर बन कर रह गई है। इतिहासकारों का सत्य आश्रितों के लोभ या तलवारों के भय से जहाँ विवर्ण हो गया है वहीं कबीर, तुलसी और अखा जैसे सर्वस्व त्यागी फकीरों की वाणीका सहारा पाकर वह जी सा उठा है।

[२]

भारतवर्ष के इतिहास की पंद्रहवीं सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में देश ने विदेशी आक्रमण और विधर्मी संस्कृति से अपनी रक्षा के लिए अपना सांस्कृतिक नवनिर्माण और शक्तिशाली पुनर्गठन भी किया। सत्रहवीं शताब्दी में जिन महापुरुषोंने देश के इस सांस्कृतिक जागरण के विराट् आंदोलन का नेतृत्व किया, उनमें गुजरात के महान संत अखा का नाम अग्रगण्य है।

हमारे इतिहास की सत्रहवीं शताब्दी एक ऐसा कालखंड है जिसमें युग को बदलनेवाले और युग का साथ देनेवाले दोनों तत्व कुछ इस प्रकार एक दूसरे से गुंथे हुए हैं कि इस सम्पूर्ण सौ वर्ष के युग में जीवन की अनेकानेक

लताएँ-पताकाएँ फलती- फूलती तथा फूलती-फलती दिखाई देती हैं। ध्यान से देखने पर यह उभय-युगल भौतिक ही नहीं आध्यात्मिक स्तर पर भी समान रूप से दृष्टिगत होती है। कहीं ज्ञान की दृष्टि समादृत होती है कहीं भक्ति की। कहीं घंटा शंख बजते हैं कहीं अनहद नाद सुनाई पड़ता है। गोचर अगोचर होता है और अगोचर गोचर। एक ओर हिंदुओंपर बड़े से बड़े धार्मिक अत्याचार हो रहे हैं, उनके मंदिर और देवमूर्तियाँ तोड़ी जा रही हैं उनको अपने प्राण तक के लिए जजिया नाम का टैक्स देना पड़ रहा है, तो दूसरी ओर मियाँ रसखान[1] और बेगम ताज[2] जैसे कुलीन मुसलमान पुरुष और स्त्री हिंदुओं के देवताओं के प्रति अपनी आस्था व्यक्त कर रहे हैं।

काव्य के अनुशीलन में कवि-जीवन का महत्व इस देश के कवियों ने स्वीकार नहीं किया है। वे जीवन की सभी सीमाओं को अतिक्रान्त करनेवाले सत्य की अभिव्यक्ति को ही सच्चा काव्य मानते रहे हैं। इसीलिए वाल्मीकि व्यास कालिदास से लगाकर सूर तुलसी और भक्ता तक हमारे कवियों का जीवनवृत्त अंधकार में छूटा पड़ा है। फिर भी कविजीवन को उपेक्षित नहीं माना जाना चाहिए। यद्यपि हमारे आचार्यों ने कृति का एक स्वतंत्र व्यक्तित्व मानकर उसीको समझने की चेष्टा में अपने कर्तव्य की इतिश्री मानी है तो भी लोकमेधा किसी न किसी रूप में कृतिकार का जीवन-वृत्त सुरक्षित रखती रही है। इन परम्पराप्राप्त संस्मरणों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अपूर्ण अथवा किंवदंती कहा जाता है। पर कहीं एकदम अप्रामाणिक मानकर अमान्य घोषित करनेसे हम सत्य के सर्वथा निकट भी नहीं रह पाते।

ऐसी ही किंवदंतियों में हमें भक्ता के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का वृत्तांत मिलता है। उनमें तर्क और विवेक से देखकर असल बात का पता लगाना असम्भव तो नहीं ही कहा जा सकता है। इन जनश्रुतियों में इस का गुण जो भी उसका भाव यही है कि ऐतिहासिक सत्-तत्व की सीमा में न देखकर वे सार्वकालिक रूप ग्रहण कर लेती हैं। शायद लोक-मेधा अपने महाप्राण उपकारी को कालसे बाँधकर सामयिकी नहीं बनाना चाहती। संत कवि भक्ता भी अन्य संतों की तरह अपने संबंध में मौन हैं। अतः निवास स्थान के संबंध में उनका कहना है—

---

१ प्रेम देव की छबिहि लखि भये मियाँ रसखान।

२ ताज नाज़ प्यारे हिंदुआनी ह्वै रहूँगी मैं। —ताज।

बाबा हम सोही नगर के वासी।
जहाँ सुख दुख नहीं प्रवेश
जहाँ द्वंद नहीं लवलेश। बाबा
काल, कर्म की जहाँ गत नाहि
कुमत नहीं को साथ
करत उपाय यह नगर है न्यारा
ऐसा पद दुःसाध्य-बाबा हम सोही नगर के०

अन्यत्र भी अपने आत्म संबंध में इसी प्रकार की बात कही है—

जनम मरण दोष सब भागी।
जब मेरी सुरता मुझसे लागी।
ना कछु गहूँ-छोड़ूँ क्या त्यागी।
सहजे हूँ मेरा अनुरागी।
जनम मरण भय सबभागी।
ना मैं गुरु न सेवक कहाऊँ।
ना कोई पूजा न तिर्थ नहाऊँ।
ना मैं ध्यानी के ध्यान समाऊँ।
ना मैं ज्ञानी के ज्ञान विचारूँ। जनम मरण०।
ना मैं चतुर के मूर्ख कहाना।
ना मैं पंडित नाम धराना।
ना मोहे पाप-पुण्य ना भाई।
ना मैं जीतूँ ना मैं हारूँ। जनम मरण०

अखा ने अपने संबंध में जो कुछ कहा है, उसका आशय यह है कि उन्होंने अविनाशी जीवन का वरण कर लिया है ब्राह्मीस्थिति प्राप्त कर ली है। इसलिए क्षणभंगुर जीवन का उनकी दृष्टि में कोई महत्त्व नहीं। यह लौकिक जीवन असत् और क्षणभंगुर तो है ही व्यष्टि और समष्टि दोनों ही भूमिकाओं पर भ्रान्तिपूर्ण और अनैतिक भी है। इसलिए आत्मनिष्ठ अखा जगत की सामूहिक गतिविधि का ही उल्लेख करते हैं—

इस नगरी में मत सुखे सोना।
नित मोरे और नित होय रोना।
जिस नगरी का राजा मर्दम
सबै लोक बसे पाप रस
कफ मवासी जिस को सदैं
पावे लोभ दबाबो पड़े ॥
साध सदा ये रहे मसूचा
कबीर स्वतंत्र न बाढ़े सूचा—इस नगरी॰
शाहलोक छुपा रहे छाना
फिरे नगर में लोक गुमाना
दुख कपता जाय फेर बसेरा।
करे केशमय हु मित्र गवेरा—इस नगरी ॥
आप समेट रहे हैं सूचा
तुमको मना जो आवे कहा।
आवे मना हम किया विचारा
नगर अविनाशी किया मनचारा—इस नगरी ॥

× × ×

पिउ पिउ परतीति माने
सो हि मूढ़ नर।
नर करे निरधार
जीवन रि के देह को
तत्वहठि में बार
समुझाये भेद छेर को
उपजत विनसत जाय
आवे पिउ को है परम
यें तो इन्द्रिय सुभाव
आपे तो पद है परम
ऐसो जानत है मना।
देह छूटे ही भेद पर
पिउ पिउ परतीत माने
सोहि मूढ़ नर।

जीव अपनो अज्ञान मान बहेत है मिथ्या,
मिथ्या बहत हैं मान, कान गुरज्ञान न आयगो
भयो ना भूम उयोत ज्योति आतम नहि आयगो
भज्यो भुवन सो तीन कीन्हो नहि कछु विचारा,
मैं तो कौन कवन सो ये है पिंड बलाबन द्वारा,
बिना वस्तु विचार अखा दखम बहु पेखा
जीव अपनो अज्ञान, मान बेहेत है मिथ्या

फिर भी अखा की रचनाओं में कुछ ऐसे पद मिलते हैं, जिन्हें निश्चित रूप से उनकी जाति का सूचक माना जाता है—

अखाजी की कक्की में आये हुए शब्द 'सोनारा' से अनश्रुति द्वारा स्वीकृत उनके सोनार होने की पुष्टि होती है।

(पद संख्या – १०, अखाजी की कक्की)
मिले सोनारा यार अंतर से

(पद ११-अखाजीकी कक्की)

'तो कहत अखा सोनारे' पंक्ति से भी बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि अखा सोनार थे। यही नहीं, उनके अन्य अनेक पदों में भी सोनार शब्द आया है। यद्यपि हिन्दी में 'अनारी सोनारी' का अर्थ मूर्ख चतुर होता है पर यहां हम अभिधा द्वारा ही अखा सोनारा ग्रहण करेंगे, क्यों कि लोक-कंठ निश्चयपूर्वक उनकी जाति सोनार ही घोषित करता है।

अखा आत्म में पूर्ण वीतराग हैं। संत तो वे थे ही अखाने ऐसे किसी कारण का कहीं उल्लेख नहीं किया है जिससे संसार के प्रति उनकी उदासीनता सहसा उत्पन्न हुई हो। संसार से अनासक्ति परायण होने के अनेक कारण हो सकते हैं, परन्तु उन कारणों का आरोप तो बाह्य उपादान हैं,-अनुरक्ति विरक्ति को हम आभ्यंतरिक प्रेरणावश तथ्य मानते हैं। अखा के अन्तर्मन में भी इस अनासक्ति का स्रोत छिपा हुआ रहा होगा जो बाह्य सांसारिक प्रतिकूल परिस्थितियों की चोट खाकर बह निकला।

लोकमत इसकी पुष्टि करता है। इस सम्बन्ध में भी अनश्रुति में सुरक्षित जीवन की सरलता को ग्रहण करना हमारा कर्तव्य है। अखा ने अपने अनेक

एवं जन्मस्थान के सम्बन्ध में भी स्वयं तो कुछ नहीं कहा है, हाँ गुजराती साहित्य के विद्वानों ने इन्हें अहमदाबाद से १० मील दक्षिण जेतलपुर निवासी रहियादास सोनार का पुत्र माना है। इनकी भाषा के कुछ विशेष शब्दों व विशेष प्रयोग के आधार पर इनके जेतलपुर के निवासी होने के लोक-विश्वास की पुष्टि कुछ विद्वानों ने की है।

अखा के पिता अखा और अखा की बहिन को लेकर जेतलपुर से अहमदाबाद की देसाईपोल में आ बसे थे। उस समय अखा की आयु १५ वर्ष ही बताई जाती है। लगभग ५ वर्ष बाद रहियादास का स्वर्गवास हो गया। इसके कुछ समय बाद अखा की बहन भी चल बसी। अखा का नाम अखेराम और अखयराम भी सुनने में आता है।

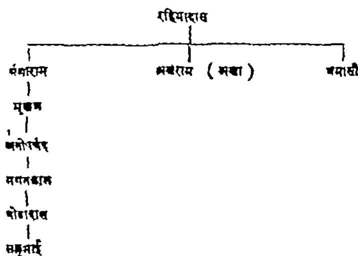
बाल्यकाल में ही अखा का विवाह होना भी माना गया है। युवावस्था में पदार्पण करते करते पत्नी भी चल बसी। संतानप्राप्ति के लिए कहा जाता है कि अखा ने पुनर्विवाह किया परन्तु दूसरी पत्नी भी शीघ्र ही इहलीला संवरण कर गई। यह भी कहा जाता है कि अखा की पत्नी कलहप्रिया थी, पर यह नहीं कहा जा सकता है कि पहली पत्नी या दूसरी।

इन घटनाओं से यह भी सिद्ध होता है कि अखा की माता अहमदाबाद आने से पहले ही स्वर्ग सिधार चुकी थी। अतः माता, पिता, बहिन और दो पत्नियों के निधन से इनके मर्म को लगा हुआ आघात भी इनके हृदय में संसार के प्रति उदासीनता उत्पन्न करने का कारण माना जा सकता है। संतान की इच्छा से पुनर्विवाह करने पर भी संतान का मुंह न देख सकने तथा पत्नी की मृत्यु हो जाने से इन्हें निश्चित रूप से निराशा हुई होगी। लेकिन केवल इन घटनाओं को ही इनके वीतराग जीवन व विरक्तभाव और बोधक रूप में उत्तरदायी ठहराना एकदम उचित नहीं जान पड़ता। वास्तव में तो अखा गम्भीर प्रकृति के शांतिप्रिय एवं आध्यात्मिक संस्कार-संपन्न व्यक्ति रहे होंगे तभी लौकिक जीवन के आघातों से इनका विवेक प्रबुद्ध हो उठा। वैसे लौकिक जीवन में आघात किसको नहीं लगते किंतु अखा जैसे संत बन जाने का सौभाग्य विरलों को प्राप्त होता है।

ध्यान देने पर आगे की एक बात और मिलती है कि अखा का काव्य निराशावादी नहीं है। संसार की अनित्यता आदि की बात से अखा का

तत्त्वज्ञान ही बोलता दिखाई पड़ता है न कि उनका कुम्भकार। अतः निश्चित रूप से 'नाथि गुरु एव सम्प्रति भाती' कोटि के अनुभव अखा कभी नहीं कहे जा सकते हैं।

गुजराती के प्रसिद्ध कवि और विद्वान् श्री उमाशंकर जोशी ने लिखा है कि अहमदाबाद के खाड़ियापोल में चांदूभाई के घर के पास 'कुंभारवाना खांचा' में आज भी 'अखानो ओरडो' अर्थात् अखा का कमरा कहा जाता है। (अखो—एक अध्ययन, पृष्ठ ११)। 'अखा कृत काव्यो' भाग १ पृ. १ पर उसके सम्पादक नर्मदाशंकर देवशंकर महेता ने लिखा है 'अमदावादमां खाडीयामां देसाईनी पोळमां स्व. रा. बा. रणछोडलाल छोटालाल अथवा हर चिमनभाई ना मकान पाछळ कुंभारवाना खांचामां हतुं। अने जे ओरडामां ते निवास करी रह्यो हतो, तेने अद्यापि अखानो ओरडो कहे छे।' वर्तमान समय में वहीं रहनेवाले लल्लूभाई पोपटलाल सोनार अपने को अखा का वंशज बताते हुये अपनी वंशावली इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं—



'अखो—एक अध्ययन' के विद्वान् लेखक श्री उमाशंकर जोशीने इस वंशावली पर उचित शंका की है। उनका कहना है कि गोस्वामी गोकुलनाथजी की गद्दी में क्रम-क्रम से अब तक बारह उत्तराधिकारी हो गये किन्तु अखा के और उनके वर्तमान वंशज लल्लूभाई के बीच केवल चार ही पीढ़ियाँ व्यतीत हुई हैं। अखो ने 'गुरु कीधा में गोकुलनाथ,' कह कर स्वीकार ही किया है कि उन्होंने गोकुलनाथ

गोस्वामी से दीक्षा ली थी। अखा का जन्म १६१५ ई० में तथा निधन १६७५ ई० में स्वीकार किया जाता है। जब तक अन्य किसी सन् संवत का प्रमाण न मिले, हम इन्हीं को सत्य मानेंगे। अतः इस हिसाब से आज से २८१ वर्ष पहले तक वे जीवित थे। प्रत्येक बात का अपवाद भी होता है। अतः इस सच्चाई का वचन यदि कोई मानना ही चाहे, तो उसे विशिष्ट अपवाद के रूप में मानने में भी कठिनाई हो सकती है।

अखा आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न व्यक्ति थे। कभी अखा 'सेठ' भी कहा जाता था। किंवदन्ती है कि एक महिला ने अखा के पास तीनसौ रुपये की थाती रखी थी। इससे भी सिद्ध होता है कि रुपये के लेनदेन का कार्य भी अखा करते रहे होंगे। यह महिला अखा की धर्मभगिनी भी थी अतः शील संकोचवश कदाचित् उस रूप से रुपये न मांग सकने के कारण ही उसने अखा से कहा होगा कि अखा उसे कोई आभूषण बना दें। इससे यह भी सिद्ध होता है कि अखा सुनारी का पेशा भी करते थे। धर्मभगिनी के संकोच को अनुभव करके ही प्रेम-भाव की भावुकता से प्यार उठने के लिए उन्होंने जितना रुपया उस महिला का उनके पास था, उससे कहीं अधिक कीमत का आभूषण उसे बना दिया। पर उस महिला ने अपनी पूरी रकम चोखी है या नहीं यह जानने के लिए वह आभूषण दूसरे सोनार के पास परखने के लिए ले गई। कहावत है कि सोनार अपने सगे से सगे व्यक्ति का भी आभूषण बनाते समय कुछ न कुछ मात्रा चोरी अवश्य कर लेता है। परीक्षण के समय उसने भी उस आभूषण से थोड़ा सा सोना काट लिया और बताया कि यह आभूषण तो दाम का अनुमान चार सौ रुपये लगता था।

अखा की धर्मभगिनी ने ही यह आभूषण ले जा कर अखा को दिखलाया था। अखा को उस दूसरे सोनार से जब इस बात का पता चला तब उन्होंने उस महिला से आभूषण मँगवा कर देखा। देखने पर पता चला कि उसका कुछ अंश कटा हुआ था। जो भी हो! अखा को इससे ठेस अवश्य पहुँची। संसार में कोई किसी का विश्वास ही नहीं करता है क्यों? क्या समाज में सब एक दूसरे के प्रति शंकाकुल ही रहते हैं? ऐसे प्रश्न उनके मन में अवश्य उठे होंगे। पूछने पर, कहा जाता है कि आरम्भ में उस महिला ने आभूषण को चोर द्वारा काटा गया बताया पर स्पष्ट पूछे जाने पर उसे सत्यवृत्ति के साथ सब घटना बतानी पड़ी। अखा ने उसी दिन से अपने धंधे को अन्तिम नमस्कार कर लिया।

मन में क्षोभ होने पर व्यक्ति यदि सदैव के लिए न सही, तो कुछ समय के लिए उन परिस्थितियों से अवकाश पाना ही चाहता है, जिससे उसके मनमें खिन्नता उत्पन्न हो जाती है। सम्भवतः अपने धंधे में काम आने वाले औजारों को कुएं में फेंक कर यात्रा के लिए पर्याप्त धन लेकर अथवा मन में उठ रही क्षोभ की लहरों को शांत करने के लिए भ्रमण के लिए निकल पड़े। काशी और प्रयाग भारत के सभी भागों के निवासियों के लिए श्रद्धा के केन्द्र रहे हैं। अखाने भी वहीं के लिए प्रस्थान किया।

कहा जाता है, चलते चलते मार्ग में जयपुर के गोस्वामी गोकुलनाथ के मंदिर में अखा ठहरे। वहाँ वैष्णवधर्मोचित विधान आराधना के आयोजनों को उन्होंने देखा और यथेष्ट सत्कार पाया।[१] 'गुरु कीधा में गोकुलनाथ' से स्पष्ट होता है कि उन्होंने वहीं उनसे दीक्षा भी ली होगी। यहाँ पर इस संबंध में पूर्ण मतैक्य नहीं है क्योंकि कुछ विद्वानों ने यह घटना जयपुर की न मान कर गोकुल की मानी है।

गोकुलनाथ सम्बंधी एक और किंवदंती का उल्लेख करके हम इस कथन की सत्यता पर विचार करेंगे। कहा जाता है कि वहां से विदा ले कर अखा काशी गए। वहां एक दीवाल की आड़ में छिप कर उन्होंने शांकर अद्वैत मत पर किसी संन्यासी का प्रवचन सुना। कदाचित अनधिकारी को वेद-वेदांत सम्बंधी ज्ञानार्जन का निषेध होने के कारण ही उन्हें छिपकर वह प्रवचन सुनना पड़ा होगा। काशी से शांकर अद्वैत से तृप्ति अनुभव कर लौटते समय मार्ग में वे फिर गोस्वामी विट्ठलनाथजी के यहाँ गए। वहाँ पर यह बताया जाता है कि शांकर अद्वैत से प्रभावित हो कर अखाने मठ के समस्त धन का परित्याग कर दिया था। अतः जब वे गोस्वामी गोकुलनाथ के द्वार पर पहुँचे, तब बिलकुल भिक्षुक सदृश लग रहे थे। द्वारपाल ने उन्हें भीतर नहीं जाने दिया। नाम पूछने पर जब उन्होंने 'अखा सेठ' बताया, तो वह किंचित विस्मित हुआ और भीतर जा कर उसने सब वृत्तांत बता कर उन्हें जाने देने या न देने की अनुमति मांगी। कहते हैं गोस्वामीजी ने स्वयं किसी वातायन से झाँक कर उन्हें फाटक पर खड़े देखा और पहचानने से इन्कार करके जानेकी मनाही कर दी। कहा जाता है वहांसे अखा अहमदाबाद वापस लौट आये और वैष्णव धर्म के विरोधी हो गए।

---

१ गुरु कीधा में गोकुलनाथ, गरवा गवर ने घाली नाथ;
मन हरे घोडो नव हरे, ले गुरु कल्याण शुं करे।

यहां पर कुछ बातें निश्चित रूप से संदिग्ध हैं। जयपुर में गोकुलनाथ जी का मंदिर और गोस्वामी गोकुलनाथ जी का निवास यह दोनों बातें अभी तक प्राप्त जानकारी के आधार पर असत्य प्रमाणित होती हैं।

श्री क. मा. मुन्शी ने 'गुजरात एण्ड इट्स लिटरेचर' में लिखा है कि अखा शाही टकसाल के प्रधान थे और किसी ने अहमदाबाद के शासक से उनकी शिकायत की थी कि उन्होंने शाही सिक्कों में मिलावट की है। इस अभियोग में उन्हें जेल में भी रखा गया था परन्तु जांच में अभियोग प्रमाणित न होने पर उन्हें मुक्त कर दिया गया था। छूटने पर अपने औज़ार कुएं में फेंक कर वे शांति की खोज में चल दिए। मुन्शी जी ने भी गोकुलनाथ गोस्वामी से अखा की भेंट जयपुर में न मान कर गोकुल में स्वीकार की है। श्री कृष्णलाल मोहनलाल झवेरी ने अपनी पुस्तक 'माइल्स्टोन्स इन गुजराती लिटरेचर' के प्रथम संस्करण में जयपुर और द्वितीय संस्करण में गोकुल स्वीकार किया है। बहुमत से यही ज्ञात पड़ता है कि यदि अखा की भेंट आचार्य वल्लभ के पौत्र गोस्वामी गोकुलनाथ से हुई तो वह गोकुल में ही हुई थी।

यहां पर जयपुर के सम्बंध में स्वतंत्र विचार करने की आवश्यकता है क्योंकि जयपुर नगर आंबेर राज्य की राजधानी के रूप में जयसिंह द्वितीय द्वारा सन् १७२८ ई. में बसाया गया है। पहले पहल श्री नरवरलाल इच्छाराम देसाई ने इस तथ्य की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया। इसी आधार पर दीवान बहादुर कृष्णलाल मोहनलाल झवेरी ने अपनी पुस्तक माइल्स-स्टोन्स इन गुजराती लिटरेचर, के द्वितीय संस्करण में सुधार किया और अखा-गोकुलनाथ भेंट का स्थान जयपुर के स्थान पर गोकुल स्वीकार किया। विचार करने से ज्ञात पड़ता है कि जयपुर की स्थापना होते ही जयपुर नगर इतनी प्रसिद्धि पा गया था कि आंबेर राज्य से सम्बंधित पुराने हवालों में भी जयपुर का ही उल्लेख किया जाने लगा। जयपुर से सम्बद्ध करके जिस किसी संदर्भ पर प्रकाश डाला गया था, उस पर अधिकांश लेखकों ने कदाचित् यह विचार नहीं रखा कि जयपुर की स्थापना ई. सन् १७२८ की ही घटना है। यदि यह कहा जाय कि जयपुर एक साधारण स्थान के रूप में पहले से ही रहा होगा और १७२८ ई. में उसे आंबेर की राजधानी बनाने के कारण प्रसिद्धि मिली तो यह असंगत होगा क्योंकि महाराज जयसिंह द्वितीय के नाम पर ही इसका

'जयपुर' नामकरण किया गया था। अतः हम कह सकते हैं कि सन् १७२८ ई से पहले के प्रसंग में जहाँ कहीं भी जयपुर का उल्लेख किया गया है, वह वास्तव में आंबेर के ही संदर्भ में आया है। परन्तु अखा से गोकुलनाथ जी की भेंट का जो स्थान 'जयपुर' नाम से किंवदंतियों में बताया गया है, वह आंबेर नहीं है। इसलिए हम लोकमत के इलाके में जयपुर को प्रसिद्ध स्वीकार करते हुए गोकुल में ही अखा और गोस्वामी गोकुलनाथ जी की भेंट मान्य समझते हैं।

नर्मदाशंकर देवशंकर मेहता ने 'गुरु कर्या में गोकुलनाथ–नगुरा मन ने पाख्यो नाथ' पाठ प्रामाणिक स्वीकार किया है। 'अहमदाबाद पुस्तक प्रसिद्ध कारक मंडल' की ओर से सन् १८८१ ई में प्रकाशित पुस्तक में भी यही पाठ मिलता है। प्रथम पाठ जिसमें 'करता करते मैं चाख्यो नाथ' तथा 'मन के मोटो मद हरे न गुरु कल्याण शुं करे' कहा गया है, निश्चित रूप से अखा द्वारा कहा गया नहीं जान पड़ता। कदाचित् इसी पाठ से भ्रम में पड़कर इन्हें वैष्णव विरोधी तक स्वीकार कर लिया गया। हो सकता है, किसी वैष्णव विरोधी ने इस प्रकार की तुकबंदी अखा के नाम से मढ़ कर उसके द्वारा अपना मंतव्य साधा हो। इस छप्पे में अखा ने स्पष्ट स्वीकार किया है कि अपने निर्गुण मन का नाथ पहनाने के लिए अर्थात् अपना संस्कार करने के लिए उन्होंने गुरु किया था। तत्कालीन समाज में गुरु करना इतना प्रचलित था कि अखा 'निगुरा' नहीं रह सके। इसीलिए अखा ने गोकुलनाथ गोस्वामी जैसे जाने माने भक्त और विद्वान को गुरु किया, पर वह निगुरा मन जिसका संस्कार करने के लिए ही उन्होंने 'सगुरु बनो' कहा है 'नगुरा' था और फिर भी 'नगुरा' ही रहा। यहाँ यह व्यंजना स्पष्ट है कि सम्प्रदाय मत की मान्यतायें और उसके विश्वास उस स्वतन्त्रचेता के हृदय पर अंकित नहीं हो सके। अखा की आस्था गोकुलनाथजी द्वारा दीक्षित वैष्णव-दीक्षा पर अविचल न रह सकी, जिससे अखा अपने मन ही मन असंतुष्ट हुए होंगे कि यह 'नगुरा था और गुरु करने के बाद 'नगुरा ही रहा क्योंकि इसे गुरुवचन में श्रद्धा उत्पन्न नहीं हुई। संभवतः इच्छानुसार मन को बोध न होने की स्थिति में ही वे काशी गए। वहाँ शंकर अद्वैत से उनके जिज्ञासु मन को तोष प्राप्त हुआ। ब्रह्मानंद को उन्होंने गुरु किया, विद्वानों ने ऐसा अर्थ उनकी रचनाओं से निकाला है। काशी से अहमदाबाद के लिए लौटते समय गोकुल आकर गुरु गोकुलनाथ से भेंट करने के पहले ही सम्भव है कि गोस्वामीजी को किसीने

बताया हो कि अखा सोनार ने जो आपस दीक्षा लेकर गया था, काशीमें महानंद से दुबारा दीक्षा ली है। यदि यह सत्य है कि लौटते समय गोकुलनाथजी ने अखा से मिलने से इन्कार कर दिया था तो उसका कारण यह भी हो सकता है कि गोस्वामीजीने अनुमान लगाया हो कि अखा की बुद्धि अस्थिर तथा विश्वास डगमग है। जिस व्यक्तिने उनसे दीक्षा लेने के उपरांत बिना कारण बताये या बिना सूचना दिये दूसरा गुरु कर लिया है, उससे मिलना समय नष्ट करना अनुचित समझते हुए यदि गोस्वामी गोकुलनाथ ने उन्हें पहचानने से इन्कार कर दिया हो तो आश्चर्य की बात नहीं। संभवतः उन्हें मूलभूत कारणों का तो ज्ञान था नहीं। फिर भी अखा ने न तो गोस्वामी गोकुलनाथजी की निंदा की है, न वल्लभ मत की। अवश्य वे वैष्णवधर्मसे हटकर वेदान्ताद्वैतमत के अनुयायी हो गए थे।

श्री नर्मदाशंकर देवशंकर मेहता अखा का जीवनकाल सन् १६१५–१६७५ ई० मानते हैं। अखे गीता'[1] के रचना संवत् का दोहा' हमें बताता है कि इसकी रचना संवत् १७०५ वि० में हुई थी। उस समय तक अखा परिपक्व अवस्था को प्राप्त हो चुके थे। दीवान बहादुर श्री कृष्णलाल झवेरी ने भी अखा का जन्म ईस्वी सन् १६१५ स्वीकार किया है। श्री अम्बालाल बुलाखीराम जानी ने अपनी पुस्तक 'अखा भक्त अने तेनी कविता' में अखा के 'प्राप्ति अंग' की जो पंक्ति दी है[2] उसमें ५२ की संख्या का उल्लेख जिस प्रकार मिलता है लेखक ने उसे अखा के जीवन के ५२ वर्ष के संदर्भ में ग्रहण किया है परंतु अखा के कुछेक पदों में कई स्थानों पर बावन[3] शब्द का प्रयोग मिलता है। अतः श्री उमाशंकर जोशी तथा श्री मेहता दोनों ने प्राप्ति अंग में '५२ वर्ष आयु' अर्थ न मान कर गुजराती लिपि के ५२ अक्षर' माना है। बावन ते शुभ्र आखी वही–मम्मा गम्मा की रही

1 संवत् सत्तर पंचोत्तरो, उत्तम पक्ष चैत्र मास।
सोमवार रामनवमी पूरण ग्रंथ प्रकाश॥

2 बावन ते शुभ्र आखी वही,
मम्मा गम्मा की रही उम्मी॥

3 क–बावन बाहरो रे, हरि नावे वाणी मांय।
ख–बावन बाहरो मरणो अखा, जे ते बावननी वळी वार।
ग–बेनुं बावन मांय जे शुभ्र विमाप कुपै टळ्यों।

समझी ' का अर्थ है कि इन ५२ अक्षरों के जंजाल में बँधे हुए अपने को पंडित समझने वाले व्यक्ति ५२ अक्षरों से बाहर जा तत्व है, उन्हें नहीं समझ सकते। अर्थात् उस परात्पर तत्व को अक्षर-ज्ञान द्वारा नहीं वरन् अनुभूति द्वारा ही अनुभव किया जा सकता है।

'अखे गीता' के रचना-सम्वत् को हम गलत नहीं कह सकते हैं क्योंकि सम्वत् १७०५ में चैत्र मास के शुक्ल पक्ष के सोमवार को रामनवमी तिथि पंचांग में मिलती है। परन्तु यह कहना कि यह अखा की प्रथम रचना है अथवा उस समय अखा की आयु बावन वर्ष की सम नहीं जान पड़ता। हाँ अखा के 'फुटकल अंग' में आरम्भ का एक कथन* और मिलता है जिसमें अखाने कहा है—

तिलक करता त्रेपन थया
जप मालाना नाका गया।

इससे स्पष्ट जान पड़ता है कि उन्होंने अपने लोकविहित कर्मकाण्डी जीवन को ईश्वरप्राप्ति के अनुकूल न पाकर ही कहा होगा कि तिलक लगाते माला जपते ५१ वर्ष का हो गया हूँ, अनेक तीर्थों का भ्रमण करते करते पैर थक गये हैं, फिर भी हरि की शरण नहीं प्राप्त हुई। इससे यह भी सिद्ध होता है कि अखा अपनी ५१ वर्ष की आयु तक वैष्णव मतावलम्बी थे, और इसके बाद उन्होंने अनुभव किया कि कदाचित् यह मार्ग ईश्वरप्राप्ति तक उन्हें न ले जा सके। उन्होंने वैष्णवमत का विधि-विधान सहित अनुसरण किया होगा। परंतु तीर्थ-व्रत करने के पश्चात् भी उनके वैरागी चित्त में राग (सगुणभक्ति) उत्पन्न न हो सकने के कारण वे ज्ञानी संत—निर्गुण संत—बन गये। श्रीनर्मदाशंकर देवशंकर मेहता ने अपने ग्रंथ 'अखाकृत काव्यो, भाग १ में स्वीकार किया है कि अखा ने फुटकल अंग की रचना 'अखे गीता' से पहले की थी, क्योंकि 'फुटकल अंग' छप्पयों में 'ब्रह्मानंद' का उल्लेख नहीं मिलता है। इस हिसाब से उन्होंने माना है कि यदि 'अखे गीता' इससे तीन-चार वर्ष बाद की रचना हो तो उनका जन्म समय लगभग सं. १६२६ के आता है अर्थात् ईसी सन् १५९२ या लगभग १६००। दीवान बहादुर श्रीकृष्णलाल झवेरी द्वारा मान्य अखा का जन्म है सन् १६१५ है।

---

* तिलक करतां त्रेपन थयां, जप मालाना नाका गयां।
तिरथ फरी फरी थाक्या चर्ण, तो ये न पहोंच्या हरि के शर्ण ॥

अखेगीता' की रचना अखा ने काशी के विद्वान् ब्रह्मानंद से दीक्षित होने के बाद की है। नीम करते करते पैर थक लेने पर भी जब हरि की चरण नहीं मिली—तब उन्होंने इस प्रकरण, ग्रंथ की रचना सम्वत् १७०५ में की। श्री नर्मदाशंकर देवशंकर मेहता के कथनानुसार इस ग्रंथ के मंगलाचरण में अखा ने श्लेष द्वारा अपने गुरु 'ब्रह्मानंद'[1] का उल्लेख किया है। इससे पहले अपने 'गुरुशिष्य संवाद' के छप्पों में उन्होंने 'ब्रह्मानंद' शब्द का प्रयोग नहीं किया है। 'अखेगीता' की रचना के बाद के ग्रंथों में 'ब्रह्मानंद' का बारम्बार प्रयोग इस बात को सिद्ध करता है कि अपने जीवन के उत्तर काल में ही उन्होंने ब्रह्मानंद को गुरु किया होगा। उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर अखा के जन्म के सम्बन्ध में कोई निश्चित सन्-सम्वत् बताना कठिन है, अवश्य यह प्रसिद्ध है कि है सन् १६०० के आसपास ही उनका जन्म हुआ।

अखा की जीवनी में ब्रह्मानंद के शिष्य बनने की कहानी बड़ी मनोरंजक है। मणिकर्णिका घाट पर काशी में आज भी साधु-सन्यासियों की जमघटी— काशी सीख भिक्षा ही देखने में आती है। उस समय भी यही दशा थी। अखा ने अनेक साधु-संतों की चरण-रज लेकर उनकी सेवा की पर उन्होंने देखा कि वे सब भी नितान्त सांसारिक लोगों की तरह ईर्ष्यालु और माया की लिप्सा में फँसे हुए हैं। अखा को उनमें किसी से भी तोष नहीं प्राप्त हुआ क्योंकि उनमें से कोई भी ऐसा नहीं मिला जिनसे वे संतुष्ट हो सकते। एक दिन घाट से कुछ हटकर एक सामान्य झोंपड़ी में अखा ने एक सन्यासी को एक ही शिष्य को बड़े मनोयोगपूर्वक वेदान्त-दर्शन समझाते देखा। कौतूहल उन्हें इसलिए हुआ कि काशी में ऐसा यह कौन गुरु है जो एक ही शिष्य को शिक्षा देने में तन-मन से जुट रहा है। फिर तो अखा ने उस सन्यासी की शिक्षण-पद्धति पर मुग्ध होकर नित्य नियमित रूप से सुनना अपना कार्यक्रम बना लिया। होता यह था कि सन्यासी ब्रह्मानंद वेदान्त दर्शन की व्याख्या विवेचना किया करते और शिष्य बैठा हुंकारी भरता रहता। एक दिन कदाचित् आलस्यवश शिष्य को नींद की झपकी आ गई, तब अपने स्थान पर बैठे बैठे बाहर से ही अखा हुंकारी भरने लगे। थोड़ी देर बाद वेदान्त से हटकर स्वामी ब्रह्मानंद का ध्यान इस परस्पर हाँ-हाँ पर गया, तो शिष्य को देखे और दिवा-निद्रा का सुख लेते देखा। अपने परोक्ष

१ चरण दिवसीने स्तुति कर्ह निद्र शक्ति ब्रह्मानन्दनी।

गीता के संबंध में जानने की जिज्ञासावश वे बाहर निकले। भटकते भटकते अखा से वहीं उनकी भेंट हुई, और उनके विद्या-व्यसन से पूर्णतया संतुष्ट होकर स्वामी जी ने अखा को विधिपूर्वक अपना शिष्य बना लिया। इस प्रकार हठात् या संयोगवशात् अखा स्वामी ब्रह्मानंद के शिष्य बने। श्रीकृष्णलाल मोहनलाल झवेरी ने 'माइल-स्टोन्स इन गुजराती लिटरेचर' के पृष्ठ ७६-७७ पर इस घटना की चर्चा की है। दीवान बहादुर नर्मदाशंकर देवशंकर मेहता ने भी 'अखाकृत काव्यो भाग १ के पृष्ठ १५ पर अखा द्वारा छिप कर एक वर्ष तक ब्रह्मानंद के उपदेशामृत का पान करते रहने की बात लिखी है। ब्रह्मानंदके गुरु के संबंध में कोई विशेष जानकारी मिलना कठिन है क्योंकि संन्यासियों में यह नाम विशेष प्रचलित है। अतः अखा के गुरु गौड़ 'ब्रह्मानंदी' के कर्ता ब्रह्मानंद थे या और कोई, यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता। श्री मेहता ने लिखा है कि ई॰ सन् १६०० में मधुसूदन सरस्वती के ग्रंथ पर ब्रह्मानंद ने टीका लिखी थी। सम्भव है, वही ब्रह्मानंद अखा के गुरु रहे हों। ब्रह्मानंद के संबंध में भी मेहता ने खोज की है कि उनके चार ब्राह्मणेतर शिष्य थे[1] —

ब्रह्मानंद

बूटाजी	गोपाल	अखाजी	नरहरदासजी

१ बूटा के फुटकर पद ही यत्र-तत्र मिले हैं। उनका लिखा कोई प्रसिद्ध ग्रंथ अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है।

२. गोपाल सूरत के निवासी थे। सन् १६०५ ई॰ में उनके द्वारा अहमदाबाद में '*गोपाल गीता*' *नाम की रचना का उल्लेख*[2] *मिलता है।*

३ नरहरिदासजी नाम के एक गुजरात के कवि का उल्लेख[3] प्राप्त होता है जिन्होंने गुजराती भाषामें 'श्रीमद्भगवद्गीता' का सुन्दर भाषान्तर किया है। 'नरहरि गीता', 'वशिष्ठ सार', 'भक्ति मंजरी' और 'उद्धव गोपी संवाद' नामक रचनाएँ नरहरिदासजी की मानी गई हैं।

---

१ अखाना गुरु ब्रह्मानंद स्वामी पछी भागे वैदिकोना गुरु बना करतां भक्ता अने शूद्र इत्यादि ब्राह्मण जातिना नहि एवा अधिकारी जनोने ब्रह्म विद्यानो उपदेश आपी कृतार्थ करनारा हता। अखाकृत काव्यो, भाग १, पृ॰ १६।

२,३ वही पृष्ठ १७।

श्री टी० व० नर्मदाशंकर दे० मेहता के अनुसार अखा की सम्प्रदाय-परम्परा इस प्रकार है[1]—१ ब्रह्मानंद, २. अखा ३ लालदास, ४ हरिकृष्ण, ५ बोतामुनि नारायण ६ जगन्नाथ, ७ स्वामी पूर्णानंद, ८ दयानंद, ९ भगवानजी महाराज। यहाँ पर सूरजी, गोपाल तथा नरहरिदास की से संबंधित उल्लेख इसका देना आवश्यक है। सूरजी की अभी तक ऐसी कोई रचना प्राप्त नहीं हो सकी है, जिसमें उन्होंने अपने को ब्रह्मानंद का शिष्य कहा हो[2]। गोपाल ने 'गोपालगीता' में कहा है[3]—

सत्गुरु स्वामी श्री रामराम, कृपा करी हरि मेव काम।
परमहंस गुरु केरी दया, छन्द सकल ग्रंथ माहि कह्या ॥

इससे स्पष्ट है कि उनके गुरु का नाम स्वामी श्रीरामराम था। नरहरि के संबंध में श्री नर्मदाशंकर देवशंकर जी मेहता ने 'अखानुं काव्यो' भाग १, पृष्ठ १० में 'नरहरिगीता' की एक पंक्ति उद्धृत की है— 'श्रीगुरु ब्रह्म वेदान्त प्रसार थयो नरहरिने संसार'–परन्तु इस प्रकरण में उपर्युक्त 'ब्रह्म' से ब्रह्मानंद का अर्थ लगाना उन्होंने विश्वस्त नहीं समझा है। गुजरात के प्रतिष्ठित विद्वान् उमाशंकर जोशी तथा श्री के० का० शास्त्री ने इन चारों सन्त-कवियों का समकालीन होना स्वीकार किया है। परंतु इससे इस निष्कर्ष पर पहुँचना कि ये चारों एक ही गुरु ब्रह्मानंद के शिष्य थे, हमें मान्य नहीं है।

अब प्रश्न यह उठता है कि अखा द्वारा प्रयुक्त शब्द 'ब्रह्मानंद' उनके गुरु अर्थ में प्रयुक्त हुआ है या इसका अर्थ अभिधा में ही विचारणीय है। यदि गोकुलनाथ के लिए अखा स्पष्ट शब्दों में लिख सकते हैं कि उन्हें गुरु किया था तो उसके बाद जिन गुरु के मत से वे एकतया संतुष्ट हुए, उनका उल्लेख उन्होंने क्यों नहीं किया? प्रबंध कर्ता के छप्पा सं०[4] अखा ने कहा है—

चतुर्भुज-हूँ टोले रुपी कारी अजानक हरि प्रकट भयो,
भले, आ अंतर कीधो काम, त्यार पछी ऊँचरी गुरु नाम।

इससे पहले के छप्पा में उन्होंने गुरु करने में 'गोकुलनाथ' कहा है। चूंकि स्पष्ट है कि इसके बाद का विवरण 'चतुर्भुज हूँ टोले एनो' है।

---

१ अखाकृत काव्यो भाग १, पृष्ठ १०।
२ अखा एक अध्ययन, पृष्ठ ६० लेखक—श्री उमाशंकर जोशी।
३ गुजराती काव्य दोहन भाग २, पृष्ठ ५०१।
४ अखानी वाणी, भाग १ लो, पृष्ठ २०, छप्पा १६८।

बात एक ही सिलसिले में कही गई है, इसलिए इसका भावार्थ यह निकलता है कि भक्त की अंतरात्मा बेचैन थी, उसमें जन्म-जन्मान्तर से हरि-मिलन की चाह कसक रही थी। गोस्वामी गोकुलनाथ को गुरु करने पर भी 'नगुरा' मन नगुरा ही रहा। अचानक एक दिन उनके समक्ष हरि का रूप प्रकट हो गया। शायद यही बात यदि कोई सूफी कहता तो कहता कि अचानक एक दिन दुई का पर्दा उठ गया। इसको इस तरह भी समझा जा सकता है कि भक्त का अन्तरात्मा ईश्वर प्रेम में विरहाकुल था। गोस्वामी गोकुलनाथ को गुरु बनाने पर भी हरि की प्रतीति नहीं हुई—विरह बढ़ता ही रहा कि अचानक एक दिन भजन करते उन्हें उस परात्परतत्व का साक्षात्कार हो गया जिसके लिए वे व्याकुल थे। उसके आगे भक्त कहते हैं[1]—

परातपर ब्रह्म परगट थया, गुण दोषो ते विसर्या गया,
ते नर ने आत्मा गुरु थये, अहमुं अखाजु ते चीतवे ॥

इससे यह भी सिद्ध किया जा सकता है कि उन्होंने अन्ततोगत्वा अपने आत्मा को ही अपना गुरु स्वीकार किया है। आत्मानुभूति द्वारा ही उन्हें ब्रह्मानंद की प्राप्ति हुई। ब्रह्मानंद के सम्बन्ध में उन्होंने स्वयं ही कह दिया है कि इसको वही समझ सकता है, जिसने इसका अनुभव किया है। यही है कबीर का 'अनुभवसांचा पंथ' जिसे आत्मा को गुरु करने के बाद अखा ने इन शब्दों में व्यक्त किया है। आत्मा की प्रतीति को सभी संतों ने एकमत से स्वीकार किया है, सभी ने इसे ही ब्रह्मानंद माना है। आत्मानुभूति के द्वारा ही जीव ब्रह्म का साक्षात्कार करता है। अतएव विद्वानों का यह कहना है कि गोस्वामी गोकुलनाथ के मत से संतुष्ट हो सकने की स्थिति में अखा ने अवश्य किसी दूसरे व्यक्ति को गुरु किया हो होगा, समीचीन नहीं। उपर्युक्त छप्पा के उदाहरण से यह सिद्ध करना कठिन नहीं है कि गोकुलनाथ गोस्वामी के बाद उन्होंने किसी को गुरु किया ही नहीं आत्मानुभूति ने ही उनको सच्चा मार्ग दिखलाया। बात स्पष्ट करने के लिए यहाँ हम वे छप्पे 'अखानी वाणी' भाग १ के प्रवेश अंग से उद्धृत कर रहे हैं—

मले भलो हुं एवुं न रह्यो, हरिने काजे मन आवर्यो
पछी हुं थयो में बाझ, सोच न भांगी मननी दाझ,
तरपन वेस कोई नी रह्यो, पछे गुरु करवाने गोकुल गयो ॥ १६६ ॥

---

१ छप्पा संख्या १६६, प्रवेश अंग, अखानी वाणी, भाग १ से।

गुरु कर्या में गोकुलनाथ, नगुरा मनवे नाहीं नाथ
मन मनावी सगुरो थयो, पण विचार नगुरानो नगुरो रह्यो
विचार करी पाम्यो छे अखा, जन्मजन्मनो क्यां छे सखा? ॥ १६७ ॥

वसु कळ छु ऐसो रयो आवी अचानक हरि प्रगट थयो,
अप महापुरुषनो चोथो आप, शेनो न आवे वरे उपाय
अखे उर अंतर सींच्यो आप, त्यार पछी रूपी शुभ वाण ॥ १६८ ॥

परात्पर ब्रह्म पदम्य यया, गुण दोषो ते दिनमा गया
सद्गुरु आम्नायु मे ऊँचाण वस्तु न आवे अखो अजाण,
जे जाने आत्मा गुरु बने, वस्तु अजाणु ते प्रीछवे ॥ १६९ ॥

इन प्रमाण से स्पष्ट ही कुछ विचार एकदम सामने हो जाते हैं। एक तो यह कि गोकुल जाकर वहीं गोस्वामी गोकुलनाथ को अखा ने गुरु किया था। दूसरे यह कि उसके बाद से आत्म-प्रतीति होने तक अखा ने कोई दूसरा गुरु नहीं किया। इससे यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि 'अखेगीता' की रचना से पहले की रचनाओं—छप्पा पुटकल आदि—में 'ब्रह्मानंद' शब्द का प्रयोग न होने का क्या कारण है? अतः 'अखेगीता' अथवा उसके बाद की रचनाओं में प्रयुक्त 'ब्रह्मानंद' शब्द से स्वामी ब्रह्मानंद के शिष्य होने का अनुमान लगाना निराधार है। 'प्रसंग अंग' के ये ऊपर दिए हुए छप्पे निःसंदेह अखा की जीवनी के एक अभूतपूर्व अध्याय पर प्रकाश डालते हैं। इस प्रसंग में एक बात और खटकने वाली है। वह यह कि अखा ने अपनी रचनाओं में कहीं काशी का उल्लेख नहीं किया है। 'गुरु करावे गोकुल वर्यो' और 'गुरु कर्या मैं गोकुलनाथ' अखा ने साफ कहा है, तो क्या कारण है कि उन्होंने अपना काशी और ब्रह्मानंद का कहीं नाम तक नहीं लिया? इसी संदर्भ में 'सद्गुरु आम्नायु में ऊँचाण—वस्तु न आवे अखो अजाण' से बात और साफ हो जाती है। अखा स्वयं किसी हरिपावन के गुणानुवाद करते हैं कि मैं अज्ञानी हूँ—अर्थात् किसी दूसरे की बताई हुई बातें पर चर्चितचर्वण नहीं करता हूँ। इससे सिद्ध होता है कि वह केवल गुरु की ओर ही नहीं कह रहा हूँ। इससे सिद्ध होता है कि किसी गुरु से कुछ सुन-सुना कर उन्होंने नहीं कहा है। 'कैवल्यगीता' ग्रंथ में भी अखा ने कहा है 'ना मोहि व्यसन व्यापार उपासन, ना मोही मंत्र गुरु नहिं चेरा' (१४) जिसका अर्थ हो सकता है कि कोई लौकिक

गुरु उन्होंने नहीं किया है। 'अखागीता' के प्रारम्भ की पंक्ति "चरण चितकीने स्तुति करूँ, चिद शक्ति ब्रह्मानन्दमी" में ब्रह्मानंद का अर्थ गुरु ब्रह्मानंद भी हो सकता है और ब्रह्मानंदरूप तत्व भी। अखानी वाणी, भाग १ के पृष्ठ १०६ पर 'अखाना पद' संख्या १ की प्रथम पंक्ति 'गुरुमा गुरु मस्वारे, जेवा संत निरंजन देव' का यदि इसी न्याय से अर्थ करें तो अखा के गुरु का नाम निरंजनदेव भी सिद्ध किया जा सकता है। फिर गुरु के संबंध में अखा ने (पद संख्या २ में) कहा है—'ते गुरु सेविये रे, जेनुं मूल तोल न माप'। इस पंक्ति से यह सहज ही सिद्ध हो सकता है कि यहाँ अपरोक्ष आत्मा को ही गुरु मानने की राय दी गई है। इससे स्पष्ट है कि 'ब्रह्मानन्द' से काशी के स्वामी ब्रह्मानन्द का अभिप्राय अनिवार्य नहीं है।

फिर भी अखा की वाणी में शांकर अद्वैत के सिद्धान्तों का ऐसा प्रामाणिक और प्रामाणिक प्रतिपादन किया गया है कि यह किसी आप्त स्रोत से ही प्राप्त किया हुआ प्रतीत होता है। यदि अखा इतने शिक्षित नहीं थे कि उन्होंने अद्वैत वेदान्त के आकर ग्रंथों को पढ़कर यह ज्ञान प्राप्त किया हो, तो उन्होंने किसी गुरु से ही यह सब पाया होगा। वे गुरु ब्रह्मानन्द थे अथवा कोई अन्य यह जटिल समस्या समाधान की अपेक्षा रखती है। यदि अखाने 'ना मोहि मंत्र गुरु ना चेरा' लिखा है, तो उन्होंने कतिपय साखियों में आध्यात्मिक सिद्धि के लिए गुरु का होना अनिवार्य भी बताया है—

अखा गुरु कृपा बिना रखे करे हरि की आस।
गिने मुकने खड़े ककये, ज्यूं का त्यूं याव कागस॥
वेदरवीं दुनिया अखा, और आतमदर्शी कोय।
वाको नैन सद्गुरु दिए, ताको आतमदर्शन होय॥
जीव सकल पथ्थर अखा, सद्गुरु करे ताहे देव।
सो ही जगत में पूजिये, ये सद्गुरु का भेव॥

इसके अतिरिक्त भारतीय परम्परा में भगवान् राम और भगवान् कृष्ण जैसे पूर्णावतारों के लिए भी गुरु द्वारा दीक्षित होना अनिवार्य संस्कार माना गया है। फिर अखा को ही इसका अपवाद क्यों माना जाय? अखा की किस प्रकार की उक्तियोंके आधार पर यह सिद्ध किया जाता है कि अंततोगत्वा

इन्होंने आत्मा या ब्रह्म को ही आनंद युक्त माना था। उसी प्रकार की अनेक उक्तियाँ कबीर में भी मिलती हैं। परंतु इनके आधार पर न तो यह सिद्ध होता है और न सिद्ध किया गया है कि रामानंद कबीर के गुरु नहीं थे और रामानंद का अर्थ केवल राम, ब्रह्म या आत्मा का आनंद है। अतएव, कबीर की उपर्युक्त उक्तियों के आधार पर ही उनके गुरु रामानंद के व्यक्तित्व को अंतिम रूप से असिद्ध ठहराना कठिन है।

इस प्रसंग पर विचार करते हुए हमारा ध्यान अपने देश के साहित्य की उस परंपरा पर भी जाना चाहिए जिसके अनुसार ग्रंथ के मंगलाचरणों में एक ही श्लिष्ट शब्द के द्वारा कवियों ने भगवान् और अपने गुरु दोनों की वंदना की है। यहाँ रूप गोस्वामी के 'विदग्ध माधव' और 'उज्ज्वलनीलमणि' से एक एक उदाहरण दिया जा रहा है—

अनघमधुरोदयः स्फुरदमंदकंदर्पश्री,
निकुंजमममेदमदरसम्बन्धचरितः।

निरंकुशकृपाम्बुधिर्मम विहाररसप्रमदा
सनातनतनुः सदा मनसि तनोतु तुष्टिं प्रभुः ॥

(विदग्धमाधव-सूत्रधार का कथन)

नामाकृष्टरसज्ञः शीलेनोद्दीपयन्सदानन्दम्।

निजरूपोत्सवदायी सनातनात्मा प्रभुर्जयति ॥

(उज्ज्वलनीलमणिः १।१)

इन दोनों ही मंगलाचरण पद्यों में 'सनातनः' और 'सनातनात्मा' शब्द भगवान् कृष्ण और सनातन गोस्वामी दोनों के एक साथ सूचक हैं। संस्कृत साहित्य से इस प्रकार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। हिंदी में सूरदास और गोस्वामी तुलसीदास ने इसी शैली में भगवान् और अपने गुरु दोनों की एक साथ वंदना की है। सूरदास जी का यह पद बहुत प्रसिद्ध है—

भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो।
श्री बल्लभ नखचंद छटा बिनु सब जग मांझ अंधेरो।

यहाँ स्पष्ट ही श्रीवल्लभ लक्ष्मीवल्लभ भगवान् कृष्ण और महाप्रभु वल्लभाचार्य दोनों का वाचक है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने इसी शैली में मानस में अपने गुरु नरहरिदास के प्रति प्रणति समर्पित की है—

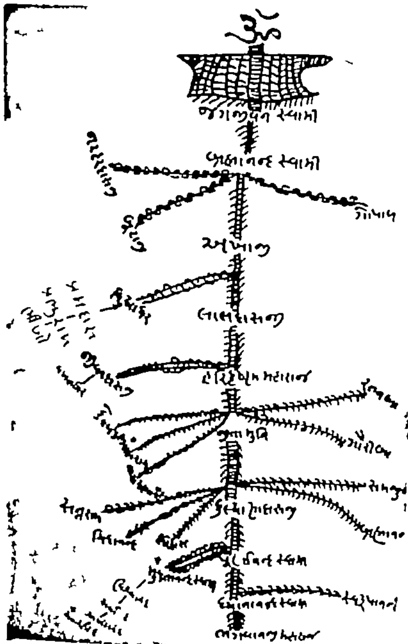
बंदौं गुरुपद कंज कृपासिंधु नररूप हरि।
महामोह तमपुंज जासु बचन, रविकर निकर॥

यदि अखा द्वारा प्रयुक्त 'ब्रह्मानंद' पद इसी परंपरा के अनुसार ब्रह्मतत्त्व एवं स्वामी ब्रह्मानंद दोनों का, बोधक मान लिया जाय, तो इस जटिल समस्या का ऐसा समाधान मिल जाता है जो 'ब्रह्मानंद' के भिन्न भिन्न अर्थ करनेवाले दोनों पक्षों के लिए समाधानकारक हो सकता है।

अखा-संबंधी शोध-कार्य करते हुए इस संबंध में एक नवीन तथ्य अवगत हुआ है जो अखा के गुरु की समस्या पर नवीन दृष्टि से विचार करने की भूमिका प्रस्तुत करता है। बड़ौदा विश्वविद्यालय के गुजराती विभाग के विद्वान् प्राध्यापक डॉ० योगीन्द्र जगन्नाथ त्रिपाठी जी ने मुझे अपने यशस्वी पिता संतप्रवर सागर महाराज की कुछ महत्त्वपूर्ण डायरियाँ और नोटबुकें कृपापूर्वक दिखाई हैं। एक नोटबुक में एक पृष्ठ पर सागर महाराज ने अखा की गुरु एवं शिष्य-परम्परा का वंशवृक्ष, अपने हाथ से बनाया है और दूसरे पृष्ठ पर अंग्रेजी में इस परंपरा के प्रमुख संतों के विषय में अपनी जानकारी को सूत्ररूप में अंकित किया है। सागर महाराज के इन उल्लेखों का मूल आधार क्या है यह स्पष्ट नहीं है। यहाँ उनकी प्रतिलिपि और प्रतिच्छाया (फोटो) दोनों ही दी जा रही हैं—

क्रमांक १

- ॐ
  - जगजीवन स्वामी
    - ब्रह्मानंद स्वामी
      - नारददास
        - दिवाकर
          - प्रेमदास
            - प्रभुराम
              - भीखो
      - नबा जी
        - नानकदास जी
          - जीवनदास
            - बखतगीर
          - हरीकृष्ण महाराज
            - केशवपुरी
            - शीतामुनि
              - सन्तराम
              - चिदानन्द
              - हरिदास
              - कल्याणदासजी
                - मुक्तानंद स्वामी
                  - निरवानंद
                    - सदानंद
                      - अद्वैतानन्द
                        - चैतन्यानन्द
                - पूर्णानंद स्वामी
                  - स्वरूपानंद
                  - ध्यानानन्द स्वामी
                    - भगवानजी महाराज
              - समसुख
              - ब्रह्मानंद
            - माधाराम
            - नारायणानन्द
            - रतनबा
            - मीराबा
      - बूढ़ा जी
      - गोपाल



परिचय अगले पृष्ठ में देखिए

ॐ

Jagjivan Swâmi, whereabouts not known; lived at Benares

Brahmanand Swâmi – Do –

Akhâji, Goldsmith, Jaitpur (Ahmedabad)

Lâldâsji, Chhipâ Bhâvsar; Virpur in Vadâvnar State

Vidyâdhar, Nâgar Brahman (Lunâvâda)

Jivandâsji, Khadayata Bania of Khânpur in Lunâvâda, his Samâdhi near Shehera in Lunâvâda State

Harikrishna Dave Nâgar Visnagrâ, Lakha Patel's pole, Ahmedabad

Ratanbâi, his daughter

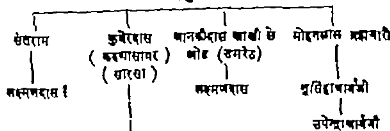
Jita Muni, Barot of Nadiâd, his Samâdhi at Uttran near Surat

Kalyandâsji Patidar of Vinel in Cambay State, his Samâdhi near Kahânva (? Jambusar)

सागर महाराज के हाथ की लिखी हुई टिप्पणी

क्रमांक २





क्रमांक ३

Jagjivan Swami, whereabouts not known, lived at Benaras

Brahmanand Swami— —do

Akhaji, Goldsmith, Jetalpur (Ahmedabad)

Laldasji, Chhipa Bhavsar, Virpur in Vadasinor State

Vidyadhar Nagir Brahmin (Lunavada)

Jivandasji, Khadayata Bania of Khanpur in Lunavada, his Samadhi near Shimalia in Lunavada State

Harikrishna Dave, Nagir Visnagra, Lakha Patel's pole, Ahmedabad.

Ratanbai, his daughter

Jita Muni Barot of Nadiad, his Samadhi at Uttan, near Surat.

Kalyandasji, Patidar of Unel in Cambay State; his Samadhi near Kahanva (T Jambusar)

सागर महाराज की इस सामग्री में अखा की गुरु-परम्परा जगजीवन स्वामी से आरंभ हुई मानी गई है। जगजीवन स्वामी को अखा के लोकप्रसिद्ध गुरु ब्रह्मानंद का गुरु माना गया है। उनके संबंध में अंग्रेजी में यह लिखा गया है कि वे बनारस में रहते थे पर उनके विषय में इससे अधिक ज्ञात नहीं है। यदि जगजीवन स्वामी का व्यक्तित्व और स्थिति स्पष्ट हो जाय तो संभव है अखा के गुरु की समस्या का अधिक निश्चयपूर्ण समाधान हो सके।

हिंदी साहित्य के इतिहास में जगजीवनदास नाम के तीन संतों का उल्लेख मिलता है। ये तीनों जगजीवनदास तीन भिन्न-भिन्न संप्रदायों के थे। जगजीवनदास प्रथम दादूपंथी थे। जगजीवनदास द्वितीय निरंजनी संप्रदाय के प्रमुख बारह अखाड़ों में से जिनको निरंजनी महंत की संज्ञा प्राप्त है। जगजीवनदास तृतीय सतनामी संप्रदाय के आचार्य थे। जगजीवनदास निरंजनी के विषय में जो वृत्त मिलता है उससे यह अनुमान होता है कि वे या तो अखा के समसामयिक होंगे अथवा उनके कुछ ही बाद पीछे हुए होंगे। सतनामी संप्रदाय के आचार्य जगजीवनदास अखा के परवर्ती थे क्योंकि उनका जन्म सं० १७२७ या १७१६ माना गया है[1], जबकि अखा का जन्म १६४९ के आसपास माना जाता है। अब केवल दादूपंथी जगजीवनदास रह जाते हैं। कालक्रम की दृष्टि से विचार किया जाय तो इन जगजीवनदास अखा के गुरु ब्रह्मानन्द का गुरु होना असंभव नहीं कहा जा सकता। ये जगजीवनदास दादू के शिष्य बताये जाते हैं। दादू के जन्मकाल के विषय में प्रायः सभी विद्वान् एक मत हैं। वे मुगल सम्राट् अकबर के समकालीन थे और उनका जन्म फाल्गुन सुदी ८ बृहस्पतिवार सं० १६०१ मान्य है। इस प्रकार दादू का जन्म अखा से लगभग पचास वर्ष पूर्व पड़ता है। जगजीवन के विषय में दादू के जो विवरण उपलब्ध हैं उनसे यह प्रतीत होता है कि आयु में या तो वे अपने गुरु के समवयस्क होंगे अथवा अधिक से अधिक कुछ ही कनिष्ठ। इसलिए इनका समय भी अखा के पर्याप्त वर्ष पूर्व माना जा सकता है। इनके काशीवासी होने के भी प्रमाण मिलते हैं और इस अवधि में ब्रह्मानन्द नाम के इनके कोई शिष्य यहाँ रहे हों, तो इसे असंभव नहीं कहा जा सकता। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने इनके विषय में लिखा है— 'संत दादू दयाल के प्रसिद्ध शिष्यों में

---

1 उत्तरी भारत की संत परंपरा, पृष्ठ ५११।

जगजीवन का भी नाम लिया जाता है जो एक महान् पंडित थे। ये काशी में बहुत दिनों तक रह कर अध्ययन कर चुके थे और वहाँ से दूंढारण चले आए थे। इन्होंने आमेर में आकर दादूदयाल को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा था, किंतु उनके गंभीर एवं निर्मल स्वभाव के सामने इनके पाण्डित्य की एक न चली और अंत में ये इनके शिष्य हो गये। इनका थांबा दहली (दौसा) में है और इनकी रचनाएं भी बहुत हैं। [1] चतुर्वेदी जी ने यह भी बताया है कि दादू के प्रसिद्ध विद्वान् शिष्य सुंदरदास अपने गुरु के देहावसानके पश्चात् इन्हीं के पास रह कर ' गुरुवाणी ' को समझते और कण्ठस्थ करते थे। [2] उन्होंने लिखा है—'गुरु-वाणियों के समझने में इन्होंने रज्जबजी एवं जगजीवनजी से विशेष सहायता ली थी ...। [3] जगजीवनजी ने काशी में सुंदरदास के दर्शन और साहित्य के गहरे अध्ययन की समुचित शिक्षा- दीक्षा की व्यवस्था भी की थी। [4] राघोदास ने अपनी 'भक्तमाल' में दादूदयाल के बावन शिष्यों की जो सूची दी है, उसमें भी इन जगजीवन का नाम है[5]

> जगजीवन, जगनाथ, तीन गोपाल बखानूं ।
> मोहनदास, हून पहसी, केसव दैसानूं ॥
> माधवमुरदास, नागर, निजाम मम राघो बंधि करत ।
> दादूजी के पंथ में ये बावन दिग्गज महंत ॥ ६२ ॥

आचार्य प्रवर क्षितिमोहन सेन ने भी अपने प्रसिद्ध बंगला ग्रंथ 'दादू' में इन जगजीवन की चर्चा की है। [6] उन्होंने बताया है कि दादू आमेर में रहते थे और जगजीवन दौसा के पास दहली में। इस प्रकार दूर होते हुए भी गुरु दादू अपने शिष्य जगजीवन की सहायता किया करते थे। इस प्रसंग की एक साखी मिलती है—

---

१ वही पृष्ठ ११३।
२ वही, पृष्ठ ११७–११८।
३ वही पृष्ठ ११८।
४ वही, पृष्ठ ११८।
५ वही, पृष्ठ ११९।
६ दादू पृष्ठ ६१६२।

जगजीवनजी ब्रह्मही आमी थे गुरदेव ।
ताही समय साखी लिखी जगजीवन प्रति भेव ॥

कहा जाता है दादू ने इनको यह साखी लिखकर भेजी थी—

दादू सहजैं मेला होयगा हम तुम हरी के दास ।
अंतरगति ही मिलि रहे करि परगट परकास ॥

अर्थात् उसका सहज मिलन होगा हम तुम सब उस हरी के दास हैं । यदि अंतर को प्रभु से युक्त रखा जाय, तो वह प्रकाश स्वयं प्रकट होता है । जगजीवन अपने शास्त्रज्ञान के अभिमान से आक्रान्त थे । आचार्य क्षितिमोहन सेन ने यह दोहा भी उद्धृत किया है जिसमें यह बतलाया गया है कि जगजीवन काशी विद्या और शास्त्रज्ञान के अभिमान से भरे हुए दादू के पास पहुँचे किन्तु उनका एकही पद सुनकर वे उनके शिष्य-सिरताज हो गये—

जगजीवनजी पैज करि आये पारखा काज ।
गुरु दादू यहु पद कह्यौ, भए तबहि सिष सिरताज ॥

बताया जाता है कि इस दोहे में जिस पद का संकेत है, वह दादू के पदों में राग रामकली संख्या १६८ है । इसका सारांश है :—

'हे पंडित, जिससे राम मिलें, वही करो । वेद पुराण पढ़ पढ़ कर क्या विपदा के फेर में पड़े हो ? जिस से आतोष प्राप्त हो, वह औषध करो । जिस समय प्राणों को प्रभु का स्पर्श प्राप्त होता है, उस समय परम सुख मिलता है और संसार के बंधन खुल जाते हैं । इन्द्रियों की अपार अग्नि से शरीर जलता रहता है, जिस सदानंद से तन-मन शीतल होता है उसी जल में डूबना चाहिए । वह पथ मुझे बतलाओ जिस से पार उतरा जा सके । वह विचार करो, जिस से भूल कर भी मन आपद पर न आय और आपं इधर उधर न फिरे । गुरु उपदेश के मंत्र-प्रदीप को हाथ में लो, जिस से अन्धकार दूर हो जाय और सब कुछ देखा जा सके । दादू कहते हैं वही पंडित है और वही ज्ञाता है जो यह जानता है कि राम कैसे मिलेंगे ।"

शोध की वर्तमान स्थिति में अपने पास अनुमान ही एक मात्र साधन है । अनुमान की पुष्टि के लिए ब्रह्मानंद और जगजीवन संबंधी तथ्यों

का अधिक अन्वेषण और उपलब्धि वांछनीय है। अखा का संबंध काशी के ब्रह्मानंद और उनके गुरु दादू के शिष्य जगजीवन के साथ जोड़ने में किसी प्रकार की बाह्य असंगति नहीं दिखाई पड़ती। अखा की अधिकांश हिंदी रचना ज्ञानमार्गी निर्गुणिया संतों की तरह संबद्ध है। इस दृष्टि से ये सीधे कबीर और दादू आदि हिंदी संतों की परम्परा के साथ जुड़े हुए हैं। उन्हें इस परंपरा के साथ जोड़नेवाला कोई सूत्र होना तो अनिवार्य ही है, और यह सूत्र यदि दादू के शिष्य और ब्रह्मानंद के विद्वान् गुरु जगजीवन ही हों, तो इसे किसी प्रकार से अस्वाभाविक या असंभव नहीं कहा जा सकता। मैं इस के पूर्ण सत्य होने का दावा नहीं करता केवल सागर महाराज द्वारा प्रस्तुत तथ्यों के अन्वेषण और परीक्षण का ही आग्रह रखता हूँ। सागर महाराज की कोटि के सब संत प्राय सब प्रकार के पूर्वाग्रहों से मुक्त होते हैं इस लिए उनके द्वारा प्रस्तुत तथ्य गंभीर अन्वेषण की अपेक्षा रखते हैं। सागर महाराज को जगजीवनवाला सूत्र कहाँ प्राप्त हुआ, यह बात स्पष्ट नहीं हो सकी है, पर यह अनुमान किया जा सकता है कि उन्होंने उसे अखा की संत-परंपरा में ही कहीं पाया होगा।

इतना ही नहीं सागरधाम प्रेममाला पुष्प १ के रूप में 'सागर नी विचारणा' नाम की जो पुस्तिकायें प्रकाशित हुई हैं उसके तृतीयांक के प्रारंभिक पृष्ठ पर ही सागर महाराज ने इस विषय पर एक नया ही प्रकाश डाला है।

26-8-14

18-8 14 Karachi Sind.

Amongst Gujarati Bhaktas Narsimha Pritam Akha and Mirabai and many others are realised souls They have reached the Goal through the Path of Devotion. Akha received the following Mantra from his Guru Brahmananda

गुजराती भक्तोमां नरसिंह प्रीतम, अखो, मीराबाई अने बीजा अनेक आत्माओ छे। आ बधाने पोतानुं लक्ष्यबिंदु भक्तिना मार्गथी सिद्ध कर्युं छे।

अखाने पेला गुरुदेव ब्रह्मानंद पासेथी नीचेनो मंत्र मळ्यो—¹
ॐकार ब्रह्म, निराकार राम,
काया काशी, हृदये स्थान
ज्योतिस्वरूप आत्मप्रकाश, सतनिरंजन राम
त्रिभुवनव्यापी, तारक राम, तन निजमनमां म्हालुं
" सोऽहं ब्रह्ममां समाउं, " ॐ ।

To contemplate upon this Mantra every moment. This was the commandment of the Revered Guru. Akha's Gurubhakti is also unparalleled in his times

ॐ ॥ सत्य ॐ ॥

प्रत्येक पळे आ ज मंत्रनुं ध्यान धरवुं ए प्रमाणे अखाना गुरुदेव नी तेमने आज्ञा हती।²

अखानी गुरुभक्ति पण तेना समयमां अप्रतिम हती।¹

इस मंत्र में विचारणीय बात यह है कि यह मंत्र जन-साधारण की बोलचाल की भाषा में है संस्कृत में नहीं। यदि यह सत्य हो कि यही मंत्र अखा को उनके गुरु से मिला था तो यह निश्चयही शास्त्रीय परंपरा का मंत्र नहीं है। इस का संबंध उन संतों की परम्परा से ही होना चाहिए जिन्होंने 'संस्कृत है कूपजल भाषा बहता नीर' घोषित किया था। यदि यह ठीक है तो अखा की गुरु-परंपरा का संबंधन कहे किसी संत के साथ युक्त होना असंभव नहीं माना जाना चाहिए।

प्रत्येक संत की रचनाविधि में कुछ ऐसे तथ्य और सत्य सुरक्षित रहते हैं, जो गोपनीय माने जाते हैं और सर्वसाधारण की जानकारी के लिए अप्रकाशित या

---

१ गुजरातनी भक्तोमें नरसिंह, प्रीतम अखा, मीराबाई और ऐसे दूसरे अनेक मुख्य नाम हैं। इन सबने अपना अपना मत भक्ति के मार्ग से सिद्ध किया है।

२ अखा को उनके गुरुदेव ब्रह्मानंद से निम्नलिखित मंत्र मिला था —
प्रत्येक क्षण इसी मंत्र का ध्यान करना यह उनको उनके गुरुदेव की आज्ञा थी। अखा की गुरुभक्ति भी उनके समय में अप्रतिम थी।

प्रकाशित करने योग्य नहीं समझे जाते। संभव है, सागर महाराज द्वारा प्रस्तुत हस्तलिखित ग्रन्थ इसी कोटि के हों और वे उन्हें अखा की शिष्य परंपरा के अंतर्गत वैसल से उपलब्ध हुए हों। गुजरात के जंबूसर ताल्लुके में कहानवा बंगला नामक उच्चकोटि के साधुओं का एक आश्रम है। यहां के साधु भी अखा की शिष्य-परंपरा में हैं। अखा की शिष्य प्रणाली का जो वंशवृक्ष पीछे दिया गया है, उस में अंतिम ममतारामजी महाराज हैं। ममतारामजी महाराज सागर महाराज के परम मित्र थे। ममतारामजी महाराजने 'संतों की वाणी' की प्रस्तावना में बताया है कि उनके आश्रम में बहुत से संत महात्माओं की वाणी का अप्रसिद्ध ग्रन्थ-भंडार संचित और सुरक्षित है। सागर महाराजने इस आश्रम के प्राचीन वाणी-भंडार का अनुशीलन और अन्वेषण ममतारामजी महाराज के सहयोग से किया था। 'संतों की वाणी' का उपोद्घात भी उन्होंने ही लिखा है। इस लिए यह संभव है कि सागर महाराजको अखा की अंतरंग साधना प्रणाली के कुछ ऐसे तथ्यों की जानकारी रही हो जो शुद्ध साहित्यिक अध्येताओं और अनुसंधाताओं से छूट गए हों।

अखा का प्रभाव गुजरात के आध्यात्मिक क्षेत्रों में बहुत व्यापक है। मेरा अनुमान है ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर काशी से लौट आने के बाद अखा ने गुजरात छोड़ कर बाहर यात्रा नहीं की। यदि उन्होंने ऐसा किया होता तो कबीर की तरह उनका प्रभावक्षेत्र भी भारतव्यापी होता। उनके प्रभाव का गुजरात तक सीमित रह जाने का एक कारण उनकी वाणी का अप्रसिद्ध और अप्रकाशित रह जाना भी प्रतीत होता है। यदि यह वाणी प्रकाश में आई होती, तो संपूर्ण देश में साहित्यिक और आध्यात्मिक क्षेत्रों में उसे कबीर की वाणी से कम आदर न मिलता।

अखा जी की शिष्य-परंपरा में बहुत उच्च कोटि के आचार्य भक्त और संत हो गए हैं। उनके दो प्रसिद्ध शिष्यों के नाम हैं लालदास और विद्याधर। कहानवा बंगला के संतों की परंपरा लालदास से चली है और विद्याधर से एक दूसरी शाखा फूटी है। लालदास परमहंस कहलाते थे और अवधूत कोटि के महान् संत थे, उनकी रचनायें आध्यात्मिक साहित्य के अमूल्य मानी जाती हैं। कुछ लोग उन्हें महात्मा कबीर का अवतार मानते हैं। लालदासजी के दो शिष्य थे हरिकृष्ण और जीवनदास और महात्मा हरिकृष्ण के शिष्य थे

परमहंस जीता मुनि जिनकी संपूर्ण वाणी वेदांत की सातवीं भूमिका का अनुभव स्पष्ट करनेवाली और अलख देश की अलखी राह उद्घाटित करनेवाली मानी जाती है। महात्मा हरिकृष्ण की शिष्याओं में परमहंस माताजी रतनबाई और परमहंस माताजी धीरीबाई नाम की दो महान् साधिकाएँ भी थीं। इन दोनों साधिकाओं ने भी अपने भजनों में जीता मुनि का उल्लेख किया है, और जीता मुनि ने अपने भजनों में इन दोनों साधिकाओं का। इनकी एक आरती प्रसिद्ध है जिस में अखा जी के गुरु ब्रह्मानंद स्वामी का स्पष्ट उल्लेख है—

सद्गुरु जी ए आपणा समरथ्यु सुख अपार
ब्रह्मानंदस्वामी अनुभव्या रे।
मने भास्युं छे ब्रह्माकार—
हरि गुरुदेवनी आरती।

महानुभाव जी ए महेर करी, समजावी सघळी रीत
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति रे, मुने भास्युं छे तुर्यातीत—
हरि गुरुदेव नी आरती।

सद्गुरु शोभा शी कहुं मुखे वर्णवी नव जाय,
हरिहर ब्रह्मा स्तुति करे रे तोय अस्ताईन सोहाय—
हरी गुरुदेवनी आरती।

अलेखपणुं अविलोक्युं रे, सद्गुरु केरी ओथ
अन्तरजामी आत्मा रे हरि जिवणा पोतानी साथ—
प्रभु जिवणा पोतानी ओथ—
हरि गुरुदेवनी आरती।

आरति उतारे म्हारा हरिगुरु संत ग्रस्या सर्व फंद,
बोराओ न बंध—
हरि गुरुदेवनी आरती।
आरती करी ने हैडे धारजो करे श्रवण, मनन, निज ध्यान,
सद्गुरु जी ने शीश सोंपतो रे, म्हारे टळी गयुं देहाभिमान
म्हारे मटी गयुं देहाभिमान—
हरि गुरुदेवनी आरती।

(संतोनी वाणी उपोद्घात, पृ० ३४-३५)

कहा जाता है, गुजरात के सुल्तान मुजफ्फर शाह के शासनकाल में कुछ राजकीय कर्मचारियों ने परमहंस महात्मा रतनबाई के भजन-कीर्तन में विघ्न डालना आरंभ किया। जब यह समाचार शीतामुनि को मिला, तो उन्होंने सुलतान को एक पत्र लिखा। उनका लिखा हुआ यह पत्र 'काफर बोध' के नाम से प्रसिद्ध है। यह खड़ीबोली हिंदी में है, उसको यहाँ पूरा पूरा उद्धृत किया जा रहा है—

'काफर बोध

हरि। मैं बादशाह ह' ममताह !

ऐ मुसल्ल तो मसजिद है, कलमे तो काया है, मेल तो नबी है, नाक तो कबर है मुख तो मक्का है, हाथ हजरत है, कदम तो पीर है, मन तो मुरीद है, तन तो करीर है, गुस्सा तो हराम है, झूठ तो दोजख है, सच तो बेहिस्त है।"

'आओ! यार! यों तहकीक करो विचार! कौन बोलिए काफर? कौन बोलिए मुरीद? काफर वे कुमारग चले, अल्लाह खुदा का डर ना धरे बेमहेर बेपीर, विवेक कमला धरे, उसका कलमा खोटेरा बोले बेर महेर का किस्सा ना जाने बाबा के नाम पर वारे ना जाना तिसकु कैसे कहिये मुसल्माना? मुसल्मान कहावे आप, सत, सबुरी, कलमा पाक! यही ना बोले, यही ना आय सो मुसल्मान। बाबा रतन पीर कहे, दोजख छोड बेहिस्तको जाय। बाबा आदम, बीबी हवा, मक्के मदीने चलता तथा, पहली रोजी फकीरको रखी, न देवे रोजी तो उस जाय तथा देखो बाबा आदमकी दुआ।"

"हिंदु तुरक कहाके झगडे! हम फकीर किसी को न करे झगडे। हमको अनेक तरह, अनेक छाया देखी रोपी अगम अगोचर साहेबने फरमाया! नहीं कंकर, नहीं पत्थर। नहीं मसजिद, नहीं मिनारा। नहीं ठाकुर देवल पर चढे—नहीं पुजिये ईट पत्थर। ये फानीकी पयदास बनी आदमकी करणी जिसका आगे ठौर ठेर। बाबा रतन पीर कहे, परमत ये है परदेशी का विश्राम।"

"आगमें मक्खी पड़ी नहीं पातशाह सन्मुख होय ये मक्खी ने सिखाया पातशाह का आना। उन्हीं बडे पातशाहका ताना !। मक्खी दीनी भेजकर। ऐसी तुम्हको विचार। हे दिल देखा! हे दिल भैया! हे दिल साफ मानेगा। मारदके पेटमें मोहम्मद हुआ, तब बाबा रतन हाथोंमें दुरस्त कलमा पढे।"

'यार। मुसफ्फर। खूब दिल खाजिने। उरस दुरस्त कीजे सलामा। रहेमत पीर मुरिदको महेमत पानी सामके। न्यारा निरन्तर। मीटर बेचीम।

दिल दोस्त किसका कहावे? और मेहेम्मद कौन कहलावे? किसकी राह जीहिरकी। किसकी बतावे। राह बाहु दो दर बेलम। उसमें दस दरवाजा। सबको कहो सबका पुरुष को सीप समावे। को मू सबके पहले निमाज्ञा, सबके बदले मुझको सबके पर कुराना वे पाकी की पैदास क्या हिन्दु क्या मुसलमाना। सो मी सोहा मलवान है पीर जिसका मलकमन्द है मुरिद दुरस्त प्याला सम। हमारी बहर तखत गहाई। मालम है हम कुरत है, ये चार यार कामीने। कौन यार सोहेम केके कौन पादशाह? कौन यार बंदीखाने? कौन यार मांही? कौन यार सोहेम केके, प्राण यार पादशाह। तन यार बंदीखाने मन यार मांही दिल यार सोहेम केके, तन खाक मन खाक खाक पास्तारेन। सभी खाक असमान खाक हम सभी, हम खाक तन खाक मन खाक खाक पास्तारेन सभी खाक, असमान् खाक तन खाक मन खाक, लाख पोस्तारेन सभी हम ही खाकी हम ही खाक। तन खाक मन खाक, खाक हम ही खाकी, हम ही खाक। असमान् खाक हम ही खाकी, हम ही खाक।

ऐसा चमत्कार बाबा रतनहार्यी ने पहले मेहेम्मद पादशाहको बताये, बाद बाबा रतनहार्यी ने बारह बरस कसे ढाँडी बांध संयम अटकाये, तब बाबा रतनहार्यी ने आश्रम बनाये।

साखी

हिन्दु ध्यावे देहेरा, मुसलमान ध्यावे मसिजद
फकीर वहां ध्यावे जहां रामकी परतीत।
बाबा किसकी नव करे, करे रहेवे थिर
मुनि जिता तब जानिये सोहा कोहीं फकीर।"

—रत्नानी बानी १४ २० १ ।

औतामुनि के शिष्य ये परमहंस महात्मा चमत्कारात जिनके चमत्कारों की अनेक कहानियाँ बड़ोदा के आसपास के क्षेत्रों में प्रचलित हैं। बताया जाता है कि वे परम अवधूत थे और इन्होंने जीवित ही समाधि ले ली थी। इनकी समाधि आज भी बड़ी श्रद्धासे पूजी जाती है। महात्मा कृष्णाचार्यजी की वाणी का कुछ अंश हिंदी में भी है। उनकी अवधूत दशा का द्योतक एक पद यहाँ दिया जा रहा है—

कोऊ त्यागी भगम सु भसम चढ़ाय अंग,
माया के लिये रंग भटकत भगत है।

दिगंबर मुनि कोय, साधु संत बहु होय
तामें बच्यो नाहीं कोय, मोहनी स्वरूप है।

त्यागी सब माया को लागी नेह रामनाम,
ब्रह्मा अपत मायो कल्याण की करत है।

धूतारी माया ने सब जग धूतलियो
धूते बिन रह्यो एक ऐसो अवधूत है।

इन्होंने भी अपने गुरु शीतलमुनि की तरह काफर बोध लिखा है। इसका जो अंश मैंने देखा है, वह खड़ीबोली हिंदी में है। दो उदाहरण प्रस्तुत हैं—

पाक दीदार जिसमें पागो,
और सब छोड़ दो। साँई साचा!

कहत कल्याण दरवेश दुनिया के बीच,
पाक है नाम और सब काचा!

× × ×

कौन इत्याफ होगा तेरा जहान में ?
ऐसा कुलवई प्रीत नाहीं।

बिना मुर्शिद सब जहान खाली खाये
कौन मुकाम रहो कोन ठाहीं ?

बिना मालूम पर्यो जहाज दरियाव बीच,
सीम से ठौर मो पहोंच जाई!

कहत कल्याण दरवेश दुनिया के बीच,
दिल में समझ कर, फिकर भाई!

कल्याणदासजी के पश्चात् इस परंपरा में स्वामी पूर्णानंद, स्वामी ध्यानानंद और भगवानजी महाराज हुए। ये सभी परमहंस कोटि के संत माने जाते हैं। मथा और कल्याणदास के बीच लगभग एक सौ पंद्रह वर्ष का व्यवधान पड़ता है उसी प्रकार कल्याणदास को हुए लगभग एक सौ पंद्रह वर्ष हो गये हैं।

'संतोनी बानी' की भूमिका में मंगता जी की उपर्युक्त शिष्य-परंपरा का विस्तृत विवेचन करने के पश्चात् सागर महाराज अंत में लिखते हैं—

"ये सब महात्मा आचार्य नहीं थे-मंगताजी का कोई गुरु नहीं था। लालदासजी किसी के गुरु नहीं, हरिकृष्ण महाराज और शीतामुनि नारायण जैसे ही कल्याणदासजी भी किसी के गुरु नहीं, स्वामी किसी का गुरु नहीं होता। मंगता जी का कोई पंथ नहीं उसी तरह कल्याणदासजी का भी कोई पंथ नहीं उसी प्रकार भगवानजी महाराज भी कोई पंथ नहीं चलाते। मंगताजी की शिष्य-प्रणालिका का अर्थ यह नहीं कि वह कोई पंथ है। फिर मंगताजी की शिष्य-प्रणाली का अब क्या? मंगताजी की प्रणालिका का अर्थ है भगवान् दत्त की लीला और श्रीमत् शंकराचार्य के अद्वैत से लेकर परम गुरु भगवान् दत्त तक का एक आकाशी 'वासनाशिष्ट' में निरूपित अवधूतचर्या के उपाधित स्वानुभव तक का एक आकाशी मार्ग ... स्वामी किसी का गुरु नहीं होता, जो उसे पूछना चाहे वह मन की ही पूछे। तात्पर्य यह कि स्वामी अखिल जगत् का गुरु है।

...परमहंस महात्मा मंगताजी की प्रणालिका ... ... यह अपरिमित पंथ अर्थात् अपरिमित आकाश पंथ अथवा मार्ग नहीं है यह आकाशी मार्ग है। कारण जो परमहंस होता है वह मंडल जैसा है या आकाशी मार्ग है। गिरि पर्वत आनंद अथवा दीक्षाएँ नहीं होता मगवे कपड़े से नहीं होता। इन महात्माओं को नहीं सरस्वती जैसे नाम धारण करने की आवश्यकता होती। जो मंगताजी है वह मंगताजी ही रहता है' और जो कल्याणदासजी है वह कल्याणदासजी ही रहता है। परमहंस तो इनकी आंतर भूमिका की स्थिति है दीक्षा नहीं। राग और त्याग इन दोनों का भान नहीं आकाशी अपरिमित पंथ का मुख्य लक्षण है। वासनाक्षय और मनोनाश यह अनुभव ही इनका असली घर है। इसमें ग्रहण अथवा विरक्त का कोई आग्रह नहीं है। कुछ के तो अनेकाविध भेद होते हैं।

(संतोनी बानी ' उपोद्घात, अनुच्छेद पृ० ६२-६१)

मंगता की शिष्य-परंपरा में स्त्रियों को भी वैराग्यज्ञान का अधिकारी माना गया है। परमहंस माताजी रतनबाई और परमहंस माताजी धोरीबाई का इस प्रणालिका में जो महत्त्वपूर्ण स्थान है इससे यह स्वयंसिद्ध है।

(३)

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने मध्यकालीन सन्तों और भक्तों को दो भागों में बाँटा है। उनका कहना है ' भक्ति ने उत्तरभारत के दो श्रेणी के भक्तों में दो रूप ग्रहण किए। जो भक्त ऊँची जातियों से आये थे उनमें उसने जो रूप ग्रहण किया, वह परंपरा प्रचलित विश्वासों के प्रति उतने तीव्र और आक्रामक रूप में नहीं प्रकट हुई जिस आक्रामक रूप में वह उन भक्तों में प्रकट हुई जो समाज की निचली श्रेणी की जातियों के भीतर से आये थे। प्रथमश्रेणी के भक्तों ने समाज में प्रचलित शास्त्रीय आचार-विचार व्रत उपवास ऊँच-नीच की मर्यादा को स्वीकार कर लिया। उनका असंतोष दूसरी श्रेणी के भक्तों के असंतोष से बिलकुल भिन्न था। वे सामाजिक व्यवस्था से असंतुष्ट नहीं थे। वे लोगों के भोगपरक मध्यमवृत्तिमूलक आचरण से असंतुष्ट थे। श्रुति और स्मृति-परम्परा में आनेवाले धर्मग्रन्थों को *कर्तव्य-अकर्तव्य के निर्णय के लिये उन्होंने अविसंवादी प्रमाण के रूप में* स्वीकार किया। दूसरी ओर निचली श्रेणी से आये हुए भक्तों में सामाजिक व्यवस्था के प्रति भी तीव्र असंतोष का भाव व्यक्त होता है। यद्यपि उनमें भी वैयक्तिक आत्म-शुद्धि पर कम जोर नहीं दिया गया।'[1] अब प्रश्न यह है कि अखा को हम कवियों में कहाँ रखा जाय?

गोवर्धनराम त्रिपाठी[2] ने लिखा है, अखा न ब्राह्मण थे और न क्षत्रिय थे। जाति के सुनार थे और उनका मस्तिष्क ब्राह्मणों की परंपरा के पैतृक पक्षपात और क्षत्रिय वर्ग की नैतिक दुर्बलताओं से मुक्त था। वे व्यावहारिक सत्यों को दृष्टि में रखकर सोचना चाहते थे। जब उनके पास विचार होते थे, तब वे अपने विचारों के लिए उपयुक्त शब्दों का निर्माण कर ही लेते थे। व्यावहारिक दर्शन उनका मार्ग था और मानव आत्मा के लिए निकटतम स्वर्ग का अनुसंधान करना ही इस स्वर्णकार के जीवन की सर्वग्राही महत्त्वाकांक्षा थी। वे अपने परिवेश की एक एक वस्तु को लेते हैं, और उसे अयोग्य दूषित वस्तु सिद्ध कर अस्वीकार करते और नष्ट कर देते हैं। अंततः उन्हें पाकर अद्वैत दर्शन में अपना अभीष्ट स्वर्ग प्राप्त होता है और इससे

---

१ मध्यकालीन धर्मसाधना पृ० ८७-८८।

२ क्लासिकल पोयेट्स आफ गुजरात, पृ० २६।

वे ज्ञानपूर्वक मनमाने मामूलों की सृष्टि करते हैं और इसी से वे अपने दर्शन का निर्माण करते हैं। चाहे वे भेद करें चाहे निर्माण, उनमें अपनी धरती के बद्धमूल अंधविश्वासों से मुक्ति पाने की असाधारण क्षमता है। पदमस्त की जो रचना उन्होंने की है वह उनके द्वारा आहत भोला भेड़की के सर्वथा उपयुक्त थी। उनकी यह निमिति व्युत्पत्तिजन्य है। उनकी सबसे बड़ी मौलिकता उनकी ध्वंसात्मक विचारधारा में है। उनमें ऐसा शक्तिशाली आवेगजन्य है, जिससे वे बड़े सरस और सारपूर्ण व्यंग्य की सृष्टि कर सकते हैं। उनके प्रहार भयानक होते हैं, और फिर पर ठीक जगह पड़ती चोट करते हैं। इसके लिए वे नयी नयी कहावतों और सूत्रों की सृष्टि करते हैं जो नितान्त मौलिक होते हैं और स्वराष्ट्र के जनजीवन के अंतर्निहित शक्तिशाली भावों का प्रिय लगते हैं। शेक्सपियर की अनेकानेक उक्तियों की तरह वे लोकभाषा में अत्यंत प्रचलित हो गये हैं।

अक्खा सोनार थे। अतएव ऊँची जातियों से आये भक्तों से आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का यह अभिप्राय यदि केवल ब्राह्मण और क्षत्रिय हो तो अक्खा उस श्रेणी में नहीं आते। यदि इससे निचली श्रेणी से आये हुए भक्तों' का संकेत कबीर, दादू आदि की ओर है, जो जुलाहा और धुनिया जैसी हीन मानी जानेवाली जातियों के थे, तो अक्खा इस श्रेणी में भी नहीं रखे जा सकते। सोनारों की जाति हीन नहीं मानी जाती, वे वाणिज्यवर्ग के समकक्ष समझे जाते हैं। फिर भी उनकी वाणी में सामाजिक व्यवस्था और उसकी रूढ़ियों और प्रचलित अंधविश्वासों के प्रति वैसा ही असंतोष और वैसी ही तीव्र आक्रामकता मिलती है, जैसी कबीर की वाणी में पायी जाती है। इसलिए संतों की वाणी में सामाजिक व्यवस्था के प्रति जो असंतोष और आक्रामकता मिलती है, उसे प्रत्येक अवस्था में उनकी जाति से संबद्ध करना बहुत उचित नहीं प्रतीत होता। मत यही होता है, जो सत्य का साक्षात्कार कर लेता है। अतएव ऐसे संत की वाणी में यदि जाति अथवा अन्य किसी प्रकार का पक्षपात पाया जाय तो इसे उसकी अपूर्णता ही कहा जायगा। मेरा विचार है, सामाजिक व्यवस्था में पाये जाने वाले वैषम्य अन्याय और अनीतिमत्ता के प्रति असंतोष और आक्रोश सभी संतों और भक्तों में है चाहे वे ऊँची मानी जाने वाली जातियों के हों अथवा निचली श्रेणी से आये हुए हों। अतर केवल इतना है कि जो संत शिक्षित और विद्वान हैं, उनका असंतोष और आक्रोश

अपेक्षाकृत सौम्य वाणी में अभिव्यक्त हुआ है और जो अशिक्षित हैं उनकी वाणी में कटुता और ध्वंसात्मकता अधिक है। इस प्रकार दोनों श्रेणियों के संतों में जो भेद दिखाई पड़ता है, वह ऊपरी मात्र का है। ऊँची जाति के कहे जानेवाले शास्त्रज्ञानसंपन्न संतों ने सामाजिक अन्याय की न उपेक्षा की और न उसे क्षमा किया। सामाजिक अन्याय के प्रति उनकी विचारधारा में भी कम ध्वंसात्मकता नहीं है, पर उनकी दृष्टि अधिक रचनात्मक है। वे समाज-व्यवस्था पर ऐसे अविवेकपूर्ण प्रहार नहीं करते, जो विरोधियों और विधर्मियों से आक्रान्त समाज में अनास्था और अराजकता उत्पन्न करे तथा आत्मघाती बन जाय। गोस्वामी जी ने लिखा है, बिना विवेक उत्पन्न किए हुए विद्या व्यर्थ है— "विद्या बिनु विवेक उपजाये।" तथाकथित ऊँची जातियों के संतों में सामाजिक अन्याय के प्रति जितना आक्रोश है उतना विवेक भी उतना ही जागृत है। इसलिए उनकी वाणी में सौम्यता है, लोकसंग्रह उसकी कसौटी है, वह सुरसरि के समान सब के हित को दृष्टि में रखकर आविर्भूत होती है। तात्पर्य यह कि जाति के पूर्वाग्रह का संस्कार इस श्रेणी के संत में नहीं है। वे इस स्थिति से ऊपर उठ गये हैं, इसीलिए संत हैं। जाति-पाँति का विरोध कबीर आदि संत भी इसलिए करते थे कि उन्हें वे केवल पारमार्थिक दृष्टि से निःसार और मिथ्या प्रतीत होते थे। उनके विरोध का कारण यह नहीं है कि वे नीची जाति में उत्पन्न हुए थे इसलिए उनमें एक प्रकार की हीनता थी, जो उनकी ध्वंसात्मक विचारधारा में चरितार्थ हुई है। यदि ऐसा मान लिया जायगा तो संत की महिमा पर बड़ा भारी आघात लग सकता है। ऊपर बताया जा चुका है अखा की वाणी में कबीर से कम कटुता आक्रामकता या ध्वंसात्मकता नहीं है। गुजरात में उनकी वाणी 'चाबखा' अर्थात् चाबुक या कोड़ा कही जाती है। पर वे कबीर की तरह किसी नीची जाति में उत्पन्न संत नहीं थे। तात्पर्य यह कि सन्त की दृष्टि तात्त्विक होती है वैयक्तिक रुचि अरुचि से प्रेरित नहीं।

पंडितवर गोवर्धनराम त्रिपाठी के अनुसार अखा की वाणी के दो पक्ष हैं — एक ध्वंसात्मक और दूसरा रचनात्मक। ऊपर बताया जा चुका है कि गोवर्धनराम त्रिपाठी वाणी के ध्वंसात्मक पक्ष को ही उनकी सबसे बड़ी मार्मिकता मानते हैं। जहाँ तक उनकी गुजराती वाणी का संबंध है, यह मान्यता सत्य हो सकती है। पर अखा की हिंदी वाणी में ध्वंसात्मक विचारधारा है

अवस्य पर वह उतनी प्रखर, उतनी प्रगल्भ उतनी सशक्त और उतनी प्रमुख नहीं है जितनी वह उनकी गुजराती वाणी में है। भक्ता की हिंदी वाणी में उनकी रचनात्मक प्रवृत्ति ही अपेक्षाकृत अधिक अभिव्यक्त हुई है।

जहाँतक हिंदी वाणी का संबंध है भक्ता की ध्वंसात्मक कही जानेवाली विचारधारा में वैराग्य-दर्शन से प्रेरित रचनात्मक तत्व बराबर मिलते हैं। वे ध्वंस के लिए ध्वंस नहीं करते, अपितु ध्वंस करने योग्य असत्, अशिव और अपूर्ण को ध्वस्त कर उसके ऊपर वे सत् शिव और पूर्ण की प्रतिष्ठा करना चाहते हैं। वे कटु आलोचना या निर्मम प्रहार इसलिए नहीं करते कि उन्हें किसी मत या सम्प्रदाय से विरोध है। वे सत्यग्राही हैं आत्मदर्शी हैं, इसीलिए वे कहते हैं—

ना करुँ पूजा न तीर्थ नहाउँ,
ना मैं ध्यानी के ध्यान समाऊँ
ना मैं ज्ञानी के ज्ञान दिखाऊँ
* * *
ना मोहि पाप, पुण्य ना लाई,
ना मैं कीर्त, ना मैं हारूँ।

इन शब्दों में न विधि है और न निषेध। इनमें उस साधक का सहज स्वर गूँज रहा है जो हानि-लाभ, भले-बुरे, हित-अहित निंदा-स्तुति के झमेले से निकल कर परमात्म-तत्व के साथ एकरस हो गया है जो वीतराग होते हुए भी सहज अनुरागी है। इसी अवस्था को अवधूतपद, 'सहजत्व'-'आत्मनिष्ठा' अथवा 'गुणातीत' आदि अनेक नामों से अभिहित किया गया है। यह अवस्था जीवन्मुक्त का सहज स्वभाव है। अतएव, जब वे अब यह कहते हैं वे तीर्थ-स्नान, ध्यान, पूजा-पाठ नहीं करते तो इसका यह अर्थ नहीं कि वे इन्हें व्यर्थ घोषित करते हैं। उनका कहने का आशय यह है कि तीर्थ व्रत आदि साधनों का जो परमसाध्य है वह उन्होंने प्राप्त कर लिया है। अपने जीवनोद्देश्य की उपलब्धि के उल्लास में आकर उन्होंने कहा है—

अलख पिउ को अवलोक्या है.... । (श्री भक्ताजी की अक्षरी)
सुरिजन सब ठीका पूरा है । (,)
अजब खेलाया खेल हमारा ....। (,)
सहजे सहज आसन पर आया. । (,)
पूरन जोग हमा का देखे । ("

बाबा के अनुसार इस तत्त्व को अनुभव करने की शर्त है, रूप अरूपी होना। 'संतप्रिया' ग्रन्थ में उन्होंने कहा है—

रूप अरूपी जे भए, अनुभे अकथ अरूप।

परम प्रेम-विभोर होकर शब्दालंकार-ज्ञानविहीन बाबा ने उस अकथ अरूप अनिर्वचनीय सत्ता का साक्षात्कार किया है जो 'अवाङ्मनसगोचर' है। इस देश में इसी को काव्य का महानतम स्रोत माना गया है, क्योंकि इस स्रोत से प्रादुर्भूत काव्य शाश्वत सत्य और चिरस्थायी प्रेम से मंडित रहता है। इसी स्रोत से विस्फूर्जित रस ने बाबा को कवि बना दिया है, वे स्वयंभू कवि हो गये हैं, कविर्मनीषी बन गये हैं। इसीलिए उनकी वाणी लोक की उल्टी चाल देख कर जितनी कटु हो गई है, उतनी ही वह लोकमंगल की भावना से ओतप्रोत भी है—

रे मन राम हरे न पेहचान्यो कौन गुनी इतो जो रे गुमानी।
ओर के नीर ज्यूं धन जोबन, ज्यों घन में बिजुरी मुसुकानी।
ठाढ़ी में मोठी तू मोहके प्रानी छेह के संत सद्गुरु ज्ञानी।
हंस कला गुरु देवे बाबो कहे, न्यारा करे दुध रहे पानी को पानी।

बाबा कहते हैं, वेदपाठ, विविध ऐश्वर्य-भोग, तपस्या और ब्रह्मचर्य आदि सब मन के रिझाने या बहलाने के उपकरण मात्र हैं, सत्य तो केवल मनातीत' है जो मन को मिटा कर ही मिल सकता है—

मन रीझावन वेद दिया सब
मन रीझावन चौदह विद्या री,
मन रीझावन पाट पटंबर
मन रीझावन महल अटारी।
मन रीझावन हो ताप तपे सब,
मन रीझावन होम ब्रह्मचारी।
मन कू फेरि मनातीत पावे,
सोही गुरु मेरे मन क्रम न्यारी।

जिसने इस 'मनातीत" के भजन की विधि नहीं जानी, उसे चारा तारना भी चाहे तो कैसे तारे—

अब कैसे तारे सब को छोरा जगा को भजन की आदत न जानी। मनातीत राम की प्राप्ति के मार्ग की सबसे बड़ी बाधा मन है। यह मन ही जग को ममता के बंधन में बाँधता है और ज्ञान-ध्यान को व्यर्थ कर देता है—

कहा ध्यान धर्यो ममता नहीं छूटी
कहा ज्ञान कथ्यो लिया मुख बानी।
कहा मौन धर्यो मद मद भर्यो
कहा ज्ञान कथ्यो ममता में पागी।
कहा ज्ञान कथा पीछे फिर्यो पामर,
पायो ईश्वर कडुआ बहु बानी।
ज्ञान की ओर महत्व भयो कहै,
साध भयो भयो भूप भराही॥

मन का स्वभाव ही है विषयोन्मुख रहना पर विषयों से मन कभी तृप्त नहीं हो सकता। ययाति ने अपने पुत्र का यौवन लेकर हजारों वर्ष तक देह-सुखों का भोग किया और अंत में उन्हें यही कहना पड़ा कि यदि इस संसार के समस्त भोगोपकरण एक ही व्यक्ति को अनंतकाल तक मिलते रहें तो भी उसकी तृप्ति नहीं हो सकती। मन की तृष्णा कभी जीर्ण नहीं होती, वह विषयों के सेवन से बराबर उसी प्रकार बढ़ती जाती है जिस प्रकार घृत की आहुति देने से अग्नि प्रज्वलित होती है—

यत् पृथिव्यां व्रीहियवं हिरण्यं पशवः स्त्रियः।
न दुह्यन्ति मनःप्रीतिं पुंसः कामहतस्य ते॥
न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते॥

श्रीमद्भागवत ९।१९।१३-१४।

ठीक ऐसी ही बात कबीर ने कही है—

बहुत भयो देही बई जीव जगत की बात।
कोटि कल्प लो जो जियत, तो हू तृपे न अघात॥

विषयपरायण रहने से तृप्ति संभव नहीं, तृप्ति का एक ही अमोघ साधन है और वह है ईश्वरपरायणता—

कोटि कर्म छिन मा दहे, एही प्रभु को धर्म।

भैया यह नहीं कहते कि सब लोग सिर मुंडा कर सन्यासी बन कर 'मनातीत प्रभु' को पाने का प्रयत्न करें। उनके अनुसार आत्मशुद्धि होने से 'चेत' होता है, और चेत होने से 'चित' मिल जाता है—

आतमा चेत परत जिय आगम के माह कोने रूप कैसो तेरो है।
जो तुम माह नमो सिव रूप तुम्हीं भवधार को माह करयो है।
मानत है आपा पर छाया भूत भविष्य समय सो तुं भयो है।
कहत भयो सब माह निरञ्जन घट चेत करयो है तो चित तेरो है।

चेत होने का अर्थ है ज्ञानोदय होना। ज्ञानोदय होने से 'चेतन निधि' प्राप्त होती है, जिसके समक्ष सब भोग नीरस हो जाते हैं—

ज्ञान की कोर अमृत भर भीजे जो सेवन की बात चलत न जावे।
सुरन की सब पाय न ठूंठे चिन्ता भया ज्यों आज रोकावे।
इस भया कुं तो ऐक से देवत, ओरन की कहो कोन चलावे।
चेतन निधि के भोगी भया, कहा स्वाम भूम्यान भोग कुं जावे॥

चेतन-निधि भोगी भैया जिस ज्ञान की गोद में पड़ने की बात करते हैं वह पंडिताऊ ज्ञान नहीं है, वह एक ही साथ आचरण ज्ञान है भक्ति है योग है और तत्त्वज्ञान की आत्मानुभूति है। इसीलिए वे कहते हैं, कि जहाँ पंडितों, साधकों, कर्मकांडियों, तपस्वियों आदि के पाँव नहीं टिकते, वहाँ की बात उन्होंने की है—

मंठ भया कोई संत कहो पायक कहो कोउ कहो भिखारी।
ज्ञम कहो दुरीजन कहो चार कहो कोई कहो ब्रह्मचारी
चोट के पास टिके नहीं ताहां आप धीनी अबे तू पधारी।
चितु मेरे देख्यो चित्र तेरे आयो, महोत पे तू विचार विचारी॥

कबीर ने भी इसी प्रकार एक दृढ़ता के आत्मविश्वास के साथ कहा था—

> हरे छोड़ि बैहद गया, किया सुन्नि अस्थान।
> मुनिजन महल न पावई, तहां किया बिसराम।

अपने संबंध में बाबा ने कहा है कि न तो मैं किसी का गुरु हूँ और न कोई मेरा चेला है। उपासना मेरे लिए वाणिज्य-व्यापार का साधन नहीं है। न तो मुझे रस-रसायन का ज्ञान है और न मैं गुरु का अंजन ही देता हूँ। मुझे कोई लालच नहीं है, इसलिए मैं लोग की भाषा बोलना अर्थात् ठकुरसुहाती करना भी नहीं जानता। हठयोग मेरा रास्ता नहीं है, मैं तो सहजमार्ग का साधक हूँ—

> न मोही व्यसन व्यापार उपासन, ना मोहि संग गुरु नाहिं चेरा।
> ना मोही रस रसायन आवत ना मोहका अंजन देव देरा।
> लालच लोभ की बानी न बोलूँ मैं हूँठ हमारा है रोउ ममेरा।
> देही गेह को काम परी जू अजा की हठ पढ़ नाहीं सेहजनी मेरा॥

बाबा ने यह स्पष्ट संकेत किया है कि उनके समय में ऐसे लोग थे जो आध्यात्मिक उपासना को जीविका का साधन बनाये हुए थे। गुरु लोग मंत्र देकर चेला बनाने का धंधा अपनाये हुए थे। ऐसे लोग भी बहुतेरे थे जो रसायन आदि का प्रलोभन देकर जनता को ठगते थे। गुटका अंजन देकर करने को सिद्ध बननेवाले लोगों की अध्यात्म के क्षेत्र में भरमार थी। नाथियों की तरह हठयोग की कलाबाजी दिखानेवाले भी बहुसंख्यक थे। बाबा को इस प्रकार के साधना-मार्गों में कोई रुचि नहीं जिन्हें सहजता से व्यवसाय का रूप दिया जा सके। वे तो सहज मार्ग की 'झाँझे राह' पर चलनेवाले हैं, जो अभयंगी (अनास्थंगी) के अमात अनुभव तक ले जाती है। उन्होंने कहा है—

> कोई कहे बीनो अवतार धाउ कहै परतंत्र पार
> कोऊ कहे धर्म है कार जिसे ते मुक्ति पावै।
>
> कोऊ कहे साधिये जोग कोऊ कहे कोजिए भोग,
> कोऊ कहे भक्ति अमोल जिससों तहां जावे।

ऐसे ही कल्पना कोटन भावत अकाथ मोद,
रह न सके अरेनी ओमन्द भाव तो भोराई है ।
बहुत अबे से जाप वाही को सहज व्याप,
अपम्मंथी अनुभै अमार आपकी सहराई है । ११७ ।

(अनुभव बिंदु)

अखाने स्वयं स्वीकार किया है कि वे पिंगल अथवा व्याकरण कुछ नहीं जानते हैं। उन्होंने जो काव्य-रचना की है वह किसी को रिझाने के लिए नहीं है उसका उद्देश्य तो उस 'अवाच्य अक्षर' की महिमा का गान करना मात्र है वहाँ भाषा का प्रमुख नहीं है और जिसका रहस्य कोई 'ग्यानराज' ही जानता या जान सकता है—

ज्ञान को अखण्ड सब माहीं स्वामी नाहीं शिष्य
जैसे हीन चाहे पद्म शिव वन केसरी ।
गुर सत सीख जोख तातें धीरे नाहीं को य,
मानी रे ताही मनोज सुत को नरेसरी ।
वेद ना वेदी आराध्य पिंगल न व्याकर्ण साध्य,
अगम पावै अमाप्य वाही भाषा नाहीं ईसरी ।
नाहीं को रिझावे काव्य जैसे तथा मन भाव्य,
जाने कोई ग्यानराज अखा की कवेसरी । ११८ ।

(अनुभव बिंदु)

तात्पर्य यह कि गोस्वामी तुलसीदासजी की तरह अखा का काव्य भी 'स्वान्तः सुखाय' है, उसके समझने के लिए ज्ञान-भक्ति का सम्मिलित अभिप्रायतः आवश्यक है। जिस प्रकार गोस्वामी तुलसीदासजी ने लिखा है[1] कि मेरे काव्य में नाना प्रकार का विषय-कथा-रस नहीं है, इसलिए 'कामी काक बलाक' इसके निकट आने से रहे, उसी प्रकार अखा ने भी अपने काव्य के संबंध में लिखा है कि मेरी वाणी वह महासागर है जिसमें गोता लगानेवाला मोती खोज लेगा पर जो घबरायेगा वहीं भी मीन ही खोजेंगे—

---

1 संबुक भेक सेवार समाना । इहाँ न विषय कथा रस नाना ॥
तेहि कारन आवत हियँ हारे । कामी काक बलाक बिचारे ॥

मगन अखा के भरोष मन, अनुभै परीक्षा कौन।
जरजीवा मोती मिले, माखी ताकत मोन।। १ ॥ चोपई साखी ।।

अखा ने भले यह कहा कि उन्हें पिंगल और व्याकरण का ज्ञान नहीं है और न इसमें लौकिक विषय रस है तो उन्होंने संतों के काव्य के वास्तविक स्वरूप का ही उद्घाटन किया है। इसका अर्थ यह है कि उनकी वाणी में भावों का औदात्य, गांभीर्य सत्य और शिवत्व पाया जा सकता है, अभिव्यक्ति के माध्यम की चिंता उन्हें नहीं। इसलिए उनकी काव्यकला को हम 'सहज कला' कह सकते हैं। उनमें अलंकारों की सचेत योजना नहीं है और न किसी प्रकार का साहित्यिक कौशल ही उसमें परिलक्षित है फिर भी दैनिक जीवन-व्यापारों के अनुभव और सूक्ष्म निरीक्षण से प्रेरित अनेकानेक रूपक, दृष्टांत उपमा आदि अलंकार उनकी वाणी के पथ पर सहज भाव से खिल उठे हैं और उनकी सहायता से कहीं कहीं उन्होंने बड़े चमत्कार पूर्ण चित्र अंकित किये हैं। यद्यपि अखा की मातृभाषा हिंदी नहीं है फिर भी उनमें भाषा की व्यंजक और व्यंजना शक्ति का मनोहारी प्रसार मिलता है। आसपास के दैनिक जीवन-व्यापारों से चयन किये गये उपमानों की योजना उन्होंने किस प्रकार की है उसके कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं—

आतम अनुभै बिन अखा, नहीं वैराग की लाग।
जब लौं मनु ओसार की छनु पानी छनु आग।
आतम दर्शन बिन अखा, जे जस मेटी जाय।
ज्यों चोरी कोतवाल मार को, स्वान हरे इतराय।।

आतम अनुभव बिन अखा, सकल योग्यता नाहिं।
जैसा भाजी मसाल का, पीरे सुवद नहिं ताहिं।।

आतम दरसन बिन अखा, होम कुलीन सनमान।
ज्यों मुवा को आमत छाँ ज्यापि केना का मान।।

आतम अनुभव बिन अखा सुपत रसाल सब अंग।
ज्यों बात न प्रगट मदको अमिय पूरी रहत पंग।
आतम अनुभै बिन अखा, बैर व्याकुली सुख।
ज्यों वाजीगर को माय का, लोक दिखावत सुख।।

आतम अनुभै बिन अखा, ज्ञान ध्यान परवीन।
ज्यों नीद मनावा देन का वो दो दिन का रंगीन।।

इस प्रकार की रचनाओं में भाषा का परिष्कार नहीं मिलता है, भाषाएं वे बड़ी अटपटी और अनगढ़ भी लग सकती हैं। फिर भी उनमें सत्य, प्रेम और सौंदर्य की गहनतम अनुभूति का झंकार मुखर हो रहा है जिसके कारण वे किसी अनिर्वचनीय संगीत माधुरी से सिक्त हो गयी हैं। डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने जिसे 'ईश्वरोन्मुख संगीत की भाव प्रवणता' कहा है, वह अखा की वाणी में सर्वत्र व्याप्त है। उनकी वाणी में सत्य की अनुभूति से एक प्रकार की गति स्वभावतः उत्पन्न होती है जो बहिर्मुखी न होकर अन्तर्मुखी रहा करती है जो सभी गतियों के मूलस्रोत अंतिम शांति में विलीन हो जाती है। परम तत्त्व की अनुभूति का भावोद्रेक अखा में ऐसे प्रेम-संगीत का सर्जन करता है इस प्रकार के पद इसके परिचायक हैं—

१ हूं हेरत गई हेराई, अलख गति लोरिया।
तू मनसा वाचा काय, सभी सुरम्य मोरिया। हूं हेरत।
बाहर भीतर तुहि बसा विस है हरि हाजर हजूरा।
हर घट स्याम, बेदरूपी करनी, ज्यों त्यों भाषा पूरा। हूं हेरत।
वो बिन रची पची मुखा संसार, पिपु का पार न पावै। हूं हेरत।

२ प्यारे चारु दामन को ढूंढन को
जो जहां देखूं वहां आप धनी।
तु मांज भी ने हूं तुम मांहा
देखी मुझको आप बनी।
ज्यूं दरियाव की मछली को
नैन नैन पीछे सो नीर मांहीं।
यूं मुझको बनी रही अखा।
सो सांई गर्कोम्स है न बाहा।

३ अरबद में समझा अखा सुन्य सुन न रहो मोय।
अरबद रस अंग में पच्या, छुटत ताकी सोय।

सब संतों की तरह अखा की वाणी में भी कोरे नैतिक प्रवचन बहुत हैं। इस प्रकार के प्रवचन प्रायः आध्यात्मिक अनुभूति के क्षण से स्फुरित न होने के कारण उपदेशात्मक और नीरस हो जाते हैं। किंतु कबीर की तरह अखा

ने भी अपने उपदेशों को सरल उपमाओं और प्रतीक शब्दों की योजना द्वारा रोचक और प्रभविष्णु बना दिया है।

कबीर ने अपनी साधना-प्रणाली को सहज मार्ग कहा है। उनका कहना है कि यह पूर्णता की ओर ले जानेवाला मार्ग है, जहाँ पहुँच कर बराबर में व्याप्त चित् शक्ति की पहचान हो जाती है। जो लोग इस सहज को नहीं प्राप्त कर पाते, वे व्यर्थ अपनी आयु के दिन खोते हैं और सिर पर सत शत मेरु पर्वतों का भार लिए मन में भटकते रहते हैं—

धीर बराबर चौदिस दीन, चौतपत चीत के चैन।
पूरन ब्रह्म चीन पामरा, आप अव्यक्त रैन॥
दुरलता आगत नहीं लिए गुरन की कोर।
सो मन में भटके कबा और सतमेर को भोर॥

भारतीय धर्म-साधना के इतिहास में सहज मार्ग या सहजावस्था का स्थान बड़ा महत्त्वपूर्ण है, इसका इतिहास भी काफी ऊँचा और मनोरंजक है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी ने लिखा है " ... सहज शून्य की मेरुदण्ड, कैवल्य महासुख, राम-रस-निर्भर से होती हुई सहज लोक तक पहुँचने की यात्रा बड़ी मनोरंजक है।" सहजयानी सिद्ध लोग केवलावस्था को शून्य पद से अभिहित करते थे और उसके साथ सहज विशेषण का प्रयोग भी करते थे। नाथपंथियों की साधना का चरम लक्ष्य सहजावस्था है जो सहस्रार चक्र में प्राप्तव्य शून्यावस्था' का पर्याय है। कबीर ने कभी 'सहज' का अकेले प्रयोग किया है और कभी 'सहज और शून्य' दोनों का एक साथ प्रयोग किया है। कबीर के अनुसार सहज वह है जिससे पुत्र, कलत्र और वित्त की आसक्ति सहज ही छूट जाय और मन एकमेक होकर राम में रम जाय। इस सहज को पहचानना कठिन है, क्योंकि यह वह मार्ग है जो बड़े सहज भाव से हरि जी से मिला देता है—

सहजैं सहजैं सब गए, सुत-वित कामिनि-काम।
एक मेक ह्वै मिलि रह्या, दासि कबीरा राम॥
सहज सहज सब कोई कहै, सहज न चीन्हैं कोइ।
जिन्ह सहजैं हरिजी मिलैं, सहज कहीजै सोइ॥
(क० ग्रं० २१, ३-४ पृ ४१)

कबीर ने यह भी बतलाया है कि उनका सहज उस रामरस की उपलब्धि का बोधक है जिसके एक बूँद पर सब जप-तप निछावर है। इस रस को पीनेवाले की सब तृष्णाएँ चिरकाल के लिए शान्त हो जाती हैं—

सहज सुनि में जिन रस चाख्या सतगुरु थैं सुधि पाई।
दास कबीरा इहि रस माता कबहूँ उछकि न जाई।
(क० ग्रं० पद ७७)

इस 'सहज' या 'सहजा' के पर्याय के रूप में कबीर ने समाधि, उन्मनी, मनोन्मनी अमरत्व तथा निरंजन, तुर्या आदि अनेक शब्दों का प्रयोग किया है। 'यह वह अवस्था है जब मन और प्राण एकीभूत हो जाते हैं और जब चंचल मन स्थिर और वशवर्ती हो जाता है। ... ऐसी अवस्था में उसके भीतर भी शून्य है बाहर भी शून्य है .... आसमान में जैसे कोई सूना घड़ा रखा हो। परन्तु असल में वह भीतर से भी पूर्ण होता है, बाहर से भी पूर्ण होता है। समुद्र में जैसे भरा घड़ा डूबा कर रखा गया हो।[1]'

दादू ने भी प्रायः कबीर के ही अर्थ में 'सहज' का प्रयोग किया है। वे कहते हैं, पंडितगण 'बेद-किताबें' पढ़-पढ़ कर हार गये, वह नहीं मिला। किंतु मुझे तो वह साजन सहज भाव से मिल गया। उस प्रिय (साजन) की आँख जिसको लग जाती है, और जो उसके अपरिमेय स्वरूप रूप का साक्षात्कार कर लेता है, उसकी 'सुत-वित कामिनि-धाम' की ममता और आसक्ति तुरंत दूर हो जाती है—

सहजै सहजै साजन घर आया।
ते बेद किताबूं नाहीं लखाया।
सहजै सहजै साजन घर आया।
× × ×
अगम अगोचर कहिते हारे,
पढ़ते पढ़ते पंडित हारे।
सो सुरिजन सुख कीई रे सवारे,
सहजै सहजै साजन घर आया।
× × ×

---

१ आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—कबीर पृ० ५०–५१।

लागे डोलन की लाज किसको
उमसत धाती भागे तिसको,
सो और बोलारा कहिये किसको ?
सहजे सहजे साजन घर आया ।

इस सहजावस्था को पाने के लिए 'दृष्टाद्ध भाव' विवर्जित होना पड़ता है। वस्तुतः इसके अतिरिक्त और जो भी कुछ है, वह अज्ञानमूलक है, नाम है, प्रपंच है, माया का विलास है, उसका कुछ भी मानन के नाम नहीं है।

जिन जाना तिन प्रपंच जाना।
कछु न जाना सो सहज समाना॥

द्वैताद्वै भाव है जैसा माया विलास मानो सब तथा।

(भजन १६)

यह 'सहज' किसी अलहद जप-तप इत्यादि साधनादि से नहीं मिलता। मिल भी यह 'क्रमशः' वहीं ही सहज भाव से जाता है क्योंकि जिस असामजस्य द्वैत के भ्रम में जीव को बाँध रखा है, वह तोता (संशय) जैसे धीरे धीरे सत्य प्रतीत होने लगा है वैसे ही वह धीरे धीरे ज्ञान होने पर दूर भी जाता है। जीव की दशा ऐसी ही है जैसी पुष्पासक्ति को अपने पंजों में मजबूती से पकड़ लेने वाले शुक की जो उसके यह समझने लगता है कि पुष्पाक ने ही उसे बाँध रखा है। यह संशय दूर होते ही बंधनमुक्ति की अवस्था आती है और 'सहज साधन का नीर' जीव को मिलता है—

सहजे सहजे तोता मस्त हुआ।
नेह नली को बांधा सुआ,
सहजे सहजे मौला मस्त हुआ।
बांध बंध पर कहीं न बंध्या
बिन विचारी पुकारे भया
प्रेम की पन्ना बंध भया
सहजे सहजे बोला मस्त हुआ।

प्रगट परगटि माँग्या पाया,
इहलोक परलोक की आसा,
न समझ मर्म, न छूटे फाँसा
सहजे सहजे साँचा सत्य हुआ।

× × ×

सहज उपदेस करे जन हरि का,
सहज स्वभाव पाया सो नर का,
पिउ [illegible] और सहज सायर का,
सहजे सहजे साँचा सत्य हुआ।

(सबदी १)

कबीर ने भी यही कहा है कि आत्मा की शुद्धि सहज ही होती है— 'साधो, सहजे काया सोधो।' काठ में व्याप्त अग्नि की तरह साधक के भीतर भगवान की जो ज्योति प्रकाशित रहती है वही वह सहज भाव से भावना द्वारा यथासमय प्रकट हो जाती है। साँई के साक्षात्कार के उस आनंद से दिल के दरियाव में उभार आ जाता है, तब पाप-ताप छूट जाते हैं—

बहु पाया सुख ऊपना, अरु दिल दरिया पूरि।
सकल पाप सहजै गये, जब साँई मिल्या हजूरि॥

(कबीर ग्रंथावली पृ० १८)

इसी प्रकार भवा भी कहते हैं कि सहजानंद का भोगनेवाला ही साहब का सच्चा लाल होता है। वह 'अलख' लाल बनता है और तन-मन-धन को कुछ नहीं गिनता—

धन तन मन खोना सभी अलख जाहि का लाल।
सहजानंद कूँ भोगवे सो साहिब का लाल॥

(भवानी की साखी, [illegible] को अंग १)

भवा के अनुसार सहजानंद का अधिकारी तन-मन-धन को अपना नहीं मानता वह सूर्य की तरह स्वयंप्रकाश होता है, उसे किसी दूसरे प्रकाश

की अपेक्षा नहीं होती। यह इल्म की ऐसी मशाल होता है जिसे तेल और बाती की आवश्यकता नहीं। उसे प्रतिकूल पवन प्रकंपित नहीं कर सकता यह अचलप्रतिष्ठ और स्थितप्रज्ञ होता है—

ज्यूं सूरज दीप बाहाता नहिं आवे कोस्य विहाल ।
तन-मन अपना न मदे सो साहेब का लाल ॥ २ ॥

तेल न बाती पुट बिना जैसे इल्म मसाल ।
बाको न डोलावत ठाढ़ी हुँ सो साहब का लाल ॥ ५ ॥

([illegible] की साखी, साहब को अंग साखी २, ५)

सब संत यह कहते हैं कि इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए न आँख मूँदने की आवश्यकता है और न कान रूँधने की, काया को कष्ट देना भी निरर्थक व्यापार है। इस स्थिति की उपलब्धि तो गृहस्थाश्रम में ही होती है। कबीर ने कहा है—

घर में जोग भोग घर ही में, घर तज बन नहिं जावे ।
घर में युक्त मुक्त घर ही में, जो गुरु अलख लखावे ॥

गोस्वामी तुलसीदास जैसे परम वीतराग संत ने भी इस मत की पुष्टि की है—

घर कीन्हे घर जात है घर छोड़े घर जाय ।
तुलसी घर बन बीच ही, राम प्रेम पुर छाय ।

इस स्थिति की उपलब्धि हो जाने पर साधक जो कहता है वह भगवान् का नाम होता है, जो सुनता है वह प्रभु का स्मरण होता है, जो करता है वही पूजा हो जाता है। उसकी प्रत्येक गतिविधि प्रभु-परिक्रमा बन जाती है और उसका प्रत्येक कार्य सेवा रूप होता है।[1] अतः कहते हैं यह स्थिति प्राप्त करनेवाला ही पंडित है वही बुद्धिमान है, वही सच्चा स्वामी (गोस्वामी या संन्यासी) है—

---

१ कहूँ सो नाम सुनूँ सो सुमिरन, जो कछु करूँ सो पूजा ।
गिरह उद्यान एक सम देखूँ भाव मिटाऊँ दूजा ॥
जहँ जहँ जाऊँ सोइ परिकरमा जो कछु करूँ सो सेवा ।
जब सोऊँ तब करूँ दंडवत पूजौं और न देवा ॥—कबीर

बाबा सोहि वंदित सोई दासा।
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तुरीया-
जाइ एक समाना।
भावै क्रम करे, ना त्यागे,
भावै रिपती बिचारे।
मगन खेल खेले होय नीसके
कौन डूबे। कौन तारे?

बाबाजी कहते हैं कि यह सहजानंद की पूर्णतम उपलब्धि और अनुभूति की दशा है जिसमें 'हरि के हुजूर' में हाजिर होकर उनके साथ फाग खेलने का सौभाग्य प्राप्त होता है—

कोई देखा खेलन लागो आप आभास सुरंग।
पाईन सखि सागर की लहरी नव नव तान तरंग॥

साहब मध्ये ही मनोहर खेलत हरि फाग।
हो हो होरि कहो निरखवि, सहज सबद पराग॥

(गुआसा-राग काफी)

बाबा और बैठकर यह कहते हैं कि हरि यह फाग संसार के मध्य में ही खेलते हैं और वह संतों में इस महनीय सहजानंद की स्थिति तक ले जाने वाले मार्ग को 'मध्यम मार्ग' या मध्यम भाव कहा भी है। वे इस साधना-मार्ग के स्वरूप का उद्घाटन करते हुए कहते हैं—

ना हम छाडैं ना गहैं ऐसा ज्ञान विचार।
मधि भाव सेवैं सदा दादू मुक्ति दुवार॥

मध्यम मार्ग वस्तुतः मन की साधना है। शरीर संसार में जब तक रहता है रहे, संत को उसकी चिंता नहीं। चिंता उसे केवल मन की है जिसे अविराम राम के ही पास रहना चाहिए। दादू 'मधि भाव' के मर्म को स्पष्ट करते हुए यही बात इस तरह कहते हैं—

देह रहै संसार में, जीव राम के पास।
दादू कछु व्यापै नहीं काल झाल दुख त्रास॥

कहने सुनने में यह 'मध्यम मार्ग' सरल लग सकता है पर वस्तुतः यह है बड़ा कठिन। कबीर कहते हैं, यह दिन-रात की अविश्रान्त लड़ाई है मध्यमार्गी संतका परिश्रम और युद्ध तो सती और सूर से भी बहुत भारी है—

साध को खेल तो विकट बेंडा मती
सती और सूर की चाल आगे।
सूर घमसान है पलक दो चार का
सती घमसान पल एक लागे।
साध संग्राम है रैन दिन जूझना
देह परजंत का काम भाई॥

डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने लिखा है " यह मध्य का बीच का मार्ग, जिसे हम जानते हैं कि निर्गुण संप्रदायवालों ने बौद्धधर्म के सिद्धान्तों से लिया था सामान्य शत्रु के साथ युद्ध करने के समान है। यह मार्ग इतना मान कर चलता है कि जगत् का सापेक्ष दृष्टि से अस्तित्व अवश्य है और उसके विरुद्ध हमें कार्य करना है। जगत् के सापेक्ष रूप के कारण किसी को धोखा न होना चाहिए कि इसके विरुद्ध हमें तैयार नहीं रहना है। स्वप्न भी जब तक वर्तमान रहता है किसी न किसी दृष्टि से सच्चा ही कहलायेगा। सापेक्षिक सत्यता का प्रभाव हमारे ऊपर तब तक वर्तमान रहता है जब तक हम अंतिम सत्य को साक्षात्कृत नहीं करते। हाँ, जब अंत तक लड़ कर हम सब जगत् संबंधी बातों की सापेक्षता सिद्ध कर देते हैं और इस प्रकार शाश्वत सत्य का उपलब्ध भी कर बैठते हैं तो उस समय जगत् का कोई मूल्य ही नहीं रह जाता। किंतु तब तक हमारा युद्ध चलता ही रहेगा।"[1]

निर्गुण मार्ग वालों ने 'मध्य का बीच' का मार्ग बौद्धधर्म के सिद्धान्तों से लिया या श्रीमद्भगवद्गीता से यह निश्चयात्मक रूप से तो नहीं कहा जा सकता। इतना तो निश्चित ही है कि गीता ने इसी मध्य मार्ग का उपदेश दिया है और सम्भवतः निर्गुण संप्रदाय वाले संत भी बौद्ध सिद्धान्तों की

१ हिंदी काव्य में निर्गुण संप्रदाय-चतुर्थ अध्याय, पृ० १८९।

अपेक्षा गीता के अधिक निकट थे। भगवान् कृष्ण ने गीता में स्पष्ट कहा है कि अतिमात्रा या अतिचार को त्याग कर ही ब्राह्मी स्थिति प्राप्त की जा सकती है जिसको पा लेने के बाद फिर विमोह नहीं होता। उसी प्रकार सब संतों की वाणी का भी एक ही सार प्रतीत होता है कि मध्य मार्ग ही वह साधन है जिसके द्वारा सहजावस्था के साध्य तक पहुँचा जा सकता है। अखा की दृष्टि में मध्य मार्ग प्रीतम से 'सहज संयोग' कराता रहता है, पर वह रास्ता 'सहल' नहीं है। 'सहल' तो धरती और स्वर्ग के विविध भोग हैं जिनके पीछे लोग (सखियाँ) पागल हैं। दुनिया के लोग 'सहल' की इच्छा करते हैं 'सहज' की नहीं। 'सहज' और 'सहल' का अंतर अखा ने इस साखी में बड़ी सूक्ष्मता से स्पष्ट किया है—

सखियाँ चलियाँ सेहेल कुं स्वर्ग मोंयन का भोग।
प्रीतम मुज छाड़ता नहीं राखत सेहेज्य संयोग ॥

(साखी, कृपा १५)

अखाजी का निर्देश है कि 'सहल' की इच्छा से भोग करते हैं जो देहदर्शी होते हैं इसके फलस्वरूप वे जीवन भर सुख-दुख, पाप-पुण्य और राग-द्वेष के पचड़े में पड़े रहते हैं। 'सहज' की साधना आत्मदर्शी करते हैं क्योंकि उनका एक ही लक्ष्य होता है आत्म-दर्शन—

से कोई जानत है अखा में सब मेरी आप।
पाप-ताप-संताप सब देहदरसी कू व्याप ॥ १ ॥

देहदरसी राखत अखा वर्णाश्रम का भार।
धाया देह अभिमान का आतम नहीं विचार ॥ २ ॥

देहदरसी भावे अखा कहीं चेहेर कहीं महेर।
आत्मदर्शी आत्मा सदा रेहे आठों पेहेर ॥ १८ ॥

देहदरसी भावे स्थूल कर्म लौकिक।
आत्मदर्शी आत्मा मौन रहा अलौकिक ॥ १९ ॥

देहदरसी करे कर्म के दुख-सुख फेरा-फार।
आत्मदर्शी देह में रहे वातन मान ॥ २० ॥

(देहदर्शी को अंग)

सब संतों ने इस बात पर बल दिया है कि देह-दर्शन के अंतस और आत्मदर्शन के सत्य का त्याग और ग्रहण उपयुक्त परीक्षा के बाद ही होना चाहिए। परीक्षित सत्य को ही वे संत ग्राह्य मानते हैं। अपरीक्षित सत्य को अदेय मान लेना इनकी दृष्टि में श्रेयस्कर है। ऐसा सत्य संत का सत्य नहीं हो सकता। सांसारिक लोग समयाभाव, जड़ता, आलस्य, प्रमाद, एवं अंध श्रद्धा के कारण परीक्षा करना नहीं चाहते। आँख मूँद कर किसी बात को सत्य स्वीकार कर लेना संतों की दृष्टि में निंद्य है, उसकी परीक्षा बुद्धि और अनुभव द्वारा होनी ही चाहिए। संतों की वाणी में पारिख नाम का एक अंग ही मिलता है जिसमें सत्य की परीक्षा का महत्व बताया गया है। दादू कहते हैं—

दादू साचा लीजिये झूठा दीजे डारि।
साचा सनमुख राखिये झूठा नेह निवारि॥
साचे कूं साचा कहै झूठे कूं झूठा।
दादू दुविधा को नहीं ज्यों था त्यों दीठा॥

दादू ने कहा है कि 'ज्यों था त्यों' (पूर्ण निरुपाधि सत्य) देखने और पाने के लिए ऊपर की परीक्षा काम नहीं देती है इसके लिए तो अंतर के सत्य की परीक्षा अपेक्षित है। बहिर्मुखी लोकदृष्टि वह परीक्षा करने में असमर्थ रहती है क्योंकि वह सत् को असत् और असत् को सत् मानती है—

जे नाहीं सो सब कहै है सो कहै न कोइ।
खोटा खरा परखिये तब ज्यों था त्यों ही होइ॥
वह पारिख है ऊपली भीतर की वह नाहिं।
अंतर की जानै नहीं तातैं खोटा खाहिं॥
दादू ऊपर देखि करि सब को राखे नाँव।
अंतरगति की जे लखैं तिनकी मैं बलि जाँव॥

संत भी इस परीक्षा को अनिवार्य मानते हैं। उनका विश्वास है कि योगवृत्ति और अंतर्वृत्ति के बिना अंतर के सत्य की पहचान असंभव है। घट घट ही अनमोल रामरत्न की खान है, पर उसकी परख वही कर सकता है जिसकी बुद्धि अलोल हो या स्थितप्रज्ञ हो। वस्तुतः जो गुणातीत है, वही इस परीक्षा का अधिकारी है—

जाम्य कुपी है घट में मीठकमल राम अमुल्य।
परखनघाला कोई बखना उधा की गुण अमोल्य ॥ १ ॥

राम रतन का पारखू करता साध ताक।
गुणातीत थीस से बखना हाथ न आवे खाक ॥ ४ ॥

(साखी-राम परीक्षा अंग)

दादू कहते हैं कि जब यह 'पारखे' करता जा जाता है तो सब जगह एक ही आत्मा के दर्शन होते हैं, एक ब्रह्म ही ध्यान और चिंतन का विषय बन जाता है। भावदृष्टि के कारण जो अनेकता या द्वैत दिखाई पड़ता है, उस भ्रम का भी तिरोभाव हो जाता है—

पूरन ब्रह्म विचारिये सकल आत्मा एक।
काया के गुण देखिये नाना वरण अनेक॥

यही बात बखना भी कहते हैं, राम-रत्न का पारखी द्वैत का वाणिज्य नहीं करता वह केवल उस छोड़ई अथवा अद्वैततत्व का सौदा करता है जो वाणी का विषय नहीं है। वह पारखी तो भाई को छोड़ कर स्वयं राम ही बन जाता है—

राम रतन का पारखू अगम्यीय बीनमत माह।
बखना सौदा सो ही करे जे नावत बानी माह ॥ ६ ॥

राम रतन की पारखी राम ही राम हो जाय।
बखना ही मारम राम है बोहोर ना पीछम आम ॥ १६ ॥

(साखी-राम परीक्षा अंग)

इस संक्षिप्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि बखना उन संतों की परंपरा में आते हैं जिन्हें हिन्दी साहित्य के इतिहास में निर्गुण संप्रदाय में परिगणित किया गया है, और जो निर्गुण भक्तिधारा की ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रवर्तक और उन्नायक माने जाते हैं। बखना इस परंपरा के एक महान प्रकाश-स्तंभ हैं उनका स्थान सभी दृष्टियों से निर्गुण शाखा के बड़े से बड़े संत के समकक्ष है।

निर्गुण-पंथी कहे जानेवाले संतों की वाणी की एक प्रमुख विशेषता यह है कि उसमें अर्थहीन प्रतीत होनेवाले कर्मकाण्ड, तीर्थाटन गंगास्नान, पूजापाठ, छुआछूत आदि के खण्डन की प्रवृत्ति बहुत अधिक पाई जाती है। पहले बताया जा चुका है कि अखा की गुजराती वाणी में यह प्रवृत्ति प्रधान है हिंदी वाणी में कम। उनकी गुजराती की खंडनात्मक अथवा व्यंग्यात्मक वाणी की कटुता और तीक्ष्णता वैसी ही है जैसी हमें कबीर की वाणी में मिलती है। निर्गुणपंथी संतों की इस खंडनात्मक प्रवृत्ति को कुछ विद्वान् वज्रयानी सिद्धों और नाथपंथी योगियों की परंपरा का प्रसार मानते हैं[1], कुछ लोग उस पर इस्लाम का प्रभाव भी देखते हैं[2]। परंतु भारतीय धर्मसाधना के इतिहास में इस प्रकार की वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात पहले पहल वज्रयानी सिद्धों या नाथपंथी योगियों ने किया यह स्वीकार नहीं किया जा सकता। कारण वैदिक चिन्तन के विकास के उत्तरकाल में जब उपनिषदों का उदय हुआ था हम उसी समय सब प्राचीन उपनिषदों में ब्राह्मणों के कर्मकाण्ड के विपरीत दृष्टिकोण और भावना का प्राधान्य देखते हैं। इन उपनिषदों में हम वेदों के पूर्वभाग ब्राह्मणों के कर्मकाण्ड की आस्था से विपरीत तथा कभी कभी उसके विरुद्ध भावना का प्राधान्य पाते हैं। उपनिषदों में अनेक स्थानों पर ब्राह्मणों के कर्मकाण्ड की निन्दा की गई है। मुण्डक उपनिषद् में यज्ञरूपी की अट्ठारह प्लवों से उपमा दी गई है तथा उन लोगों को जो उनके द्वारा भवसागर पार करने की आशा रखते हैं मूढ़ कहा गया है। जो पुरोहितों में विश्वास रखते हैं तथा पुण्य और श्रेय के लिए यज्ञों पर आश्रित रहते हैं वे अन्धों के द्वारा ले जाए जाते अन्धों के समान हैं। उपनिषदों में धर्म के स्थान पर ज्ञान का प्राधान्य है।[3] तात्पर्य यह कि उपनिषद् काल के बाद उपासना के स्थान पर ज्ञान और बाह्य प्रकृति की आराधना से अंतरात्मा की ओर उन्मुख हो रहे थे। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप ही अखा की वाणी में बदल गया। अखा के खंडन विचार का बाहर भी नहीं सोचा भी निर्गुण संप्रदाय के संतों की का इतनी पुरानी परंपरा के रहते हुए भी निर्गुण

---

१ आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ ५७।

२ डा॰ ताराचंद इन्फ्लुएन्स ऑफ इस्लाम ऑन इंडियन कल्चर पृ १५१ ५० १५६ तथा १७६।

ला॰ डॉ॰ यूसुफ हुसैन : ग्लिम्प्सेस ऑफ इंडियन कल्चर, पृ १५ १७।

३ डॉ॰ रामावतार शिवा भारतीय दर्शन पृ॰ ८१ ११।

खंडनात्मक प्रवृत्ति को सिद्धों और नाथों के ही साथ जोड़ कर संतोष कर लेना उचित नहीं प्रतीत होता । हो सकता है कुछ ऐसे निर्गुणिया संतों का जो नितांत अपढ़ और अशिक्षित हों, यह प्रवृत्ति सिद्धों और नाथों से ही रिक्थ के रूप में मिली हो । पर अनेक ऐसे संत भी थे जो यदि बहुत शिक्षित नहीं कहे जा सकते, तो बहुश्रुत और बहुज्ञ तो माने ही जा सकते हैं । सत्संग द्वारा उन्होंने उपनिषदों का ज्ञान भी अवश्य प्राप्त किया होगा । अधिक संभावना तो यही है कि निःसार कर्मकाण्ड के खंडन की प्रेरणा उन्हें उपनिषदों से ही मिली हो । अतएव, यदि संतों द्वारा कर्मकाण्ड आदि का खंडन करना, जैसा कि कुछ विद्वान् समझते हैं, बहुत बड़ी प्रगतिशीलता है, तो उसका सब श्रेय सिद्धों और नाथों की परंपरा या वैष्णवी मत को ही नहीं है । उसका अत्यंत प्राचीन और स्वस्थ रूप उपनिषदों में पहले से ही विद्यमान है । मेरा अनुमान है, संत उससे अच्छी तरह परिचित थे ।

(४)

डा॰ पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने निर्गुण संप्रदाय के संतों के दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन करते हुए लिखा है " कि उनमें कम से कम तीन प्रकार की दार्शनिक विचार–धाराओं के स्पष्ट दर्शन होते हैं । वेदान्त के पुराने पन्थों के नाम से यदि उनका निर्देश करें तो उन्हें अद्वैत, भेदाभेद और विशिष्टाद्वैत कह सकते हैं । पहली विचारधारा को मानने वालों में कबीर प्रधान हैं । दादू, सुंदरदास जगजीवनदास, भीखा और मलूक उनका अनुगमन करते हैं । नानक और उनके अनुयायी भेदाभेदी हैं और शिवदयालजी तथा उनके अनुयायी विशिष्टाद्वैती । प्राणनाथ, दरियाद्वय दीन दरवेश बुल्लेशाह इत्यादि शिवदयाल की ही श्रेणी में रखे जा सकते हैं । [1] सामान्यतः अखा को कबीर दादू, सुंदरदास आदि की श्रेणी में रखा जा सकता है, किंतु उनमें कुछ ऐसा वैशिष्ट्य भी है जो उन्हें इस श्रेणी के संतों से पृथक् कर देता है । इस प्रसंग में सब से अधिक ध्यान देने योग्य बात यह है कि अखाजी ने अपनी रचनाओं—गुजराती अखेगीता, अनुभव बिंदु, पंचीकरण, गुरुशिष्य संवाद चित्तविचार संवाद तथा हिंदी ब्रह्मलीला—में अपने दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है, और इन ग्रंथों की दार्शनिक भूमिका जैसी स्पष्ट है

---

१ हिंदी काव्य में निर्गुण संप्रदाय, पृ० ११५ ।

वैसी स्पष्टता सुंदरदास और निश्चलदास जैसे दो-एक संतों की 'बानियों' को छोड़कर अन्यत्र नहीं पायी जाती। गुजराती के पंडितों ने अखा की दार्शनिक विचारधारा को केवलाद्वैत या अजातवाद कहा है। गुजराती के प्रख्यात विद्वान् और ज्ञानी कवि श्री. उमाशंकर जोशी ने लिखा है कि 'अखा ने आत्मानुभव का जो आलेखन किया है उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वे निर्गुणोपासक हैं और उनका विचारपक्ष शांकरमत से ठेठ है। शंकराचार्य का अद्वैत सिद्धांत अखा की वाणी में रसमय रीति से निरूपित हुआ क्योंकि अखा ने तार्किक पंडित की रीति से नहीं ब्रह्मभाव का अनुभव करने वाले' अथवा रस के आस्वादक की रीति से इस सिद्धान्त की अभिव्यक्ति की है। शांकर मत इतनी रसिक और हृदयंगम रीति से शायद ही किसी दूसरी भाषा में प्रकटित हुआ हो।'[1] गुजराती संत-साहित्य के दूसरे साधनापरायण विद्वान् डॉ० योगीन्द्र जगन्नाथ त्रिपाठी ने अखा को केवलाद्वैती मानते हुए भी अजातवादी ठहराया है। अजातवाद और केवलाद्वैत का अंतर बड़ा सूक्ष्म है वस्तुतः अजातवाद केवलाद्वैत की वह पूर्ववर्ती अवस्था है जिसका प्रवर्तन श्रीवल्लभाचार्य ने किया था। डॉ० त्रिपाठी ने लिखा है 'गुजराती काव्य साहित्य में अजातवाद का निरूपण करनेवालों में सर्वप्रथम और सर्वप्रमुख तो श्री अखाजी ही हैं। श्री अखाजी की कृतियों का सूक्ष्म अभ्यासी स्पष्ट देख सकता है कि अखाजी के समग्र तत्त्वज्ञान की रचना अजातवाद के मुख्य सिद्धान्त की पीठिका पर हुई है। अखाजी के अजातवाद में एक अद्वैत परब्रह्म का अस्तित्व स्वीकार किया गया है ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं।'[2]

अखा की वाणी के दार्शनिक आधार को समझने के लिए अजातवाद के स्वरूप का संक्षिप्त निरूपण आवश्यक है। अजातवाद अद्वैतदर्शन का ही एक विशिष्ट रूप है। अद्वैतवाद का ऐतिहासिक अनुशीलन करने से प्रतीत होता है कि उसके विकास की दो अवस्थाएँ अवश्य रही हैं। पूर्ववर्ती अवस्था वह है जब अद्वैतदर्शन उत्तर मीमांसा के प्रारंभ में पोषण प्राप्त करता हुआ

---

१ अखाना छप्पा-प्रवेशक, पृ १७।

२ जर्नल ऑफ दी ओरिएंटल इन्स्टीट्यूट अजातवाद एन्ड गुजराती पोएट्री पृ २०१ भा ४ अं २-३ दिसंबर १९५४ मार्च १९५५।

अन्य समसामयिक विचारधाराओं का विरोधी, आलोचक और निंदावादी नहीं बना था। विद्वानों का अनुमान है यह अवस्था 'योगवाशिष्ठ' के रचनाकाल तक बनी रही[1]। इस अवस्था में अन्य दर्शनों के प्रति उसमें एक बड़ा उदार, सहिष्णुतापूर्ण और उन्नत दृष्टिकोण मिलता है जिसमें सब विरोधों का समन्वय संभव हो जाता है। गौडपादाचार्य ने माण्डूक्योपनिषद् पर जो कारिकायें लिखी उनसे अद्वैतवादी विचारधारा में एक नया मोड़ आता है। गौडपादाचार्य ही केवलाद्वैती वेदान्त के प्रथम व्यवस्थित व्याख्याता माने जाते हैं। वे शंकराचार्य के गुरु गोविन्द के गुरु तथा उपनिषदों के परवर्ती काल के प्रथम महान् दार्शनिक माने जाते हैं। माण्डूक्य उपनिषद् पर लिखी हुई उनकी दो सौ पन्द्रह कारिकाओं में उपनिषद् के तत्वज्ञान का दर्शन के रूप में समन्वय किया गया है। उनकी ये कारिकाएं वेदान्त दर्शन का नवनीत कही जाती हैं, और इनके प्रतिपादित तत्वज्ञान को अजातवाद के नाम से अभिहित किया जाता है।

गौडपाद की माण्डूक्य कारिका चार अध्यायों में विभाजित है, जिनके नाम हैं आगम, वैतथ्य, अद्वैत और अलातशान्ति। 'आगम' शीर्षक अध्याय में गौडपाद ने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि परम सत्ता संबंधी उनके विचार श्रुतिसंमत और तर्कसिद्ध हैं। दूसरे 'वैतथ्य' नामक अध्याय में उन्होंने द्वैतदृष्टिविशिष्ट जगत के व्यावहारिक रूप की व्याख्या की है। तीसरे अध्याय में उन्होंने अद्वैत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है और चौथे अध्याय में उन्होंने आत्मा के परम सत् और सामान्य अनुभव के सापेक्ष स्वरूप को लेकर अपनी अद्वैत दृष्टि की अधिक विस्तृत विवेचना की है। उन्होंने बताया है कि यदि एक सिरे पर जलती हुई यष्टि को लेकर घुमाया जाय, तो उससे तत्काल अलातचक्र का भ्रम उत्पन्न हो जाता है। जगत् का नानात्व दिखाता बहुरूपत्व भी ऐसा ही भ्रम है। माण्डूक्योपनिषद् में चेतना के जिन सोपानों या भेदों का निर्देश किया गया है गौडपाद उन्हीं के आधार पर आत्मा के तीन अवस्थाएं मानते हैं—विश्व या वैश्वानर आत्मा, तैजस आत्मा और प्राज्ञ। जो इन तीनों के परे और तीनों का साक्षी है उसे उन्होंने अदृष्ट, अव्यवहार्य, अग्राह्य, अलक्षण, एकात्म

1 डॉ बी एल आत्रेय, दी फिलासफी आफ दी योगवाशिष्ठ' पृ १८ व १९।

प्रमयवाद और सर्वभावसमरण माना है। उनका कहना है कि यही एक मात्र सत् है और इस अद्वैत के अतिरिक्त जो भी कुछ है सब असत् और स्वप्नवत् है। प्रपञ्च स्वप्न है इसका अर्थ उन्होंने यह बताया है कि पारमार्थिक व्यावहारिक अथवा प्रातिभासिक किसी भी अवस्था में ब्रह्म से भिन्न विश्व का कोई अस्तित्व ही नहीं है। आप्त सृष्टि भी स्वप्नसृष्टि जैसी ही नश्वर और असत् है। स्वप्न में अथवा इन्द्रजाल में हम जिस प्रकार लोगों को जन्म लेते और मरते देखते हैं वैसी ही अवस्था इस दृश्य अथवा प्रतीयमान प्रपञ्च की है। जिसकी केवल कल्पित उत्पत्ति होती है उसकी पारमार्थिक सत्ता नहीं होती। दृश्य है नहीं है, है भी और नहीं भी है स्थावर है या जंगम अथवा दोनों हो नहीं है न सब ऐसे विचार हैं जो मूर्खों को ही भ्रान्त कर सकते हैं, यह सब कुछ केवल मन की कल्पना है। सब का जनक केवल मन है यह जब तक कार्य-कारण के संस्कारों से युक्त है तभी तक संसार की सत्ता है। संसार का जन्म ही नहीं होता इसलिए उसके उच्छेद का प्रश्न ही नहीं उठता।

एक अखंड चिद्घन ब्रह्म को छोड़ कर अन्य किसी की सत्ता ही नहीं है। यह ब्रह्म न जन्म लेता है और न मरता है न यह सृष्टि की इच्छा करता है और न कभी बद्ध या मुक्त होता है। आत्मा अप्रमेय है उसमें सुख-दुःख की भावना अवेमत है। वह आकाश की तरह असंग है, उसकी उत्पत्ति या ज्ञप्ति नहीं होती। इसी मान्यता के कारण गौडपाद का अद्वैत सिद्धान्त अजातवाद या अजातारम्भ कहलाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार यह जगत् केवल मन का व्यापार है मन का निरोध होने ही उसका अभाव हो जाता है। प्रपंच की उत्पत्ति तथा प्रतीति-अप्रतीति विषयक सब प्रकार की धारणाएँ भ्रान्तिजनित हैं। मन का अमनीभाव होते ही प्रपंच का विलय हो जाता है।

शंकर का अद्वैतमत इससे थोड़ा भिन्न है यह विवर्तवाद कहलाता है। इस मत के अनुसार ब्रह्म ही इस जगत का अधिष्ठान है। यह दृश्य जगत् माया का परिणाम है, किंतु ब्रह्म का केवल विवर्त है। ब्रह्म वस्तुतः जगत् में परिणमित या परिवर्तित नहीं होता, केवल परिणमित या परिवर्तित हुआ सा प्रतीत होता है। शंकर ने वेदांत सूत्र पर अपने भाष्य में[1] जगत्

१ ब्रह्मसूत्र भाष्य २ १, ११।

स्वप्न है इस मत का खंडन किया है। वे जगत् की सत्ता स्वीकार करते हैं पर इस सत्ता को वे केवल व्यावहारिक मानते हैं। शंकर के अनुसार सत् वही है जो त्रिकालाबाधित है जो अल्पस्थायी है वह असत् है और इसकी सत्ता केवल व्यावहारिक मानी जा सकती है। वस्तुतः शंकर के मत में असत् का अनुवाद 'अवास्तविक' नहीं है उसका असली अर्थ है अस्थायी परिवर्तनशील और व्यावहारिक सत्ता। इस विवरण से यह स्पष्ट है कि जहाँ शंकर जगत् की व्यावहारिक सत्ता स्वीकार करते हैं वहाँ गौडपाद उसे भी नितांत अस्वीकार करते हैं। दोनों आचार्यों के दृष्टिकोण में यह अंतर अत्यंत सूक्ष्म होते हुए भी बड़ा महत्त्वपूर्ण है।

अखा की गुजराती और हिंदी वाणी में गौडपाद के अजातवाद की अनेक स्थानों पर अनेक रूपों में अभिव्यक्ति हुई है। गुजराती काव्य में अनेक संत कवियों ने गौडपाद के अजातवाद की बड़ी रसमय अवतारणा की है वे सब संत प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रीति से अखा से संबद्ध माने जाते हैं। गौडपाद के अजातवाद में दो बातों पर विशेष बल दिया गया है एक तो वे जगत् और जीव का उद्भव ही नहीं मानते दूसरे वे सृष्टि को मन की बहिर्मुखता का एक कल्पित परिणाम मानते हैं जो मन के अमनीभूत होते ही लय को प्राप्त हो जाता है[1]। अखा ने भी इन्हीं तत्वों का अनुमोदन किया है। 'ब्रह्मलीला' और 'एकलक्ष रमणी' आदि अपनी हिंदी रचनाओं में अजात के इस सिद्धान्त का विशद प्रतिपादन किया है। उन्होंने एक अद्वैत परब्रह्म का ही अस्तित्व माना है ब्रह्म के अतिरिक्त और दूसरा तत्व नहीं है। विश्व के नामरूपादि की प्रतीति मन की सृष्टि है केवल दृष्टि का भेद है। अध्यास वृत्ति, अवच्छेद अथवा प्रतिबिंब के किसी भी रूप में ब्रह्म से भिन्न कोई दूसरी सत्ता नहीं है। कारण और कार्य का भेद भी भ्रम ही है। जिस बीज में अंकुर ही न निकला हो उसके पत्र, पेड़

---

1 आत्मसत्यानुबोधेन न संकल्पयते यदा।
अमनस्तां तदा याति ग्राह्याभावे तदग्रहम्॥

गौ० का० ३-३२

न कश्चिज्जायते जीवः संभवोऽस्य न विद्यते।
एतत्तदुत्तमं सत्यं यत्र किंचिन्न जायते॥

गौ० का० ३-४८

और छल की चर्चा करना अज्ञान ही तो है। ऐसा ही है वह ब्रह्म जिसके विषय में दृश्य द्रष्टा और दर्शन की बात ही व्यर्थ है—

ज्यों ही अंकुर जम्या नहीं, तो कस भेद कहाँ डाल।
सत मतामत बाहरा, ताके सब गुरु बाल।
पूरन ब्रह्म साइये हो।

मूल नहीं, ममता नहीं, तो कहां डैबरी फल।
तहां कौन कहै कौन को, ऐसा ता एक हाल।
पूरन ब्रह्म साइये हो।

दृश्य, द्रष्टा दर्शन नहीं, ज्यों ही चक चाल
स्वसंवेद भी कहनेको ऐसाता एक साम।
पूरन ब्रह्म साइये हो।
(एक ब्रह्म रमणी)

चाहे उस परब्रह्म को जगत् कहो, चाहे जगदीश कहो चाहे माया कहो और चाहे काल कहो उसमें किसी काल में द्वैत का स्पर्श भी संभव नहीं। जितने नाम और रूपों की कल्पना मन कर सकता है, वे भी उस पूर्ण ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग सब में एक राम ही रममाण है—

जगत कहो, जगदीश कहो, माया कहो कोई काल।
पूरन ब्रह्म साइये हो, 'द्वैत नहीं कोई काल।
सत्, त्रेता, द्वापर, कलि चाहे न्यारे चाल
कहा मते त्रिकाल के राम रमत एक साल।
पूरन ब्रह्म साइये हो।
(एक ब्रह्म रमणी)

अज्ञात अनुभव के परमानन्द से प्रफुल्लित होकर कहा करते हैं—

तूं हि तूं हि तूं हि राम। मिरे कौजे आप ही।

'अहम्' के परिपूर्ण विसर्जन से प्राप्त परम की उपलब्धि का रस उनकी वाणी में भरपूर है—

तूँ हि तूँ हि भरपूर है, मैं नाहीं नहीं नेता।
मुझ बरके पिया, तुझ है फिर मेरे देता।
तूँ हि तूँ हि भरपूर है।

ब्रह्म्' को अखा ने 'गैन और आत्मा' को 'एक' कहा है। 'गैन' के जाते 'ऐन' सूझने लगता है—

संतो! गैन गया, ऐन सूझ्या
मैं सो हूँ, नहीं दूजा।

× × ×

जात, पात, कुल, करम भिलाना,
हरि सागर में फूला।
अगली पिछली लीन भयी सब —
ज्यूँ सुपने बिन सूला।

जिसको यह 'ऐन' सूझ गया उसका त्रिगुणाभास इसी प्रकार विलीन हो जाता है, जैसे आकाश में बादल और जागे हुए जीव के सुषुप्तावस्था के स्वप्न। फिर आना-जाना कहाँ और कैसा—

ज्यूँ नेकी बादर होय अंबर में
उपजी वृत्ति बिलावै,
त्रिगुणाभास इसी विधि बूझे,
सो नर जाय न आवै।

(भजन ११)

अखा ने भी अजातवादियों द्वारा स्वीकृत माया के अजा नाम को ही 'भ्रम' ग्रहण किया है। अजातवाद के अनुसार माया अजन्मा है अर्थात् उसका जन्म ही नहीं हुआ है वह नितान्त अस्तित्वहीन पूर्ण शून्य है—

आप पणों के लों निरंजन सर्व भाव देखी अजा।
ज्यों पुरुष देह के मोह चेतन, त्यों स्वप्नोपदेश पाई रजा॥

(ब्रह्मलीला)

अखा ' अर्थात् माया में जो नानात्व का आभास हो रहा है वह वैसा ही है जैसे दर्पण में प्रतिफलित होने वाला प्रतिबिंब—

बिशाल दर्पन भाँति बीनी और स्वच्छ सत्य स्वामिनी।
ताही के मध्य भाँति भासी वैसी सत्य सुहावनी ॥
त्यों अखा के मधी भाँति नाना वस्तु विसेष ही भासी है।
आत्मा अकर्ता अमोल अव्यय मायत जीव दिखाती है ॥

अजातवाद में माया को द्वैत और अद्वैत का समन्वय करनेवाले स्वतंत्र सिद्धान्त के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है। इसके अनुसार मन ही माया है, इसीलिए अखा मन के मारने को ही साधना का सर्वोत्तम साधन कहते हैं—

तुम मरत क्यों नहीं जावे, मनुवा! तुम मरते क्यों नाचे!
तरे चाहिए जीवना, मोटा पन विपत सब भीना ॥
मिथ्या देखी वंचकी संगे, चाहिये राम रंगीला।
सुख को साज मिलावे मन तुं दुःख बसे रस रग जागे ॥
ज्युं जल मीयल मच्छी रस बस तुरत तनहुं त्यागे ॥
एक मंत्र अद्भुत पाया, मरे सो मूल अमूले।
कथना अपना आप बन्यो पद्मा नर यू बोले ॥
जोगी हो के हो तुं रसिया, अरिहा तुम चमारा।
मरतक की गति मरतक जाने कहे नया अखा सभारा ॥
(अखाजी के पद राग मल्हार १२)

इस संक्षिप्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि दार्शनिक चिंतन की दृष्टि से अखा ने हिंदी के संत-साहित्य को अनेक नवीन तत्त्व प्रदान किए हैं।

(५)

अखा की भाषा बड़ी सजीव और शक्तिशालिनी है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर की भाषा के संबंध में लिखा है— 'भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया है—

बन गया है तो सीधे सीधे नहीं तो दरेरा देकर। भाषा कबीर के सामने लाचार सी नजर आती है। उस में मानो ऐसी हिम्मत ही नहीं कि इस लापरवाह फक्कड़ की किसी फरमाइश को नाहीं कर सके। और अकथ कहानी को रूप देकर मनोग्राही बना देने की जैसी ताकत कबीर की भाषा में है वैसी बहुत कम लेखकों में पाई जाती है।' कबीर की भाषा के विषय में आचार्य द्विवेदीजी का यह कथन बहुत अंशों में [illegible] की भाषा पर भी घटित होता है। वस्तुतः [illegible] की भाषा कबीर की भाषा की परंपरा का ही प्रतिनिधित्व करती है। दोनों की भाषा की अंतःप्रकृति एक है और दोनों की अभिव्यक्ति भी सर्वथा स्वाभाविक और अप्रयत्नसाधित है। दोनों की वाणी में अनेक बोलियों के शब्दों का मेल है, अपढ़ अनगढ़ होते हुए भी दोनों की भाषा में असाधारण आकर्षण और प्रभाव है। दोनों ने ही शास्त्रीय भाषा का अध्ययन नहीं किया था। फिर भी उन दोनों की भाषा में वे विशेषताएँ वर्तमान हैं जिनका ऐतिहासिक महत्व है।

आचार्य रामचंद्र शुक्लने कबीर की भाषा को 'सधुक्कड़ी' कहा था। सधुक्कड़ी से उनका अभिप्राय था वह 'पंचरंगी मिली जुली भाषा' जो परंपरागत सामान्य काव्य भाषा से भिन्न है और जिसमें राजस्थानी, पंजाबी ब्रज अवधी खड़ी बोली सब का मिश्रण है। जहाँ तक इसके सामान्य काव्य भाषा से भिन्न या मिश्रित होनेकी बात है, वहाँ तक इससे किसी का कोई मतभेद नहीं हो सकता। किन्तु यदि इसका यह अर्थ समझा जाय कि यह देश के विभिन्न भागों में विचरण करने वाले साधुओं द्वारा गढ़ी हुई कोई कृत्रिम भाषा है तो इसे स्वीकार नहीं किया जा सकेगा। श्री पुरुषोत्तमलाल श्रीवास्तव ने इस भाषा के संबंध में ठीक ही लिखा है कि "न तो यह केवल साधुओं की भाषा है और न कई भाषाओं को मिला जुला कर बनाई हुई। यह भी उतनी ही प्राकृत है जितनी उस समय की अन्य देशभाषाएँ। भेद केवल यह है कि अन्य देशभाषाएँ अपने सीमित प्रदेशों की बोलियाँ थी पर कबीर की भाषा यद्यपि काव्य में प्रयुक्त 'पुरानी हिंदी' नहीं थी फिर भी उसी की भाँति गुजरात से बिहार तक और पंजाब से दक्षिण तक बोली और समझी जाती थी। पंद्रहवीं शती में यह आज कल की हिंदी खड़ी बोली का प्रतिनिधित्व कर रही थी।"[1] इसमें कोई संदेह नहीं कि इस देश में कोई न कोई ऐसी एक भाषा

[1] श्री पुरुषोत्तमलाल—'कबीर साहित्य का अध्ययन' पृ० १०४-१०५।

करती रही है जो सारे देश में समझी जाती थी और अन्तःप्रान्तीय व्यवहार का माध्यम थी। जिन तत्वों ने इस देश को एक राष्ट्र बनाये रखा है उनमें इस सार्वदेशिक भाषा का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण रहा है। डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी ने प्रकारान्तर से इसी तथ्य का निर्देश करते हुए लिखा है— 'हिंदी कम से कम तीन हजार वर्षों की एक धारा—एक विकास के क्रम में आ रही है हिंदी एक प्रवाह या परंपराप्राप्त वस्तु है— अचानक सामने आकर खड़ी हुई कोई नई चीज नहीं है।'[1] अभिप्राय यह कि 'हिंदी के अति प्राचीन रूप को वैदिक, प्राचीन रूप को संस्कृत, पूर्व मध्यकालीन को पालि मध्यकालीन को प्राकृत, उत्तर मध्यकालीन को अपभ्रंश एवं आधुनिक रूप को हिंदी कहते हैं। कहने का तात्पर्य यह कि जिस भाषा का साहित्यिक रूप वेद में सुरक्षित है, उसी की उत्तराधिकारिणी हिंदी है।'[2] डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया[3] ने जिस क्रम से हिंदी को अंतःप्रादेशिकता की मर्यादा प्राप्त हुई उसे इस प्रकार दिखलाया है—

१ संस्कृत।
२ प्राचीन शौरसेनी जिसका एक साहित्यिक रूप पालि।
३ शौरसेनी प्राकृत।
४ शौरसेनी की अपभ्रंश तथा उसी का रूप भेद नागर अपभ्रंश।
५. राजस्थानी की पिंगल तथा पुरानी ब्रजभाषा।
६ मध्यकालीन ब्रजभाषा—ब्रजभाषा एवं खड़ी बोली की मिश्र शैली।
७ दक्खिनी
८ हिंदी की खड़ीबोली।
९ आधुनिक साधु हिंदी और उसका मुसलमानी रूप उर्दू।

इस क्रम में ध्यान देने की बात यह है कि जिस अवधि में मध्यकालीन ब्रजभाषा को केवल परंपरागत सामान्य काव्यभाषा होने का गौरव प्राप्त हो रहा था उन्हीं दिनों राजनीतिक और व्यापारिक कारणों से खड़ीबोली की एक ऐसी सार्वदेशिक

१ नागरी अभिनंदन ग्रंथ शौरसेनी भाषा की प्राचीन परंपरा पृ. ८५।
२ डॉ. हरदेव बाहरी—हिंदी साहित्य, प्र. खंड पृ. १११।
३ 'ब्रजभाषा और खड़ी बोली का तुलनात्मक अध्ययन' पृ. ७२।

ा का अभ्युदय हो रहा था जो आगे चलकर उत्तर भारत में खड़ी बोली, क्षिण में 'दक्खिनी' और गुजरात में 'गूजरी' कहलाई। निश्चय ही कबीर भाषा इसी सार्वदेशिक सामान्य लोकभाषा का पूर्व रूप हमारे सामने प्रस्तुत रती है। इसी को लक्ष्य कर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी ने लिखा है क कबीर की 'भाषा में परंपरा से चली आती हुई विशेषताएँ वर्तमान हैं।' दि दक्खिनी को खड़ी बोली का पूर्व रूप माना जाय तो कबीर की भाषा े दक्खिनी का पूर्व रूप कहा जा सकता है। कबीर की भाषा ही एक ओर 'दक्खिनी' से होती हुई आधुनिक हिंदी की ओर विकसित हुई है, तो दूसरी ओर वही 'गूजरी' से होती हुई मध्य की भाषा के रूप में दिखाई ड़ती है।

जिस प्रकार उक्त मध्यदेशी अंतःप्रादेशिक अथवा सार्वदेशिक लोकभाषा दक्षिण में 'दक्नी' या 'दक्खिनी' कहलाई, उसी प्रकार गुजरात में वह 'गूजरी' कहलाई। गुजरात में 'गूजरी' हिंदी के कवियों की एक लंबी परंपरा है जो अभी तक चलती रही है। ये कवि प्रायः मुसलमान हैं और इनकी भाषा 'दक्खिनी' के साथ बहुत साम्य रखती है। इन सब कवियों ने अपनी भाषा को 'गूजरी' ही कहा है, 'गूजरी' का प्रचुर साहित्य धीरे धीरे प्रकाश में आ रहा है। गूजरी के यथावधि उपलब्ध कवियों में सब से पुराना नाम शेख बहाउद्दीन बाजन का है जिनका काल ९१२ हिजरी अर्थात् १५०७ ई० के आसपास है। इनकी रचना का एक उदाहरण दिया जा रहा है—

मुँ बाजन बाजे रे हसरत आजे
मंडल मन में धमके, रबाब रैन में झमके
सूफी तन पर ठमके
मूँ बाजन बाजे रे हसरत आजे।

इस परंपरा के दूसरे कवि हैं काजी महमूद दरियाई जिनका समय ९५१ हिजरी अर्थात् १५४४ ई० के आसपास है। इनकी रचना का भी एक उदाहरण दिया जा रहा है—

पाँचों वक्त नमाज गुजारें दायम पढ़ें कुरान
खावो हलाल बोलो मुख साँचा राखो दुरुस्त ईमान।

इस परंपरा के सबसे महत्वपूर्ण कवि शाहअली जामधनी प्रतीत होते हैं जिनका दीवान अब भी इस प्रदेश की धर्मप्राण मुसलमान जनता में बहुत लोकप्रिय है। इनका समय ९९ हिजरी अर्थात् १५१५ ई. के आसपास है। इनकी भाषा अधिकांश खड़-गुजरी है—

कहीं मा मजनूं हो कहावे
कहीं सो लैला हो दिखावे,
कहीं सो गुजरी शाह कहावे,
कहीं सो हीरी होकर आवे।

अखाजी की या हिन्दी कृतियाँ प्रस्तुत संग्रह में संकलित हैं उनमें अखा की और 'मक्का' की भाषा का बोधा गूजरी' अर्थात् गुजराती खड़ी बोली हिंदी का है। बीच बीच में किसी किसी पद में ब्रजभाषा का मिश्रण मिल जाता है, पर भाषा की प्रकृति प्रधानतया खड़ीबोली की ही है। अखाजी के भजनों में खड़ीबोली और ब्रजभाषा दोनों ही प्रकार की रचनाएँ मिलती हैं। उनकी साखियों तथा 'संतप्रिया' ग्रन्थ की भाषा की प्रकृति प्रधानतया ब्रजभाषा की ही है, पर खड़ीबोली का रंग बीच बीच में झलक ही जाता है। इन सब रचनाओं पर गुजराती का गहरा प्रभाव भी लक्षित होता है जो अत्यंत स्वाभाविक है। जिस प्रकार कबीर की भाषा में केवल पूरब ही नहीं अनेक भाषाओं के क्रियापद कारकचिह्नादि मिलते हैं, उसी तरह अखा की भाषा में भी खड़ीबोली ब्रज, राजस्थानी गुजराती पंजाबी अरबी, फारसी आदि अनेक भाषाओं के शब्द, क्रियापद और कारक के चिह्न मिलते हैं। अखा की खड़ी बोली भाषा के अध्ययन की बड़ी महत्वपूर्ण सामग्री प्रस्तुत करती है। सं १६७० के आसपास रचित 'कुसुम शतम्' नाम की जो गद्यपद्यमय रचना मिली है उसमें प्रयुक्त खड़ी बोली के रूपों के साथ अखा की खड़ी बोली के रूपों की बहुत अधिक समानता है। 'कुसुम शतम्' के ही समान अखा की वाणी में भी प्राचीनता और अर्वाचीनता का संबंध तथा लघु के स्थान पर दीर्घ स्वर और दीर्घ के स्थान पर लघु स्वर का प्रचुर प्रयोग मिलता है। दोनों में मूलकालिक कृदंत रूपों के प्रयोग में भी बहुत समानता है। निम्नलिखित कुछ उद्धरण इन विशेषताओं को स्पष्ट करते हैं—

(१) जबसे सो आप विचार देखा,
मुझको जीव अवल कहाँ था?

सूरत सो साँई सहेजुँ सहेज गुँथ कीनी
आपपना खोया आप माहा।

जीवन हैसम जिन तेरा है
इसमें मेरा क्या लागे?

प्रेम इबारत इनमें है
जो सुनत मीठे बात लागे।

(२) मौत मारने से मरना है रे,
हर तोबा, वा नाम मरे।

सीधी बात समझ अबा।
आदा अवल क्या जाता फिरे?

साँई तो हाकरा हुजुर है रे
जो कोई होय तालीम साचा,

उनसे पलो सुं रीझ जावे
ऐसा कहा है कादर आपा।

(३) मनवाला निशदिन चले
और ऐसा अटक दूर चढ़े।

अर्थ की असल ऐसी अबा
यदि न आवे बहुत पढ़े।

भगवती हाथें मान हुआ
ऐसा कराया ठार पना।

विभु जोरी मे जुर बैठ्या,
अपना पाया मेरी था न अपना।

मेरा विचार गुजराती से अखा की भाषा तक का विकासक्रम दिखाने का था। पर बीच की कुछ कड़ियों के अप्राप्त रहने के कारण इस प्रबंध में वह संकल्प पूरा न हो सका। इसलिए अखा की भाषा के अध्ययन की समस्या मात्र का यहाँ संक्षेप में निर्देश किया गया है। गुजरात में लिखे गये हिंदी साहित्य की जो सामग्री अब तक उपलब्ध हुई है, उसमें सरसरी तौरसे देखने पर भाषा संबंधी दो प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं। भक्तों और दरबारी कवियों की रचनाएँ व्रजभाषा में हैं अथवा प्रधानतया व्रजमिश्रित हैं, दूसरी ओर मुसल्मान कवियों और संतों की बानी की प्रकृति खड़ी बोली की है।

इस छोटी सी प्रस्तावना में मैंने अखा की महिमा के सूर्य को केवल दीपक दिखाया है। सूर्य को दीपक दिखाने से सूर्य की महिमा में वृद्धि भले ही न होती हो, पर दीपक दिखानेवाले को उपासना का आत्मानंद तो मिलता ही है।

चन्द्रप्रकाश सिंह



श्री एक लक्ष रमणी

'जगत' कहो ! जगदीश कहो ! माया कहो कोई काल
पूरण ब्रह्म गाइये ही ! 'द्वैत' नहीं कोई काल। पूरण !
सत् त्रेता, द्वापर कलि चार्ं न्यारे चाल
सदा मते विज्ञान के राम रमत एक साल। पूरण !
उत्तम मध्यम अधमाधम, गौ, ब्राह्मण, चण्डाल
सन्त स्परस पे मते, शत्रु बात एक साल। पूरण !
मद्र, मरुवाड़ बनारसी श्वपचगृह देवाल
सदा मते आकाश के, शुद्ध अशुद्ध एक साल। पूरण !
आठम चौदश एकादशी नहीं गणत देश काल
सदा मते ज्यूं मृत्यु के सकल तिथि एक साल। पूरण !
माणिक्य, मोती हेम, चींट, उत्तम मध्यम निर्माल्य
सदा अर्णव के मते, त्याग जोग एक साल। पूरण !
घृत, दावानल, हिमगिरि, भाट, उघाट, जास, माल
सदा अनिल के मते, सब अवनी एक साल। पूरण !
घट बढ़ होय दिन, रैण की, ग्रीषम ऋतु, शीत काल
सदामते ज्यूं अर्क के, सकल ऋतु एक साल। पूरण !
नील पीत, मरकत मणि ! श्वेत मिश्रित अरु लाल
स्फाटिक के मते सदा, असंगता एक साल। पूरण !
रिपु, हितकारी सबको दहे, शठ, शहाना, बाल
सदा हुताशन के मते, सकल वपु एक साल। पूरण !
उठत शब्द उत्तम मध्यम, स्वर वीणा, स्तुति, गाल,
सदा मते ज्यूं घोष के, सकल कान एक साल। पूरण !
श्याम, सफेदी, पीत पट, अरुण मात, हरियाल
सदा मते औषधिहि के, सकल रंग एक साल। पूरण !
खड्ग हणे शाहु, चोर को ! सबको उपारे ढाल,
सदामते आयुध के, रक्षा हनन एक साल। पूरण !

अमृत हलाहल गंगजल, है मूत्र मधी मसीधाम
सदा मते इन्दुबिम्ब के, भासन का इक साम । पूरण !
चंदना चोर चोरी करे, चंदना जोगी निहाल,
सदा मते दो दीप के, दिखावन को एक साम । पूरण !
चंद सूर, गिरि, गह्वरा, शार्दुल, सर्प, मराल
सदा दर्पण के मते प्रतिबिम्बन को एक साम । पूरण !
शक्करका श्रीफल कीया कुछ खोपरा खास
सदा रसना के मते सकल खांड एक साम । पूरण !
मधूका करी मृग डेहेकीआ खटायो खतपास
कर्तव्य नरमते सदा, पुरुष, पशु एक साम । पूरण !
सूर्य प्रकाशत जगत को, तिमिर करत बेहाल
जन्मान्ध मते सदा, रैन रवि एक साम । पूरण !
सप डस्यो कोउ नग को पाव पामि मुद भाम
सदा मत ज्युं मद्यूर के पड़ने को एक साम । पूरण !
कर्म, धर्म, सब, मानीनता धर्म चरित्र सब धास
सत्यधर्मीमते सदा, सब है भास पयास । पूरण !
ब्रह्मकटाह भेदी चली, निर्मल सुरत नीराम
ऐसामता सत्यज्ञान का तामें सब एक साम । पूरण !
दर्पों यथा ना मीतरे, अन्यतामें विकास
तहां मतामत काहे का ? तामें सब एक साम । पूरण !
ज्यांहां अंकुर उग्या नहीं, तो पत्र पेड कहा साम
सत् मतामत बाहेर ! तामें सब एक साम । पूरण !
मुख नहीं मनसा नहीं तो कहा बंबरो फास ?
तहां कौन कहे कौन को ? ऐमासा एक साम । पूरण !
दृष्ट, द्रष्टा, दर्शन नहीं त्यांहां चले भाम
स्वसंवेद्य भी कहन को ऐमासा एक साम । पूरण !
चये दृष्टांत सब ही दीये ! अपय मदा मराम !
मग्रा अपये मम को, ग्रहणवासा निहाल ! पूरण !
इति श्री मताहत एकमतरमणी संपूर्णमस्तु ॥

*

कुंडलियाँ

तत्ववेत्ता तत्व ज्ञान के, पद आरूढ़ भये अेन।
पद आरूढ़ भये अेन, बेन ऐसे सेवा के
सूर सुभट मढ़े मोम, सवस्थ बोमत वाके।
"आपा" गया बिलाय काया का कछु न कारन
"लिंगी" बिना की वाच, साच ! नहीं तरन न तारन।
सहज सुभाव "आपा" बिना, अखा ! अैसीसी सेन
तत्ववेत्ता तत्वज्ञान के पद आरूढ़ भये अेन ॥ १ ॥

तज्ञ पुरुष का संग, लिंग का लक्ष न राखे !
लक्ष न राखे लिंग, रंग वाके सब फिरही,
ज्यूं मनी मनिहार मास्का भूल सोर रही।
जसो हींग को घास कणक को तत्व गुमावे,
मणी लागे ते पप, मोहोर मुख सहर गुमावे।
मोज मंत्र सारे मखा ! पूरा मर जे अे भाख,
तज्ञ पुरुष का संग लिंग का लेख न राखे ॥ २ ॥

जीव अपनो अज्ञान, मान बेहेत है मिथ्या !
मिथ्या बहुत है मान, कान गुरुज्ञान न लागगो ?
भयो न मूल उद्योत ज्योति आत्मा नहीं जागगो ?
भम्यो भुवन सो तीन ! कोनो नहीं कबहु विचारा।
मैं सो कोन, कवन सो ये है पिंड चलावन हारा ?
बिना वस्तु बिचार, अखा दर्शन बहु पथा।
जीव अपनो अज्ञान मान बेहेत है मिथ्या ॥ ३ ॥

और नहीं उपाय सहाय्य बिना गुरु ज्ञानी !
ज्ञानी है ता सहाय्य कसा सो वेस अनेरी,

ज्यूं वैद्य सलाका मेली, पडल उतारत फेरी !
नेना निरमल होत, उद्योत आतम होय अैसे,
अनुभव होत साक्षात, पात पक्ष रहत न सेसे।
निज प्रतीत उपजे अखा ! मूमता अपनी मानी,
और नहीं उपाय सहाय्य बिना गुरु ज्ञानी ॥ ४ ॥

करनो शुद्ध बिचार, पार नर तत्क्षण पावे !
पार पावन की विद्या शुद्ध येहि अनुभव कीजे,
पार पावन की विद्या शुद्ध येहि अनुभव कीजे,
जेतो देहि विकार, मार सब देह सिर दीजे।
मैं तो अव्यय, अनुपम सदा, अलेपक साक्षी,
पाँच पचीस सेना ये भासत मुझ माक्षी।
प्रकृति पुरुष विवेक छेक सूं नीके आवे,
अखा ! ये परनालिका, पार नर तत्क्षण पावे ॥ ५ ॥

बंध मोक्ष नहीं, प्राय भार अपने सिर लेवे !
अपने सिर लेवे अेहू है, सब देह का करनो,
पाया बिना बिवेक मानत आपना आचरना।
देह मलिन जड रोग भाग सुख दुख को भौडो
आतम अखंड अव्यय, अविनाश प्रभार कछ छुव्यो न छाना।
अखा ! मात बिचार, देह दाप देह शिर देवे,
बंध मोक्ष नहीं प्राय भार अपने शिर लेवे ॥ ६ ॥

स्वे स्वरूप भली भांति जान्त नर येहि बिचारे !
बिचारे अैसे धरण धरण से सूक्षम नीरा,
नीरतें सूक्षम तेज, तेज से सूक्ष्म समीरा।
समीर तें सूक्षम व्योम व्योम तें सूक्ष्म सुभावा
सुभाव तें सूक्ष्म अर्द्धमात्रा मात्रा तें सूक्ष्म अवाच्य कहावें।
यहि परिपाटी आपत अखा ! मन करके धारे,
स्वे स्वरूप भली भांत जान्त नर अैसे बिचारे ॥ ७ ॥

देही नेहका बिबेक छेर लें नर सो ज्ञानी !
ज्ञानी मरत विवेक, आप बिचारत न मारो,

सबको जीवन आप आपको ना कोई सहारो !
इन्द्रिय दश, दश देव, भूत पंच, चतुष्ट ये माया,
तन्मात्रा समेत, कह्यो सब कारन काया।
प्रवर्तक सबन का अखा ! होत न कबहू मानी,
प्रकृति पुरुष विवेक, ठेक यूं करे सो ज्ञानी ॥ ८ ॥

अैसे करत विचार सोहि नर जठर न आयो !
जठर आया सा कौन ? अवनीजें अवनीनें जमी,
नीरे जन्म्यो नीर, तेज तेज को करणी।
पवने जन्म्यो पवन, गगन कीना आकाशा,
अचरज सो है यह, "देह" देखत भयो साँसा।
अखा ! शुद्ध बिचार बिना अैसे सब वोल्यो गायो,
अैसे करत विचार, ! सोहि नर जठर न आयो ॥ ९ ॥

आप पूर्णता चीन्हें बिना कल्प दूजी वाता !
कल्पत दूजी बात आप भूलें की वानी,
दृष्ट पदारथ जेह मूरत ही जे जे ठानी।
चित्त चेतन को अंश, घन साम गरजावे,
मण ताँबे मे हेम, पइघा एक हाथ न आवे।
अतर आपा भूल के फुसफासा, यूँ राता,
अखा पूरनता चीन्हें बिना, कल्पत दूजी वाता ॥ १० ॥

मूल, तोल, रूप, रंग, चिकनता कछू न जाता !
कछु न जातो हेम खेम मित अपनो औरु,
भइत भांजत है घाट निरय,, दुख पावत भोरु।
कारज, कारण एक, नेकता होत न न्यारी,
कारज दुख सब रूप कारण सत्ता तिहारी।
'चित्त चिद् ! भिन्न ना होत, पोत को देखत नातो,
मूल तोल रूप, रंग चिकनता कछु न जातो ॥ ११ ॥

अतर्गी अविलोक बाहेर रूप को लाल सब !
बाहेर रंग के लाल नाम अरु रूप के रागी,

भमो मा पोत प्रकास परातीत देख्यो न जागी !
कस्यत दूर किरतार आप कर्म के बध बंदा,
ग्रेसी थसी अनादि ! नहीं का कासें अंदा।
मिल पूरा पूरा मुक मिले अबा ! योग हाय तब
अंतरसी अविलोक बाहेर रूप के सास सब ॥ १२ ॥

ज्ञानीनर परमेश्वर सूं रस असतें बरते सदा !
सदा रहे रस रूप आप ना देखे असमू
मुकुर मध्य भास्या तुज, बिंब ना असमू असर्म्यू।
तुज असणा मुजवास फास तुज बोर्से बोर्सू,
सब तेरा चेन चेन गये करी मूर्सू।
निरयानित्य जाणो भवा ! तम गुरुप माने मुदा
ज्ञानी नर परमेश्वर सूं, रस असतें बरते सदा ॥ १३ ॥

सहकारी साक्षात् पूरा मगते पद रह्या !
पदे रह्या परमाण अटिकल माधम अबस,
लोक चौद लगी माय पूण पवतें निदचल।
ज्यम पारस परमे घात साक्षातत होमुं थाये
तेम प्रकृति करे चैतन्य अगते ते माही समाये।
माया केरा रग माया मोह्या थया मगा,
अवा ! आपो पू जन पूरा मरत पदे रह्या ॥ १४ ॥

सबम शास्य मू सार, भार समझन माँ जाणो !
समझणमा बहुबात मत हाय पुरुष बलनी
बोलण हारो आप लीजू सर्व रांका मननी।
जाथी रहे साक्षात् रतकर संशय गुणिया
भरम बंधन कर दूर ज ज ऋषि मुनि जन भणिया।
जन रवे यह बणा मगा अमेदा दूर आणो
सबम शास्त्रर्नुसार, भार समझणमा जाणो ॥ १५ ॥

विना करे विचार मार बधन नर पामे !
बधन पामे जन्तु, तन्तु भव पार्में अंतर,

हता म पिंड ब्रह्माण्ड, प्रोया रहे अभ्यंतर।
देखीतो स्थूल हार, सार सूक्ष्म मध्य ग्रैसे
त्यम ते त्रिगुण व्यापार, सार प्रवर्तक तसे।
अखा ! अेने अेन छे, गुरु वचन उर जामे
विना करे विचार, भार वचन नर पामे ॥ १३ ॥

बीजो नथी बोलनहार, अज्ञान एसे वधाणो !
एसे वधाणो अस्त करी नित नित पामे
खाने वावे पोस ? रह खसखस ने आमे।
उग्योपाम अफीण, ज्याहारे जडता आवे,
नाखी खस-खस खाय, नातो भर जणावे।
आत्म बीजे रहे अखा ! त्वे सचराचर भाणो
बीजो नथी बांधन हार, अज्ञान एसे वधाणो ॥१७॥

आत्म अर्क उगिया विना, कहो उद्योत किनको भयो ?
भयो नहि उद्योत त्यजी ने शृष्टि नी त्वारी,
भयो नहि उद्योत, सूर्य से अर्घ्या धारी।
भयो नहि उद्योत, कीने आगे जुग जुग विचरणो,
भयो नहि उद्योत, कीने अर्णव घूंट आचरणों।
भयो नहि उद्योत, कीन कैलास अंक में लियो,
अखा अर्क उगिया विना, कहो उद्योत किनको भयो ॥१८॥

ब्रह्म कवच पहेन्ये बिना, काल सताइ का वच्यो ?
वच्या ना शिव, ब्रह्माम, उवामण नवग्रह तारा
शेष गणेश, दिनेश, यक्ष, किन्नर, नर सारा।
इन्द्र, चन्द्र नरेन्द्र, ठोर दिवीके केते,
वीर दश दिगपाल, जाहेर पेगम्बर जेते।
जे धरी आया काया सो सब माया संग रच्यो
ब्रह्म कवच पहेन्ये बिना, काल सताहे को वच्यो ॥१९॥

सर्व संग त्याग बिना, जीव जंजाल जातो नहीं !
जातो नहीं जंजाल मान बडाई मन में,

अंतर रहत सुकाइ, ज्यूं दामिनी छुपे घन में !
अवसर देत दिखाय जब पावत प्रसंगा,
स्यूम लिगी नर एह देही के आवत संगा।
अंतर में भया लीन, सो मग अंग मातो नहीं,
सर्व अंग रमे विना जीव जंजाल जाता नहीं ॥२०॥

खरी गति उपजे विना खरो कारज सरतो नहीं।
सर खरा तब काय, विरह अंतर में छीके
ज्यु पजावा माग्य माल रंग होवे नीके।
ज्यूं उघाड़ मात काष्ट, मसीआगर होत तेम
जमे पारा शुद्ध प्रदत मान उजागर।
विरह वैराग्य मातुर खरा साके बिन पाँव टिके नही
खरी रति उपजे विना, अखा खरो कारण सरतो नही ॥२१॥

परमेश्वर को पामेवो ऐसा सो जाणत नरा!
नर जाण निरधार, अहंकार पलाये अंतर
बयनी हाय के ना होय मिथिस गति हमि अतर।
उपजत नही अंदेस रहे विन जसा तेसा—
न रहे ईश्वर—जीव अतर गया अंदेसा।
अखा सेना वामवा छेड सो याजत गिरा
परमेश्वर को पामवा एसा सो जान नरा ॥२२॥

पिंड पिंड परतीत माने सो ही मूढ नर।
नर करे निरधार, जीवत ही ए देह को
तत्त्वरनि में मार, समुदाय एह छेह का।
उपजत बिणसत काय प्राय पिंड को है धरम,
ये सो इन्द्रि सुभाव आपे सो पद है परम।
ऐमो जानत है अखा ! दह छने हि एह पर,
पिंड पिंड परतीत, माने सो ही मूढ नर ॥२३॥

अकय अखा ! सो जान है एम हि बरतत मन।
बरतत नहीं देह संग, ध्यान नहीं राखत दूज

अंदर रहत अमान, सकल कोई अनुभव सूझयो ।
देह इन्द्रि व्यापार, आपतें देखत न्यारो ,
धूलि धूम दीन होत सूर, सूर लगे नहीं विकारो ।
देह विकार देह शिर दीयो, नहीं शोक मानत मुदा
अजब सखा ! सो ज्ञान है, ऐसे हि बरसत सदा ॥२४॥

ज्ञान भक्ति अरु जोग के, मारग तीन अरु तीन लक्ष ।
तीन लक्ष उरधार, संसार तें रहत बैरागो ,
अंतर 'आपा' हार तत्त्व सुँ रहत है लागो ।
योगी 'आपा' हारत या लहे लागत तारी ,
भक्त कु 'ध्यम्याता' य जब हि मिलत बनवारी ।
ज्ञानी कु सब विचार सखा ! ना रहत पक्षापक्ष ,
ज्ञान, भक्ति अरु जोग य, मारग तीन अरु तीन लक्ष ॥२५॥



धुमासा

१ राग काफीली

आयो है फागुन मास खेलो खेल आतम आप में हो।
माहिं दुरयो आतम के आगे मत भटको बन कुंज।
ज्याकू श्रुति गावे संत सेना देख सको तेज पुंज ॥ खेलो
रस्य माई द्रुम भौरे मधुकर करत गुंजारव आप।
रूप बिना रूप आये रूप प्रगटयो, तो कैसे अम्य धाम ? खेलो
ज्याकू रूप रंग न रेखा सो तू आप्य अकाल।
निर्गुण सो गुन रूप भयो है मोप सकल लोक धाम ॥ खेलो
पंच पंच की पल में देखी आप उपावन हार।
अंते आकाश उतपत्य लय पावे आपमें आप बिस्तार ॥ खेलो
मन सो मन नहीं चित ना चित नहीं, बुध्य नहीं अहंकार।
पंच सो पंच नहीं है आपे देखा तम सोच बिचारय ॥ खेलो
माही छिपे पंच भूत न इन्द्री है हरि आप आप।
सुरत्य चली अगा उद्य अंतर्य तब रहे अमाप ॥ खेलो
काटि पंचास्य कहै जीव बुद्धि, रहे रूप्य की कोटय।
गगन पाताल भटके भूले आतम है आप आट ॥ खेलो
अंध धम आतम बिन जामो देखी गायो धुमास्य।
बारा मास बसंत अखा कहे आप में आप को पार ॥ खेलो

२ राग काफी

एम भया हरि आप अजब गति राम की हो ॥ टेक ॥
भया पंच तत्व तू प्यारे, तू गुण इन्द्री आप।
तू न्यारे ना न्यारा परमातम ज्यों अम्बर अभ्र बसाय ॥ अजब
ना मरे जीव ईश्वर फुनि मरें न मरे ए पंच भूत।
प्रगट्या ना छिप्यास पायें, एही कला अद्भुत ॥ अजब
दृष्ट पदारथ एती माया अदृष्ट पदारथ राम।

घं, ध्याता माया सब तेरी, तुम हो पूरन धाम ॥ अजब
अजहूँ होई तुमकु पकर म जाऊँ, ता तुम न मिलो त्रिलोक ।
हूँ तुम विन आराम निरंतर, त्यांहां हरि रोकारोक ॥ अजब
बिश्व सा विश्व नहीं वस्तु आवे ज्यु सविता विषे किण ।
बिन मूर ज्यौ रश्मि सो कहाँते सब तेरे आवर्ण ॥ अजब
पद्य तमारे तम ही हा, हरि हूँ तूं महि परमान ।
निज निर्धार करो भुज रूपे काहा करूँ तम ध्यान ॥ अजब
जे घन उपज्ये गत्यमरय एसी सा मर स्वैना गान ।
सब घट सहज स्वरूपी स्वामी तमते कोई नहीं आन ॥ अजब
करता हरता धरता भरता, श्रुति गाए मोहोत प्रकार ।
सत्स्वरूप सचराचर चिद घन बांस का पूत सोनार ॥ अजब

१ राग काफी

हे हरि हाज हजुर गुरु की दृष्टे याहामी ए हा ॥ टेक ॥
अह ममता की ओट भई है, मिथ्या कोट बरजोर ।
अह छुटे से ज्यौं का त्यौं है सुर उदे गयो घोर ॥ गुरु की
हेम हुंकार गर्‌यो तावन पे अब प्रकट्या ते सत ।
रत्म पमटी अकोर ओर सब, म्यला हे सद्‌गुर संत ॥ गुरु की
मन पवन उडत सुखकारी, सीतल मन्द सुगन्ध ।
न न-कमल विकसे बिम्ब बिम्ब के, भागा भरम से धंध ॥ गुरु की
उमग और आनंद ही औरें, औरे दसा और धास ।
और ही रीत नीत कछु औरे, नवल खेल नव ख्याल ॥ गुरु की
साह हसा बसन सागो, भाप आभास सुरंग ।
सहे पे शक्ति सागर की लहेरी, नव नव तान तरंग ॥ गुरु की
दृष्टादृष्ट मध्ये ही मनोहर, बसंत हरि फाग ।
हा हा होरि कहा चिद शक्ति, उडत शब्द पराग ॥ गुरु की
देखन लागे सनद सनदन शिव, मुक ज्ञानी भेव ।
आपा पर बिन रमत निरंतर, वे सुख दुर्लभ देव ॥ गुरु की
गुरु गम ते मन त्यारा छांटे, ता समझ समझ म्यराल ।
सदा अखा फुल्या रहें, अनुमेचित चिद्रूप विसाल ॥ गुरु की

★

१

जकड़ी

ये मनका कैसा इतबारा रे !

ये मनका कैसा इतबारा रे ?
ये मनके कोई मत रहा मारा रे।
ये मनका कैसा इतबारा ? ये मनका०

छिन छिन ढंग पलट ये मनका !
छिन इतबार नहीं ये सनका।
तातें अर्थ होय क्यों जनका ?
ये मनका कैसा इतबारा ? ये मनका०

जा हो मशाला है या पानी
तिसका ता जाव सफ मा आनी।
मोह अज्ञान कौरतकी मानी।
ये मनका कैसा इतबारा ? ये मनका०

काय कर्म बादल का छाया।
तिसको सत् मान मोह माया।
बस छूटकी ! और बाय बिसाया।
ये मनका कैसा इतबारा ? ये मनका०

सत् और झूठ न होय धागा।
तिसका हूँ ना मानु मापा।
आप मगा समझ्या है अमापा।
ये मनका कैसा इतबारा ? ये मनका०

★

२

'अगम अगोचर आशय मेरा'

अगम अगोचर आशय मेरा,
नहीं धारा मन, बुद्धि करा!
अगम अगोचर आशय मेरा! अगम०

य संसार है मनका मान्या
तिसर्थे निज घर जात न जान्या!
मन छुट्या, तो नाही बेगाना
अगम अगोचर आशय मेरा! अगम०

सबको चले मन करे पीछे!
तात दुमी दुनियाको इच्छे!
तो क्यौं निज घर सो नर प्रीछे?
अगम अगोचर आशय मेरा! अगम०

'आपा' 'पर' बिन जैसा तैसा!
तिसको रसमा क्यौं कहे ऐसा!
यूं सुपने बिन सूता जैसा!
अगम अगोचर आशय मेरा! अगम०

जे घर निज उपजी परतीता,
सो कछु जाने तहांकी रीता!
नाहीं सामारा द्वैताद्वैता!
अगम अगोचर आशय मेरा! अगम०

*

१

सहजे सहज साँसा सत्य हुआ।

सहजे सहजे साँसा सत्य हुआ।
जैसे नसीसों बाँध्या सूमा
सहजे सहजे साँसा सत्य हुआ। सहजे०

चौप पाँव पर नहीं नहीं बध्या
बिन बिचार पुकारे अघा,
ऐसे जीव पड़्या अंध घघा।
सहजे सहजे साँसा सत्य हुआ। सहजे०

प्रगट पारधि मांड्या पासा,
इहलाग, परलाक की आसा।
न समझे मर्म। न छूटे फाँसा
सहजे सहजे साँसा सत्य हुआ। सहजे०

वे ही ज्ञान माथे सिर साटे
काई कहे ममामी' माटे।
(ता) कुबुद्धि कीर ताक कर काट
सहज सहजे साँसा सत्य हुआ। सहज०

सहज उपदेश करे जन हरिका
सहज स्वभाव पड्या मा मरका।
पिपु सासारा नीर सहज सागर का
सहजे सहजे साँसा सत्य हुआ। सहजे०

*

४

मूरख बोध्या उलटा रे भाजे ।

मूरख बोध्या, उलटा रे भाजे,
तिसके हृदे, सार्जा क्यौं राजे।
मूरख बोध्या, उलटा रे भाजे। मूरख बोध्या०

बावन बास्य बसे मुज प्यारा,
मन, बाणी का नहीं तहाँ चारा।
तब पाइये जब जाइ अहंकारा
मूरख बोध्या, उलटा रे भाजे। मूरख बोध्या०

मूरख मापत कोटे पहिला,
बाद करे उर लावे मैला।
ज्युं ज्युं मन होता जाइ मैला
मूरख बोध्या, उलटा रे भाजे। मूरख बोध्या०

साँचे सँघी लावे हाँसी,
गम माया की बेठी फाँसी।
यूं बिचारे गोरख के बासी
मूरख बोध्या, उलटा रे भाजे। मूरख बोध्या०

सत्य बातांसूं आनाकानी,
जिसूं प्रीतम की बात न जाणी।
म ही सोनारा धीठ निशानी,
मूरख बोध्या उलटा रे भाज। मूरख बोध्या०

५

कुमतिया कथ कूड़ी रे लावे।

कुमतिया कथ कूड़ी रे लावे।
मौर उथले अपणा गावे,
कुमतिया कथ कूड़ी रे लावे। कुमतिया०

मूरख मर्म न जान लाखा
खेल्या चाह न सुझे मौखा।
तिसर्वे खेल पड़े सब काचा,
कुमतिया कथ कूड़ी रे लावे। कुमतिया०

पार पावन की पेर न बूझे,
मूरख को मति उलटी सूझे।
मर्म नहीं और सबसों झूझे,
कुमतिया कथ कूड़ी रे लावे। कुमतिया०

गुण छोड़े और अवगुन थापे
पर मुख देखी जले सा तापे।
सा मूरख अपने पर कापे
कुमतिया कथ कूड़ी रे लावे। कुमतिया०

ये लाछे दोसव है तिसका
पियु पहिचान हुआ नहीं जिसका।
न जाने मोनारा सा हरिरम का
कुमतिया कथ कूड़ी र लाव। कुमतिया०

*

६

साचा साजन मेरा रे !

साचा साजन मेरा रे !
मुज भावत गया अँधेरा रे !
साचा साजन मेरा रे ! साचा०

जब आया मुज सासा रे !
पाया प्रेम का प्याला रे !
तब नौखड भया उजाला रे !
साचा साजन मेरा रे ! साचा०

जब देख्या मुज प्यारा रे !
तन मन सें हि पवार्या रे !
हूँ भूल गई करत जोहारा रे !
साचा साजन मेरा रे ! साचा०

जब दो प्रीतम गले माँहीं रे !
सब काम रह्ये ठाँहीं ठाँहीं रे !
हूँ देखूँ तो पिय़ु मुज माँहीं र !
साचा साजन मेरा रे ! साचा०

अब कछु ऐसा हुआ रे !
मैं प्रीयम नहीं सूझा रे !
विचे मवा क्या हुआ रे !
साचा साजन मेरा रे ! साचा०

★

७

मेरा धूरत मीत सलूणा रे।

मेरा धूरत मीत सलूना रे!
मैं पाया साथी सूना रे!
मेरा धूरत मीत सलूणा रे! मेरा धूरत०

अबका लाग्या छावा रे।
हूं हुई निरदावा रे।
तो प्रीतम माग्या बाहावा रे!
मेरा धूरत मीत सलूणा रे। मेरा धूरत०

ये सब टग गया पियु तेरा रे।
तूं भाव बर बहोतरा रे।
हूं भसूं नहीं दी सेरा रे!
मेरा धूरत मीत सलूणा रे! मेरा धूरत०

अब दूर गई! तूं मिमिया रे!
परगन्या तूं गमोगसियो रे!
मेकमेक करे रसीआ रे!
मेरा धूरत मीत सलूणा रे! मेरा धूरत०

तूं धूरत। ताहे मेरा रे।
तूं बाजीगर! हूं चेरा रे!
(ना) मचा भूम क्या तेरा रे?
मेरा धूरत मीत सलूणा रे। मेरा धूरत०

★

८

मेरा नैन सलूणा साथी रे !

मेरा मन सलूणा साथी रे !
मेरा मसपता मन्गल हाथी रे !
मेरा नैन सलूणा साथी रे ! मेरा नन०

पियु ! पसुप सतुज पर वारी रे !
तेरी बात मुझीको प्यारी रे !
हूँ तेरी ये मनोहारी रे !
मेरा नैन सलणा साथी रे ! मरा नैन०

जिनको पियु ! तू रावें रे !
सो क्या क्या सौभन पावें रे ?
ज्या तू समुख हो आव रे !
मेरा मन सलूणा साथी र ! मरा नन०

हूँ तो माहीं ! तूं ही सांई रे !
मैं तो तेरी ऊछांही र !
ये दूई खेलन तांई र !
मेरा नैन सलूणा साथा रे ! मरा नन०

सुणा ! लटकणजी ! मीता रे !
मुज विना तूं रीता रे !
बाजी अवा काण जीत्या र !
मरा नैन सलूणा साथी रे ! मेरा नन०



१

धन ! धन ! मेरा आजु रे !

धन ! धन ! मेरा आजु रे !
लाख दानों आजु रे !
धन ! धन ! मेरा आजु रे ! धन ! धन !॰

तूं कोसो सरखा नहीं मीठा रे !
मैं तुझ सा कोइ न दीठा रे !
सब जगमें तूं बैठा रे !
धन ! धन ! मेरा आजु रे ! धन ! धन !॰

तू नैन सलूण मेरे रे !
और घर भाव घनेरे रे !
मा सब मीला ! तेरे रे !
धन ! धन ! मेरा आजु रे ! धन ! धन !॰

मेरा ब तू सामा रे !
नें बहुबिध सांग बनाया रे !
हूं तेरा लटका पाया रे !
धन ! धन ! मेरा आजु रे ! धन ! धन !॰

जब तुंहि मिल्या मुझ मांही रे !
अब तुंहि है ! हूं नाही रे !
ता काहो! भागा किस ठाही रे?
धन ! धन ! मेरा आजु रे ! धन ! धन !॰

+

१०

मेरा ढोलन छलकर आया रे !

मेरा ढोलन छलकर आया रे !
हूँ दूधे धोवूंगी पाया रे !
मेरा ढोलन छलकर आया रे ! मेरा ढोलन०

हूँ आप सरीखो कीती रे !
दोऊ जग में हूँ जीती रे !
हूँ एकमेक कर सीतो रे !
मेरा ढोलम छलकर आया रे ! मेरा ढोलन०

सब सही ऊमें मैं रानी रे !
अब मालन की ठकरानी रे !
तें राख्या मुँहूँ का पानी रे !
मेरा ढोलन छलकर आया रे ! मेरा ढोलन०

भला था मोरे हावा रे !
शाही रग में मिलो आवा रे !
मुज मिलते गया दावा रे !
मेरा ढोलन छलकर आया रे ! मेरा ढोलन०

घूमगी मोहन की खाद रे !
अब साँई मिल्या मुज घाद रे !
तब उमग्या अखा जग माही रे !
मेरा ढोलन छलकर आया रे ! मेरा ढोलन०

★

११

मन मीरु है री मदाका र ।

मन मीरु है रा मदाका रे ।
चतुर सयाना पाका र ।
मन मीरु है रा मदाका रे । मन मीरु०

अचानक हूं जगाइ रे ।
संजोग करा रम पाइ रे ।
मैंने नैन मिलाइ रे ।
मन मीरु है रा मदाका रे । मन मीरु०

नैन मिल्या ! हूं माजी रे ।
मेरे मन बस्या शाह राजा रे ।
तब उठी मन मस साजी रे ।
मन मीरु है रा मदाना र । मन मीरु०

अब इस भाँति हूं गयूं रे ।
भिसूं र प्रीतम की गर्म र ।
पन हूं पियुका न महेलु र ।
मन मीरु है रा मदाका र । मन मीरु०

तूं त्यागा न हूं त्यागी रे ।
मैं पर्सपम कर मनुरागा रे ।
भाग बड़ा अत्रा भागा र ।
मन मीरु है रा मदाका र । मन मीरु०

★

१२

मुज कामिन का तु कामी रे !

मुज कामिन का तु कामी रे !
तु बहुरूपी ! घननामी रे !
मुज कामिन का तु कामी रे !
मुज कामिन का तु कामी ! मुज कामिन का०

लटकाळा ! तुं मीता !
तें वहुविध लटका कीता रे !
त सबमें रसन दीता रे !
मुज कामिन का तु कामी ! मुज कामिन का०

हेज दिआ मुज साँई र !
मुख मुख नैन मिलाइ रे !
तब पे साली पाइ रे !
मुज कामिन का तु कामी ! मुज कामिन का०

मुज रूपे तुं वासे रे !
घन फरसे पियु डोसे रे !
कौन मशीके तासे रे !
मुज कामिन का तु कामी ! मुज कामिन का०

मसपतकी हूं चालूं रे !
मनमोजे हूं महालूं रे !
पियु है अवा के स्यालूं रे !
मुज कामिन का तुं कामी ! मुज कामिन का०

★

पचरगी मेरा चोला रे ।

पंचरगी मेरा चोला रे ।
सा पहिन्या है डाला रे ।
पंचरगी मेरा चोला रे ।
पचरगी मेरा चोला । पंचरगी०

सब आभूषण मेरा रे ।
सास सिगारा सेरा रे ।
तूं हूंसी बहुतेरा रे ।
पंचरगी मेरा चोला । पचरगी०

मेरा प्रीतम रसिया रे ।
मुज देसे तु बसिआ रे ।
मुज देखी मावा हँसिआ रे ।
पचरगी मेरा चोला । पंचरगी०

हूं सौइयां ! तुज साथे र ।
तुंहि मेरी आये र ।
तॅ खेस बनागा हाथे र ।
पचरगी मरा चाला । पंचरगी०

तॅ माय भबेरो पाही र ।
ते तुं जरावन माँई र ।
कीमा मचा मोसाँई र ।
पंचरगी मेरा चासा र । पंचरगी०

★

कोइ है रे सोहागन नारी ?

कोइ है रे सोहागन नारी रे ?
प्रेम-गली की केसारी रे !
कोइ है रे सोहागन नारी रे !
कोइ है रे सोहागन नारी ? कोइ है रे०

प्रेम-गली है ऐसी रे !
सिर साटे पग देसी रे !
तो मादी मुकता जासी रे !
कोइ है रे सोहागन नारी ? कोइ है रे०

हाथ जोबन की मतवाली रे !
पिउ की रुख में चाली रे !
सो पाव मालन की गाली रे !
कोइ है रे सोहागन नारी ? कोइ है रे०

प्रेम खेल है ऐसा रे !
सो सिर जात अदेसा रे !
तो एक सिर तेरा कैसा रे !
कोइ है रे सोहागन नारी ? कोइ है रे०

तो भी सार्जा स हेसा रे !
ना छोडूं प्रीतम गैसा रे !
मगन हुआ मथा मसा रे !
कोइ है रे सोहागन नारी ? कोइ है रे०

★

१५

ओ लाग्या प्रीतम का हाबा रे !

जो लाग्या प्रीतम का हाबा रे—
तो तनमन का क्या दावा रे ?
जो लाग्या प्रीतम का हाबा ! जो लाग्या०

पिव ये क्या है आछा रे !
सिर जावे न रहे पाछा रे !
जा पूछूं तो रहेवें साछा रे !
जो लाग्या प्रीतम का हाबा ! जो लाग्या०

बहुरंगी मटकाड़ा रे !
सुरत बहुत जमाना रे !
तिनका छोड़ जमानी बाला रे !
जो लाग्या प्रीतम का हाबा ! जो लाग्या०

दाना दोस्त मदमारा रे !
भा तन-मन पिव पर वार्या रे !
बर्मी बसी प्राण पियारा रे !
जो लाग्या प्रीतम का हाबा ! जो लाग्या०

सहि सगीमहारा मेरे रे !
मा मब बारे फरे रे !
कोउ जवा बहोतेरे रे !
जो लाग्या प्रीतम का हाबा ! जो लाग्या०

❧

१६

आज दूघे मूठध मेहा रे !

आज दूधे मूठधा मेहा रे
भोला साकर केरा रे !
आज दूधे मूठधा मेहा रे
आज दूधे मूठधा मेहा। आज दूधे०

प्रेम करी पियु आया रे,
मैं किस किस भावुँ पाया रे !
अब मैं छोडया न आया रे,
आज दूधे मूठधा मेहा। आज दूधे०

पियु देखत रग धूलीआँ रे
यूं दूधे मोबातो मिसीयाँ रे !
तब सहियाँ की रसिआँ रे,
आज दूध मूठधा मेहा। आज दूधे०

सुरिजन माड़ घसा रे
भोला मास हमेसा रे !
इस भाँति भाखा पहिला रे,
आज दूधे मूठधा मेहा। आज दूध०

धन धै सोहागन नारी रे
प्रीतम प्राण पियारी रे !
जीत्या अवा हूँ हारी रे,
आज दूधे मूठधा मेहा। आज दूध०



मुरिजन सब ठाहाँ पूरा रे।

मुरिजन सब ठाँहाँ पूरा रे।
देखा हाजर हमूरा रे।
मुरिजन सब ठाँहाँ पूरा रे।
मुरिजन सब ठाँहाँ पूरा। मुरिजन०

महिमावंता मद भरिया रे।
मौजी मौजका दरिया रे।
तें भेम अनेरा करीआ रे।
मुरिजन सब ठाँहाँ पूरा। मुरिजन०

कहीं नारी कही पुरुपा रे।
कहीं दीसो घोकर सरखा रे।
सब स्याम! मैं निरख्या रे।
मुरिजन सब ठाँहाँ पूरा। मुरिजन०

ये तुजमें है सब साँई रे!
तू मावे कीसी माँही रे।
तें प्यारो रीत मसाई रे।
मुरिजन सब ठाँहाँ पूरा। मुरिजन०

जे तुज देखया चाहे रे,
त तसुं बहा न जाये रे—
ता तुज दर्शन पाय रे।
मुरिजन सब ठाँहाँ पूरा। मुरिजन०

★

अलख पियु को लखिया रे।

अलख पियु को लखियाँ रे।
तो ए साची अखियाँ रे।
अलख पियु को लखियाँ। अलख०

तू मेनू वखण हारा रे,
राग रंग तुझे प्यारा रे।
तू श्वासका सेंवणहारा रे,
अलख पियु को लखियाँ। अलख०

तू मीठा मधुरा भाखे रे,
साच कोण चखि तुज पाखे रे।
तू क्यूं सिर मेरे नांखे रे?
अलख पियु को लखियाँ। अलख०

क्या प्यारा है मेरा रे?
सब खेल रच्या है तेरा रे।
मैं न नहीं मुज करा रे,
अलख पियुको लखियाँ। अलख०

यूं समज्ये पियु पाइये रे,
आपे आप समाइये रे।
एक अखा हो जाइये रे,
अलख पियु को लखियाँ। अलख०



पियु बोलते में हि रे बोलु ।

पियु बोमत मैं हि रे बासु ।
साँई बिना घूंघट नाहीं खालु ।
पियु बोलते मैं हि रे बालु । पियु बोमते•

अहर्निश खेलु साँई सेंगी
बोलु बात पियु कहे तेती ।
सो जाने जिसे बिते अती
पियु बोलते मैं हि र बासु । पियु बामते•

म्हाबके दवासुं मेरा सासा
मुज मीतम बिच माहा अवासा ।
एसे समरस भोग बिसासा
पियु बोमंत मैं हि र बालु । पियु बोमते•

सब सहिआं मुज मीतम करी
मुजथी सबमे सोभा घणरी ।
हूं गुणहोणा और को अधिकरी
पियु बोमंत मैं हि र मालुं । पियु बामते•

हूपण पियुमें खाया मारा ।
जब आपस मनों किया बिचारा ।
तब बायु बान्स गया सानारा ।
पियु बालते मैं हि र बालु । पियु बोमते•

★

२०

सहजे सहजे साजन घरु आया ।

सहजे सहजे साजन घरं आया ।
जे बेद किताबुं नाही लखाया,
सहजे सहजे साजन घरु आया । सहजे०

मीठी बाता सुरिजन केरी,
फरी-फरी जाणुं सुणुं घणरी ।
सो सारां सारां पूरी मेरी,
सहजे सहजे साजन घरं आया । सहजे०

अगम अगोचर कहिते सारे,
पढते पढते पंडित हारे ।
सो सुरिजन सुध मीईरे सवारे,
सहजे सहजे साजन घरं आया । सहजे०

साये आवत हूँ गलें लागी,
मेरे शाहनें कीतो सोहागी ।
छोडी निंद्रा तब खरी जागी,
सहजे सहजे साजन घरु आया । सहजे०

लागे दामन की भांख जिसको,
उलमत मारी भागे तिसको ।
सा और सामाग कहिये किसको ?
सहजे सहजे साजन घरं आया । सहजे०



२१

आज बनी शाह मेरे सँघी ।

आज बनी शाह मेरे सँघी ।
गइ सा बात पहिली थी जेती
आज बनी शाह मेर सँघी । आज बनी॰

मुझमें था सो प्रगट्या मेरा ।
अब सब करणा साथी तेरा ।
'हूँ' मिटसी गई ! पियु घणरा
आज बनी शाह मरे सँघी । आज बनी॰

का क्या जाने गत पराई ?
ज्यु साह ऊपरथी ऊतरी बाई ।
जैसा था मुख, न्मिा दिखाई
आज बनी शाह मरे सँघी । आज बनी॰

ज्यु पूतमड़ी बहु सटके करती
मन का दख हरतो फरती ।
त्यु सांइया साथमु हे छ भरती
आज बनी शाह मेर सँघी । आज बनी॰

मुझको भाग बरा बरी बासा
मीठा बड़बा बान बासा ।
पहिम्या पियु मानाग चाग़ा
आज बनी शाह मर सँघी । आज बनी॰

★

२२

भला बिराज्या साथी मेरा ।

भला बिराज्या साथी मेरा ।
प्रेम पिया तें हुं - तुं केरा,
भला बिराज्या साथी मेरा । भला बिराज्या०!

पिघुई नारने समको कलियाँ,
तिसमें भाडी अपडी गलियाँ ।
एक बींट केरा पानी मिलियाँ,
भला बिराज्या साथी मेरा । भला बिराज्या०!

ठोर ठोर सुं बाँधे दावा
हींडे भापस नाम सरावा ।
ए भी प्रीतम तेरा भावा
भला बिराज्या साथी मेरा । भला बिराज्या०!

अहम फहम सब तेरा प्यारा
तो किसको कहूँ हैवान बिचारा ?
जो आपे आप रच्या है सारा,
भला बिराज्या साथी मेरा । भला बिराज्या०!

दूई बिना ये न चले खेला,
बहुनामी पण है तू अकेला ।
यू सोनारा समज्या सहेला,
भला बिराज्या साथी मेरा । भला बिराज्या०!

★

२३

नो हे अकाज कदी सो घनका ।

नो हे अकाज कदी सो घनका ।
जिस पर प्यार साजन के मन का ,
नो हे अकाज कदी सो घनका । नो हे अकाज० ।

जो आतशका बरसे मेहा ,
ता भी त्यांहां न वाले देहा ।
तो और बात का सांसा केहा ,
नो हे अकाज कदी सा घनका । ना हे अकाज० ।

चारे खंटका वायु घूमे
चारे मेघ आइ जो झुम ।
तो भी रासक नहीं तिस कर्मे ,
मो हे अकाज कदी सो घनका । ना हे अकाज० ।

सोइ मेरा तो सभरा भरीआ
सोक तीन तिस भीतर घरीआ ।
दुख देने को कोना करीआ
मो हे अकाज कदी सो घनका । नो हे अकाज० ।

टूक भी जीव साजन का हाथे ,
तो बिन साजन सा और न जोवे ।
तो सेहेजे सौनाथ मुख सो सोवे
मा हे अकाज कदी सा घनका । ना हे अकाज० ।

★

वात वडी जो सुरीजन सूझे ।

वात वडी जो सुरीजन सूझे ।
नहीं तो मोका उमटा सूझे
वात वडी जो सुरीजन सूझे । वात वडी० ।

टेढी सो सब होवे सीधी,
जब प्यारे ने बाँहा दीधी ।
नहीं तो मारे कांची कीधी
वात वडी जो सुरीजन सूझे । वात वडी० ।

पवडे पीयु न पाया कोइ,
ज्युं पडीमे त्युं दीसे दोइ ।
त्यु त्युं मूझ घणेरी होइ,
वात वडी जो सुरीजन सूझे । वात वडी० ।

२५

फूदकी खाते फेर घणेरा !

फदकी खाते फेर घणेरा !
सबको दीसे फरसा फेरा !
फूदकी खाते फेर घणेरा ! फूदकी खाते फेर !

असनुंका मन फिरले माँही !
तब सुख पावे फिरे बेबाँही !
सो नर सुख सा बैठे काँहो ?
फूदकी खाते फेर घणेरा ! फूदकी खाते फेर !

बालक झोली में झुलावे !
झूठ कहाणी हालो गावे !
बुद्धि बिहोणा सुणता निर्दावे !
फून्दी खाते फेर घणेरा ! फूदकी खाते फेर .. !

काँकरे पथरे देखी रीझे !
जे मेलावे सिस पर खीजे !
तिम सेंधी बेसी क्या कीजे ?
फूदकी खाते फेर घणरा ! फूदकी खाते फेर !

बधपणे काटे घन बोधा !
माही सामारा मातम भागा !
विमु पिघाम्ये जाबे रंगा !
फून्दी खाते फर घणरा ! फून्दी खात फेर !

★

२६

अजब खेलारा साल हमारा !

अजब खेलारा साल हमारा !
खेले बल, न्यारे का न्यारा !
अजब खेलारा साल हमारा ! अजब खेलारा !

खेले सो वो सब खेले मीता !
जीत खुशी कहीं हार की चिंता !
कालबूत पर खोल सो दीता !
अजब खेलारा साल हमारा ! अजब खेलारा !

एकपणा में करती दूई !
सबकी भासा जूई जूई !
खेल रही ज्यूं ही त्यूं हुई !
अजब खेलारा साल हमारा ! अजब खेलारा !

जिसम हसम का करी करी पर्दा !
भांत दोई [मा] और मर्दा !
पण मेसक भाव न जाहे हुर्दा !
अजब खेलारा साल हमारा ! अजब खेलारा !

१ हुंपणा वार्या सुन पर, साखी !
खेल चरित साजन में काँहाँ थी ?
कहे सानारा साँईया मांघी !
अजब खेलारा साल हमारा ! अजब खेलारा !

★

२७

फूल हूँ आपण । फूली कलियाँ ।

फूल हूँ आपण ! फूली कलियाँ !
दो दिन वास किया ! फिर मिलियाँ !
फूल हूँ आपण ! फूली कलियाँ ! फूल हूँ ।

बास कली का फूलूं माँही !
थाही सफरी रंग के वाँही !
पण, कली बिना कछ होवे नाँहीं !
फूल हूँ आपण । फूली कलियाँ ! फूल हूँ ।

अे या बास कली में भरीआ,
तब मेहे क्या जब फूल पसरीआ !
मोज मिटी तब निज रूप करीआ !
फूल हूँ आपण ! फूली कलियाँ । फूल हूँ ।

फूल, कली मा देखूं दोई !
बहोत बिचार्या कोई जाई !
हूँ आप सारा ! आपे याही !
फूल हूँ आपण । फूली कलियाँ ! फूल हूँ ।

कलियाँ मीठ ! साथ सो बासा !
फूल सोभारा किया रासा !
जग के भेसा माग - बिलासा !
फूल हूँ आपण । फूली कलियाँ । फूल हूँ ।

*

सो घेन सुख साजन का जाने !

सो घेन सुख साजन का जाने,
जो पहिले अपना आप पहिछाने !
सो घेन सुख साजन का जाने ! सो घेन !

मसी पीतम को ना भावे,
जिसमें वास खुदी की आवे,
तिसको प्यारा क्यों रग रावे ?
सो घेन साजन का सुख जाने ! सो घन !

पढे पढ केस उखेडी देखे !
तिस पर भीतर गर ना होते देखे !
ऐसे आप पखाले सेखे !
सो घेम सुख साजन का जाने ! सो घेम !

ऐसी पे को निर्मल नारी,
एई सेज सदा सुखकारी,
पल भी पियुर्ये न रहे न्यारी !
सो घेन सुख साजन का जाने ! सो घेन .. !

कुलवती तब पहेलां त्यागे,
पीछे फरया, सो करे आगे,
सो ज सोनारा पियु भोग लागे,
सो घेन सुख साजन का जाने ! सो घम !



२१

क्या जाने सोका काला रे !

क्या जाने सोका काला रे !
जब भयी सो लाल गुलाला रे !
क्या जाने सोका काला रे ? क्या जाने० !

मोहे पियु सेजु पर मिलीया रे !
तबकी बहोत मैं रसीया रे !
उमगी सो रस उजलीआ रे !
क्या जाने सोका काला रे ? क्या जाने० !

साजन ! तुं राता ! मैं माती रे !
साजन ! तुं दीपक ! मैं बाती रे !
तु तो प्यारा ! नारी संगाथी रे !
क्या जाने सोका काला रे ? क्या जाने० !

साजन ! तुम बसते मैं बासु रे !
साजन ! तुम हसते मैं हासु रे !
मैं तो एकमेक होय महासु रे !
क्या जाने सोका काला रे ? क्या जाने० !

साजन ! तु मैं मैं तुम माही रे !
तब जीत पड़ी मा दाही रे !
तब मया माप सराही रे !
क्या जाने सोका काला रे ? क्या जाने० !

★

९०

जिस घर न्हाव आपे चली आवे ।

जिस घर न्हाव आपे चली आवे ।
सो प्रेम सुख के कर्म में पावे ।
जिस घर न्हाव आपे चली आवे । जिस घर० ।

महाराजा की सबको नारी ।
सारी जाने मैं हूं प्यारी ।
मांग भरी रहे अंग समारी ।
जिस घर न्हाव आपे चली आवे । जिस घर० ।

सब धणगार सभे जोमन का ।
मख सिख भारी बहु मोसन का ।
नहीं अधिकारी मुख मोसम का ।
जिस घर न्हाव आपे चली आवे । जिस घर० ।

कोइ को ग्रम जोबन का जोरा ।
कोइ को पड़े गमे का तोरा ।
इनमें मन भीजे नहीं ? रहे कोरा ।
जिस घर न्हाव आपे चली आवे । जिस घर० ।

जो मन उतरे मरम अंतरसें ।
तो दूर नहीं पिया नाम मातरसें ।
भिसें सोनारा शाह अंतरसें ।
जिस घर न्हाव आपे चली आवे । जिस घर० ।



छोकरिआँ ठींगसिआँ खेसे !

छोकरिआँ ठींगसिआँ खेसे !
साची सोहागन कंथ न येमे ! मास !
छोकरिआँ ठींगसिआँ खेसे ! छोकरिआँ० !

गुडियाँ को पहिनावे गहेनाँ !
जाने यह मोसमी बेनाँ !
यूँ अन्मारो खोवे रेनाँ ! लाल !
छोकरिआँ ठींगसिआँ खेसे ! छोकरिआँ० !

कंथ विमोही कायन बचे !
वचन सुणे और मनमें राचे !
(पण) मरयक्ष भावे न होवे साँचे ! मास !
छोकरिआँ ठींगसिआँ खेसे ! छोकरिआँ० !

पियु साहागन भारी होवे !
पिया संगे रहोवे ! पिया को जोवे !
हँसत खेलत फिर पियासंग सोवे ! मास !
छोकरिआँ ठींगसिआँ खेसे ! छोकरिआँ० !

बसनपणे में भोग न भेटे !
तब पिया पावे जब खेस समेटे !
साची भयो कहे पावे भेटे ! मास !
छोकरिआँ ठींगसिआँ खेसे ! छोकरिआँ० !

*

३२

साजु ! साज न रहीए ! सहीओ !

साजु ! साज न रहीए ! सहीओ !
ऐसा साग मया फिर न आवे रे !
निडर होय के जो जाय सागी—
साँई अबेरा पावे रे !
साजु साज न रहीए ! साजु० !

बसे सहीओ माँ हरती फरती !
स्हावा में पण सूकी रे !
आघा अंग देखाये मोका !
मोम बिना रहे भूकी रे ! साजु० !

सटका सासनजी का स्हावा—
सीता नहीं जस प्यारा रे !
सीरे भूसी भरमर्या भटके !
सो कहत अबा सोनारा रे !
साजु ! साज न रहीए ! साजु० !

*

२१

हलकी बात न कीजे ! सहीओ !

हलकी बात न कीजे सहीओ !
गुरुआमां गुण भारी रे !
निसदिन काम करे बहु वीरी,
पण बीबी सो बहुत पियारी है !
हलकी बात न कीजे ! हलकी बात० !

मनड़ा एक हुवा प्रीतम से !
तब बिना रह्या न्यारा रे !
तन पीछे ! मन एन एक न होवे !
दल का भेद है सारा रे !
हलकी बात न कीजे ! हलकी बात० !

पात पात बसे ज्युं पानी !
वा तुं पेड़ कौन पोवे रे ?
पात भिगोवे ने पड़ तले कोरा !
यूं तुं देह को देखे रे !
हलको बात न कीजे ! हलकी बात० !

सेज एक की तुं रमनारी !
वहा तु आप सजावे रे !
कंचन महा कबीरा साजा !
तुम एकपना ना आवे रे !
हलकी बात न कीजे ! हलकी बात० !

साजन संग सदा सुखकारी !
मुख फिराये क्या बैठी रे !
सम्मुख होय के देख भखो कहे !
बात रही सब हेठी रे !
इसकी बात न कीजे ! इसकी बात० !

३४

पूरण सोम कला का देखो !

पूरण सोम कला का देखे,
सो योगी, जोगी न गणे लेखे ?
पूरण सोम कला का देखे ? पूरण सोम कला का० !

ये पहिली पिछली आपमें उगे,
पूरा चाहिए तीसे क्यों पूगे ?
मेरा चाँद तपे युग युगे ?
पूरण सोम कला का देखे ? पूरण सोम कला का० !

मुज चाँदा के चाँदने माँहीं,
घट दर्शन खेले तिस छाँहीं—
पण कोस मुझे के अंदर काँहीं ?
पूरण सोम कला का देखे । पूरण सोम कला का० !

जेको अचानक ऊँचा जोवे
तिसके नैन न नीचे होवे,
तेज रहे ने आपा खोवे
पूरण सोम कला का देखे ? पूरण सोम कला का० !

नूर का नूर ? चंदि का चाँदा ?
निशदिन का तहाँ न रहे बाधा ?
देख सोनारा भामी भ्यामा ।
पूरण सोम कला का देखे । पूरण सोम कला का० !

★

३५

भेस घणा

भेस घणा ! पण एकज दाणा !
क्यूं फिरने आप छिपाणा ?
भेस घणा पण एक म दाणा ? भेस घणा० !

खिरीमां सांडा, मूस, पानोठी
बीज छपास्या तब नाहीं दीठा ।
स्वांग पिमी तूं आया, मीठा । भेस घणा० !

कुम दिख्या, पण कुम्या न पाया ?
एक कुम्या ? बे बहोत हो आया ।
साच घणेरा बेती काया ? भेस घणा० !

बैसा दाणा भू में बोया
वैसा फिरने टोबे सोहणा ?
मूरख सोच मुआ ! कहे खोटा ! भेस घणा० !

जैसे का तैसा तू, मीठा ।
भावणा भावणा लोक बदिता ?
समज सोनारा सुधारस पीता ? भेस घणा० !

★

११

पहिली पिछली सबे बखाने !

पहिली पिछली सबे बखाने !
पण ! ज्युं का त्युं मीतम नहीं जाने !
पहिली पिछली सबे बखाने ! पहिली पिछली० !

को ऊंचा, को ताके नीचे !
हाजर देखी, अखियाँ मीचे !
इस बाते सो क्यों न बिगुचे !
पहिली पिछली सबे बखाने ! पहिली पिछली० !

सब को राता गुराण केरा !
जावे ज्युं त्युं होउ नबकेरा !
त्युं त्युं सूझे आप घणेरा !
पहिली पिछली सबे बखाने ! पहिली पिछली० !

'हूं' 'हूं' करे पण हूं मा बूडे !
ज्युं हाथी पग बांध्या कूंडे !
पण, हूं का अमल न जाण्या मूंडे !
पहिली पिछली सबे बखाने ! पहिली पिछली० !

पिपु मेरा बसत बा दरिया !
तिसमें जग पंपोटा भरिया !
ममज सोनारा आपा बिच धरिया !
पहिली पिछली सबे बखाने ! पहिली पिछली० !

*

जिस्को तो शाह्सेंधी वार्ता

जिस्को तों शाह सेंधी वार्ता,
तिसका केस बसे नहीं महार्ता !
जिस्को तो शाह सेंधी वार्ता ! जिस्को तो०

जिस्को शाहका मुखड़ा भावे,
औरका गुन सो क्यों गावे !
मोक अजाप्या भेद न पावे !
जिस्को तो शाह सेंधी वार्ता ! जिस्को तो०

घमे दोहागन रोती नारी !
सबको कहे वे अनाथ बिचारी !
सो दुनियाँ को भावे मारो !
जिस्को तो शाह सेंधी वार्ता ! जिस्को तो०

अहनिस बसे न्हाव जिस सेंधी,
सो क्यों न करे चाहे तेसी !
क्या लोकों की परवा एसी ?
जिस्को तो शाह सेंधी वार्ता ! जिस्को तो०

हु मेरे ढोसन को मेई,
मुखसों बैठी संग सनेही !
अब कहे सोनारा आना ये ही !
जिस्को तो शाह सेंधी वार्ता ! जिस्को तो०

★

छंद भर्ये को छंदडे भावें !

छंद भर्ये को छंदडे भावें ।
छंद किये बिन रह्या न जावे ॥
छंद भर्ये को छंदडे भावें । छंद भर्ये को

पाठ साधा रे छंदपणा साधा ।
तीन का साधु ! साधन लाधा ।
पढवे इतना भी गोप राखा !
छंद भर्ये का छंदडे भावें ! छंद भर्ये को

जग जग की पासा सब पूर्ई ।
कहीं अधिक ! कहीं थोथी हुई ।
जात ही एक ! सफाता हुई ।
छंद भर्ये का छंदडे भावें । छंद भर्ये को

जात बिना रे सफात न होवे,
जात चहे सो सफात न जोवे,
सो बहदत का दरिया डोहोवे !
छंद भर्ये को छंदडे भावें । छंद भर्ये को

जीसम ईसम के कीते महोरें,
'हूँ' 'हूँ' के बिच बाँध दोरें,
ये भेद सानारा जाने का रे !
छंद भर्ये का छंदडे भावें ! छंद भर्ये को

★

छाना परगट हुवड़ा मीता !

छाना परगट हुवड़ा मीता !
साव अपणड़ा आये मीता !
छाना परगट हुवड़ा मीता ! छाना परगट

जे छाना जाणी ढूंढन जावे
सो गगन पताल कहीं ना पावे ।
परगट हाथ कीसी का साहावे !
छाना परगट हुवड़ा मीता ! छाना परगट

वासिन में ही करे कौन वार्ता ?
ज्यांहीं है ज्युं की त्युं ही वार्ता ।
वेप घणेरा ! हुई सफार्ता !
छाना परगट हुवड़ा मीता ! छाना परगट

यूं सब पढिआ पांपर पोसे
करणे साम्या टासे टोस ।
देखे नैन सद्‌गुरु के खोसे ।
छाना परगट हुवड़ा मीता । छाना परगट

हुं मे थोये ज्यु ज्युं कहाड़े,
तब चासस अपणा रुप देखाड़
ये समज सोनारा वात सराड़े,
छाना परगट हुवड़ा मीता । छाना परगट

✭

झूलणा

कौन मवासा उस भाई केरा ?
उसे ढूंढ काढो सो एन चाहु !
मैन नमर को गैर है रे !
मोर साफ नमर को साँई सारा !
क्या पंडित पूछे ? अखा !
आया आपो आपका पतिहारा ॥ ४ ॥
पढ़ा आलिम उसको क्या कहे ?
आँखी न आया आपो आप सॅपी !
गिरतार आप कबूल पडी —
सा मह निखी बडी बात हेवी ,
मासे का मसा मन रीसे
माठी मणका ना कोई कंठ मावे ?
वारणे उस गिरतार के ! अखा !
वे बोल सा भाउ जावे ॥ ५ ॥
आलम मीने पियु इस भोंतु —
ज्युं पानी का ओला ज हुआ ,
मुरपा पच्चर सो प्यासा ज रहेवे
जिनु नीर बुम्या घटघट पीआ !
पूरब पच्छम को क्या मर्म ?
जिनु अपगुद मीनें मोजुद देखा ,
ऐन दी अगस अपणी जी !
अखा ! उपकी भाग्य रेखा ॥ ६ ॥
पियु प्यारा सो सब कोइ कहे ,
पण पियु को प्यारी पमी मसी !
जहि जहि घमे साँई सॅपी ,
रेमी मन्तरमु एकमेर मिसी !
ज्यु आरसी मीने फारसी सी !
एक मा रो होय माप मोय !
वासबूत मीने कोइ बस कीती !
समज अखा मेठीक माने ? ॥ ७ ॥

!

झांखते में झोखाझोख हुई !
मुख माखते में भली बात बनी !
राचते में रग रल चली !
एक सो दा दो एक गनी ।
धूर्त केरे तुम ढंग देखो !
किस कलू आपो आप खेसे !
ज्यु जेवरी जलती देख ! अखा !
कुवासा फिर तेज मेंसे ॥ ८ ॥
मल भीरूते मावती कोतो ?
नाहि तो वहेंगी वोदु ब मीने
हक और गर कहेणा ज रह्या
अब कोण पतिजे लोक बेने !
ज्यु सुपने में सुख दुख देखा,
सो जागत में जरा ज नहीं,
देख कला किरतार अखा,
जे दूर सुण्या देख्या ज महीं ॥ ९ ॥
मन पाया जितु मौसे का,
सो तन के वोलड़ क्यूं औखे ?
क्यूं पैसा परसा पारसु जी !
सो क्युं तांबा का नाम राखे ?
तब तसा और अब ऐसा,
ज्यु जान्या त्यु तें ज किया,
बोध पड़ा था 'हु' ज अखा !
सो साईया आपमें ज लिया ॥१०॥
न्हाव के नेन की क्या कहूं ?
सा जाने जिस पर आब पड़े,
वातु बेवन वास वेतो,
सो सूसे बिछु आप सड़े
प्रेम का कांटा जिसे चूग्या,
सो फिर न जीवे जीवपण,

चाँद देखा पूनम भया ।
सो दुखी सीजी क्यों गये ? ॥११॥
गरीमतकी हैड है हीरों की ।
आब हुवा हीरस का पाँउ पडा
ना मन छूटे ना मास फावे ।
ज्यू कीच मीने गाडा ज अडया ।
हकीकत का हाँसिल जो होवे,
तो कछु जीवडा पार पावे,
नहि तो सुडसा ज्यू नसी ज फेरा,
बिन बाँध्या भी बँधावे ॥१२॥
हूँ निकसी पियुजी ढूँढने को,
जाय ईंट पत्थर में खोज देख्या
पूछ्या पूरब पश्चिम के नमनारे को,
वो भी कहे हम नाँहि पेख्या !
हार पडया । हाँसिल हुआ
जब मुर्शिद ने कल कही,
रह्या आपोआप सांई ज, भया !
इतनी सो तिनू कही ॥१३॥
कुल बल को जीवडा छोड बैठे ।
तो हैरान मीने हाँसिल होवे
क्या किरतार को है ज काया ?
जे हाथ पकडे के नैन जोवे !
ऐसा भेद ! ऐसा भया !
आप आपणा नफे ज करणा
ज्यू माम का बासभूत जम जावे
सोना उसकी ठोर मरणा ॥१४॥
ग्रालिब सँदी घरायर हुई
गोस मीने सो ना भूले,
गुरु कुतब का मरतबा देखनें,
टबना उसका मन भूले ।

खसम है रे खुदाई मीने !
नाहुत के घर में ना खपे,
माजव नहि कोई बात, अबा !
होय अकेला आप अपे ॥१५॥
पिमु की बात जिसे पूछ देखूं,
सो जीव की बास आगे करे !
ऐसा वेखु नाँहि अबा !
जो मरते पहले आप मरे ।
मुए के मुकाम मीने कछु पावे
सो महाँ ज पाव
हवा हीरस सु छुट सके,
सो वहदत की सीढ़ी खोल जाव ॥१६॥
पथ पकड तूं प्रम केरा
जो साँईयाँको साथ चहावे,
देख ज्यु पारेवा पास मीने,
मावा देखते नर आव ।
इसमी सायकी न होवे ज होवे,
और अेन यकीन की मास वढ़ी,
जाड़ लाग्या अबा ! प्रेम केरा,
तिसकु गुनकी गाँठ पड़ी ॥१७॥
यकसानके महसमें एकपना था,
मग ना जानता एक भढ़ी,
असहस्त कहेत में आप हुआ,
तब मन खुनी की जड़ वढी ।
जाहिर हुवा तब जात सोई
और एन मस्ती वहाँ ज रही
पोश दीन दुनियाँ सु दूर होवे
सब अबा मूसगो वात मही ॥१८॥
जीवड़ा पड़िया जमीर मीने,
यक्स खोई उस ठौर मेरी,

कौन सो मैं ? और कहाँ सू आया ?
आगे सो क्या गत होय मेरी ?
येह तो टपके करने गन हुआ है !
एनपणा सब भूल गया ।
फिर टपका खावे जब खुदी का
तब अखा ! आपोआप रह्या ॥१९॥
जाहिर मीन जाहिर हुआ ।
बातिन केरी सब बात मूसी,
जाहिर का भी बातिन देखे
तब आस सफात सो एक मिसी ।
ज्यु बीज मामा था एक अखा ।
पेड़, पात फल, फूल हुवा
आरिफ को ता आपा आप सांईयाँ
गाफिल को गैर जुवा जुवा ॥२०॥
पाणी पवन के कोहाडे मीने
आपा आप समी सो किस कसे
ज्यों आतशबाजी का योडसा मीने
मरद ग्रसे सो माहि जसे ।
भड भड सो भया ज्योत दीपी !
जस जस कर फना होय गई
बीम ग्रामी ज्युं का त्युं अखा !
यह खूबसा बाजी होय रही ॥२१॥
मन बूमी किरतार केरी
परगट म छाना होय छुप्या ।
बाने बानाब आप तुही ।
आप तम्या मे आप जप्या ।
जहाँ दर्श बहो कानि बर्नूं !
घट घट भान रग जुवा जुवा ।
गाफिल हुआ, गम खाई,
भद अगा बहे सुं न हुवा ॥२२॥

जीव को क्या कुमत लागी !
फेर फेर, सो ज्यूं का त्यूं होवे
कुदरत सब किरतार केरी !
जीव हूं का रोना नित्य रोवे !
खुदाई मीने खलल कीसी !
हीरस हवा के हाथ आया,
खुदी छोड़ सो खासी घर किया
तब अखा थाही सुख पाया ॥२३॥
हु कहेणे मे पेच पड़्या,
उलटा अमल कर बठा !
हु पिछाणी जिस घड़ी
तब मूलगे घर में आय पैठा !
गेब हुवियत जात मीने !
बीच आव पड़ा था खतरा जी !
यूं आवे मीने जात जड़ी !
अखा जावे किन जातरा जी ॥२४॥
हज्ज तीरथ हजार हुवे,
ऐन अखड जिस घर आया,
इस बीन फिरते बहुत मुवे,
कहाँ ?किनु ? किस ठोर पाया ?
ते क्यास किये बिन तप करे,
जाप जपे ! और जाप कहाँ ?
जहाँ उळजा आप दिया,
साँई साँई अखो कहे जहाँ तहाँ ॥२५॥
बारीक सु बहुत बारीक बना !
जो बारीक होय कठ लाग !
तारीफ नहीं उस ठौर केरी
जहाँ ऐन मस्ती में जात जागे
अजब कला काई जाण जावे !
गाफिल को वहाँ गम नाँहि !

दूर जाने तिसे दूर है रे !
अखा ! खोबाखोब आंहि ॥२६॥
इनसान मीने क्या कल रची,
ज्युं फिरे फिरावे वायु चकी !
की इद्यारत सो असगा रह्या,
आप किस आवे ना वात बकी !
कोइके मीने कस भरी,
सो भाँतकी भाँत चली ज जावे !
कुदरत तेरी को देख अखा !
बालते मुखसु बाल नावे ॥२७॥
सौबत लगी मुझे ल्यास केरी !
प्यारे ! नित्य करे और नित्य भाँजे !
कच्चे पक्के एकु एक अड़े,
य ही ना कुसी कोइ दाने !
राव तब तोई रंग राबे
जें ज आप उमंग उठे,
कौन कहेबे सुखीको ज, अखा !
जा काई ना रहब पहल पूठे ! ॥२८॥
तुज पहेल कोई नहा ज प्यार !
मोर साथी भी कोइ नही तेरा !
कुरान पुरान कत बताई—
सब त्रिया है माशिम केरा !
अत भवम जिसका हुई
सो बन्दु तेरा पेच पाया
माठी सबकी बात ! अखा !
सुण्या सुणाया सब गया ! ॥३०॥
कोही आउ टामम को दुडनबो
जा जहाँ देखुं बही आप गनी !
तुमा ज मान हैं तुज मौहो !
तेमी मुजरा आव मनी !

ज्युं दरियावकी मछली को,
नैन बैन बसे सो नीर मांहीं—
युं मुझको मनी रही अथा !
सो साँई गलोगल है ज मांहीं ॥३०॥
धोये धोये क्या धब धोवे !
जो मल पैठा जाय मन मांहीं !
आपणा खास और सो बुरा !
इस बातुं साँइया ज नांहीं ? !
हाड़मांस और नख निमाला,
मूछ, दाढ़ी पर हाथ बहावे !
मूरख मन चेते नहीं !
सो जक अथा केतीक खावे ॥३१॥
समम बराबर बात नांहीं !
जा सोचे आपस आपसेंथी,
मैं सो भला और सो बुरा !
देखुं बीच सबत है ज केती ?
जही जहाँ पड्या सोही तहाँ म सोह्या,
तो मांज फोड़ चीज क्या करे ?
जे ही समजे सोही समूज गये,
और अथा लड़ते ज मरे ! ॥३२॥
क्या आप आतम विरकीन हुए ?
के खाक बायुमें फेर पड्या,
सब मयासे एकठ कर
आदम इदम सब घड़्या
मत ताणो, मसहब खेंचो
कम ज्यादा टूक मि नांहि !
दिलके दीदे बस देखें,
तब साँई अथा मिले म आंहि ! ॥३३॥
सुण्ये शबद पर सब चले !
। और शाम के दीदे मुंद राखे !

रग मम्मल चूस्वो च खोई—
जब बीड़े पान पीगसे ना मावे ।
नैनबाला निसदिन मसे
मौर अधा मटके सूर पड़े ।
मध की मसल पे ही, मवा ।
कदि न मावे महुत पड़े ! ॥३४॥
मावती होसें मल्स हुवा
बीया कराया ठोर पड़या,
पियु घोरीमें पुर बॅम्या
माकूया गाढा पे ही पा च मड़्या ।
हूॅ—मेरा सब जानता पा
सो ममस हुवा घूलघानी ।
मधा पियु मदी में मिल गया—
सा फिर्नु घबेली फिर्नु तानी ! ! ॥३५॥
पियु के हो मर पड रहीए,
और बीबपम जंमाम पणा,
दीन दुनिया म दाब मीने
कदि म मावे एकपणा
ज्यु गर्भ पड़ा पा पेट मींमें
माम न उसका कोई घरे,
मसग पड तब माम सागे
बिन मार्या निठ निम मरे ! ॥३६॥
गन म हो इस गाफिल को
पियु मापमें जाणी ना सूझे ।
एन मोई मा माणकारा
हुव बासता जानता ना सूझ !
महमका पाम मन मान बैठ
वा रात ममुना बया सूम !
हम हरीगत हाम ना माई
फिर फिर मगा मन गेन सूझे ! ॥३७॥

चट पट सु चमक आव लागी
चित्त चेता और चमक मिटी ।
घरसु चोखा घूमघाणी हुवा
अब पीठ सके किस भाँत कटी ।
दिल हाजर नाजर माँहीं—
गेर की खतरा जाय घटी,
गेब की बात सो हाथ मेवी ज के,
अब्बा ! कुदरत क्यूँ जाय जटी ॥३८॥
तो ज इश्क साचा अब्बा !
जो माशूक बगैर आशक मरे,
तब माशूक सो फिर आशक होवे,
आब खाली मीने आप धरे ।
उपदेश का आतश तब लागे
जब प्रेमदारू साँई ठोक भर,
आशक गोला सो गेब होवे,
पीछे नाल रही आवाज करे ॥३९॥
आपस का दोष आपसे लाग्या,
टूक आवरण का और ठौर न था
चाक और नूरत फार्च देखा,
आखर अवल की थी ज कथा !
बाज तुझी कोई था ज नहीं,
तो गेर कौहाँ सु आव पड्या ! !
मैं तु का भेख सा तुही ज लाया,
अब्बा असमान का फूल अड्या ॥ ४० ॥
प्यारे ! किस कलूँ सुं 'हुँ' हुवा हे ?
हुँ जानता, था मे हुँज सही !
हुं को हुं जब ढुंढ देखूं —
तब मेरो ठोर सो मैं ज नहीं !
नित कसी कसी ये ही वसे,
प्यारे ! कि तुझे ये क्याम लागा,

रंग लमुसल, खूखो प खोई—
जब बीड़े पान पीगसे जा आवे !
नैनबासा निपविन पसे
और अंधा भटके सूर चढ़े !
अध की असस जे ही अखा !
कदि न आवे बहुत पढ़े ! ॥३४॥
मावती होवें मस्त हुवा
कीया कराया ठोर पडया,
पिपु घोरीमें घुर खोंच्या,
काढ़्या गाडा जे ही था ज अडया !
'हूं—मेरा' सब जानता था
सो समस हुवा धूलधानी !
अखा पिपु नदी में मिल गया—
सो फिर्नु घकेसी फिर्नु तानी ! ! ॥३५॥
पिपु के हो कर पड़ रहीए,
और जीवपण जमाल बणा
दीन दुनिया के दावे मीने
कदि न आवे एकपणा,
ज्युं गर्भ पड़ा था पेट मीनें,
नाम न उसका कोई धरे,
अमय पड़े सब आब भागे
बिन मार्या नित नित मरे ! ॥३६॥
गत न हो इस गाफिल को
पिपु आपमें बामी ना बूझे !
एम सोई सा आधाकारा
हक बासता डोसता ना सूझ !
वहमको फोम मन मान बैठे
बो खेत वसुका क्या सुझ !
हम हकीकत हाथ ना आई
फिर फिर भखा मन गेन मुझे ! ॥३७॥

ज्यूं आरसी पर बिसर लिखा,
रँग रूप देखा, मूल तेश गया,
सो आपा खोवे साँई ज माँहीं
जिन अखो कहे भेद लह्या ! ॥४५॥
गेब दरियाव के सब पपोटे,
फाटे और फिरफिर होवे
आप कारीगर अपणा जी !
आपोआप समार कर आप जोवे !
आव, आतश, खाक, बायु तूँहि,
भेस फेर कर तूँहि आया,
छंदडे कर कर रूप माता था !
अब अखा न आवे बाखा ! ॥४६॥
फेर फेर सो भवा एक आवे,
कदि अधिक ओछी होय कमा,
तूँ परदापोशी कर खेस !
टूक बात में नहीं बूरा भमा !
सफेत मीने कई कोटि भातां,
और आप सो ज्यूंका त्यूं धनी !
टाँक और सेर पासेर बहुतेरे !
अखा आखर सो एक मनी ! ॥४७॥
सर गुरु सरदार होइये !
और भोयणा नाँहि मंगार, मूँडे !
साँई बिना सुख नाहीं ज पावे,
से खंडा उतर कूडे !
बाँध बाकरी सड मेदान मे,
जीत खटी अवसर आया !
गाई गुप आर धुप रह्या ज अखा !
नाहीं सबे न जा मन नाया ! ॥४८॥
खराबरी कीआ खराब हुआ,
खालिक की तुझे खबर नाहीं,

कसरत मीने मुझे कस पाई,
सुई सीड्या, अखा न धागा ॥ ४१ ॥
खोजते खोजते पार पाया !
माब निकसा श्मसान मौहीं !
बोलणा डोलणा सुमसुं रे,
ढूंढ देख्या सब हूं न कौहीं ?
कहीं कोटि दिनों का रहा न अखा—
सा दिस दरूंदर हास पहोंच्या !
या सपने सों सौचा हुवा,
अब साची-सपनें माहीं सोच्या ॥ ४२ ॥
है किसका ? कोइ अमल करे !
ये हि गफलत को कौन मेटे !
हक हाजर हर हास मौहीं,
पीव जीव कागद के नाहीं छेटे !
ज्युं तस्तेका कोहाका सा !
कस उलटा सुलटी होय फिरे,
है संध सांइयाके दोरडु का
तुं फोक अखा बिच आप धरे ! ॥४३॥
करामत बसे कहीं कोटि कसा,
जीव ! तूं क्या बिच में सिर बहावे ?
है बातिन और जाहिर देखे !
जाहिर बातिन होई जावे !
तुं दावा धरे सौई सेयी ?
तेरे मूस मूरख केते कलाई ?
मुकमाम से बहुत गुमराह गये !
तुं अखा नाहीं पछाई ! ॥४४॥
करामत हुई बही केहेर आया
केहेर तौहीं सौई की मेहेर नाहीं,
मेहर बिना खुदी होय जावे,
जाये दूर दराज पहुंचा न कहीं !

ज्यु आरसी पर चित्तर लिखा,
रँग रूप देखा, मूल तज गया,
सो आपा खोवे साँई ब माँहीं
जिन मखो कहे भेद लहया ! ॥४५॥
गेब दरियाव के सब पपोटे,
फाटे और फिरफिर हावे
आप कारीगर अपना भी !
आपोआप समार कर आप जावे !
आव, आतश खाक वायु तुँहि
भेस फेर कर तुँहि आया,
छंवड़े कर कर छुप जाता था !
अब अखा न जाये वाह्या ! ॥४६॥
फेर फेर सो भया एक आवे
कदि अधिक ओछी होय कला,
तुं परदापोशी कर खेले !
टूक जात में नहीं बूरा भला !
सफेद मीने कोई कोटि भातां,
ओर आप सो ज्युंका त्युं धनी !
टाँक और सेर पासेर बहुतेरे !
अखा आखर सो एक मनी ! ॥४७॥
सर धुर सरदार होइये !
और भाँजणा माँहि भयार, भूँडे !
साँई बिना सुख नाहीं ज पावे,
मे झंडा उतर कुडे !
बाँध बाकरी लड़ मेदान में,
जीत खटी अवसर आया !
याई गुप और चुप रह्या प अखा !
नाहीं तवे न जा मन नामा ! ॥४८॥
बराबरी कीग्रा बराब हुग्रा,
बालिक की तुम खबर नाहीं,

जा बैताल हुवा सो हुवा !
क्या खामीए के केसी ज मही !
तेरा दिल दुनिया पर है जेसा
होव वीसमा बुखरा सौंह सेंधी ,
गेनगेन जावे एन एन आपे होवे ,
कहे न सक अखा वात तेती ॥४९॥
सांई के हाकर सुख साई ये
काम नहीं ओर बात केरा
रखक सो हाथ रजाक के है
सो तो है खाविंद तेरा ,
थांब तेरा तुज माहीं ज, अखा !
हीरस हुवा हर दिल दमे !
आनाकानी बात सौंह सेंधी ,
तुझे साफ दुनियां की मन गमे ॥५०॥
गई फिकर सो फकीर हुवा
कछु पेबंद में पियु नाहीं पेठा ,
चांद देखने गरज है रे
कोण उठ जावे जो देखे ज बेठा ?
दिल की मजस पहोंचे, अखा !
और साफ बन्त तूं मत करे
आफ फकीर इस राह पहोंचे ,
तू मनके पीछे मत फिरे ॥५१॥
मन के सिर मदार सारा ,
हम ताई क्या बात तुझे ,
मन मारा तब सूझ पाया
दाना फकीर एलगा बुझ
सांप मारनमु गरज है रे
दर ताड्या, मा नाग मरे !
सीधी वात समझ अखा !
आड़ा-अवळा क्या आता फिरे ॥ ५२ ॥

साँई तो हामरा हुजूर है रे,
जो कोई होय तालीब साचा,
मसोपतो सु रीझ आवे,
एसा काहाँ है कादर काचा ?
तालीब को साई सुरत मिले
जो हमेश तलब लागी रहे
अखा ! मनी को छोड देवे
साँई कदम को नित सेवे ॥ ५३ ॥
तकद मिले तालीम बिगडे,
इस बगेर ना एन होवे,
मनको मेल मलामत लागी,
क्या हाथपाँव मलमल धोवे ?
बिन हावा हासल नहीं,
हाय ! कैसे मे मन मरे ?
अखा ! अर्वाक वहाँ सोम कसा !
जो जीव खोया ते भक्ति एम करे ॥ ५४ ॥
अखे सो आप बिचार देखा,
मुजको जीव अवल कहाँ था !
सूरत सा साँई सहेजुं सहेज युं म कीती,
आपपणा दीया आपमाँहाँ !
जिसम इसम भी तेरका है,
इस्में मेरा क्या लागे ?
एन इशारत इतमी है,
जो सुनते मीने बात बागे ! ॥५५॥
मन लागे तब मौला मिले
लाख बातुं की बात येही,
मन भटका बहुँदिस फिरे
ता क्या करे मूरख देही !
ज्युं आँखों का बाब फिरा
तो नूर सो तिसको क्या करे ?

अखा नेम निर्मल होवे
तब सबमें मीनें आप धरे। ॥५६॥
साँई मीसन मुश्केल है ! रे !
और प्रेमीओंको है स्हेसा
बिरह सराण, और आप हीरा
नेह की रज ले बस पहेसा,
प्रगटे ज्योत भीतर में सु,
तब हीरा का मोल आणी,
एसी उपज बिन, अखा !
बहुत खोवे आपणा ज पाणी ! ॥५७॥
घात की घात होवे ज अखा !
और काठ पत्थर का मा होय सोना
प्रेम प्रीछा कर पिवु मिले,
ईस बिन औरहू भाव होना !
बूध घरवत हजार पीवे,
और प्यास न भागे बिन पाणी,
बोसते को बुझ्या बिना
और सब एसा ज आणी ॥ ५८ ॥
'आप' मिटा और आप रहेवे,
आप बढ्या व घूमधामी,
साँई सदा समर भर्या
तिसमे दूजा गेर आयो,
अवस आकर आप भर्या—
तो बीज में दूजा का कहीए ?
खेंचातानी छांड दे कर,
अखा ! तू समज रहीए ॥ ५९ ॥
सारे दीनका दीन य ही—
जे आप बीच मे सु टल जाव
टमसे अखा और होवे
दीन की माहात तब पावे

भेदुकी आहार सु भेद मले,
यूं अखा ना ठर बठे,
भेदु विना भेद हाथ ना आवे
आप छोडे पियुमाँ पेठे ॥ ६० ॥
मापको अत कमाई जेता,
साँई पास सब नेग मागे,
भेदु सा भेद उलटा पाया,
दुईसु काटा चास आगे
बेटे को उमळ बाप का सब,
पीगल सा आ होय धणी
अखा ! सूज की बात न्यारी
और बातु सु होय मनी ॥ ६१ ॥
आरफानका म्रहा कोई नहीं,
जिसको होवे सो हि जाने,
अकल आये, कम एन मिली,
ज्यू नीर म नीर एक साने,
तब सब करणा उसका हे,
जिसका किया सब होवे,
'शय' की ठौर साँई हुआ,
अब अखा क्या और जोवे ? ॥ ६२ ॥
तेरा "जाणपणा" फेरावणा हे,
'शय' की ठोर "वहदत" देखी,
"गेर" "गेर" सुणी, सोहीं जाण बेठा !
"गेर" की ठोर लूं "हक" सेखी,
जा है सा आपु आप है रे !
तू दूसरा होय टकटक करे !
अखा ! "एन" जाने सु "गैन" जावे,
बिन बूझ्या बहुत मरे ॥ ६३ ॥
सबसें मार याना सरकी,
मार तास में कुदरत कीसकी !

एतना बूझकर, बैठ रहेवें।
तब सब आवें मवठ तीसकी।
करणा, मरणा तब ताही।
जब "हु हाय सिर ताण लेवे,
कैं कोटि कुडुं चांद एक देखा।
सा अखा ना गेर कहेवें ॥६४॥
आप जीव होकर पियु दूर कीता।
आप जीव नहीं पियु दूर नहीं,
बाय पंखेक सूर हुका,
तब परछांहि गेब गई,
ए ऊमर टाला आकरा है,
कोइ भल भेदु पूरा चाहीए
अखा! देख आरफान्में थी
असमा बुझने काहे जाइये? ॥६५॥
साँई सो सख सुं मिल रह्यो है,
बिन बासेक ठोर माही खाली,
असगा हाय सो आब मिले।
बिबसु मनी दे डाली।
ज्यं हार भूला था कठ मीनें
फाम हुई तब पास पाया
आपु आपको भूल गया था।
सो अखा फिर ठोर आया ॥६६॥
आग बुझ ते घुस उछंद करे,
आप स्वावकु होय चेला।
बहम मार फाम सब ढंग तेरे,
उस्ताद न था काइ गुज पहेला
ब्यास करे बासत में सुं।
गु छाँव खेडे में नट बाजी,
आपो आप झहेके। हेरान हावे।
हे अखा! ईस बात राजी ॥६७॥

आपस की बात सो आप जाने,
के टूक बूसे भेदु न कोई !
दूई का भेस खेसार ये कीजे,
रुप नाम यहोतेरे एक होई !
सोई कहेते ना बोल देवे,
सबसों 'मैं-हूँ-हूँ' कहे !
कुरान पुरान कहे माप में की,
अमाप अखा भेदु न लहे ॥६८॥
चुपका भेद भि मे रहा है,
ओर कोई घट में बोलता है !
बिन है पर खामोषी चुप नहीं,
ओर बोले, सो न बोलता है !
जहाँ जैसा, वहाँ तैसा है न सही,
टुक जरा भेदु मालूम !
सो भि इशारत तेरकी है,
ये तन, रयुं अखा आलम ॥६९॥
कोई पंडित, मूरख कोई,
कोई गुनी कोई है न दानो,
कोई ख्याल खुशीसुं करता है,
ओर सार्स्सुं रहें छुप छानो !
सूरज का तेज सब पर पड़े,
और सूरज पर कोइ नहि साया !
ऐसे ढंग मूरत मेरे,
सो अखा तेरा पेच पाया ॥७०॥
ये हि अजब कला तरी,
तूं पकड़ावे माही न 'आपा',
खेले खेलावें आप तुं हि,
मौर शिर मेरे पर होय पापा !
ज्युं बाजीगर खेल खेले,
सो काठ के नर सिर ठोक देवें,

टूक भी साम होये तेरा,
तब अवा नर सब सेवें ॥ ७१ ॥
येक ठोरा मा ताण, प्यारे!
बहोत ताणे सु टूट जावे!
टूक ढोले नरम छोडे,
तब दोनों को स्वाद भावे!
तूं हक सदा में नाहीं सा है
तो नाहीं का कयास हुवा,
है दर्पन में की छांहि अवा!
और मुख भगा, उस सूम हुवा ॥ ७२ ॥
एक सो अम्बस था हि था,
और साव भाह्या तब हुई कीती
छाना सो परगट हुवा
सबतें आगे हुई दीती!
येक सा दो, मार दो एकी ज,
जहाँ जैसा, क्यों तूं ज, मीठा!
यासेक-घमक आपे हि,
अवा अग्नि सो हि दीपक दीठा ॥७३॥
अवस सो फाम फिकर करो,
साँई कैसा है और कहाँ रहेता है ?
मैं सो क्या ? अवजूद सो क्या,
और किस कसूं आवाम होता है ?
आप बिचारे सो हि आलिम,
दर्वेदा भी दानेशमंद सही,
बंदा सो हि मजूस जाने,
अवा साहेर सो सब वही ॥७४॥
कोइ पूरब पच्छम नमे,
क्या मौर एक दस है ज वासी ?
मुनवार सो सब बहाँ हे ज पूरा,
अज्ञान अवकस धांयस पासी

मिरघके पास कस्तूरी है,
सो जाये पत्थर को सूंघता है !
अखा आप पिछान बिना,
सब कोई ऐसे भूलता है ॥७५॥
ज्यूं है त्यूं वूरस हे रे,
जैसा तैसा रास्त जाणी,
खलेस म कर खुदाइ मेंमे,
तेरा करणा धूलधाणी !
पंडित दाना होय, होय गये
उन माकिल होय अमल कीआ,
आखर, एन तबे हुव,
अखा ! अब नफी का करार दीआ ॥७६॥
जीत दमामां बहुत देवे
ओर मैं सो छूटपा हार खाई,
जीतने में जंजाल देख्या,
हारग मंनि मौज पाई
आपणे जोरू जे जीतता है,
तिसको अखा काल खावें,
सो वाँहाँ अमल न कर सके,
हार गया, सो हाथ ना आवे ॥ ७७ ॥
येक हारणे में भी जीत है रे,
जो माशूक सुं हार जाण !
हारखे में हाक ज होवें,
अपनी सो ना तरफ ताणे।
ज्यू पारा सही मरणा है
सो रोग गुमावे जीवतो भा,
त्यूं अखा सही हारणा है,
हार्या देख है देवता भा ॥ ७८ ॥
उरसोंदा दुनिया ज भा है,
कदि जीतता है कदि हारता है !

हरदम सो हाल होवे ना मर्ये
कदि मरता है कदि मारता है।
कसरत करते करामत बसे
कदि मलामत आव लागे।
पासबाम पत्नी मधी फेर पड़े
अखा एन सो सब आगे ॥ ७९ ॥
सो साँई सो एक है रे
कोई आने मैं जंजाल पड़ या!
'हूँ' हो कर जब देखता है,
तबसों दुईमें मन गड़या
तीसमें गम जब होत है रे—
होय सालक की साफ प्यारी,
एनसुं अवला फिरता है
महाँ अखा है खीब भारी ॥ ८० ॥
असमान मीने जे फिरता है,
कीच्चड़ कांटा ना तिसें
पाई बस्त होबे सो पिमु सेंगी,
मूसगा भेद पाया जिसे,
दरियावको आग लगती नाहीं
जो लगे सो उपरघली,
त्यूं अखा, भेदु आव मीने—
ज्यूं जले नहीं मधमी ॥ ८१ ॥
भेद कसरत में आवती नाहीं
मूस समस ऊपर बसे,
ज्यूं माया देखीमे जाल मीने,
और आ पछेद माहीं लसे
हूं होवे तब हाथ आवे
हूं बिना काल क्या करे?
अखा! मूस की बात न्यारी,
उपजे माहीं सो क्यूं मरे ॥ ८२ ॥

ज्यूं सो सूम हुर हु आवें हे,
येहि असवा बहदतका हे,
ये हि वूल्या सारे वस हुई,
और करणा मदतका हे,
हुंका खतरा बीच में था,
तिनू मान्या था आप पूजा ?
अबा ! आप सो एम है रे
आपु आपकी कर पूजा ॥८३॥
ज्यूं करे त्यूं तूं हि करे,
कसम तो ज्यूं हरफ लिख,
जब हाथ चले पूरस खरा
मेरा चारा नाहीं जरा,
मैं कसम, तूं हाथ, प्यारे,
मै करूं सो तें ज कीमा!
अव्वल आखर तूं ज अबा
मिच में मेरे सिर दीया ॥८४॥
स्वग पाताल तपास देख्या
सबसों खेसे छुप छाना !
आप ईशारत सांई मीने,
और सो बोली और बाना !
ज्यूं सूर तप्या महल कांचके पर
सब देखाने रंगरूप जुवा,
चौदह तबकमें तूं हि मीठा
और अबा सूर कीता दस सुघा ॥८५॥
अलग सा है और सलग सही,
कोह प्रम दीवाना जानता है
ना उसकी बोली और मुले
सो सबकी पिछानता है !
बीज मन लीई, मिलूं नैन घरी,
सो' दूरका सब नजीक देख,

कस बगेर आसम, अखा
पासे को भी ना पेखे ॥८६॥

अजाण सु तो सुजाण मसी है
और आप मावर अजाण जैसा
एकसों एक आकिस मिसे
तसो होवे या तैसा !
आणपणे का फस बैठे
अब आणन हारे को ज आप
वहाँ सो, अखा है ऐसा—
आकिस अपद सो एक पाने ॥८७॥

आकिस सो इतने कहाइ,
जे इसम पढावे पढ जाने,
कहो सुन्ये सुं बो है जुदा
जे सबमें बोले हर बाने
सो हि सो आप अजाण है रे !
सो हि सेवे जे से सके,
अखा 'आप' फना होवे,
कछु इशारत सो हि बके ॥८८॥

पढते बहुत पंडित होवे,
और बात महोबत की बहुत बडी,
पस न रहे प्यारा पियु
अव्वल महोबत की राह अडी,
ज्यु मेंह देख्या मून होय पानी,
सो नीर में नीर होवे ज होवे
अजब आरफान होवे अखा !
सो अव्वल महोबत सु 'आप' खोवे ॥८९॥

अवस सा उसासण ये हि भारी,
ज एक, बे दाउ ठहेराव नहीं
ये आरफाने अटकस कीती !
दूई का भाव राख्या सा सही !

ज्यु कपड़ मीने झाड़ थया,
पेड़, पात फल फूल न्यारा
काम का मार ना पेड़ लगे
अवा है कपड़ा ज सारा ॥ १० ॥
आपु आपसों उगी निकल्या है,
लहरे समेत सोहि ज सदा,
आप सो जमीं, बीज भी आपे,
देखतें नाहीं किरतार जुदा,
नित मरे नित आवता है
है पुराना नित्य नवा !
'बाबा' आदम कहो, अवा !
के काइ कहो 'माँ—माँ' ज हवा ॥ ११ ॥
जगत ये हि जमास मड़ा,
के अवल आखर को ज चहावे,
छाना सोहि परगट हुवा जहाँ,
तहाँ जहाँ क्या हाथ आवे ?
ससता होकर सोच देखे,
तब नीर पपोटा नाहीं जुदा,
अवा खुदको मत मारे !
मार 'खुदी' मिले ज खुदा ॥ १२ ॥
अवल सा ये हि विचार देखो—
के क्या न होवे बंदे का ?
करे कोइ, काइ पेम बाँध !
काम देखो इस गंदे का ।
हाथ जोड़ सों हार बठे,
तब तुरत मिले पास ज पिया
अवा ए ज बसा बड़ी—
जे चहावे 'अपणे' सिर सिया ॥ १३ ॥
जात, सफात वो येक है रे !
ज्यू पुतलड़ी नेम मीने

बिब बिना सोभन नहीं,
और बिन सोभन ठोर नहीं रहेने
सो सांईयां, दोउ नाम कहेने को
ज्युं है त्युं युं रास्त जाणी,
धानों सो परगट, अखा !
मनमें किसी को गैर नाणी ॥९४॥
कोई ऊंचा असमान ताके !
और कोई कहे पियु पाताल पैठा !
हरदम हाजर हुजूर कहेवें
कसे न लागे सो मीठा !
दूर कहेवें सो दिल भावे !
पास कह्या प्रतीत नहीं !
क्या कहेणा तिसको ज अखा ?
तूं ज तेरे मन जाण रही ॥९५॥
सूझ, समझ और नेह बिना,
पियु सी वस्त न हाथ आवे
देह पथर और साँई सोना,
अलगा पडे, जो ताप आवे
बिरह की आग, और प्रम सोहागा,
गुरु शबद से, धम पहेला,
भव की भाथठ तब जावे,
रीझे, अखा ! बेते ज पहेला ॥९६॥
जिसको नेह नित नित नवा,
सीधी राह सो नर पावे,
ज्ये कोइ नीर मिले ज नदी
सो सारा समन्दर मिल जावे
नेह नदी को ना मिल,
सो हि सूके जेहि जहां पड्या
साच बापूं की बात, अखा !
भायग उसका जिस नेह जड्या ॥९७॥

मदगी सो बहुत करत है।
सो रास्त करास्त की राह चली!
नेह का भूत जिसे लाग पड़या
सो ना छोडे टक चली
उस्के जीवण मूत जीवे।
आखर लवे आप माँहीं,
नेहकी बात ऐसी न अखा!
जिस्की पकड़ी साँई बाँहीं ॥९८॥
कमाई करे तिसे कछु भला,
कोई दिन करामतें चले,
ज्यूँ कुवा खोदतें सोहीर आवे,
आड़ा अवला नीर मिले,
प्रेम पाताल जाहाँ फूटता है
निकटे नहीं सा नीर कदी
मखा! सो आखर एन होवे
सबसूँ नेहकी बात बदी ॥९९॥
छानी छतका छाक चढ़,
जो मग्या होय नेह छाना
ज्यूँ घास पसोटी आग न रुहेवे,
सुलगते सुलगते जग जान्या,
प्रेम का नाग जिसे डसता है,
नीम और लूण तिसे होय मीठा,
यूँ सारा आलम, अखा!
प्रेम लाग्या तिन्हे आप दीठा ॥१००॥
तीर करडी कमान में का,
कसरत नूरत निशान मारे,
बिरह कमान, और सूरत साका,
पियु पावे बिन रहे न मारे,
बिरह का कम किरतार का है,
कदि बंदे पर आप पड़या,

अखा ! सो नर एम होवे,
ज्यूं लोहा पारस भइया ॥ १०१ ॥
नेह विरहा पहेलवान पियु का
छोडे नहीं जिसे आव लागे,
नूर सुं आय निकाह करे,
बनाबनी हाय एक आगे,
रग की रेस सो तो न चले
जो दोनूं अयारी दे मसी।
सूझ, समझ उस ठौर होवे,
अखा ! पड की वहाँ क्या चली ॥ १०२ ॥
सबको दूर दराज पियु
और सूझ समझको दूर नहीं
सूझ, समझ वहाँ न होवे,
नेह बिरदा माम्या नहीं
मुर्शिद की महुनत ठौर पडे,
जो मुकैमद होय तैसा
अखा करम गिरतार करे,
तब सब पाइये साज ऐसा ॥ १०३ ॥
मत मसहब को खेंचता है
और ढूंढता नहीं करतार कोई !
हो खुदा किस्मत होवे नाहीं—
आवणें जावणें ठौर दोई
बिषमीने सब उलझता है,
मान मनी कर हीरस हुवा
अखा भीतर पैठ देखे
कछु भी कहेणा नाहीं ॥ १०४ ॥
ना नूरमें घट बढ होता,
न हाती नूरमें न कमी,
जब घटे न तिल बढ,
उर्मनगमे अस्मान जमी,

आप बेहिश्त, दोज़ख तूमे,
ये बसरा सो मनका है,
क्या मुसलमान क्या हिन्दू,
अखा ! विचारे तिसका है ॥ १०५ ॥
पढ़ते आया पेच मीनि,
भटकाव हुवा इल्म केरा !
आदि अतकी सीढ़ी खोमणी थी
वहाँ खुलासा है न ठेरा
नज़र करे सो निहाम होवे
दिलके दीदें जब देखे,
पक्का हो के यपड़ अखा !
'आप' टल जाणा रेखरेख ॥ १०६ ॥
जैसा तैसा सो ही न है रे !
जिस्का किया सब होवे,
अभ्यास आखर 'तूं' ज नहीं
बिच हुआ हो कर सिर सेवे !
आखर "हूँ" मिटावणा है,
आसिम होय पड़ रहे !
जबसें अखा ! मन मिटया,
तब सके साँईयाँ कोण कहे ॥ १०७ ॥
पढ़े गणे बोज पड़े,
है कछू इसका ज होणा,
अज्ञानकी बीच मिटावणी है
ज्यूं त्यूं मूसगा आप जोणा
दारूका दर्द होवे तो
मूसगा रोग सोकूँ जाय,
अखा] 'मैं' ना मिट जावे,
सो साँईयाँ तुरत पाव ॥ १०८ ॥
'हूँ-तूं' सूं सब मरता है,
बिन हूँ-तूं मरणा ज नहीं,

माल पराया, पिंड तेरा,
तूं माने 'मेरा' क्यूं ही !!
पड पड़ने क्या पेच बांधे ?
गाम नहीं तो सीम कैसी ?
राहा उपरछला होवे,
करम सींका सो मान लेसी ॥ १०९ ॥



ब्रह्मलीला

ब्रह्मलीला

राग—सामेरी

चौपरा—१

ॐ नमो आदि निरंजन राया, जहाँ नहिं काल कर्म अरु माया,
जहाँ नहिं शबद उच्चार न वता, आपे आप रहे उर अंता ॥ १ ॥

छंद

उर अंतर में आप स्वयम्भु, किम नहीं माया तबे,
अन्य नहिं उच्चार करिबे, स्वरूपरूप होहीं जबे ॥ १ ॥
मिथ्या माया तहाँ कल्पित, अध्यारोप किनो सही,
अर्धमात्रा स्वभाव प्रणव सो, त्रिगुण तत्व माया भई ॥ २ ॥
आप ज्यों के त्यों निरंजन सर्व भाव फेली अजा,
ज्यो चुंबक देखकें लोह चेतन, त्यौं दृष्टोपदेश पाई रजा ॥ ३ ॥
परम चैतन्य आदि निरंजन, अकरता पद सो सदा,
अजा अल्प अर्वाक अंजन, भो जगत पम न तदा ॥ ४ ॥
सगुणब्रह्म सो स्तुति पदारथ, दृष्ट पदारथ स्वामिनी,
अजा ब्रह्म चैतन्य घन में, भई अचानक दामिनी ॥ ५ ॥

चौपरा—२

ऐसें आप सगुणब्रह्म स्वामी, ऐसे ही भग भयो बहुनामी,
आप फेलाव किनो यही माया, सहज भोग करी सुत तीनु आया ॥

छंद

जामें तीन सुत जगत कारन, सत्त्व रज तमसादि भये,
पंचभूत अरु पंचमात्रा, तमोगुन केरे कहे ॥ १ ॥
देव दश अरु उभय इंद्रिय, वेग उपजे रजहीके,
भये चतुष्टय सत्त्वगुन के, काम दिनो कर मजहीं के ॥ २ ॥
रजोगुन सो आप ब्रह्मा, तमागुन सो रुद्र है,
सत्त्वगुन सो विष्णुआपे, सगुनब्रह्म पहुँची पहे ॥ ३ ॥
चार पंचक अरु चतुष्टय, एक प्रकृति मूल की,

आपको परिवार बढ़ायो, भई माता स्वक की ॥ ४ ॥
यसी भाके कला चित् की बन्यो पुरुष विराट में
कहें अखा माया कहो के कहो परब्रह्म बाट में ॥ ५ ॥

चोवरा—३

ऐसेई अग्र चस्यो अविनाशी, ताकी भाँति भई लक्ष चौरासी ,
निर्गुन ब्रह्म सगुन भयो ऐसें ताको और कहीजें कैसें ॥ १ ॥

छन्द

और नहि कोई कला हरि तें ज्यों पानिको पाला भयो
सोई निर्गुन सोई सगुन है नामरूप आपे नयो ॥ १ ॥
नाम नहि ताके नाम सब है रूप नहि ताके रूप सबें
कारज कारन और नाहीं, रूप अरूपी हूं फबे ॥ २ ॥
सगुन वेत्ता निर्गुन का है निर्गुन पोषक सगुन को ,
ज्यों पुरुष की परछाँहि दर्पन आनन समर्पो जन को ॥ ३ ॥
जड़ को रूप चैतन्य लीनो चैतन्य ज्यों का त्यों सदा,
रूपबिना खेल फबत नाहीं आप बन्यो अपनी मुदा ॥ ४ ॥
सहज इच्छा बातन बन्यो है अन्य नहि कोउ आपतें ,
कहें अखा अहकृति हुवी मान लीवी व्यापतें ॥ ५ ॥

चोवरा—४

ऐसो रमन चास्यो निरय रासा प्रकृति पुरुष को विविध बिलासा
जैसें भींत रची चित्रशाला, नाना रूप सबे ज्यों बिशाला ।

छन्द

बिलास दर्शन प्रीति कीनी और स्वच्छ सत्यस्वामिनी
ताही के मध्य भाँति भासी जैसि सत्य सुहावनी ॥ १ ॥
त्यों अजा के मद्यी भाँति नाना, वस्तु बिशेषहीं भासी है ,
आत्मा अकर्ता अभोग अवयव, भावत जीव बिलासी है ॥ २ ॥
प्रकृति पुरुष के योग जंतु म, मिथ्या पुरुष प्रकट भयो ,
सो आप नाहीं अंश नाहीं, मध्य मानी तापें रह्यो ॥ ३ ॥
संशय मिथ्या बिपरीत भावना, अब सबी जो नर करें ,
तब सगी नाना देह धरहीं, माया में उपजें मरें ॥ ४ ॥

पिछ पर सो मोह पायो, पुरंजन तातें भयो,
कहे अखा यह जीव उत्पत्ति, मान मिथ्या से रह्यो ॥५॥

चोपरा—५

सदा सर्वदा नाटक माया, नाटय चले देखे परब्रह्म राया,
सो सब अपने शिर जता, तातें न आवहीं जीव को मंता ॥१॥

छन्द

मत न आवहीं करय भावहीं, रचना देहसों सदा,
मैं ममता कर आप पोखे, त्यों त्यों मन पावे मुदा ॥१॥
स्वरूप जैसो पुत्र वन्ध्या कर्म नित ऐसें करे,
आकाश की निरय मोट बांधे, मझार से अपना मरे ॥२॥
यज्ञामे नर सुभट योद्धा ताही की सेवा रची,
गांधव नगरी जीतिवेको, चलं राय सुंवर सुची ॥३॥
जय-पराजय नित्य पाय हर्ष-शोक हुवे विषे।
तन-मन के आनंद कारन, कर्म मादक नित मखे ॥४॥
असंभावना विपरीत भावना, ताही के हियमें रही,
कहे अखा जे जीवनलक्षण उत्पत्तिस्थिति वाकी कही ॥५॥

चोपरा—६

होता नहीं अबे नाहीं आगें, मिथ्या भ्रम भ्रमीवे कों लागे
ज्यौं देह के संग छाया होई, सो मिथ्या ना साची साई ॥१॥

छन्द

नाहीं मिथ्या नाहीं साचो, रूप ऐसो जीव को,
भ्रम मरन भी भ्रमम संशय चल्यो आई सदैव को ॥१॥
ताही अचानक चेतना उजय पजे नरके विष,
जन्म मरण औ भाग सुख दुःख, काल कर्म फलको लखे ॥२॥
यही विचार गुरु तें आयो, आतुरता उपजी खरी,
चरनकमल पर शीश धरकें, सेवा, स्तुति अतिशय करी ॥३॥
कीनी जु नवधा भक्ति भावें अधिकार परखे गुरु सहीं,
प्रेमातुर वैराग्य केवल, जैसी कही तैसी ग्रही ॥४॥
कहे अखा महावाक्य गुरुको, ऊग भीकस आपसें,
ज्ञान अर्कको ज्योन्हसों बस, रह्या नहीं मन तापसें ॥५॥

चौपाई—७

जैसें अवनिपेट फूटें पिहुणा और रूप भयो और ही ग्गा,
मानों अंड मध्य गंधा पानी, भसत हुसत ताकी कोमल बानी ॥१॥

छंद

बानी कोमल भग खेचर, भूचर भावना सब टरी
तैसें संत प्रसाद गुरुतें, अहंता अपनी गिरी ॥१॥
यथारथ स्वरूप हरि को, हरिजन के उर में बस्यो
सांख्ययोग सिद्धांत पायो, कह्या गुरु त्यों अभ्यस्यो ॥२॥
तत्त्वमसि जो वाक्य श्रुति को गुरु कृपातें सो भयो
भाव जीव मिथ्या कह्या, तब ऐसें को ऐसो कह्यो ॥३॥
आप परविन खेल देख्यो नित्य नाटक संभ्रमैं
अखन मध्य स्वरूप भास्यो ज्यों पुतरिका भ्रम में ॥४॥
कहे अखा जैसोई कले ताई के पट उनमें
जैसें को तैसो भयो जब, मध्यतें अहंता तजै ॥५॥

चौपाई—८

महाजन जाने महाफल मेवा, जो परब्रह्म पर्यो सत्यमेवा,
ज्यों भूंकतें चलन भयो सोह जीवपना ताको यों खोहा ॥१॥

छंद

खोहा गयो विष बस अमाको, ताही तें चेतन भयो
अंधा अचानक नैन पायो तब विषतें टरगयो ॥१॥
स्तुतिपदारथ नयन देख्यो दृष्ट पदार्थ गया बिला
मिटी देह की भावना अब स्वयं चैतन हूं बना ॥२॥
ध्येय ध्याता अरु करन कारन माया के मध्य जो सही
रज्जु लगी सो भुजंग भ्रम हैं बिन रज्जु कैसो अही ॥३॥
ग्रीष्मि जो प्रताप भाई जानही निरखा जना,
जामें पाछें और नाहीं, आप बिलस्या आपना ॥४॥
कहे अखा ए ब्रह्मलीला, बड़भागी जन भावनो
हरि हीरा अपने हृदय में अनायास सों पायनो ॥५॥

*

अखाजी के पद

अखाजी के पद

राग—विहाग

(४)

सोई पद कौन बतावे गुरु बिना, सोई पद कौन बतावे ?
पद पहिचान मगन भये जो नर, सो फेरी भवजल नावे ।।गुरु०।।१।।
ग्राहे नहिं जप तप तैसो पद तीर्थ बरत नहिं भावे
शुद्ध विचार सार सतन की, आपा पर बिसरावे ।।गुरु०।।२।।
सो पद चाहत हरिहर अज, सो शेष सदा जस गावे ,
सिद्ध साधक साधे पुनि काया, गुन के पार न आवे ।।गुरु०।।३।।
चितवत चित्त अचित होई जावे, चर अचर गरकावे
इसा बोल पद मध्य सोनारा, स्वस्वरूप दरसावे ।।गुरु०।।४।।

(५)

ज्ञान-कला अति न्यारी, सबनतें ज्ञानकला अति न्यारी
जाको नेति नेति कहत हैं सो पर सीना विचारी ।।सब०।।१।।
चार वेद, चतुरदश विद्या, सो सब रही है कुँवारी
गुन की ओघ रही उरउरे, अहता परी मध्य भारी ।।सब०।।२।।
पढ़े पढ़ावे वेद व्याकरना धर्म कर्म अधिकारी ,
ताम उरझ रहे उग अतर, ना काई तोल हमारी ।।सब०।।३।।
एही अवाच्य अर्णासिगी अनुभव जाग्रत निद्रा टारी ,
साखी सोनारा पच पंचन को सर्वातीत निरधारी ।।सब०।।४।।

(६)

राम रमे जुग सारा, सतोभाई राम रमे जुग सारा
गुणगम शामे सुखसामाँ भारी सा उतर्या भवपारा ।।सतो०।।१।।
नादी वादी गुणी गवैया, कवि कला रस कहेता ,
वंचक पूजक सेवक साधन, काई नहीं ब्रह्मवेत्ता ।।संतो०।।२।।

असत, असत का कृत्य न देखे, ब्रह्मवेत्ता संत सोई
और सकल बासन के रसिया, टल महि दुजा दोई ।।संतो०।।३।।
पूरण ब्रह्म सकल परिपूर्ण, सकल भाव हरि राया,
कहेता पुगमां कोई एकाधा, विरला अनुभी ने आया ।।संतो०।।४।।
जैसे अग्नि काष्ठ के संगे निकसत धुंआ सोई,
फीटया धुंआ फिर अग्नि न पावे, कप कप भये सब कोई ।।संतो०।।५।।
देह के कम काम जल तीरे, बूब रह्या पुग सारा
ब्रह्मदरिया मे विरला झीले कोई अखा ने सोनारा ।।संतो०।।६।।



राग—कानडा

(१)

उलट फिरे सोई निज घर पावे नहि तो मिथ्या जन्म गमावे ॥ध्रुव०॥
जीहां रे ठहेराव रयां बीच आकाशा, अन उपाय करे सर्व साँसा ,
संशे मिटे तो सहेज घर पावे, अलख निरंजन आप सिखावे ॥२॥
जी हरि जोऊं त्यां राम रंगीला लोक न लखे अलौकिक लीला ,
पलपल में प्रभु नाना रे रंगा, सोई प्रभु बसें सदा अंग संगा ॥३॥
एककु गाय और नहि भावे, समज ले सान सद्गुरु साचे ,
रुचि बिना भोग लागे नहि मीठा, सोई सराव जेणे पियु दीठा ॥४॥
सहार सेवत काची रे नारी, अंतर भोग भोगे पियु प्यारी ,
और भोग सर्व नींद म आवे, आगे अखा सोई प्रत्यक्ष पावे ॥५॥

(२)

राम रसायन जब जिनहि पियो है, ताके नैन भये कछु औरा ,
जब ही प्यालो मानुं कान दियो है रामरसायन जब जिनहि पियो है ॥१॥
उतरत कंठ कुटिलता मिट गई, जब उर अंतर वास कियो है ,
भिन्न भिन्न भाव रह्यो तोरी भीतर, सो सब महारस नीर दियो है ॥२॥
पिलो है पीयूष पच्यो हु वासो, महा अनुभव प्रकाश कियो है ,
ऊर्ध्व कमल सुर्ध भये ऐसे, जीव टरी निज शिव भयो है ॥३॥
उतरत नाँही ताके ब्रह्मखुमारी, वाँकु कबहुं न काल ग्रह्यो है ,
ज्युं का त्युं ही अखा है निरंतर चित्त चिद्रूप भयो सो भयो है ॥४॥

(३)

शब्दातीत निगम मुख गावे, जाकों योगेश्वर ध्यान लगावे ,
वामें हम हम भीतर बोले शब्दातीत निगम मुख गावे ॥ध्रुव
उपनिषद कहत आनंदमय, प्रकृति पार पंडित बतावे
वाकुं रटत हैं महा मुनिश्वर, सो ज्ञानी घर बैठ हीं पावे ॥२॥

कोई तप तीर्थ व्रतादिक त्यागी, को मगुना भु धावन आयो ,
कोई क्षीर सागर बहुविधि बादी, सोई सिंधु सर्ग नावत नायो ॥३॥
जैसें पारस स्पर्श धातनकूं सोई साधन को साध्यो मन आया ,
कहु अखो ये ही अकथ कहानी न।हि कछु पायो मैं नाहि गमायो ॥४॥

(७)

नावे गुणे निरगुण की बातें, आप बन्यो हे अपनी इच्छातें
आपे आप आनन्द कमल रस नावे गुणे निरगुन की बातें ॥ध्रुव॥
ज्ञान कथी कथी हारे ज्ञानी, भक्त भजी भजी हारे माते ,
त्याग वैराग्य करी करी थाके, प्रगट खेल न आवत बाते ॥२॥
एही अचरज कुण कोई ज्ञानी क्या जाने कोई भेद की बाते ,
जैसे वज्र कों वेधे वज्रमणि और न टके कोई बात बनाते ॥३॥
क्या रे कहुं अनत नाही कहते अकथ कहानी लखी न जाय पाते
प्रगट प्रमाण हजूर इखोहम ओही बिराजे नाहीं अघाते ॥४॥

(८)

महा मस्तवाला श्रीरामजना चढी गयो चित चित् आप न आपा
सा फरी न उतरत कोई दिना महान मस्तवाला श्रीरामजना ॥ध्रुव॥१
साखी सूरत नूरत की निरखे आप न देखत और तना
निराधार धरती न धार, चित्त चिद्रूप भया अपना ॥२॥
अजब कला अघानक कपनी पारब्रह्म रसरूप मना ,
प्रपंचपार सेवक न स्वामी एक नहीं कौन कहे को बना ॥३॥
स्वप्न साख वेस नहीं कोई जाग्रत न सब होत फना ,
अपने पर्ख ऊडत ज्युं पक्षी अखा आधार नहि ज्युं अना ॥४॥

(९)

निरगुन राम गुनतके बिखे है न नाहि मायामी मेखे
आपे आप आनंद अनत मत निरगुन राम गुनन के बिख ॥ध्रुव॥१
भया कंचन अनंत आभूषण यु जाने बन भूस क लखे ,
गुण सा पाट माट अति धोया, रहेग रंग काहेकुं देख ॥२॥
मनी मुद्रा भोग मिमित ज्युं असन बसन बहु रिख बिसेख ,
स्पर्श ज्युं का त्युं है जनकुं, न मरे आप भाग बुं वेखे ॥३॥

आप अरूप रूप रस नामा, बना लक्ष चौरासी मेखे ,
उत्पत्ति स्थिति समावी वासे, ज्युं धनसार रहत नहि रेखे ॥४॥
ऐसा आप व्याधिविधि विमली, अमली नहीं कोई द्वैत उवेखे ,
कर आलोच सोच अखो कहे, सारा सिंधु आपलग सेखे ॥५॥

(१०)

महापद मध्य महाजनवासी, मोहस विचार रहे बुधराशि ,
जाकी गेल पडे शुक नारद, महापदमध्य महाजनवासी ॥ध्रुव १॥
सांकी लेहरी है हरिहर अज, सुर तेतीस मुनि सहस्र अठयासी ,
सिद्ध साधक सब धर्मा भीतर, सो महासागर सत अविनाशी ॥२॥
मरजीवा विचरे अंबुमध्य, घरसो बाहेर करत सुखराशि ,
ऐसी साध्य आवविन अबर, लिंग बिना रहे सब रस मासी ॥३॥
ए अकल कला कलत नहि, पवित्र जो चौच पाले सेवो ओ कासी ,
ज्युं खेचर खोज पडत नहि विचरे, चरण वसे सो मू अभ्यासी ॥४॥
वातां मात विषय गोवडा, र्युं सगना छेदेअबहे गसासी
ऐसी गत मत समज अखो कहे, न्यारा पंथ सहेजे सुख पासी ॥५॥

★

राग—मल्हार

(११)

ज्ञान घटा घड़ आई, अचानक ज्ञान घटा घड़ आई !
अनुभवजल बरखा बड़ी बुंदन कर्म की कीच रेलाई ! अचानक ०
दादुर मोर शबद संतन के, ताकी धुन्य मीठाई ! अचानक ०
चहुंदिश चित चमकत आपनपों दामिनी-सी दमकाई ! अचानक ०
घोर घोर गरजत घन बेहेरा सतगुरु सेन बताई ! अचानक ०
उमगी उमगी आवत है निशदिन पूरब दिशा अनाई ! अचानक ०
गयो ग्रीष्म अंकुर उगि आये हरिहर की हरियाई ! अचानक ०
सुक सनकादिक शेष सहराये सोई अखा पद पाई ! अचानक ०

(१२)

ब्रह्म महेस सुख कीनो अब तो ब्रह्म महेस सुख कीनो ! टेक
असुरातीत त्रिगुणपर पावन ऐसो निज पद चीन्यो ! अब तो ०
जहाँ नहि ध्येय,जहाँ नहि ध्याता, ध्येया लीन सब कीनो
विधि निषेध दोउ भये बराबर ना कोई अधिक अधीनो ! अब तो ०
ज्यूं मोर 'सलाखा मध्य परब्रह्म प्रतिबिम्ब सो तन में कर लीनो,
भेदाभेद जहाँ नहि बाधा आकाश तें अति झीनो ! अब तो ०
जीवन्मुक्त सकल घटवासी सब रस भोगी भीनो
अजब कला अखा सोनारा, ऐसो अनुभव चीन्यो ! अब तो ०

(१३)

आनंद अद्भुत आया अब मोहे आनंद अद्भुत आया
पिया कराया कछु भी नाहीं सेजे पियाजीकुं पाया ।। टेक ।।
देश न छाड़या वेश न छोड़या, छोड़या संसारा
सूता नर निद्रा से जाग्या, फीट गया स्वप्ना सारा ।। अब ० १
गृपानारय अंतरसें छूटी, गीता ज्ञान मिलाया ,
झाड़ झटक फैंस सब निस्या जड़से अज्ञान उड़ाया ।। अब ० २

(९९)

भला कहे कोई बुरा कहे कोई, अपनी मति अनुसारा
खरा मोका लोह पारस परसे सोन भया अखा सोनारा ॥ अब० ३

(१४)

तुज मरते बनी आव, मनुवा ! तुज मरते बनी आव ! टेक
खरे चाहिए चीकनता, मीठा पंथ बिषम सग लीना
मिजलस तेरी पथ की सग चाहिये राम रगीला ॥ मनुवा ! १
सुख को साज मिलावे मन सु, दुःख चले दस डग आग
ज्युं गलमी गल मच्छी रसबस सुरत तनकु त्यागे ॥ मनुवा ! २
एक मन अरु दूजा पारा, मरे सो मूल अमूले
कच्चा अपना अरथ बगाड़े पक्का नर यूं बोले ॥ मनुवा ! ३
योगी हो के हो सु तपिया, जीत्या जुग ससारा ,
मरतक की गत मरतक जाने कहे गया अखा सोनारा ॥ मनुवा ! ४

(१५)

अब गया जनम मरण का सांसा, राम ए राम भया रे समासा
जेही राम जानें था दूरा, सोही राम में पाया उरा ॥ अब० १
बिन जान्या में बहुत मरे था, पिंड ब्रह्मांड का भार धरे था ॥ २
सो म देख्या स्वतंतर धागा, पिंड ब्रह्मांड कच्चे धागे रे लाग्या ॥ ३
ना जप तप ना संयम कीना, अवाच्य रस मुख बिन पीना ॥ ४
गुरुगम ग्यान ऐसे ही पाया, अंतर्दृष्टि कोई गया न आया ॥ ५
बिन मूल मूवा नर सोही-जानुं ऐसी उपज होई ॥ ६
त्रिगुण की निद्रा पर न मागी, अखे राम अंतरमति जागी ॥ ७

(१६)

तब वे पद कैवल्य कु रे पाइये, कहेणी रहेणी से पर जाइये ॥टेक
जब लगी मनुवा करे कछु आशा, तब लगी दै रहेणी का पासा ॥ १
जब य चित्त अचित्त पर आया सिर पर लीन भई छाया ॥ २
फिर मनके मनरूपे रे होवे, कालकरम छोर्से काहे बगोवे ? ॥ ३
ज्यूं ढांके दर्पन प्रतिबिंब नाही त्युं मन अमन तो रहेणी कांही ॥ ४
ऐसे अवधूत किया बिचारा, तो ये अखा पद पाये पारा ॥ ५

(१७)

हार्या मन, हार्या अहंकारा, भोग हार के भया रे तयारा । टेक
तृष्णा हारी हारी आशा, हारी फिरी आवरण की साँसा ॥ १
हार्या वर्णाश्रमका माना मनमे आये पहुचा निवाना ॥ २
ब्रह्म अग्नि अन्तर में लागा जल गइ माया रही नहि जागा ॥ ३
राम के जीवणे जीवणा मेरा जहाँ नहि कालकरम का घेरा ॥ ४
कहेणी रहेणी जाणे रामा मैं तो भया रे पूरणकामा ॥ ५
जैसे पारस परसा लोहा सामटा सुवर्ण पाया सोहा ॥ ६
कहत अखा जानेगा हार्या हार्ये को आवे इतबारा ॥ ७

(१८)

घर न पसे घरवासा भागा अलमें खोज लीनी निज जागा । टेक
मेरी लड़का कोई न मेरा मोसे सब करे घर घेरा ॥ घर० १
पांचे पूत ठगारे घर में, मेरी माया लगावे भरमें ॥ घर० २
गुरुजामी मोहे मरम बताया तब मैं समका हिरदा पाया ॥ घर० ३
गुरु के हिरदे का बिचारा, सारा कुटुंब निगुनी बिस्तारा ॥घर० ४
ऐसा ज्ञान सब आप थपेश्या द्वैत लक्ष भागा घट घेरा ॥ घर० ५
असल एन असमानी आपा जाका मोल तोल नहि मापा ॥ घर० ६
माहीं भीतर माहीं बहारा ज्यूं का त्यूंही अखा है सारा ॥ घर० ७

(१९)

मा में मट बिना नाहीं जैसे देह संगफोत उछाहीं ॥ टेक ॥
जैस मुकुर में पडत छांही, कही न जात न्यारी के मांही ॥ मा० १
पानी में नभ दखियत नीके जल का मल नहीं उनही के ॥ मा० २
बिन मकास स्यल नहि रहेवेकुं भीतर बहार सबकु देवेकुं ॥ ना० ३
मत अमत बिनमत है ऐसा गुरुग्यानी की एसी सेसा ॥ ना० ४
कहा कह समुझाव कोई जहाँ जसा तहाँ तैसा होई ॥ मा० ५
मरण जीवण सा देह का धरमा मैं तो माहीं इन्द्री अरु कर्मा ॥ मा० ६
नाम धरतकुं अखा सोनारा सदा निरंतर राम है सारा ॥ ना० ७

भजन

(१) अघघघ सब भागे

मनुवा ! अंघघघ सब भागे,
अब सद्‌गुरु के मुँह मागे
ना, तो पची मरे संसारा,
आतमज्योत न जागे !
मनुवा ! अघघघ तब भागे !

ल्यासी लाख हजार मम्भाणु,
नवसें और नम्वाणु,
बिन हरि जाण्ये सकल सरीखा,
तो मनुष्य अधिक क्यों जाणुं ?
मनुवा ! अंघघघ सब भागे !

आहार, निद्रा, भय अरु मैथुन
बोली चाली चरणा,
मानव देह की ये ही बड़ाई—
के राम जाणिके तरणा !
मनुवा ! अघघंघ तब भागे !

राम न जाण्या, 'माया' छाण्या,
तो सकल पशुतें नीचा,
कहत अखा, एक राम जाण्ये बिन—
सींच पृथ्वीमूं सिच्या !
मनुवा ! अघघंघ तब भागे !

★

(२) अजब कसा हरिजन की

अजब कसा हरिजन की—
होवे अजब कसा हरिजन की।
ताका भेद न पावे दुनियाँ!—
जाणो तीक्ष्णता तनकी।
होवे अजब कसा हरिजन की।

जाकी जड़ पाताल लगी है,
सो पीवे मूलका पानी
सो तरुवर कौन होवे हरिया?
जाको हरि साथे एकानी।
होवे अजब कसा हरिजन की।

ज्यूं जल जामे नर मादेका,
मन एक, तब दोउ देखे!!
पिंड बिहीन रहे यह लोका—
ताकी सूरत रहे ये कहाई।
होवे अजब कसा हरिजन की।

तर्नोका तन भिन्न न हरिसुं,
ज्यूं तंतु का पट कीन्हा,
ज्यूं कपड़ा तें सूत ज्युं का त्युं!
ऐसे मापा पिछीन्या।
होवे अजब कसा हरिजन की।

ये पदको जे खोजे—बूझे,
अर्थ बैठावे सेवे,
वस्तु बिचारे वस्तु भयो रहे,
मत कोइ रीसे उबेवे।
होवे अजब कसा हरिजन की।

★

(३) आपे सो गैबी अवाच्य

आपे सो गैबी अवाच्य ! नाम वाकों क्यों धरूँ ?
बोलत बोलावे आपे ! आने मे हि उच्चरूँ !
आपे सो गैबी अवाच्य ! नाम वाकों क्यों धरूँ ?

मारुत ज्युं फिरावे ध्वजा ऐसे हि मैं फिरूँ हरूँ !
मोहे में मेरो है कहा ? प्रहु के मैं परहरूँ !
आपे सो गैबी अवाच्य ! नाम वाकों धरूँ ?

सिन्धु में चलत नाव, जात कोइ बंदरूँ !
सकल वायु को जोर ! ऐसे मैं हि संचरूँ !
आपे सो गबी अवाच्य ! नाम वाकों क्यों धरूँ ?

राम को मे पकड तब, आगे 'आप' सही करूँ !
सवण घटमें मोर—कहो ! कैसे से भरूँ ?
आपे सो गैबी अवाच्य ! नाम वाकों क्यों धरूँ ?

मैं तो जैसे घनसार ! मारुत को क्युं अंक भरूँ ?
रंच आपा रहे नाही ! ऐसे हूँ देख्यां मरूँ !
आपे सो गैबी अवाच्य ! नाम वाकों क्यों धरूँ ?

इत, औरें मैं रच नाहीं ! उत औरें केहेतां डरूँ !
इत, उत कहेवेको अखा ! सहज शून्य जाबे घरूँ !
आपे सो गैबी अवाच्य ! नाम वाकों क्यों धरूँ ?



(४) आलम फूल असमान का

आलम फूल असमान का !
खिल ! खर आवे !
अव्वल, आखिर नहीं केहेने को !
गैबी आप सहरावे !
आलम फूल असमान का !

पुतली बनी है कपास की !
छनु छनु उड़ जावे !
तोल तफावत हो रहा !
ढूंढ्या ठोर न पावे !
आलम फूल असमान का !

नजरे न आवे निरखतां !
कारीगर कोई !
अनासुर से सब नीपज्या !
फिर अनासुर होई !
आलम फूल असमान का !

ए रे असमान के उर में
छुपा साँई देखूं !
अटकल सी आई मुझे !
मिलता है लेखूं !
आलम फूल असमान का !

ढूंढत मेरा मन थका !
यहाँ आई लाग्या !
अब तो छोड्या न छूटीअे—
मुई परोम्या पाया !
आलम फूल असमान का !

✶

(५) आली ! अबको फाग

आली ! अबका फाग ! मेरा मन लहरात
नहि तो, जोबन मेरो यूं हि जात ! आली अबका फाग !

सकल ऋतु में धन्य बसन्त !—
सबको सार मैं पाया ए कान्त ! आली अबको फाग !

समज केसर, कुकुम गुलाल—
उमगे उडत नभ भयो है लाल !
ऐनसें सखी करत कल्लोल !
मेरे पियासग है झककोल ! आली अबको फाग !

अखिल मंडल भयी रग मोम !
दीपक दिवाकर धरत है सोम !
अनत कोटि ऐसे है रवि साक्षात् !
होत नहीं ज्यहाँ झंझापात ! आली अबको फाग !

प्रीत कठिन काटे बहु धाह्य—
आपे अमृतरस ! मोहे अबाह्य !
मैं चहूं पिचकारी लेना
पियु न चाहे नीरस देना ! आली अबको फाग !

सब सखियन मिली गावे गाम !
अतर आप मिलाव तान !
कहत अबा पहुँची उमग मोरा !
पिया प्यारी है नवल किशोरा ! आली अबका फाग !



(४) आसम फूल असमान का

आसम फूल असमान का !
किसे । कर आवे !
अब्बस, आखिर नहीं केहेने को ।
गैबी आप सहरावे !
आसम फूल असमान का !

पुतली बनी है बरास की !
छनु छनु उड आवे !
तोल तफावत हो रहा !
ढूंढ्या ठौर न पावे !
आसम फूल असमान का !

नजरे न आवे निरखतां !
कारीगर कोई !
अमासुर सें सब नीपज्या !
फिर अनासुर होई !
आसम फूल असमाम का !

ए रे असमान के उर में
छुपा सांई देखूं !
अटकस सी आई मुझे !
मिलता है सेखूं !
आसम फूल असमान का !

ढूंढत मेरा मन थका !
वहीं आई लाग्या !
अब तो छोड्या न छुटीसे—
मुई परोय्या धागा !
आसम फूल असमान का !

*

(५) आली ! अबको फाग

आली ! अबका फाग ! मेरा मन लहरात
नहि तो, जोबन मेरो यूँ हि जात ! आली अबको फाग !

सकल ऋतु में धन्य बसन्त ! —
सबको सार मैं पाया ए कान्त ! आली अबको फाग !

समव केसर, कुकुम गुलाल—
उमंगे उड़त नभ भयो है लाल !
ऐनसें सखी करत कल्लोल !
मेरे पियासंग है झकझोल ! आली अबको फाग !

अखिल मंडल भयो रंग भोम !
दीपक दिवाकर धरत है सोम !
अनत कोटि ऐसे है रवि साक्षात् !
होत नहीं त्यहाँ झझापात ! आली अबको फाग !

प्रीत कठिन काटे बहु बांहु—
आपे अमृतरस ! मोहे अथाह !
मैं चहूँ पिचकारी लेना
पियु न चाहे नीकस देना ! आली अबका फाग !

सब सखियन मिली गावे गान !
अतर आप मिलावे तान !
कहत अखा पहुँची उमग मोरा !
पिया प्यारी है नवल किशोरा ! आली अबको फाग !

★

(६) इस नगरी में

इस नगरी में ना सुखे सोणा—
नित भांगे ! और नित होय रोणा !
जिस नगरी का राजा नढंगा—
सर्व लोक बस 'आप' रंगा !
इस नगरी में ना सुखे सोणा !

काम मेवासी नित्य सो लूटे—
पाड़ कोट दरवाजो तूटे !
राजा सदा ये रेहे अबुधा !
वजीर स्वतन्त्र ! न पासे सूधा !
इस नगरी में ना सुखे सोणा !

शाहूलोक छुपा रहे छाना—
फिरे नगर में लोक गुमाना !
कुज सगता जाय पेर पसेरा !
करे फेसाव तू नित्य नवेरा !
इस नगरी में ना सुखे सोणा !

आप समटी रहे सु छूटा !
तुझको क्या जो जावे लूटा !
आव्रत माया हुम किया विचारा !
मगर अविनाशी किया मझवारा !
इस नगरी में ना सुखे सोणा !

(७) इसी विधि धोखा भाजे

इसी विधि धोखा भाजे
सन्तो ! इसी विधि धोखा भाजे।
करके पचभूत की रचना आपे आप विराजे !
सन्तो ! इसी विधि धोखा भाजे !
ना सो जीव ईश्वर पुनि नाहीं !
ना सेवक ना स्वामी !
ना हम बद्ध, मुक्त, कहो कैसे ?
ज्यूं ही त्यूं ही अनामी !
सन्तो ! इसी विधि धोखा भाजे !
दिनकर तेज कैसे वो कहीजे ?
सहज सुभाव हैं वाके !
वस्त्वाभास, सत्य स्यम जानो,
रमे, धामे जे आके।
सन्तो ! इसी विधि धोखा भाजे !
कौन बूडे ! कौन तारे ? कहाँ ? कौन ?
अवबद आप विधाना !
य हि विधि सखा मरम गत बूझे—
ज्यूं का त्यूं ही समाना !
सन्तो ! इसी विधि धोखा भाजे !



(८) एक अचरज ऐसा !

सन्तो ! एक आचरज ऐसा !
घट मेरे में और खेले को !
किन्ह्या निशदिन वासा !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !
जब लग मैं था तब तूं छाना !
अब रग-रग में सो आपे !
बोले चाले सुणे सो देखे
फिर मरे हि थापे !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !
मुज टेरत बास वो हि देख
मैं आणुं—हुं बोलुं !
ऐसा बस भया तन भीतर !
व्याप्या जद्दो सानुं !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !
जैसे पसा हेम हात है
पिड रह्या सिग छूटा !
तांबापणा वाज्या ना पाव !
तोल न आया ताटा !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !
मुज में तूं हि हूं तुज भीतर !
साम नहीं कछु सौधा !
ये हि विधि साव निरंतर जुग है—
नही अबा कछु बांधा !
सन्ता ! एक आचरज ऐसा !

(६) अवधू ! ऐसे गेन गँवाया !

अवधू ! ऐसे 'गेन' गँवाया !—
बैसे के तैसा होय रहीमें
आपे आप समाया !
अवधू ! ऐसे गेन गँवाया ! अवधू०
गेब खेल ! गेबी खसारा !—
गेबी गेब का मेला !
मैं नहीं मैं नहीं मध्य निरंतर !
आपे आप अकेला ! अवधू०
पर में पच, पच में पर है,
है समरस, नहीं आना
भिन्न पर्यो कौन कहो कहाँसे ?
ज्यु नभ में दीप समाना ! अवधू०
कहत बाह्य, अभ्यंतर कहाँ तें !
कहाँतें दूर ? न नेड़ा !
कहाँ तें स्थूल, सूक्ष्म, कहो कहाँते ?
ये हि समझे, मरम निवेड़ा ! अवधू०
कारण धूम, धूम सो कारन !
कृत्य अकृत्य सो घूमा !
भूत, भविष् वर्तमान स्वतंतर—
सून, अखा उनमुना ! अवधू०

(८) एक अचरज ऐसा !

सन्तों ! एक आचरज ऐसा !
घट मेरे में और खेले को !
किन्हा निशदिन बासा !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !

जब लग मैं था तब तूं छाना !
अब रग रग में सो आपे !
बोले चाले सुने सा देख,
थिर मरे हि थापे !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !

मुख टेरत बास को हि देवे
मैं जायूं—हूं मोसूं !
ऐसा खस भया सम भीतर !
व्याप्या मंधे सासूं !
सन्तो ! एक आचरज ऐसा !

जैसे पसा हेम होत है
पिंड ग्या लिग छूटा !
तांबापणा खाज्या ना पावे !
तोल न आया तोटा !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !

मुझ में तूं हि हैं तुझ भीतर !
ताम नही कछु साँधा !
य हि विधि साव निरतर जुग है—
नहीं अखा कछू बाँधा !
सन्तो ! एक आचरज ऐसा !

(६) अवधू ! ऐसे गेन गँवाया !

अवधू ! ऐसे 'गेन' गँवाया !—
जैसे के तैसा होय रहीमे,
आपे आप समाया !
अवध ! ऐस गेन गँवाया ! अवधू० !
मेव खेल ! गेबी खेलारा !—
गेबी गेब का मेला !
मैं नहीं, मैं नहीं मध्य निरंतर !
आपे आप अकेला ! अवधू० !
पर में पच पंच में पर है,
है समरस, नहीं माना
भिन्न पर्यो कौन, कहो कहाँते ?
ज्युं नभ में दीप समाना ! अवधू० !
कहत बाह्य अभ्यंतर कहाँ तें !
कहाँतें दूर ? न नेड़ा !
कहाँ तें स्थूल, सूक्ष्म कहो कहाँते ?
ये हि समझे, भरम निवेड़ा ! अवधू० !
कारज शून्य शून्य सो कारन !
कृत्य अकृत्य सो शून्या !
भूत, भविष् वर्तमान स्वतंतर—
सून, अवा उनमुना ! अवधू० !

☆

(८) एक अचरज ऐसा !

सन्तों ! एक आचरज ऐसा !
घट मेरे में और बोले को !
किन्हा निशदिन वासा !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !

जब सग मैं था तब तूं आना !
अब रग रग में सो आपे !
बोले चाले सुणे सो देवे
फिर मरे हि थापे !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !

मुझ टेरत बात वो हि देवे
मैं जाणुं—हुं बोलुं !
ऐसा वस भया तन भीतर !
व्याप्या अंसे सालुं !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !

जैसे पैसा हेम होत है
पिछ रह्या, निग छूटा !
ताबापणा खाज्या ना पावे !
तोल न आया तोटा !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !

मुझ में तूं हि है तुज भीतर !
तामें नहीं कछु सांधा !
ये हि विधि साब निरंतर जुग है—
महीं भया बछु बांधा !
सन्तों ! एक आचरज ऐसा !

(११) खेलत जोगी जोगणी हो !

खेलत जोगी जोगणी हो ! हो मेरे ललना !
देखत है हरि आप !
खेलत जोगी जोगणी हो ! हो मेरे ललना !
आपे सो माया भयी है जोगनी
जोगी भयो सो काल।
भव सत्रह आठ शणगार सजा कर—
कामिनी भाल गुलाल।
खेलत जोगी जोगणी हो ! हो मेरे ललना !
भेख भव्यो मन मोहन मानी—
तीनु लोक वश कीन्ह।
जहाँ जैसी, तहाँ तैसी माया
मामी गई सो लीन।
खेलत जोगी जोगणी हो ! हो मेरे ललना !
कौतुक को देखन जो लागे—
ब्रह्मा, विष्णु, महेश।
जिने देख्या सो पाख पखस है—
तनु तनु कछु है भेप।
खेलत जोगी जोगणी हो ! हो मेरे ललना !
सुर नर नाग, मुनि सब मोहे,
तहाँ तैसी स्वरूप।
चौद भुवन लग खेल रच्या है—
झटपटी भग अनूप।
खेलत जोगी जोगणी हो ! हो मेरे ललना !
पंडित जाण, चतुर, चितेरा—
सो कंकनी कीन्हे पाई !
ताके शब्द सब मोहन मामे !

(१०) ऐसे वस्तु विचार्या

सन्तो ! ऐसे वस्तु विचार्या—
ना मोहे आत मेत नहीं कबहू
जानो भेव हमारा !
सन्तो ! ऐसे वस्तु विचार्या ।

आतम गगन, गगन में आतम
ऐसे समरस वासा !
तहाँ कछु बधे घटे, कहो कैसें ?
वस्तु वस्ते समासा !
सन्तो ! ऐसे वस्तु विचार्या ।

जैसे द्रुम सरिता उपकंठे—
बहेते देत दिखाई,
स्वस हे बस विबस नब होये
जूठी शंका पाई !
सन्तो ! ऐसे वस्तु विचार्या ।

अदबद खेल ये हि विधि पूसो
ना आवे ना जाई !
ब्रह्म सागर की लहरी सब ये—
अच्छा ! बनक बनी भाई !
सन्तो ! ऐसे वस्तु विचार्या ।

(१२) खेलो खेल आपमे हो !

खेलो खेल आपमें हो ! हो ! मेरे साधो !
आयो है फागुन मास !
खेलो खेल आपमें हो ! हो मेरे साधो !
नहीं दूर आत्मा है आगे,
मत भटको मन कुञ्ज
जाको श्रुति गावे सत् सेन—
देख सको तेज पुञ्ज !
खेलो खेल आपमें हो ! हो मेरे साधो !
रत आई वन मोरे ! मधुकर—
करत गुंजारव आय
रूप बिना रूप आप जो प्रगटयो है—
कैसे अन्य को ध्याय ? !
खेलो खेल ! आपमें हो ! हो ! मेरे साधो !
जाको रंग रूप नहीं रेखा,
सो तो जाणो ये काल,
निर्गुण सा गुणरूप भयो है,
लोक सकल लोकपाल !
खेलो खेल ! आपमें हो ! हो ! मेरे साधो !
पथ पंथको पथ हम देखी,
ये आपे उपावनहार
आप प्रकास उत्पत्ति स पाव,
आपमें आप विस्तार !
खेलो खेल आपमें हो ! हो ! मेरे साधो !
मन सो मन नहीं, चित्त सो चित्त नहीं !
नहीं बुद्धि, नहीं अहंकार,

ते नित्य नवो नेह चाही ।
खेलत जोगी जोगणी हो । हो मेरे ललना !
हाव, भाव, छंद भेद, मूर्छना,
ललित तान आलाप ।
ये हि बिधि नाच जुगोजुग नाचत,
देत सबे सीर थाप ।
खेलत जोगी जोगणी हो । हो मेरे ललना !
मह, ममत कर गेंद प्रह्यो है
तीनुं लोक उल्लास ।
ऐसे खेल अखिल दोउ खेलत,
क्रीडत खोवेगी काल ।
खेलत जोगी जागणी हो । हो मेरे ललना !
ठग ठगनी ने ठगो सब ठाकुर
चाकर की कहा बात ?
यह राम महिं भलो कहे खेलत—
सा देत माया सीर लात ।
खेलत जोगी जोगणी हो । हो मेरे ललना !

☆

(१३) गैन गया, ऐन सूज्या

सन्तो ! 'गन' गया, ऐम' सूज्या
मैं सो तूं, नहीं दूजा ।
मैं गुलतान भया तुज भीतर !
ये ही सेवा-पूजा ।
सन्तों ! गैन गया ऐन सूज्या !

'मैं' था, तब सो तूं नाहीं था,
'मैं' गया, तू ही विराजा ।
आपे आप तूं भया स्वतंतर,
गया दूरका साजा !
सन्तों ! गैन गया, ऐन सूज्या !

जात, भात, कुल, करम विलाना
हरि सागर में पूता !
अगली पिछली सीन भयी सब—
ज्यूं सुपने विन सूता !
सन्तों ! गैन गया ऐन सूज्या !

अर्भक, चेतन, चपल, न स्थिर
ना देवा, ना दाना ।
ऐसी गति मति भयी है जीया की
सहेज मन समाना !
सन्ता ! गैम गया, एन सूज्या ।

गगनुं गगन पवनुं पवन मिल्या
तेजुं तेज नीर सारा ।
वसुधा वसुधा है स्वतंतर
ऐसे सबा मलाना ।

पंथ सो पंथ नहीं, है आपे,
देखो तुम सोच विचार !
खेलो खेल आपमें हो ! हो ! मेरे साधो !
नहीं विषय पंचभूत नहीं इन्द्रिय,
है हरि आपोआप
सुरत पसी आपे उर अन्तर,
लय ही रहे अमाप !
खेलो खेल आपमें हो ! हो ! मेरे साधो !
कोटि पचास फिरे जीव बुद्धि —
रटे कल्पना की काट !
गगन पताल भटके ज्यू मूसे
आत्मा है आप ओट !
खेलो खेल आपमें हो ! हो ! मेरे साधो !
अंधाधंध आत्मा बिन जाण्यो !
देखी खोयो गँवार !
बहोतु में सब सन्त अखो कहे
आपमें आपको पार !
खेलो खेल आपमें हो ! हो ! मेरे साधो !

☆

(१५) जागो-जागो रे म्होटा मुनिवरा !

जागो-जागो रे म्होटा मुनिवरा ! सहजे सद्‌गुरु पाया जी !
रेर्णकारनी धूनमां मनवा तार्मे मिलाया जी !
जागा-जागो रे म्होटा मुनिवरा !

नाभिकमल पर नेत्रां फरफरे ! उठे शबद सवाया जी !
तहां अविनाशी का धाम है ! हंसे वासा बसाया जी !
जागो-जागो रे म्होटा मुनिवरा !

इगला, पिंगला, सुखमणा त्रिवेणी रस लाया जी !
बंकनाल उलटी बहे, दशमें द्वार समाया जो !
जागो-जागो रे म्होटा मुनिवरा !

सून पथी ! सून आकाश है ! सून सत की छाया जी !
तन तूटये मन कहां गया ? निज कहां रे समाया जी !
जागो-जागो रे म्होटा मुनिवरा !

गगन मंडल को मैं क्या करूं ? क्या करूं सून सवाया जी !
क्या रे करूं ऐ हंस को ? एक दिन सब प्रमाया जी !
जागा-जागो रे म्होटा मुनिवरा !

अविनाशी वणसे नहीं, वणसे सो ही माया जी !
कहे रे मखोजी अग्राह्य छे ! आतम विरले पाया जी !
जागा-जागा रे म्होटा मुनिवरा !

☆

(१४) जनम-मरण-शंका सब भागी

जनम-मरण-शंका सब भागी—
अब मेरी सुरता मुझसों लागी !
ना कहुँ गहुँ छोड़ कहा त्यागी ?
सहजे हूँ मेरा अनुरागी !
जनम-मरण-शंका सब भागी !

ना मैं गुरु ना सेवक कहावूँ,
ना करूँ पूजा ना तीर्थ न्हावूँ !
ना मैं ध्यानी के ध्यान समाऊँ
ना मैं ज्ञानी के ज्ञान बिचारूँ !
जनम-मरण-शंका सब भागी !

ना मैं चतुर के मूर्ख अजाना
ना मैं पंडित ज्ञान सुजाना ।
ना मोहे पाप-पुण्य न धारूँ
ना मैं जीतूँ ना मैं हारूँ ।
जनम-मरण-शंका सब भागी ।

क्या कोई कहेवे समुझे कैसा ?
रूप कंचन को दर्पण जैसा ।
सहज पथ ये है हार्य का—
भया ! पद नहीं दम मार्य का ।
जनम-मरण-शंका सब भागी ।

(१७) जीवन को पाया वस्तु विचारा

जीवन को पाया वस्तु विचारा !
सो मर ममर अछेद अविगत—
गगन जस जमारा ! जीवन को पाया !

तत्व चौबीस, प्रकृति तीन गुन
आप आधार रहाई !
सहज स्वभाव, रमे जमे आपे,
सहज बनक बनी आई !
जीवन को पाया वस्तु विचारा !

तत्व गैवर्ते, प्रकृति गवर्ते,
भूत, भविष्य, वर्तमाना।
काल करम ये सब हि गैवर्ते,
उपज्या गव समाना।
जीवन को पाया वस्तु विचारा !

ना वे सत्य ना वे मिथ्या,
ऐसा अभरज खेला !
बीच संधि मध्ये महेल माँहि—
आपे अभरज अकेला !
जीवन को पाया वस्तु विचारा !

☆

(१६) जिन जान्या तिन प्रपच जान्या !

जिन जाया , तिन प्रपंच जाया !
कछु न जान्या सो सहज समाना !
दृष्टादृष्ट भाव है जेसा माया विलास जामो सब वेता !
जिन जान्या तिन प्रपच जान्या !

दूजा हो कर एक उपासे !
दूजा हो कर ध्यान अभ्यासे !
दूजी दुनिया दूजा ध्यावे !
तार्ये प्रपच पार न आव !
जिन जान्या, तिन प्रपच जान्या !

असता आप करे सो पापा !
तार्वे लागे पुण्य रु पापा !
कर्मी जीव ! करम पद बधा !
वस्तु विचार बिपे सो मंधा !
जिन जान्या तिन प्रपंच जान्या !

आप प्रकाशे दिन मणि सोही !
जाको वहुँविद्य छाया न होई !
ऐसा ज्ञान विचारो ज्ञानी !
मोहे सानारा माबाजामी !
जिन जान्या तिन प्रपंच जान्या !

★

(१७) जीवन को पाया वस्तु विचारा

जीवन को पाया वस्तु विचारा !
सो नर अमर अछेद अविगत—
गगन खल खेसारा ! जीवन को पाया !

तत्व चौवीस, प्रकृति तीन गुन,
आप आधार रहाई !
सहज स्वभाव, रमे थमे आपे,
सहज बनक बनी आई !
जीवन को पाया वस्तु विचारा !

तत्व गैबतें, प्रकृति गवतें,
भूत, भविष्य, वर्तमाना।
काल करम ये सब हि गैबतें,
उपज्या गैब समाना।
जीवन को पाया वस्तु विचारा !

ना वे सत्य ना वे मिथ्या,
ऐसा अचरज खेला !
कोठ संघि मध्ये महेल माँहि—
आपे अचरज अकेला !
जीवन को पाया वस्तु विचारा !

☆

(१८) तुम मत जानो हरि दूर है!

तुम मत जानो हरि दूर है!
जो समझ पड़े तो हुजूर है!
हरि व्यापी रह्यो सब घटके माहिं!
जहाँ देखु तहाँ दूजा नाहिं! तुम मत जानो।

पंच कर्मेन्द्रि पंच इन्द्रि ज्ञाना,
पंच तन्मात्रा विषे कहो नामा
अंतःकरण चतुष्टय पंच भूता,
ए लिये सर्व माया के पूता! तुम मत जानो।

ये पाँच विषय का अनुभव करे,
तब राम रहे मै आपे हरे
'आप' ओगासी करे विचारा,
अनुभव जाग्रे अंग अपारा! तुम मत जानो।

चौदे लोक माया के माहीं
संत को माया लेपे नाँहीं
संत भये हरि मे लौ लीना,
संत के आगे माया अधीना!— तुम मत जानो।

कोटिक ब्रह्मांड व्यापक है हरि
सब घट माँहे रह्यो विस्तरी
गुरु को भाव जिने है सह्यो
वो तो रामरूपे भला भयो! तुम मत जानो।

(१९) तू हि तू हि तू हि राम

तु हि तु हि तु हि राम ! निश्चे कीजे आपतें !
पिता को अंश है पूत, अन्य नाहीं बापतें !
तु हि तु हि तु हि राम !

आतमा ऐसे विचार छाँड अन्यालाप तें !
देह को सकल साज होत है अमापतें !
तु हि तु हि तु हि राम !

कायु, पाण नैन, कान, किन्हो कर्म नाक तें ?
पिंड का सकल पेच, देख नाहीं खाक तें !
तु हि तु हि तु हि राम !

अद्भुत चरित्र अंग, कैसे होय खाक तें ?
इतनी विचारे नाहीं न करे क्यों साफ तें ?
तु हि तु हि तु हि राम !

सकल भयो चेतन लोक चौद व्याप तें !
याही में तेरो है कहा ? छाँड और लाफ तें !
तु हि तु हि तु हि राम !

है सभे ख्याली को ख्याल, मान पुण्य-पाप में !
अखा ! और विलयमान भयो ब्रह्म छाप तें !
तु हि तु हि तु हि राम !

★

(२०) तू हि तू हि भरपूर है

तूं हि तू हि भरपूर है मैं नहीं नहीं मेरा !
मुज बदले पिया ! तुंज है, फिर मेरे डेरा !
तू हि तू हि भरपूर है !

मैं तो पानी का परपोटका क्या बोल ने चाल ?
मौज भरी पिया ! तेरडी हमा आनन्द हाले !
तू हि तू हि भरपूर है !

चांदा सूरज आपे तूं हि, मेहा होय आवे !
आप हि आपक कारने बहुविधि मोय बनावे !
तूं हि तू हि भरपूर है !

फल फूल बास तू हि तू हि मोमी तूं प्यारा !
ये मटके स्हाय है तेरडा फेर न्यारे का न्यारा !
तूं हि तूं हि भरपूर है !

बुद्ध बिचारे चातुरीमा अक्वा नहीं पाया !
निश्चंक आया तूं ऊमरे, तब तूं हाथ आया !
तू हि तूं हि तूं हि भरपूर है !

☆

(२१) बाबा सो हि पण्डित, साँई, दाना।

बाबा सो हि पंडित, साँई, दाना—
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तुरीया—
चारुं एक समाना।
बाबा सो हि पंडित, साँई, दाना।
ना वे कृत्य करे, ना त्यागे
ना वे स्थिति विचारे
गगन खल सहजे होय मीमडे,
कौन डूबे ? कौन तारे ?
बाबा सो हि पंडित, साँई दाना।
ज्युं गैबी बादर होय अंबर मैं,
उपजी वर्ति विलावे
त्रिगुणाभास इसी विधि बूझे
सो मर जाय न आवे।
बाबा सो हि पंडित, साँई, दाना।
चित्र विचित्र ये भासे वस्तु,
अखा ! ये हि निरधारा,
अमित में लीन भये विधि बूझे—
सहित सकल ससारा !
बाबा सो हि पंडित साँई, दाना।

(२२) बूझे बात बनी सब आवे

बूझे बात बनी सब आवे !
सोच बिचारी देखो सन्तो !
चतुरस्सोली कहावे !
बूझे बात बनी सब आवे !
आदर्श पुरुष आपे है ऐसा
मध्य अन्त नहि दूजा
भिन्न पड़े कौन ? कहा कहाँ पे ?
(बिनु) य बिधि आपे बूझा !
बूझे बात बनी सब आवे !
तत्व चौबीस अवतार चौबीस—
सो सदाकाम बिराजै
यह बिधि खस अखिल ये खेलत—
उत्पत्ति सारी माँजे !
बूझे बात बनी सब आवे !
निराकार का देही आकारा
आकार यामे है ऐसा
अजर, अमर अछेद्य सो ये ही
कल्पित कहा काई कैसा !
बूझे बात बनी सब आवे !
आठ अंगे जा बिचारा
(सो) गगनवत् है पहेला
गुणातीत जाना सो जानो
य हि अपा है अकेला !
बूझे बात बनी सब आवे !

(२३) भेदु कोइक जाणनहारा

भेदु कोइक जाणनहारा !
और सकल बातनहारा !
भेदु कोइक जाणनहारा !

जसे वोर भक्त हैं नटणी
ताको श्वास मधारा,
महाखेल कठिन है तसे
जे चढ़ना निराधारा !
भेदु कोइक जाणनहारा !

राजपुत्र स्वभावें ऐसा
कोईको दीप न मामे,
आचक जगत प्रणामे प्रशास—
कबहू राज्य न पामे !
भेदु कोइक जाणनहारा !

ज्यूं दिनकर को दीप न चाहिए,
उनको आप प्रकाशा
चित्र ज्योत सब ताहीं दीसे,
जब लगी सूरजवासा ।
भेदु कोइक जाणनहारा !

ऐसा खेल आनद मुगटमणि,
जाणे कोई एक पूरा
सहुजे मीमळे, बहोतों नीमळे,
(कोइ) पाया मखा पद पूरा !
भेदु कोइक जाणनहारा !



(२४) मत कोइ मरो भरम के धोखे

मत कोइ मरो भरम के धोखे !
सो ज्ञानी, जे 'माया' खोवे
जो परपंच रहे रच माने
तो पसरे ज्यूं अग्नि समाने।
मत कोइ मरो भरम के धोखे !

ज्यूं जादव कुल गया पसारे
रंच लोहा सो हुआ पसारे।
रज रही तो भी तिमुं कुल खाया
सो क्यां जाय पखाल्या—धोया ?
मत कोइ मरो भरम के धोखे !

दुनिया अंधारा पानी धोवे
तिमिर न जाय ह कीचड़ होवे।
दीपक ज्ञान होवे जो प्रकाशा
प्रेम घट्या भव तिमिर विनाशा।
मत कोइ मरो भरम के धोखे !



(२५) मतामत छाँड रमे नर ज्ञानी

छाँड़ रमे नर ज्ञानी—
मतामत छाँड़ रमे नर ज्ञानी।
मावन म्हार सूरत की लगना,
ऐसी अकथ कहानी।
मतामत छाँड रमे नर ज्ञानी।
मनकी लगन लगत है ज्यों त्यों
तब लग आवा-जानी।
सोच विचार समावे ये मनको
ये हि दया उर आनी।
मतामत छाँड़ रमे नर ज्ञानी।
अपनी आप विचारो वो तज्ञा
छाँड़ो नामा वानी,
ये सब ही है मन की रचना,
वैखरी जात बिखानी।
मतामत छाँड़ रमे नर ज्ञानी।
तामें उलझ रहे सो जन्ता,
नभे सा विज्ञानी
सो हि अतीत अखा ये परात्पर,
गुणवामां सत् माना।
मतामत छाँड़ रमे नर ज्ञानी।

×

(२६) सब कहे मान तज्या हरि

सब कहे मान तज्या हरि पावे !
ये हि बात बिचारो भागे, पोषक विहीन नहीं भे !
सब कहे मान तज्या हरि पाव !

कौन सुने ? कहो कौनसु कहीए ? देहातीत कहानी
कहा जामे राजन है मीसा वासीसुख राजधानी ?
सब कहे मान तज्या हरि पावे !

कोइ कहे पतित पावन, दीनबन्धु, अखिल भुवन को ईश
आये 'हम हम' भीतर बोल ! न्यारो नहीं जगदीश !
सब कहे मान तज्या हरि पावे !

ऐसा मान धरे, कौन कहांसु, है आये आय गुसाईं ?
नाम, ध्यान बिना चतुराई, भवा ! सहज सुख पाई !
सब कहे मान तज्या हरि पावे !



(२७) सुमरन कौन करे ? कहा को ?

ये ही समज मिल्यो तुम ही ज्युं, नाम धरे कोइ वाको ?
सुमरन कौन करे ? कहा का ?

सोते निमिष म होत नेम को एक स्वास सिया न जावे ,
कैसे बोमु माको मैं दूजा, होवे जे तुम भावे !
सुमरन कौन करे ? कहा का ?

पक्ष पत्र दृष्टांत देखते, सब मिलिके भ्रम सारा ,
है पत्र, रूप, रस बोही सोईमां, ऐसा भेद हमारा !
सुमरन कौन करे ? कहा को ?

वीय, अग्नि कैसे बो कहीजे ? दोउ नाम नहीं आना ,
मे बिधि बूझे अखा अक्षर है ना उपन्या, ना समाना !
सुमरन कौन करे ? कहा को ?

★

(२८) स्वेपद संभाले बिना

स्वेपद संभासे बिना, भजे पद भीखको ।
त्रिगुणी पड़ी है कंठ चहे जन्म भीखको ।
स्वेपद संभासे बिना ।

सुपन में कोउ राजा मांगत ज्यों भीखको ।
देह को अभ्यास भयो, मानत न सीख को ।
स्वेपद संभासे बिन ।

रतन गुमाया वाम चहे थूंक पीक को ।
रूपा के भरोसे धन संचत है सीपको ।
स्वेपद संभास बिना ।

मोह सों मार्यो है मन, फिरे खंड द्वीप को ।
कोकवान की सी भांई उठे खाई हीक को ।
स्वेपद संभासे बिना ।

पंचको स्वाद चाहे अधिक अधिक को ।
चोर के संग में मिल्यो, भूल्यो याही रीत को ।
स्वेपद संभासे बिना ।

ज्यु को त्युं चिन्यो जब राम निश्चे साह्य सीक को ।
आचन्त संभासे बिना धरत है शोक को ।
स्वेपद समास बिना ।

अटस पद मनुष चाहे नवनीत को ।
आपमें आपा समावे और भजे कीत को ।
स्वेपद समासे बिना ।

कोई तेरो और ईश देव मध मुक्ति को ।
समज, अघा ! मे हि सना यथारथ युक्ति को ।
स्वेपद संभासे बिना ।

★

(२६) हम सोही नगर के वासी

बाबा ! हम सोही नगर के वासी—
ज्यां सुख दुख नहि प्रवेश,
ज्यां द्वंद्व नहीं लवलेश।
बाबा ! हम सोही नगर के वासी !
काम, कर्म की तहाँ गत नाहीं,
दृश्य नहीं को साध्य।
करत उपाय यह नगर है न्यारा
ऐसा पद दुःसाध्य।
बाबा ! हम सोही नगर के वासी !
निज छाया ज्यूं दीख हात है
सध्या और वहाण।
और उपाय भटत नहि प्रतिबिंब
(जद लौं) शीश न आवे भाण।
बाबा ! हम सोही नगर के वासी !
विचार अर्क अपणे ही अगोचर,
तब 'गेन' मटे अंधकार।
सुखसागर अमृतवत् पूरण,
कोई जानत जाणनहार।
बाबा ! हम सोही नगर के वासी !
जे पद दूर निकट नहि कसा ?
सा पद जन हि विचारा,
सा नर विहंगम भये सुनिदचम,
वे पद भखा हमारा।
बाबा ! हम सोही नगर के वासी !



(३०) हार बड़ी महाविद्या

हार बड़ी महाविद्या
सन्तो ! हार बड़ी महाविद्या !
पे कोइ पाव नव निद्रा !
सन्तो ! हार बड़ी महाविद्या !

जीतनहारे बहोतों देखें हार्यो बराबर ना मा, वे
जो रे जीत्या बाको काम सवेरे हार्या हरमें आवे।
सन्तो ! हार बड़ी महाविद्या !

वेसे जप, तप, संयमधारी जेस भक्त सब स्वांगी
हार का नहीं माम निशाना, बन्ध, मुक्ति नहि माँगी।
सन्तो ! हार बड़ी महाविद्या !

तन कर हार्या मन भर हार्या हार्या करके विचारा
मास जाहीका भोक्ता सोही कौन कहे मास हमारा ?
सन्तो ! हार बड़ी महाविद्या !

आवे ना था पीछ ना था, विष भी नहीं से सारा
ज्युं का त्युं एक राम स्वतंतर कहत मस्त सोनारा !
सन्तो ! हार बड़ी महाविद्या !

★

(३१) हूँ हेरत गई हेराई

हूँ हेरत गई हेराई, अजब गति तेरियाँ !
तूँ मनसा, वाचा काम, गली शून्य मेरियाँ !
हूँ हेरत गई हेराई अजब गति तेरियाँ !
बाहिर भीतर तें हि बसो दिया है हरि हाजर हजूरा।
हदका स्वांग, बेहद की करणी, ज्यौं त्यौं आपा पूरा।
हूँ हेरत गई हेराई, अजब गति तेरियाँ !
हदके खोजे तूँ नहीं मीता ! बेहद कहाँ लौं ध्यावे ?
यो विष रची पची भुवा संसारा पियु का पार न पावे।
हूँ हेरत गई हेराई, अजब गति तेरियाँ !
सकल अलखे तूँ हरि झाँखे, भाँता, भेस अनेरा।
गगन पताल सबेका ढूँढे क्यौं न पड़े फेरा ?
हूँ हेरत गई हेराई अजब गति तेरियाँ !
वहम फहम सुझीका, मीता ! आपे आप भुलावा।
तू ही तूं रह्या भरपूरा, नाहीं दूजा दर दावा,
हूँ हेरत गई हेराई, अजब गति तेरियाँ !
पाया पेच सब तेरा, प्यारा ! सब हुवा लयलीना,
नख सिख व्यापक तूँ हि खोनारा ! भाव दूजा दूर कीन्हा।
हूँ हेरत गई हेराई, अजब गति तेरियाँ !

(३२) संशय-दहन

जान लिया ये हि जान ! जान मन एन है ,
सद्गुरु प्रीक्षपा नहीं तब अभी गहेन है ।
जान लिया, ये हि जान !

गुरु को मिले गोविन्द ताही कु तो सन है
हाजरा हुजूर हरि, जाकु हृदय मेंन है ।
जान लिया ये हि जान !

जे को जग माया जोजे ताही कु महा वैनु है
और कोई कैसे जाने जाकु सदा रैनु है ।
जान लिया ये हि जान !

सकल आनन्द हरि श्रुति का ए कहेन है
सोऽहम् सबद बोध सो, आपे नारायेन है ।
जान लिया ये ही जान !

सकल सिद्धान्त देखो ज्ञान मुगट 'मैं न' है
पिछे हरि प्रतीत नाहीं, सो ही सदा चैन है ।
जान लिया ये ही जान !

आतम सागर सबे तरंग बुदबुद फेन है
ये ही भला ! जानि रखो संशे का दहेन है ।
जान लिया ये ही जान !

★

संतप्रिया

सतप्रिया

दोहरा

ॐकार कि आद्य है[1] अकल रूप अनत ।
कल्पित मा मध्य मु रसी मामीनता मामत ॥ १ ॥
आद्य निरजन आप अज ताहा कीनो अध्याराप ।
अद्व माश्रा अथो कह कीना प्रगट गाप ॥ २ ॥
ताही को विस्तार विध्य[3] माध्या कवित्त करके कहू ।
हे चौद भमव भरपूर[4] हुं विरि[5] चथ करिके ग्रहू[6] । ३ ॥
सत प्रीया सुभवरधनी आक हिरदे हेत ।
अखा करत आलाकना ता यह आप उलासा देत[9] ॥ ४ ॥
सत प्रीया सत कु रुच वड आवे निजरूप ।
रूप[10] रूप अरूपी जे नरा अनुभे अकल अनूप ॥ ५ ॥
पारब्रह्म[11] कहत पराक्ष ह अनपरतक्ष परमान[12] ।
जाकुं पिउ[13] परखा नही सा काटिक करत सयान[14] ॥ ६ ॥

कवित्त

प्रत्यक्ष का[15] परमान बीना नर धावत धूपत सोग्त पाती ।
प्रत्यक्ष का परमान बीना नर नाचत गावत हाय हेयाती[16] ।
प्रत्यक्ष का परमान बीना नर भावत पीवत स्यामा सहुराती ।
बीन प्रत्यक्ष प्रमान अखा कहे[17] बिन दुल्हा[18] साहे ज्युं बराती ॥ ७ ॥

---

१ ओंकार हे—ओंकारपी माप हा (अ बा) २ रूपां (अ बा) ३ मध्य (अ बा) ४ अगाध (अ बा) ५ चौदो (अ बा) ६ कहूं (अ बा) ७ सुभवर्धनी (अ बा) ८ मालोचना (मा.त्रि७) ९ तायह देत—नहा वग नार मे देत (अ बा) १० × (सा) ११ परब्रह्म (अ बा) १२ अन पर मान—बिन प्रत्यक्ष प्रमान (अ बा) १३ पिउ (अ बा) १४ अयान (अ बा) १५ प्रत्यक्ष के (अ बा) १६ हाय पाती—हावन ज्याहिर (११२ का) १७ मानारा (अ बा) १८ भरतार (अ बा) ।

परब्रह्म राम नारायन नरहरि जाके है नाम अनंत अपारा ।
सो हरि हाजर[1] हजुर हयोहय स्व नर पाव जो आव दीदारा ।
गुरु गोबिन्द गोबिन्द सो गुरु गुरु गोविन्द गनति नहि न्यारा ।
बैकुण्ठ पुनपद गुरु दीन आय कीनो सुमाख[2] सुनारा ॥८॥
सद्गुरु चरण शरण मह दीन भव भ्रम आग सो बहुत बरासे[3] ।
सद्गुरु चरण शरण ग्रहे दीन बद पढ़ते भ्रम नरासे[4] ।
सद्गुरु चरण शरण मह दीन दानी करन स सो परे खास ।
सद्गुरु चरण शरण अखा केह स्व हरिरूप करे मन आसे ॥९॥

दोहा

ममसा माया कमना हरि न भजे जिया जाय[5] ।
अनंत विष रसमा पच्यो पुनि गया पसारे पान ॥१०॥

कवित्त

कहा भयो कंचन कुन्दन[11] सो अंग रंग सुगंध सोभा अरुप[7] आप ।
कहा भयो साम तुरग तुरी मद भुज धरा जाके मेरु ही कोपे ।
धनद को[8] सो धन करन सो दानी सो काहा काम[9] सरयो हरि ताप ।
एते गुन औगुन भय अखा[10] कह जो गुरुज्ञान न पायो गुरु पे ।
कहा भयो ॥११॥

मन रीझावन बद विद्या सब मन रीझावन चोपर खिलारी ।
मन रीझावन पाट पटम्बर मन रिझावन महल अटारी ।
मन रीझावन ताप तप सब मन रिझावन होय ब्रह्मचारी ।
मनहु मन ममातात पाव सो ना अखा कह गुरुरस न्यारी ।
मन रीझावन ॥१२॥

राम रसायन अपचल नहि मन[11] कहाँ जीव त कीनो कहा भगार ।
राम की गार चाम[12] रग राख्या ज्यों स्वाम मुनी कीरे ही सम्भार ।

१ हाज (अ बा) २ माही (अ बा) ३ बन (अ बा) ४ मू भाग (अ बा नि ७) ५ विराम (अ बा) ६ पर्व नगामे—पर्वे बम विरामे (अ बा) ७ ममे (अ बा) ८ मोमाग (अ बा) ९ मन जाम्य—भज्या प्रिय जाम १ रसमें (अ बा) ११ कुन्द (अ बा) १० माँत (अ बा) १३ × (अ बा) १४ बाम (अ बा) १५ मना र (अ बा) १६ अपबन नर—नी न मर मर (अ बा नि ७) १७ गमा (पा इतर) ।

गुरु गाबिन्द पहचान न पाया रिपु सु हेत हेत सुँ वगारे ।
रहेवया' ठगु ठग माया सानारा जा गुरु बैन सुनी न जगया रे ।
राम रसायन ॥१३॥

धन तन त्रिया मुरास वसा मन जैसा वसा'¸मीन को मन पानी ।
धन तन त्रियासो छांड जात है आर मन की प्रीत न हात पुरानी ।।
आये' अविद्या यम' सा वसाविण ज्यु जल डुबत नाव भरानी ।
भव क म तार सबका साढा अखा कैहे भजन की जात्य न जानी
धन तन त्रिया ॥१४॥

रे मन राम भजन की ठोर ते भजी रग रंगीमी सी रामा ।
सुन्दर स्याम सुनाथो सुन्योहे स्वे सत्य रुप सहरावे' तु स्यामा ।
अम्बुज सी अगना अत्य आछी मन मधुप] पावे' न विरामा ।
माउ भक्त" भरोसो अखा केहे भधर क ठाम" भई हे जु भामा ।
रे मन ॥१५॥

र मन राम हृद न पहेचान्या काल तु नीद सोयारे गुमानी" ।
आस को नीर त्यु' धन" यावन ज्या वन" म वीजुरी मुसुकानी ।
माही में मोला तू प्रोईल प्रानी" मेड म सत सत्गुरु नानी ।
हुसकथा गुरु देव अखा केहे ,न्यारा करे दूध रहे पानी का पानी ।
रे मन ॥१६॥

सद्गुरु स न सभन सा भजन' भजन त" मन" ठार न आव ।
भजन सा मस टास ऊपर म भव भजन गुरुमान बताव ।

---

१ प (अ बा) नि —आधार प्रति—का में यह १३वाँ छंद अपूर्ण मिला । अतएव अ बा के अनुसार हमने यहाँ सुधार कर दिया गया है । २ त्रिया मन त्रियासु एम अतृप्त मन (अ बा) ३ पडयो (अ बा) ४ होय (अ बा) ५ यही (अ बा) ६ सबों (अ बा) ७ भव कम लोगा—अब कर करतार याद का लखा (अ बा) ८ मखा जानी—प्रासां मोवनरा मीन को माग म जानी (अ बा) ९ भराव (अ बा) १० X (अ बा) ११ माव भगति (अ बा) १२ मुधर ठाम—मुधर की टाग (अ बा) १३ कान गुमानी—तु कवन निंद मामा रे गुमाना (अ बा) १४ यह (अ बा) १५ तम (अ बा) १६ ज्यु घन में (अ बा) १७ प्यार (अ बा) १८ मा मवन—मान मभाव गा गंगजल (अ बा) १९ अम्यमें (अ बा) २० मधु (अ बा) ।

अजन सा मन छाड सद्गुरु अजन - नन गहन गमाव ।
गुरु गाविन्द नहा नर पारा अखा कह मब सा मब मुष' पाव ।
सद्गुरु मान मब वह मगन अपन गहा' जु ब्रह्म न जान ।
सत्यमान विन मस्त नर भम अगम आपा पर हाथ बिकान ।
आप काई आर म और अ नीम का नीर ममी मध्य मान ।
राम अखा कह मय मत्र मैं गुरु मा गाविन्द कहा सिष्य क उत्तर माने'
सद्गुरु ॥१७॥

राम मर का गुरु बीज अखा कह ज्यु म्यागा जम मीपु म जम माता ।
कामन काई कमा न पहचानत ज्यु मप पहाने' छुर मध्य मसी ।
अर बपरा आर पुण्य पर नहा मा मरपूर भरि मध्य होती ।
रमा गुर गाम गाम करा छाड गार मुम्बान सिगार की गाती' ।
एम मरा ॥१८॥

एम मरा ॥१९॥

दोहा

अच्युत गात्र अन गाम का तुम बरन हरि रूप ।
गुरु गाविन्द का अब माम्या सबहि मया तद्रूप ॥ २० ॥

कवित्त

नाथन नाथ कमा तुम हामा आम्प बग्न मार पतुराई ।
पडित राव वह भट बहुट बान धन्या जु नीमाम बजाई ।
चमार जुलाहा नाई धनिया दादुरीम्नाम सेवा कबाराई ।
राम अखा कह अग्नि का मी ज्वाला मध्य पग्पा मा दाना अपमाई ।
नीबन नीब ॥-१॥

ना कम का काम रावन जु मसाका न छूटे मम पम्बनहु ।
ध्यान गगन म जान मब गब ज्यों गव नहीं मप सीम्नहु' ।

---

१ सगि (अ का) २ पढन (अ का) ३ मुग (अ का) ४ के (अ क) ५ भाग ६—आर × कार्म आर उपासन और जप (अ का) ६ लिप आने गिर प उर मान (अ क) ७ उन (अ का) ८ × (अ का) ९ रमाट (अ का) १० मम्मान गाती—मा स्नान गुमान क गाती (अ का) ११ सींचमें (अ का) १२ आप (अ का) १३ म (अ का) १४ मेघ ६—मन बरसत (अ का ३६ पा) ।

भीली के बेर जुबे' भखे भावसु तो कहा मज्जा लगी रघुनन्दन कु ।
जैस तैसे हरिजन अखो कहे कीयो हे ज्यु नीर मथनकु'
नाकम ॥२२॥

जो पै राम रह्यो हृदया उदया हे दीनकर कोर' शशी ।
विधि नीषेध बराको कहा बसु जांहां गुरु की करुना बिससी ।
स्वे शुकदेव पायो गुरु भेव तो कहाँ चन्दन बरच्यो सुलसी ।
बेहेत अखो मुंगा की शर्करा' घट भूटे सो जाने सीहीरी भमसी' ।
जो पै ॥२३

ज्ञान बिना सुख सीहीरत पाव ज्ञान बिना ससय नहिं छूटे ।
ज्ञान बिना वई' को अपराधी ज्ञान बिना नित्य निसे' सब लूटे ।
ज्ञान बिना श्वान सुकर असा ज्ञान आया भ्रम का भांड फूटे ।
ज्ञान' गोविन्द'गावि " साही गनान"ऐसा अखो केहे माया नेह" टूटे।
ज्ञान बिना ॥२४

ज्ञान बिना भटक्यो' गिरि गहवर ज्ञान बिना पराधीन नचे" ।
ज्ञान बिना मंजन मलधारी ज्ञान बिना काया क केश खच ।
ज्ञान बिना जुवती जन माखा" ज्ञान बिना कर्म काऊ न बच" ।
जब गरज्यो सिंह अखो केहे भाग्या भर्म मैंगल मद मुचे' ।
ज्ञान बिना ॥२५

दोहा

सर्वातीत सब जा विष सब समेत सब' शुन्य ।
स" स्वरूप स्फुरस' भयो सोही" ज्ञान नहीं मुन्य ॥२६॥

---

१ मठे २ कीयो हरि नर मन्थनकु (३६२फ्र) ३ कहाँ (म बा) ४ बपुरा को (म बा) ५ बेहत शर्करा—अखा जेमेहे मूक की साकर (म बा) ६ सीहीरी—भमसी—सीरी मि समी (म बा) ७ ज्ञान पावे—बहुज्ञान बिना सुख की सीहीर म पाव (म बा) ८ बेह (म बा) ९ पे (म बा) १० मो (म बा) ११ ज्ञान (म बा) १२ मेंर (म बा) १३ बने (म बा) १४ मोर्नच (म बा) १५ माया (म बा) १६ कोऊ बचे—कोटय म बचि (म बा) १७ जब मद मुचे—जब ज्ञान गर्ज्यो मंग सानारा भागे भ्रम मगम मद मचे (म बा) १८ भव (म बा) १९ ग्ये (म बा) २ स्फुरन (म बा) २१ नाही (म बा) ।

कवित्त

ज्ञान विज्ञान' पुकारे सबे को आर' ज्ञान का रूप अनंत अपारा।
काउ है कम धर्म क ज्ञानी कोउ है मन उपासन हारा।
काउ है जाग पवन क ज्ञाना काउ करे पचभूत विचारा।
साक अखा कहे' आगा पर छगा ज्ञान विज्ञान ज्यु का त्यु सारा।
ज्ञान ॥२७॥

ज्या जन एक सायो है सेज पर' सुपन सो सत कोटि भयो है।
हय हस्ती नर बाहन नपती' सेन्य सुदर जोपी तान षया है'।
माय' गुरु जग्या जग सोवत ताकस एक ही अत राख्यो है'।
एसे अखो' कहे सायो सुपन सब देखत सो गुरु ज्ञान दया है।
ज्यों जन ॥२८॥

मोहगन की मीरी'' जाम मोहगन न जाने दुहागन' कत विछोई।
नव-नव मह मव पमवनारी' उर मान'' रहेत है सु अछाही।
प्रत्यक्ष राम पसु पम पुरन ज जानत नाहा म कान हा माही।
आप'' असा गुरु मव अखा कह सारत सार लीमा है सु' बोही।
साहागन ॥२९॥

इत उत मन फरे कहा' ता में रहेत'' आधार धराधर का।
तेरो समास हावे मन सा म जम जाने तु भेद गिरिधर का।
शब्द म जा शब्दातीत बोलत पाया परछ'' पराधर को।
जान का संत अखो कहे सीधी कसा प्रत्यक्ष पचम्पराषर का'।
इत उत ॥३०

१ ज्ञानी ही ज्ञान (म बा) २ × (म बा) ३ मौनाग (म बा) ४ ज्यों... पर—ज्यु जन मायो एक सेजा पर (म बा) ५ नम्पति (म बा) ६ सेम्य... है—सेम सदर जोधीना मचयो है (म बा) ७ माई (म बा) ८ जग (म बा) ९ एक है—अंत ही एक रयो है (म बा) १० तमें असा (म बा) ११ मीर (म बा) १२ सोहागन (म बा) १३ पम्मन मानी (म बा) १४ मातुर (म बा) १५ कोन ओही—कौन हा माई (म बा) १६ माला पयो (म बा) १७ ज्यु (म बा) १८ +मैरो (म बा) १९ +मा (म बा) २० परधरो (म बा) २१ पहुँचे परापरको (म बा)।

पूरन ब्रह्म ठहरे' सा पूरन पूछ्यो गिरजा गिरजापति सुं'।
पूरन ब्रह्म ठहराय सुन्यो सब कह्यो आद्य पुरुष प्रजापति सु।
पूरन ब्रह्म ठहराव कीनो है वशिष्ठ गुरु हरजापति सु'।
महाजन ब्रह्म ठहेराव' अखो केहे सत्य मान्य मन्द न' रजापरम सुं' ॥३१॥
पूरनब्रह्म०

सप्रकाश' स्वरूप को स्फुरण' पहुचत 'नाही वलीया दत' की।
आपानन्द मनोपम आशय'' तांहां लागत नहीं सुभासत'' की।
आपा पर भग अभ्यास नहीं अग सुरत नहीं तांहां विमल की''।
सतगुरु के वेन बीकसे' मिजनेन समझ अखो कहे सरे सतकी'' ॥३२॥
सप्रकाश०

असो है ब्रह्म अन अेन पूरन ऐसो न जान सके जीवरा''।
कोटि कला की कला किय जाने' तसी तो केहेन सको ए गिरा'।
जैसी रसना भाषा करी भाषित'' तैसी तो सेन सकत अगरा'।
सेन गुरु की समझ अखो केहे सजाप योगि मसो'' मगरा ॥ ३३।
जैसो है०

जांहां कछु नाहीं तांहां''कछु पावत सोधु'' निरजन के मध्य मोटि'',
ज्यूं का त्यूं सत्य''सहज सतर''कल्पना निकसो ब्रह्म भ्रम का कोटि''।

---

१ ठहरे (म बा) २ गीरजा .. सु—गिरिजा गिरिजापतिसों (म बा) ३ हरिजापति सु (पा ३६२) ४ ठहेराव छोनाप (म बा) ५ राइ (म बा) ६ प्रजापति सों (म बा) ७ मोहे प्रराग (म बा) ८ पुनी (म बा) ९ तहां (म बा), १० रंत (म बा) ११ आसे (म बा) १२ सतासंत (म बा) १३ सून नहि तहां कहां मंत की (म बा) १४ बिम बगसे (म बा), १५ मत की (म बा) १६ पान जीवरा—आमी सकत है जियरा (म बा) १७ कोटि जाने—कोट काल की कला मन जानत (म बा) १८ तैसी .. ए गिरा—तैसो तो कहेन सके ए गिरा (म बा) १९ कर भाखे (म बा) २० तैसी अगरा—एसो तो से न सके अगरा (म बा) २१ नरा पाये निपर्यो (म बा) २२ कहां (म बा) २३ शुद्ध (म बा) २४ ओटे (म बा) २५ सोही (म बा), २६ स्वतंत्र (म बा) २७ निकसो .. कोटि—नैकसो भ्रम की कोटे (म बा)।

जौं[1] परपंच तांहां पुरुषोत्तम जहां मध्य भाग तांहां हो करोहि[2] ,
केहेत अखो जांहां[3] नहीं चीतवन चीत उभावीन कोउ कैसे मठोहि[4] ।।३४।।
जांहां कछू०

दोहा

ऐसो अक्ष है ब्राम को ओर सबे मन कीन ।
अखा सब मन का रच्या मनु[5] आदिक आधीन ।। ३५ ।।
देहाभिमानी जब भयो, इत उत फैसो आप ।
केहेत अखा मन ठाईं[6] सब माफ चौदके[7] व्याप ।। ३६ ।।

कवित्त

आवत[8] है सब लोक इत[9] हिते आवत नाहिन कोए[10] फरी
रांम रानी[11] से बड़ महापंडीत[12] कोये न देत पठयो पतरी ।
धन नारा सुत रहेत परे मागी न ता देहसंग धरी[13]
ईतनी ता अपने नैन देखो आर अखा मनने पकरी ।। ३७ ।।
आवत०

देहधारी केहेत ए लोककी[14] परलोक की देह कहत[15] बतीयां
साधन सम करत देहधारी वेद लिखत पुस्तक पतीयां ।
स्वर्ग वैकुंठ बतावै देहधारी केहेत बनाये करत छतीयां[16]
देखीयत है अखो केहे सबे ईन उतकी कोउ न देहे रतीयां ।।३८।।
देहधारी०

ईत उत मन फुर्यो है[17] तैरो मन थको है तो सबे सम्यो
कारन करन[18] है मनहि को मन भयो है पवन रम्या ।

---

१ महा (अ बा.) २ तनी करोटे (अ बा.) ३ कहत अखो यहां (अ बा) ४ चित्त (अ बा) ५ उभा मठोहि—उठा बिना प्रभु कोई मठाय (अ बा) ६ मनुआ अधिक (अ बा) ७ ताहीं (अ बा) ८ चौदको (अ बा) ९ आवत (अ बा) १० बहावे (अ बा) ११ नाहिन कोए—नहिं जब कोई (अ बा.) १२ पना (अ बा) १३ धर (अ बा) १४ बरी (अ बा) १५ अलौकिक (अ बा) १६ करत (अ बा) १७ बनाए छतीयां—बनाई धर छतियां (अ बा) १८ प्रभु (अ बा) १९ करन बखे (अ बा) ।

मन पवम की मय' शुन्य सागर' एसे हिए खेम मथ्यो
ए' अनुक्रम अखा भयो गोचर अवयो रस उने मु' अच्यो ।
इति उत ॥३९॥

हे कछु ओर भई कछु ओरे ए अटपटी आय अनाथ चली
लोकिक ओर' अलौकिक ओरे' लोकिक लोक महा' जु भली ।
सद्‌गुरु सेन अखा हे सो सुखी जैसे उद्य' रहे कदली
शेष' रह्यो सो मला" समरासर मीन समान्या शुक मथ्यो नली ।
हे कछु ॥४०॥

दोहा

छुट कबीर कथन भयो गुरु कस वस्तु बोधार ।
आप मिला आपा रहे" केहेत अखा सब सार" ॥४१॥

कवित्त

मे नहीं, मे नहीं मे नहीं प्यारे तुही हे तुही हे तुही सही
कंचुकी को वस हेज' कहा मीये फीरे आपो" ही अही ।
अग फनंग" चल्यो" नीकसी सव जउवरा चितहि तितही
नेम श्रवन नासा अग मेरो राम अखो केहे फीरे हे' वही ।
मे नहीं० ॥४२॥

ज्यु" मही के अंग होत अरा सो" अग ही ते आई उपसी ,
अन्य उपाय करन" नाहि बरे सेहेज समारी सो सेहेज" सजी ।

---

१ मे (म बा) २ मैं (म बा) ३ एही (म बा) ४ उमर्कु ज्यु (म बा) ५ कोट (म बा) ६ उरे (म बा) ७ लौकिक माहा (म बा) ८ अखा सुखी—सामारा सीधी कस (म बा) ९ उबरान हे (म बा) १० लेवे (म बा) ११ रह्या (म बा) १२ आप .. रहे—आपा मेटया मार रहे (म बा) १३ कहेन सार—कहेना हवा मामारा (म बा) १४ ज्युं (म बा) १५ सीवे आपा—हरे फर ज्यु आपे (म बा) १६ भुजग (म बा) १७ गयो जब (म बा) १८ ज्यु (म बा) १९. संग (म बा) २० सो (म बा) २१ कारज २२. सम ।

जैसे नर नारायन नीर्गुण सर्गुनसा' ऐसे ही भजी
निर्गुन' सगुन' अखा नहीं डरे भेद पायो भव भ्रांत्य तजी ।
ज्यु ही ॥४३॥

जो मन मान्यो तो ब्रह्म सबे को जो मन मान्यो तो जीव सबे,
जीव ही जीव टरत नहीं को जग' अब जसो है तसो ही' तबे ।
देहदर्शि सो' धनाधन' धारन बोपडु के ओघ तरे जु दबे
जो दिव्य दृष्टि दीनी गुरुदेव ने तो ब्रह्म अखो केहे सबे ही फबे ।
जो मन ॥४४॥

मन को मल पसटते पूरन ब्रह्म जसो की तैसो है सदा
ज्ञान बीन भटके जु' जगजग ज्ञान आयो भयो ब्रह्म तदा ।
अखर ते उरगम' नहीं माखत'' कहा भयो पुस्तक पोठ सदा
कह्यो सुप्य सेप्या माहि अखो कहे स्वे हरिरूप भयो जु रदा'' ।
मन को ॥४५॥

दोहा

चौद चराचर चीहीन चौम चीतवत चीत के चेहन'' ।
पूरन मल बीन पांमरा आयु घटावत' रेन'' ॥४६॥
पूरनता जानत नहीं भेत गुरुन'' की ओट ।
सो भव में भटके अखा चीरस तमेर को'' मोट ॥ ४७ ॥

कवित्त

ज्ञान की गत्य बुझत नहीं बावरे ज्ञान बीना मशान टटोरे
देह विदेह कोमी चाहे मुरख उद्योत केसे होये गुफा बटोरे ।

---

१ सरगुन (ब बा) २ गुन (ब बा) ३ निरगुन (ब बा) ४ ब[illegible] (बा बा) ५.४(ब बा) ६.४(ब बा) ७ दिनोदिन (ब बा) ८ दोपहके [illegible] स्वे—देह के दोपने रहे गु पड़े (ब बा) ९ है (ब बा) १० उनमत्त (ब बा) ११ पापउ (बा बा) १२ कह्या रदा—रहेमुने निप मांही मोनारा स्वप हरिरूप भयो हेन उर रसा (ब बा) १३ चीनवन चेहेन—चीनवत हीं चित चहेन (ब बा) १४ घम्न (ब बा) १५ दिन (ब बा) १६ गुरुन (ब बा) १७ चौद तिमिर की (ब बा) ।

भीम सुभाव इंद्रीगन आरे' ता करी सुवाउर केसे तोरे'
देहातीत अभ्यास अनुपम सो तो अखो केहे गुरु कम ओरे ।
मान ॥४८॥

सुमन सुमन गुरु' गोविन्द की लुभ परे लोका देसी मअबर
आछा मो अग आरे' सान तरग शोभा सुगध रग पाट पटंबर ।
तन सुख मन सुख लालच्य के लीये मीत्रमीपीत्र देख्या' भयो सुमर'
रामबीना रस्य मानी अखो केहे जैसे भक भरे कोई अम्बर ।
सुमन ॥४९॥

धम तन मन उपासे सबका आनत हे जगदीश अराधे ,
एठी' सीचाल्य एठो सो आराधन मैठे से धोम धोलेजू बलाधे' ।
आत्म मान नहीं गुरु की गम भ्रान्त्य ही छोत सारे दिन साधे ,
ठाकुर को ठेहेरावल पाया माया ने अखो केहे खेलावेत धाधे
धन ॥५०॥

माया के रग देखी ज्यु मनोहर मानत हे जगदीश गुसाँई
धन तम हय हस्ति शिष्य सेवक जात'' सबे गत ज्यु धम छाँई ।
सुत'' को ठाव ठगे'' पीद लोक में कीट पतग स्वामी सेवक साई
माही' मधीक नुम्प कोई'' अखो केहे सव पीत्र चीतेरा हे साई ।
माया का ॥५१॥

देह दषि देह देखीजु'' माहे भगुर को मानत अवीनासी
उपज्या सो असपाये नीरपेकर काई रहेन माहों भूतलवासी ।
पंचभूत कु परमेश्वर मानत आय'' लागी कोई गेबी वलासी''
पषातीत वस्तु'' असल अखो केहे मानत हे काई पंथ न्यारासी' ।
देह ॥५२॥

---

१ मुन वरे (म बा) २ मुधा मोरे—मुधामु चाहे तोरे (म बा) ३ भूम (म बा) ४ उर (म बा) ५ देखी (म बा) ६ गुंबर (म बा) ७ रीत्य (म बा) ८ ही (म बा) ९ एठा (म बा) १ मालाधे (म बा) ११ मात (म बा) १२ पंचभूत (म बा) १३ ठर्यो (म बा) १४ को (म बा) १५ ×(म बा) १६ पुग (म बा) १७ आर्य (म बा) १८ मैच बिमासी (म बा) १९ × (म बा) २० निरासी (म बा) ।

अन्य उपासन पेठो रामे आनत' हे हम हे जु अछोये ,
अन्य ही अन्य देखी सब ही' कु पमभर रेहेत नही' बछोये"।
अन्यन' को उपदेश सुने काहा ओल्यु' ना अन्यरथ" गछोये ,
नरमध्य नारायन नीर्गुन सगुन भयो केहे भेप कछोये।
अन्य ॥५३॥

मन के पाछे' फरत पटदरसाम राम पहचानत नाही मनो
महीं' सगा मौलग्यो हे अचानक ताहीं तद्रूप होवे जु घनो।
पानी की-सी बान्य" परी मन ही की रग रग में आप धरत अपनो"
मनातीत अगोचर आमय ताहीं तो भयाहोत मन फनो।
मन के ॥५४॥

अपरस अग रहत नही बाबरे राखम सके ओपे मम अछूता
तन उपास करत नही ताते" दुजर' दोष कीनेसे पशुता।
पावत" चीत नही परमात्मा तोसो" देह छत में सब गुता
आपा पर छोड़ भया वस्तु रूपी तन भयो केहे सब ब्रह्मभूता।
अपरस ॥५५॥

माधु' न आने भुमासा' हे अनुभे" बसे तैसी भरनी करे आगे
म्यहेका" मांही मांही गुरु की गम स्वाम मुख" जेथ जागकु जागे।
कम न धर्म न ज्ञान न बुमत आनत महीं रम भक्ती विरामे।
ज्ञान भया केहे हंस को खाना' मुक्ताहस" चुग्यो कसे आप भागे
माधु ॥५६॥

---

१ आनन (म बा) २ देखे सब नीको (म बा) ३ कहु (म बा) ४ विपाप (म बा) ५ ममीम (म बा) ६ गुमो (म बा) ७ अनर्थ (म बा) ८ नर (म बा) ९ पीदे (म बा) १० पाही (म बा) ११ बान (म बा) १२ बात भरमा—भर परे भरमा (म बा) १३ ताते (म बा) १४ दुजर (म बा) १५ आवन चाहोन्त (म बा) १६ तावन (म बा) १७ भद (म बा) १८ मराम (म बा) १९ अनुभव (म बा) २० गहेका (म बा) २१ मुखे (म बा) २२ बंधम (म बा) २३ खावनी (म बा) २४ मुक्ताहम (म बा)।

सगते रग नफीरी कुबुधी को मन मील्यो जसे हस की टोरी,
मराल मील्यां' मुगताहल चुगत मग बुरो बुध्य' मछी बगोरी'।
तेस ज्ञानमता में मीले खल ज्ञानी मन को मोह' जैसे को तैसोरी,
मत मागे अखो केहे ऐसे नरकु अगु काहा भयो दुध जैसो छाछ घोरी'।
संगते ॥५७।

मरष की कोटष पड्यो पथरा नीर मध्य सोधो रहत परयो
नीर को भेक न भागे समागम टाँकी लगी तब वन्हि झरयो।
त्यु खल ज्ञानी अहंकार न छाड़त भीतर' भीम भगार भरयो
एसे नर कु फटकार' अखा केहे कर्म और ब्रह्म दाउ पे ज्यु टरयो।
मरष ॥५८।

ज्ञानी सू ज्ञान न कथीजे अभाने'' अज्ञानी सु बाद बदे कोन भोरे
अज्ञानी अहंकार'' आने उर अस शबद कुं मरोरे''।
भीतर म्यन' अंगार भर्यो हे बाहार भात बनाव भोरे,
संत समाज अखो केहे सो न्यारा सत्य'' भाव बीना भव भुस'' पछोरे।
ज्ञानी ॥५९

अज्ञान कु ज्ञान माने मन मूरख ज्ञान पर्‌यो कही दुर'' टराजे,
सीखी सुनी गलमार घुसाँई' ज्यु आग पवन कुम खाली सो गाजे।
भीम जंजाल बला भरी भीतर ऊपर भाखी सी बात बिराजे,
सो नर कु मत मानो अखो केहेकहा कुलटा टरे'' नवसात छाजे।
अज्ञान ॥६०

१ मिले (अ बा) २ बुरी (अ बा), ३ बंडोरी (अ बा) ४ त्यु (अ बा) ५ मोहा (अ बा) ६ मत माने बोरी—एसे नरको भेक मत मानो मोनारा कहा भया दूध जेसो छास की गोरी (अ बा) ७ सोधा परयो—सोधो रहत पर्यो (अ बा) ८ न समागम—समज न लागत (अ बा) ९. भतर (अ बा) १० फिटकार (अ बा) ११ सयाने (अ बा) १२ अंका (अ बा) १३ उर —मरोरे—उर अंतर सत्य सबद को बेत मरोरे (अ बा) १४ मिल (अ बा) १५ सत (अ बा) १६ भूस (अ बा) १७ दूर (अ बा) १८ मन मारे गुसाई (अ बा) १९. टले को (अ बा)।

कहा ज्ञान मथ्यो' ममता नहीं छुटी कहा ज्ञान कथ्यो नख' मुख भाखी ,
काहा ज्ञान कथ्यो सरमी सक सागे काहा ज्ञान कथ्यो ममता भई भाखी ।
काहा ज्ञान कथी' पीछो फीरथा पामर पायमो ईद्र फल' कटुता बहु बाखी ,
ज्ञान की ओट अज्ञान' अबा केहे माच गयो भयो भुत मराखी ।
काहा ॥६१॥

टूटयो तन गात ममत मेटयो' नहीं फुट फबीत पुरानी सा पजर
जरजर अंग झुक्या तन नीचे जसे ही वद्ध भया जसे कुंजर ।
फटे से नेन बखान बीन बेन एसा फबे जैसो ऊजर बजर'
अजहु अयो केहे राम भजन की बात नही जो पे पहोच्यो हे मंजर' ।
टूटयो ॥६२॥

ऐसे नर तै खरखरो भयो श्याम' भयो क्षततान'' टरी ,
जरजर अंग झरे नेन मासा जसे ग्रीषम हेम'' जस्यो पयरी'' ।
जरा का जोर बढ़ो मन के' अंग ओबमता डर से'' डगरी
अजहुं अडो कहे टेडो म टर्या नर आपे आय मिल्या मृत'' सग झगरी'' ।
ऐसे ॥६३॥

जोबन गयो जरा अठ'' भयो सीर स्वेत भयो बुद्धि'' काठी की कारी
सब परथ बटी तन रत्य' घटी मनसा नु रही कुमटा जैसी नारी ।
ज्ञान कथ्यो संत'' नीर मथ्यो आई मथा घृम्यवारो की मारी
राम न जाने कमिमस साने भमे'' ज्यु पुराने अविद्या कुमारी ।
जोबन ॥६४॥

---

१ मथ्यो (अ बा) २ निरा (अ बा) ३ कथ्यो (अ बा) ४ पायो फल—ज्यु नाको इन्द्रायणफल (अ बा) ५ ज्ञान अज्ञान—ज्ञान ओटे अज्ञान (अ बा) ६ मनी (अ बा) ७ पुरानी पजर—पुरानो मो पिजर (अ बा) ८ नजर (अ बा) ९ अब हु हे मंजर—अब हो नानारा रामभजनकी बात नाही जीमें आई पहोच्या हे मंजर (अ बा) १० या श्याम (अ बा) ११ गम्ता (अ बा) १२ × (अ बा) १३ पथरी (अ बा) १४ जिनके (अ बा) १५ दमन (अ बा) १६ मृत्यु (अ बा) १७ बगरी (अ बा) १८ हक्यो (अ बा) १९ बुध (अ बा) २० आतम बुद्धि तन गिरा (अ बा) २१ मा जो (अ बा) २२ भमे (अ बा) ।

दोहा

केहेत अखो केठी कहूँ जीव क्वध[1] की बात।
कोटि कलप ना आ जियात[2] ताहु बीप म[3] अघात ॥ ६५ ॥
ताकु[4] आतम उलस परा पार थें ब्रह्म[5]
कोटि कम छिनमा दहे[6] एही प्रभु का धर्म ॥ ६६ ॥
जीव न करे अब एतनो[7] जो तो एक राम जराय।
बारो मेघ बरख अखा ताहीं लमी सके ज्यु लाय ॥ ६७ ॥

कवित्त

भावना फेर[8] परत चीथा जान से भाउ जेसो रूप तैसो तेरो है।
जो सुम भाउ भयो[9] शिवरूप तो तुही चराचर जोपे भाउ फरो[10] है।
मानत[11] हे आगा पर साँचा भूत भवीष्य सत्य तो तु चेरो है[12]।
केहेत अखो सत्यभाव निश्चय[13] कर चेत[14] फर्‍यो हेतो चीवमेरो[15] है।

भावना ॥६८

सुधीसी चीहीन आवे सवन कु ताते रहे परपंच उपासे।
तामर को पेहचान म आवत जामें समास[16] हे सास उसासे।
कागत[17] भोट नहीं जीव सीव बीच्च भ्रम भर्‍यो[18] नाम्यो माया तपासे[19]।
केहेत अखो गुरुगम बीना भर कास के हाथ मेकाना[20] नथानो

सुधी ॥६९

घोखा के घंघ पर ज्यु सयाने अयाने बहे ताकी कोन चलावे।
घोखा परथा परलोक उपासे[21] घोखा[22] परथा ध्यानी ध्यान लगावे।

---

१ कुबुध (म बा) २ काट कल्प सुधी जीमे (म बा) ३ न बिपये (म बा) ४ ताको (म बा) ५ परा ब्रह्म—पराथा एंठे ब्रह्म (१६२ फा) ६ मरे (म बा) ७ इतनी (म बा) ८ लागी (म बा) ९ फिर (म बा) १० हाइ (म बा) ११ फुर्यो (म बा)—फमा (फा १६२) १२ ज्यु म (म बा) १३ चहेरो (म बा) १४ सत्य निश्चय—सतभाव निस्चे (म बा) १५ चित्त (म बा) १६ चिद् (म बा) १७ समात (म बा) १८ कामर (म बा) १९ पर्यो (म बा) २० तमासे (म बा) २१ बिकास निकासे (म बा) २२ घोखा उपासे—घोख परे परलोक कुं ताच (म बा) २३ घोखे परे (म बा)।

घोखा परपा ज्ञानी आप कुं थापे' घोखा परपा देही दुर बतावे ।
माम मही काहा सीम अखा कहे सेहेज कबी कपी इत बड़ावे ।
घोखा ॥७०॥

संसे ससार साचो कर लीनो संसामीटे सोसे नु बीचारा' ।
माद' न बीद विस्तार म बाधा तायर' कोन काहात' ज्युं न्यारो ।
आप हुए ते ऊठ बड़पा' है आप मीटपा' मीटपो ज्युं पसारो ।
घुम्य अखा कुस सद सुमा मुन भत्र सो लेखन हारा' ।
संसे ॥७१॥

पिंड ब्रह्मांड क भेद कुभेद' ता बेद की बदन" सब बीसावे
देह दरपन दीड" मुख आगे प्रतिबिंब ब्रह्मांड तबे सत्य कहावे
भादस" अंग अक्षपानो भामे त तब जगत जंजाल की कोन चलावे
संध्य अखा केहे समाना" ताही मे जा भर कु मीमम मीरप" गावे
पिंड ॥७२॥

ना हम ज्ञानी अज्ञानी सयाने मामी न ध्यानी कवे हम हुमे
पानी, पवन अग्नी और अवनी अंमर ते नाहीं को सन" जुमे
गेब मगन घटा बेजु गरजत" वरसे बीसावे तो काहा कछु मुमे ,
अखा आनंद आप हरि करता' देह देखे सो बहि का पूमे' ,
ना हम ॥७३॥

मघर" की मनसा नहि जाकुं कंदर सेवा ता ताहि भसी है ।
मंदिर कमर" दोउ नहीं जाहां सुख की सुम तांहां कुमसी" है ,

---

१ घोखा थापत—पीमे परे ज्ञानी आपको थापत (अ बा) २ सो बीचारी—मटे नोई नाम बिचारो (अ बा) ३ नाद (फा १६२) ४ ता दिन (अ बा) ५ कहावे (अ बा) ६ ठपो (अ बा) ७ मटी मटयो (अ बा) ८ घुम्य सेवन हारो—घुम्य तानारा बिचार तो मुम्या घुम्य लगे सो सबमतारो (अ बा), ९. ब्रह्मांड कु—ब्रह्मांड का भेद की (अ बा) १० बर बचन (अ बा) ११ दरसन दीसो (अ बा) १२ अब भारस (अ बा) १३ संध्य समाना—सध्य सोनारा समाया (अ बा) १४ मैनिमनि थावे (अ बा) १५ दिन (अ बा) १६ भेद गरजत—ज्यों मेंद घन घन गरजत मेंग (अ बा) १७ आपे आप करता (अ बा) १८ वधु मुमे (अ बा) १९ मंदिर (अ बा) २० कंदर २१ तो ताहू वर्षा है (अ बा.) ।

पष भसे मो[1] पय समारे पक्षी कु तो अटकटसी है ।
सावे अखा सो जाग्रत चाहे ओर जाग्रत को तो जाग्रत म्यली[2] है ।
मविर ॥७४॥

माम अरु रूप सकस जन ठहेरे पंडित आन भक्त ओर ज्ञानी ।
कारख कारन ग्रास विवर्जित ता पर की बीरला दे[3] निशानी ।
भोरय के भ्रम भसे जन सारे पानी के पद की स्थिरय ही ठानी[4] ।
होय अखा क देश की जाने[5] आर[6] न जाने पूरान क मानी ।
नाम ॥७५॥

ज्ञाम का गहेन कमे जु वहोतेर ध्यान के धाख दुना वही सारी ।
भक्ति[7] के भ्रम भटको जुमावे[8] पण पर ब्रह्म की गस्य हे अस्य नारी[11] ।
सत्य की छुवी हे छानी[12] अहकार की ओर भई[13] हे जु भारी ।
गहन[14] छोडन एही वस्तु खडन कहत अखा जो पुकारी[15] पुकारी ।
ज्ञान ॥७६

विदवे कद कीउ हे जु पेदा[16] छद करे छसी[17] सा सब माहां
ननमी देखत[18] ममनी बोलत[19] श्रमननी सुने सबे पेहेन जे वाहां[20] ।

---

१ ठी (म बा) २ ती सो भटक टरी हे (म बा) ३ मिसी (म बा)
४ मो (म बा) ५. पंद " ठानी—पंचही स्थिति ठनी (म बा) ६ होय
जाने—होवे अखा उसी देस क खानी (म बा) ७ ओर क्या (म बा) ८ सां
(म बा) ९ मगत (म बा) १० भटके जो भमे (म बा) ११ परब्रह्म "
नारी—मवमत की गम रहत जो न्यारी (म बा) १२ सत्य की चमक छपी हे अ
छानी (म बा) १३ ओट परी (म बा) १४ ग्रहन (म बा) १५ प्रका
(म बा) १६ कीयो जन पदा (म बा) १७ करी सुषोयो (म बा) १८ देख (म
बा) १९ बोले (म बा) २० जोहां (म बा)

* छन्द-संख्या क्रमांक ७५ के अनतर निम्न-लिखित कवित्त अखा बानी[21] ।
अधिक है ।

ज्ञान अरु ध्यान समान मपाङ्गन भक्ति वैराग्य माया की ठगोरा ।
बंध का पर बह जो दिमादिन टारत नाहीं न भामर भारी ।
महद के मये हेम में पहेन कहा को भाप महि काहा व्याप सचारी ।
भई सुम की सुम मवन है न्यारी हत की सुम भखा हे म्यु मोरी ॥

ना पदते कम करे अघु पेदा' कर ना पेद करे छनु मांहां'।
आपे ही खूद'खुदा भी सु आपे नाहीं मथा इस ठांहां उस ठांहां।
बिद पे ॥७७॥

दादू मेनन ही सब मेन भेखे बेनन ही सब बोस सा बोसे'।
कानन ही सब कानईया' के मासा नहीं सब वास सा' बोसे।
ब्रह्म की ओट' सु आप सहरावे कामधरी कही ब्रह्म कू बोसे'।
मथा भेप खसारा सांई' सुम्प'' का फर कपोस कपोसे।
दादू ॥७८॥

भेप की टेक मसे पट र्दर्शन भेप नही तांहां टेक कहां' की।
टेक की टेर' घमी सु दसुनीस टेक हमारी है सु' फनांकी।
नेठ ही नेठ'' नीगम कर सोरे'' टेक छुटी तांहां मोहोत बनाकी
एसी सुम्प'' मथा गर' काना टेक गई हेम्प न बना'' की।
भेपको ॥७९॥

ग्यान की गद' चड्पा नर नीके'' तो साकन की वक चीस न माने
सुरन की सह पावम टुटे चोषमता मा बाठ डोलाव''।
इन्द्र ब्रह्मा कुं तो रच से दसत'' आरन की कोहो कोन चलाव
चैतन्य नीप्प'' के मामी मथा काहा स्वान सगास के भोग को खावे''।
ग्यान ॥८०॥

---

१ नापेदचे केद कर्माचव पेदा (अ बा) २ करत कोई काहां (अ बा) ३ तुंलारी (अ बा) ४ आकु—यो बोमे—आक मैन नहीं सब मेन ही देखे मैन नहीं सब बोले सो बामी (अ बा। ५ करन ही बाके (अ बा) ६ तो (अ बा) ७ व्याम की ओटे (अ बा) ८ नरर्ग्ई (अ बा) ९ व्योम नीको मे (अ बा), १० मांईयां (अ बा) ११ सुभ १२ किनाकी (अ बा) १३ टेर (अ बा) १४ तो हेजा (अ बा) १५ मेति केठि कर (अ बा) १६ पहां रहे (अ बा) १७ सूम (अ बा) १८ बर (अ बा) १९ है तिसौं दिनाती (अ बा) २० ग्यान पर्यत (अ बा) २१ नीकेमें (अ बा) २२ स्यु बर की नहीं पहाड़ न टूटव चोप बनेक करी को बाव (अ बा) २३ चिमलता को र को देवन (अ बा) २४ मिथ (अ बा) २५ गुपाल मधाहुं (अ बा)।

जीव रीझे अरु खीजे तो काहा हे युग्य गये मेरो कानु छिटेगा' ।
ज्यु जल नीध्य' बुंद पड़े जु बह्रोतेरी काहा बुंद के जार उध्यान चढ़ेगो ।
दिनकर' दीप दिखाव को मुरख दीप बीना कहा रथ अडगो
अखा चडाउ काहा माउ मु तारे' साही तीरेगो जे' नाव चढ़गा ।

जीव ॥८१॥

सठ' कहो कोई, भड कहो पाखड कहा कोई कहो भीखारी ।
सजन कहो, दुरिजन कहो चोर कहो कोई कहो ब्रह्मचारी ।
कोउ' को पाम टके नहो ताहा' जाहा आये कीनी मखेजु पधारी ।
जीनु देख्यो जैसे तीनु तैसो धायो खोहोत रहे जु" धीचारी वीचारी ।

सठा ॥८२॥

रेहेनी की केहनी चलाव सबे" का रेहेनी बात न बूझी" ससारा ।
जे अन कुं" परलाक उमेधा ईस लोक की आस करत सब सारा" ।
मा" मोहे भूख भवीस्य का सोया वरतमान का काल चलावन हारा ।
केहेत अखो गेबी रेहेन हमारा' ज्यो वादल तें नभ न्यारे का न्यारा ।

रेहेनी ॥८३॥

काहा रेहेनी रहु काहा केहनी कहु काहा सेहनी कहु काहा जैस का तसा'
कार' पीरो लाल भु मपेती" अभ्र गगन गेब ऐमा" का एसा ।
वपुर करीर" दुरगध पचामृत वहनी अरावत नाही अदेसा
केहेत अखा जापे" प्रगन्ट पाईमत ' धाकु कहे बाईमत" कैसे संदेसा ।

काहा ॥८४॥

---

१ बुम भये मेरो कहा को छंकेगो (म बा) २४ (म बा) ३ ज्यों रिनकर (म बा) ४ कहा दीपा बिना वाको (म बा) ५ चडाबो अखा कहाँ नावकु तारे (म बा) ६ तरैगो जोपें (म बा) ७ संड (म बा) ८ कोउ (म बा) ९ काहु को (म बा) १० टिके नहिं तहाँ सौं (म बा) ११ बहोत करेह (म बा) १२ मो (म बा) १३ बुझ (म बा) १४ जिनकुं (म बा) १५ करे म पमाय (म बा) १६ मग्न हो (म बा) १७ रहेगी हमारी (म बा) १८ कहा काहैं मा कहाँ रहणी कहुं कहाँ सहेणा महु कहेणा कहुं कहाँ जैस का तैसा (म बा) १९ मवन पवन (म बा) २० गेब मभ तमसा (म बा) २१ बाबुर करी (म बा) २२ वाकु (म बा) २३ पाइयत (म बा) २४ वाकु कहवां इत कैसा (म बा) ।

दोहा

साधारन जन काई का मथा न पावे काम ।
मथ कहो है भानो का मधु प्राकृत पावे सोय ॥८५॥
आप उदेस जैसो केहे राही वुनी की बान ।
अनत-अमंत गत्य आतमा तामे काहा समान ॥८६॥*

कबित्त

मालो[1] पेहेनु[2] म टीका बनाव सरण काहा जोत मा कोउ बयसीका[3] ।
आपा मा मदु बापन[4] मापु मे मबमाला है मेरी खुसी का ।
भीख्त म दोमक दोउ न चाहु[5] न चाहु नाम रुप व्यसी[6] का ।
है नाही की सख्य अथा की आतमा म ठोर उसी का[7] ।
माया ॥८७॥

सुपना की बरत बकत मन सारे जाग्रत की बतीयाँ कछु मोरे ।
सुरज कु[8] भरी मांझ[9] बधरे देखावनी[10] कु बन रहत[11] बटोरे ।
तरनी की द्रष्ट कीमा बम ते तम[12] तब पेस को तेसे मम्य ठोरे ।
एसे ग्यान के आगे अग्यान अथा बैठे नागो काहा कु पहेन काहा कु नीचोरे[13] ।
सुपना ॥८८॥

चन्द राहु गस्य है जीव सीव की चन्द राहा कु ज्यूं[14] देत देखाई
भिन्न पर राहा दृष्टि न आवत संग मीस्या बतीया माफ गाई ।
इंद्रीय तत्व तन्मात्रा चतुष्टय त मस्ती[15] की आमा सब मिलाई[16]
आत्म मे भ्रम मन[17] भूला जनि[18] काउ कोषोष मन अथा मत्य[19] पाई ।
भ्रम ॥८९॥

---

१ मासा (अ बा) २ म पेर्हे (अ बा) ३ परण म बाउ म कोउ किसी का (अ बा) ४ बापन (अ बा) ५ चाउ (अ बा) ६ किसी का (अ बा) ७ है नाही उसी का—है नहि की मम्या परी जो अथा की आतमा मैं कोई ठेर उसी का (अ बा) ८ सोपना की बरत बकत जग सारे (अ बा) ९ ज्य सुरज को (अ बा) १० माज (अ बा) ११ देखावन को (अ बा) १२ जा (अ बा) १३ जब च (अ बा) १४ मायाह पहेर माने बहाउ निचोरे (अ बा) १५ राहु कुज (अ बा) १६ चतुष्ट मा मम्नु (अ बा) १७ आसा बसो मांई (अ बा) १८ अ (अ बा) १९ जग (अ बा) २० कोषोष अबने जग जनि (अ बा)।

* छन्द-संख्या ८५ और ८६ अ बा में नहीं है।

चीत्र¹ की चसक चसके पु वसू दीपा² चित्र चितेरा ज्यु आप भया हे ।
चितेरा चतुर भले चारय ऐसी चित्र चल्यो आप में नर लाहे³ ।
चस को ओम ज्यु चद्र चपलता सहज चपल चद्र का ज्यु कह्या हे⁴ ।
चेतन की चीहीन ऐसी भलो की वे ध्यत अभ्यास⁵ मे गेब गया हे ।
चीत्र ॥९

ध्यान⁶ धरके कोन कु नीहुरे जो प्रगट खेम को आप खमईया⁷
मकठो करी करी भोग लगाउं सा प्रगट भोग को आप लखईया ।
गुन निर्गुन बीचारह⁸ करसे, का बीवक⁹ बीचार को आप करैया
दे हम¹⁰ कोमचाहा अपनी कु, ऐसो भला गई देया जु मैया¹¹ ।
ध्यान ॥९

सा ही भक्त भगवत भरुसे चटत¹² हे मर चूटा के महीयां ।
सो सत ज्ञानी रहे आप आधारा मागत नहीं प्रभुना सून्य बहीयां ।
अद्री¹³ हा अचल अरयनीथे कोटाकोट मध्य पाइयत कहीयां¹⁴ ।
मोर भलो देहे चलम के सो बांही मन जाचा न माने का दोपी चकईया¹⁵ ।
माही ॥९

दोहा

नीराधार को रहेन कु चीहीनत बीरसा काय ।
आप मीटयां मीजपद रहे नीराधार स्वे साय ॥९३॥*

कवित्त

ना मोही ध्यमज ध्यापार¹⁶ उपासन ना मोहि मंत्र गुरु नहा चेरा
ना मोहे रस रसायन आसत ना गोटका¹⁷ अजन देव देरा¹⁸ ।

---

१ चिम(अ का) । २ बहुतेरे (अ का) ३ को चित्त चले ओप अंग रहु हे (अ का) ४ जस को कहुयाहे—जस के पीछे क्यो चंद्र चपलता से चपल चंद्र कहा को कहो हे (अ का) ५ चित्त अचित में (अ का) ६ (अ का) ७ गहीमा (अ का) ८ निर्वैया (अ का) ९ विचारो (अ का) १० नाम काम (अ का) ११ देइया मैइया (अ का) १२ भेरत हे (अ का) १३ इंद्रिय (अ का) १४ चमत माहि कबहु कोटमध्य कोइ करे उपइयां (अ का) १५ ओर —बहुरमा—भला सबेरके मो वानन को मास माने को देनी बहइया (अ का) १६ मुंडी बनाम(अ ब) १७ गुटका (अ का) १८ देहरा (अ का)
* दम-समस्या क्रमांक ९१ 'अकामी बानी' में नहीं है ।

समरथ्य सोम की सोमी म बालू मेंहु तहमारा' के हो तुम मेरा,
एसी गेब की बा'य' परीजुं अखा की हठ पर हठ नाही सेहेजनी मेरा'।
नानी कुमानी कहे सा' तो बावर रावरी रीतकु रक काहा जाने।
ना नोहो ॥१४॥
नरपति नेक न माने न्यूनाधिक कुमत्रीया स्वभाव जु ठाने'।
घनघटा' करी गरजत मेहेरो केहुरी प्रान तजत हठमाने
एसे अखा कसपो कोई कैस मान' की गत्य गोविंद पेहेचाने।
मामकु ॥१५

दोहा

मक्ष बड़ा है मान को आप न चीहीने काय'
हुदे'' हाथ आवे नहि ताते असमावना होय ॥ १६ ॥
जुं बोहो मोल'' हीरा वन में तुरते देख्यो जाय
डरपो बटोई'' प्रत मन्य'' अखा अँधेरी रात्य ॥ १७ ॥
रेहनी'' केहनी मान की सेवक मागत जत
गुन खोकत अवगुन महा चीनत'' नाही महत ॥ १८ ॥

कवित्त

संप की नीघा'' करत पन भुइ'' सा आगत है अपने पर कुत्ता।
पूंबेरी कु सहुकुरा' करन कु मासिका निज काटे सो म्यगुवा'।
पारोसी'' की मंदिर जरावने'' मुरख आपना झूपरा'' सगाय कु सुता।
कहेत अखा कबुधी मर जेता'' ओर अधीन कु आप मू'' मूता।
सत की ॥१९॥

---

१ तमारा (अ बा) २ बाग (अ ब) ३ मर मेरा (अ बा) ४ मोह (अ बा) ५ तुमको जिया जा तुमाव ही ठाने (अ बा) ६ ज्यां (अ बा) ७ मान की (अ बा) ८ मानी को (अ बा) ९ असा न चीहीनत काय (अ बा) १० हारद (अ बा) ११ मार्मी (अ बा) १२ ज्या बहुमुमी (अ बा) १३ बटाउ ...टी मा भार बिगुना (अ बा) १४ म्य (अ बा) १५ आगत (अ बा) १६ जिन्ग (अ बा) १७ भय (अ बा) १८ परीतु मांग (अ बा) १९ ... (अ बा) २ पुंप ममाव (अ बा) २० ज्यों पारागोको (अ बा) २१ आरके ... २३ जगे (अ बा) २४ मे (अ बा)

नंदिक' नेक नाराण' न आगत ठानत है ओगुन मुख नीदा ।
काक' कुकर पुरीष' बराबर अतर सहेज सुभाव का गदा ।
सु दर सर मध्य नाहावत नांही खर' मंजन' छार भीनेते आनंदा ।
केहेत अखो सत' सग न सागत कबुधी कुदास नर मत्य का मदा ।
नंदिक ॥१०

ससि का बाण साग्यो सब के तन मारी मीनो' सब माया माहेडी' ।
मारे है मचक सराता'' सबे का ज्यु सरवर फल प्यार'' पवेडे ।
ज्यू बीछुआ बनमें बहु मालक एही'' अपत्य तन बाका उघडे ।
केहेत अखा बेठ महा मस्खे सा मतन कु मामा नही छडे ।
ससि ॥१०

राम ही राम जपे सा हीरा मन'' नाम जप'' नित्य सा स्याम सुदर ।
स्यामनी सुरत भसी सुरलोक प तार्ले फीरे'' गिरि सवत कदर ।
उसट फिरयो' नर निज उर अंतर काटि कसा गवि पावे सो पवर ।
केहेत अखा गुरुज्ञानी स वे बीन राम न जान जाप दख यतदर'' ।
राम ही ।१०

देखत सब अंजन मान निरञ्जन'' रजन मन का बहुत बहाया'' ।
सात भया मही भव को भजन नाम पुरजन मान्य'' बहायो ।
मजन'' माहे म सद्गुरु बहाग भजन माटी मीनी मीसी नाया ।
कहेते अखा जहां नहि स्वर व्यजन सा माबन वाचा का हाम न आयो ।
देखेत ॥१०

---

१ निदक (ब बा) २ मारायण (ब बा) ३ काग (ब बा) ४ कुकर मार्जा विष्ठा (ब बा) ५ खर नही महावत (ब बा) ६ मदन (ब बा) ७ सत (ब बा) ८ लम्पा (ब बा), ९ मारमिये (ब बा) १० मा (ब बा) ११ पाड़ा (ब बा) १२ दार (ब बा) १३ माछी (ब बा) १४ मंडनिकु (ब बा) १५ सो राम है (ब बा) १६ यह (ब बा) १७ फर्यो (ब बा) १८ मन उलट फर्यो (ब बा) १९ पावे का देखे पर (ब बा) २० रंजन (ब बा) २१ बाहेते बाहायो (ब बा) २२ माम (ब बा) २३ मंजन (ब बा) २४ मती मसी (ब बा) ।

दोहा

मन की सूरत है सामनी रहेत पख कु राम ।
केहेत अखो गुण रंजन मान किम्यो आराम × ॥ १०४ ॥

कवित्त

मार राम रमेजु[1] रमावस सत्य कहु हु सुहाई पिता की
चेतन रूप चराचर चलकत माय[2] नीरखे मनख्रत छता की ।
ज्याहां उद्योत भया है अचानक सा बर सभा पराधीत[3] ताकी
केहेत अखा एसा वेद वचन है भोर काम बसावे[4] मन मता की ॥
अपेही ॥१०५॥

राम नहीं जु नावान[5] अनुपे राम नहीं जु अयान[6] खेसबना ।
गावन गावन ते[7] राम न रीझत राम नहीं पानी पाहांन मसाबना ।
आश्रम वर्ण भरोसे को मुदु[9] कपी कसा रस करत केसबना ।
केहेत अखा मृगबारी अकारखे मानत है हम गग सीसबना[10] ॥
राम ॥१०६॥

गावने में[11] गिरिराज रीझावत तान ते पथर[12] का भरे पानी ।
पंडित त प्रजापति[13] पुसकत सरस्वती सुनत ही भात सरानी[14] ।
सिध्यते सूर सोम नरास सार,[15] मोर ब्रह्मांड करत उर मानी ।
केहू अखा बीन आप पहेचान्य मानु सुपने की सख्मी सत्य मामी[16] ॥
गावन ॥१०७॥

नीराधार रहे सबका सा आधार आधार रहे साधु है[17] दीयरा ।
कृतिम[18] वस्तु तेल पुट[19] बाती बयार सें डरपत है[20] दीयरा ।

१ आप ही राम रमे यो (अ बा) २ मानीमता (अ बा) ३ मरकुं ताता है पराधीत (अ बा) ४ मोर कु बसावे जो (अ बा) ५ न रीझे वा बान (अ बा) ६ न रीझे अयान (अ बा) ७ मे (अ बा) ८ न रीझे (अ बा) ९ मुसी (अ बा) १० मसबना (अ बा) ११ जो गावन में (अ बा) १२ तामर्थे पमृपर (अ बा) १३ पंडित सा परजापति (अ बा) १४ सरस्वती सुनते ही जोन मेरानी (अ बा) १५ सिधी पें सुर सुपनकों पधारे (अ बा.) १६ माना स्वप्न की सख्मी सत्य मानी (अ बा) १७ तो (अ बा) १८ कृत्रिम (अ बा) १९ पुठ (अ बा) २० रहे (अ बा)।

× यह दोहा अ बा में छप्पय १०५ के बाद आता है।

आरम भर्क जतन बोन मसकत कोटि सुधाकर सु मीमरा ।
केहेत अखा स्वीस्य' भई लगना की' जाहां वीराभत द गीअरा' ॥
नीराधार ॥१०८॥

दोहा

अब कहुँ परब्रह्म पोवका ' बीस्व वस्तु का' मेव ।
रूप अरूपी हीं' रमे बीगस' दुरलभ देव ॥ १०९ ॥
हे अगस मध्य जगदीश के न्यारो नीरंजन साव ।
ज्यु अर्णव मध्य बुदबुदा, केहेत अखा वहुभाव ॥ ११०॥

स्वेत में स्वेत सो राम, नीला पीरो लाल स्याम
मिथिस अनंत नाम, आपको धरात हे ।
जडमें जड केहे चेहेन चेतनु चेतन, वेन
आपको स्वरूप एन, न्यारो रह्या जात है ।
समय तेरो ही सन्य, कारन पमग गन्य,
सोखत पोखत नीरय दुर से आभात है ।
केहेत अखो भोचार रेहेत परपच पार,
आप ही आपो समाग कसे के दुरात हे ।
स्वत में ॥१११

स्फुरी हे केवल मस्त, जाको उद नांही अस्त,
जान के भयो हे स्वस्त अलक्षलक्ष ब्रह्म को ।
आपको चेतन नीज सारीखो मसक गज
उमस्यो रकमें अज खेल नाही कर्म को ।
जाही की जेसो हे भाव ताही को तेसो हे स्यास,
काग बगअ ममाल, पासा नही धर्म को ।

---

१ स्थिति (अ बा) २ तजां को (अ बा) ३ जिपरा (अ बा)
४ पीठ (अ बा) ५ वस्तु विरव का (अ बा) ६ नही रमे (अ बा)
७ ज पगत (अ बा)

* छंद-संख्या के अनन्तर 'अखानो वाचा' म यह दोहा अधिक है और इसी के अनन्तर अ बा में निम्न-लिखित दोहे के साथ संवप्रिय समाप्त हो जाती है—
सर्वाङ्गी प्रकरम कह्या कवित चोरासी बोल ।
दीप कह्या मध्य दोहरा कोई जानी देवे बाज ॥

अखा नाही नाद बिंद प्रगट पुनम चंद
आये ही आनंद कद राय पद पर्म को ॥
अत्य ही रामनी राट ताही ते भया बेराग
स्फुरी है ॥११२॥
पवन की एही ठाठ महस चौद लोक को।
देवता यक्ष कीनर नाग ही पनग नर
दानव चर अचर ठाठ यह लोक को।
अवप जैस वयार गोमुख भयो सुचार
राग तान नही पार चलो मध्य मोप को।
स्यु पारब्रह्म है अनुप साक्षय भयो स्वरूप
अकस कला अनूप पोपक अखा धोपका ॥
ऐसो ह अकमवाप काहु के न आप हाप
अत्य ही ॥११३॥
काम माया कम साप मोजना जगत की।
चसत एसे ही खल मांनु नीर डार्‌यो तेस
टको-सीसी गास वेस सहज में वीगत्य की।
आप ज्यु को त्यु विरज आमोलिक तेज पुज
विश्व के कुटीर मूज रेत काहा रगत को।
अत्य तें नाही की आम्य न्यारी सी चस है बाम्य
आवेजे अखा समान को चलावे मुक्त को ॥
ऐस ही ॥११४॥
कोउ कहे सीना अवतार काउ कहे परपच पार
कोउ कहे कम है सार कीये च मुक्ति पाईये।
कोउ कहे साधिये योग कोउ कहे भोगीये भोग
कोउ कहे भक्ति अमाप छोडमां माहा जाईये।
...ही कल्पना कोटय बाधत आकाश माट
रेह न सक काया काट भावना भाराईये।
...अखा स्व आप नाही का मकम अपार
मणस्यंगी अनुभ अमाप आपकी सहुराई ह।
काउ कहे ॥११५॥

प्रगट प्रभु प्रमाम जसे चद्र जैसे भान
हाथ को ककन आव आरसी न चाहीये ।
आपको स्वरूप भूल करत दीपे की सूल
जैसे ही मनी अमूल काच में वेकाहीये ॥
पर्यो है कम के बस माया ने कीनो ग्रस
काल नीरय मारे कस अज्ञान नीद आई है ।
आरम गुरु दयाल ज्ञान को दखायो चाल
जैसा का तसो नीहाल अब नीध्य पाई है ।
प्रगट ॥११६

अनभेज्यु चल्यो अगम । जाहा मव की नाही गम्य । आपोपो नाही उरमा
सेहेज स्योस्य ताही में प्राण । ज्ञाम का जेहे ही ज्ञाम । मानको नही हे मात
नाचत गहेराई में उढते नहीहे उर्ढ ।वर्ढते जेहा हे वढ । आपो वाह्य नाही मध्य
मान मध्य दरियाह में । केहेते भयो महावाक्य । देखे जे सब कृतावय
जैसे ही नाव की काग उडका फीरी आव ताहीम
अनुभ ॥११७

एसा हे ज्ञानी को ज्ञान, विधि ने नीर्मा नही आन
जाही को कोना सयान टोक सके को ज्ञान में ।
जस यागी साध काया, खेचरी करे उपाय
तैसी गत पपी प्राय, छाना के अयान में ।
पडीत साव सोमक, वाद का करे तरक,
ज्ञान की सहेज की वक, जैस तेज भान में ।
केहेत भखा जीव की माम चाम के चलाव दाम
एसो सा नाही आ राम आवे मन के मान में ।
एनो है ॥११८

नान को अलख लक्ष, नाहे स्वामी नाहे सीष्य,
जैसे ही न चाहे पक्ष सिघ मन वेमरा ।
गुर सत सीध आज साथ धीरा नाही काज,
ना पीर ताही मनाज मृग को नर स्वरी ।
देवना देवी आराध पिंगल न व्याकरण साध्य
अगम गावे अगाध्य जाहो माया नाही ईश्वरी ।

नाही का रीझव काज्य जैस वृथा मन गाज,
जाने कोई ग्यान राज अषा की जपेसरी ।
ग्यान का ॥११६॥

ताम आने राम रस बीहीन जे पैनरदस,
ताहीते अतीत त्यज जाम रहे आनंद में ।
जाही का हे नाम रूप ताही तें न्यारो अनूप
आप अधिष्ठान भूप अप्पनी जैसे नद में ।
नीस गय से नीराम बाकु नहीं कर्मकाम
ताही दे पुन का वास कल्पत हे ग्रद में ।
आपको कीना अभ्यास अघट घटामे तास
अषा ए माया की वास डारत है फद में ।
ताम जो ॥१२०॥

व्यापक ऐसे ही ब्रह्म आन नाही काम कर्म
उतपति स्थिति का धर्म सेहेज माहे होत है ।
अधि की मे हे ब्रह्म मेस अल्प सल्प वेस
आपको आनंद मेस अर्क ज्यु उदोत है ।
ताही का नीयता कोट कल्पत मन की तोर,
सत्य का सेहज की ठार वाक्य जैसे भाष है ।
केहत अषा ह आप जहाँ जैस त्यैस्या व्याप
अार मायाका मीथ्या आलाप मन गात रोत है ।
व्यापक ॥१२१॥

उर मान समाम आठ मते आठ एक ग्यान सा महुवा आवे मतर यारे ।
म मही म मही ताही सदा हरी जैनु बीन बम क मेहम समारे ।
आव ही आप रख्या फुनी फासी ता तु का ह मध्य कहरे सोनारे ।
जस ही यस मग हाम घाया नमा हर मध्य राम सना रे ।
उर म्राम ॥१२२॥

कोटी प्रह्म मय पाकर हारे मूर मामी म रटे नर केहे ।
सिर पर दुम ग्रमी नीकस मस्त माधार प्रान जाम रहते ।

कृत्य के साध्य जोपे हरि होत तो काम के सीण सबे पाव
कहत अखा गुन को नही सांभ्रथ आप टरेत तुरी पद
कोटी ॥१

पारब्रह्म कैसे को पेहेचाने बोध्य परी हे मीथ्या दृष्ट म
मीथ्या पदारथ सत्य सा मानत सत्य आप ममता भई व
दृष्ट ओर सुक्ष्म पदारथ जदो सा सब माई वही ओर ह
केहे अखो एही मन को समुन, मन मुअ पछो रत्य कर
पारब्रह्म ॥१

ज्ञानी मीसे ते अज्ञानी रहे नर एही अचंभो बडो है माया
सुरज बेन प्रकास सबन कुं अलुक अंध सो दोष काया
गंगा के कंठ तीरस्या रहे चातुक, पावत सा दुख हठ माया
केहेत अखो दृष्ट कृपा बीना काहा जोपे वासी भयो सुर-तरु छाया
ज्ञानी मीसे ॥१

जागत स्वप्न टटोरे मते मन आप खोय कोठी का दा मत
दरपन पटके मत नामाभोध जुनती सुनी सासा मोहो
गुरु गमते गरकाउ करीभीख, जन मन संग बकवाद कुं
केहेत अखा सत्य आप तेसो सब, अनुभेकी कसौटी सुं कथन
जागत ॥

अनाम अरूप अगाध असंग, ज्या मध्य नही मन वाच
शुन्य सुभाउ अकार त्रीगुण तत्व कांहां से भई असामा अ
जोपे एक कहुं दुजा प्रगट पाईयत कैसे दोय कहु एक बोमे
केहेत अखा सा अगाध्य परमपद एकः दाके हेत हास
अनाम ॥१

नाद न बिंद बिस्तार न माया ज्युं का त्यु परब्रह्म अ
ताहे माय ईछा कर माया मागी कछु आप माया बीन माहीक
वस्तुकी काहावे मथा की है ईछा, केयुं एसे बिचार कहेयु ज्ञं
केहत अखा मीन मा बेठावे सोहे परम गुरु वासे म
नादन बिंद ॥

जोपे कहुँ परब्रह्म कु इछा त तो अपूरनता ताहे आवे।
जोपे कहुँ अजा मागी अचानक तो जीव को साम्यता दी कैसे आवे।
जोपे कहुँ लीला आप अकेली नाना रंग-ढंग रहीजु देखावे।
कहे अखो सबै द्वैत होतु है एकमेव बेद वचन बतावे।
जोपे ॥१२९॥

इछा प्रमान करे सो सुमाया वस्तु बिचार कीयां ताहे झुठी।
मुठ की सीग कही तो काहा कहीये अंग बीना बेठी काहा उठी।
मान भय माता सोधु माया द्वैत निर्द्वंद सा सुमु की तुटी।
केहेत अखो अवाच्य आपे वस्तु बेजावेण बीना परी गंठी।
इछा ॥१३०॥

पांच पचीस पचास पंचा तु, चौरासी कोटि कसप जीव कबे कोउ।
किघु जात तम सो किघु गर्भ गिरयो समान सबे सत्य जानी जसोउ।
आपन टार्‌यो न राम बिचार्‌यो नरबर नैक गनो मम दोउ।
केहेत अखो बीन राम पेहेचान्या ढहेकानो सबे रन राम कोइ होउ।
पांच ॥१३१॥

जगत भये तबके परबत तो काहा कछु साध्यो असख्य जीयेते।
तीन पंचास जीउ आपे कोउ, साहु न चेत्या रंच हीयेते।
नर सूर होय बस्या अमरापुर भुगत्यो विषे रस जन्म कीयेसे।
केहेत अखो हृदे राम जामे बीन पसो अब डुप हाथ्य दीयेते।
जगत ॥१३२॥

नर सुर बानर अजा उष्टर खर देह की भार सरीख ल सारे।
आहार निद्रा भय मैथुन मांयनी छाना खसाखस नाही सज्यारे।
पुरुष पसु से चीन नाही रच आपे राम पहेचाने न न्यारे।
कहेत अखा चिन ध नन देखो सो सत्य नाम र राम रख्यार।
नर सुर ॥१३३॥

चपल चपल चाउ चीरनिया डोठतु भाव पराई टमोरी।
भार सबनगु वर मथनु फाग भ्रम गटाउ हुनिरय त हारी।
मत्स को शाप नचा मुष भाव जस धावत नरक मधारी।
कहेत अखा हरिचरण बिमुख नर, मिस गये स्वानसुकर खर टारी।
चपल ॥१३४॥

जैसे सोहो मुकाय रह्योमी नाव के अंतर होयन राजे।
समुक धीरी को बयार सम्यो तव तव सारनहार कु छाडके भाजे।
सुं अज्ञानीन रहेत ज्ञान मता मे, कर्म कथाकु सुनेते विराजे।
कहत अखो मायाकीने नपुंसक सा ज्ञान खड्ग बांध कोन काजे।

जसे ॥१३४॥

सोव्रम की समसेर समारी, कीधु कधीर कीनी मलधारा।
छोटी सी छुरीका होत सोहे की पलमें सो टूक करे वहु न्यारा।
तसे पडित बाद वदे श्रु वही विष्य, जो सु न आवे तत्व वीचारा।
केहेत अखो उमग्यो अनुभे जल, तब कागद चित्र का काहा इतबारा।

सोव्रम ॥१३५॥

काहा करे कोई करता गत्य न्यारी, कुष्ण हनु परसक ना आयो।
सीता की सुध्य लीनी भक न्यारी, छोहु तेलक छोटा से बाड न पायो।
राम सो स्वामी हनु सो प्राक्रम रीछ की ठोर मुख स्याम करायो।
तसे अखा गुरु ज्ञानी मीलेते, भाग्य हीन भवसत्र न मायो।

काहा करे॥१३६॥

दोहा

देखा देख कथनी कथ ठहेराउ नही गुरु लक्षका।
चाल्य चकोर की देखके, क्यु अग्निकु लागी मक्षका॥१३६॥
उलटा आप खोयो गया, चाहा राख्या था भक्षका।
केहेत अखो पीने भये क्यु चन्द्रमा कृष्न पक्ष का॥१३७॥

इति श्री अखा स्वामी विरचितं संतप्रिया ग्रंथ सम्पूरणम्॥ समाप्तम॥

☆

साखियाँ

साखी

गुरु अंग

सब कोई पूछन' सुन' अखा' कोन गुरू तेरा पंथ ।
कोन घर मे बोलियां' के ईस्वर के अंत ॥१॥
गुरु मेरा पुरुष बोलता त्रीगुण' के सिर पंथ' ।
निरालम्ब' घर मेरडा मैं नही ईस्वर नहीं अंत ॥२॥
गुरु मेरा समरा भर्‌या सब नांमु' देवे बोल ।
सब नेनु" देखे" गुरु" बेकीमत्य" अमोल ॥३॥
नां होना" नां" होयगा" अजरायल गुरुदेव ।
स्थावर जंगम सब अखा" करे गुरु की सेव ॥४॥
अपना नाम गुरु मूघ' दिया" सब म" रहे हम दोन ।
नख-सिख" व्यापक गुरु अखा सो भासा" जपे सो काम ॥५॥



१ पुछन (फा मु), २ सुण (सा) ३ अया (फा मु) ४ बोलिया (मा) बोलीयां (फ) बोलीयां (गु) ५ त्रीगम (गु) ६ त्रिगुण के मीर पंथ (फा) सर्वातीत है पंथ (सा) ७ निरंतर (मा) नोरालम्ब (गु) ८ ना ईश्वर ना अंत (मा) ९ नांमु (फा) नामु (मु) नांमुं (सा) १० नेन (फा) नन (मु) नैनु (सा) ११ देप (फा मु) १२ अम्मा (सा) १३ बेकीमत (सा) बेकीमत (मु) १४ ना होणा (मा) १५ ना (फा मा) न (मु) १६ हो गया (सा) १७ आपा (फा मु) १८ मुझ (सा) १९ दीया (फा मु) २० ना (सा मु) २१ नखशीख (फा मु) २२ जपा (फा मु), ।

२

आत्मज्ञान का अंग'

आत्मज्ञान उपज्या बिना माया मांगी' सांच ।
ज्यों निरधन की मारो भखा सखी कबीरा' कांच ॥ १ ॥

आत्मज्ञान न उपज्या तो गुन उपज क्या होय ।
नवसत तारा तें' भखा दिनकर कहै न कोय ॥ २ ॥

आत्मराम न ओलख्या जे था अपने पास ।
हीरा ही सब पारख्या पन अफल गया चुवास' ॥ ३ ॥

हिरदे' हरि हिलमिल रह्या पन पटु दे देखै नाहिं' ।
एक मही को दस' नहीं पी' भखा जुग बेहांहि'' ॥ ४ ॥

चतुर दखै चतुराई मा और मूढ पखै दख मूढ ।
गोनु'' पावै'' उड़े भखा तब प्रकटे पावक मूढ ॥ ५ ॥

तन उजसे' धन उजला और उजल कपड़े अंग ।
एक मन मैल सब मल'' भया जो उज्जल न मिला हरि संग'' ॥ ६ ॥

उजल उजल'' महि' भखा और मैला सो मैला मांय'' ।
उजल घर कहा कीजिए कासी'' तो भी गाय'' ॥ ७ ॥

---

१ चेतना अंग (ना) २ मांगी (का सा) मांगी (पु) ३ कबीरा (का) कबीरा (पु ना.) ४ तें (का) तें (पु सा) ५. चुवास (पु) बवास (सा) ६ हीरदे (का) हिरदे (पु सा) ७ पड़दे (पु) परदे (सा) ८. नाहि (का) नाहिं (पु ना.) ९. दस (पु) दस (सा) दीस (का) १० मु (मी) भी (का पु) ११ नहीं बाव (सा) बेहाई (पु) १२ ए गोनु (सा) ए गमु (पु) १३ लाव (सा) लाल (पु), १४ उजाल (सा) १५ मल (ना) १६ जब न मिल्या उज्जल हरि संग (सा) १७ उज्जल उज्जल (सा) १८. नहीं (ना) १९. नांहि (सा) नाहै (का) २० कासी (सा) २१ नाये (का), नाद (सा) ।

एक मैसा भी उजला अखा ओ क्रिपा' करे जगदीस ।
मृगमद का कुस रग कहा सो हि' चढ़ाया' सीस' ॥ ८ ॥
न्याय करि जाने बहु नर नमे' और राग रग के माण' ।
पण आतम अनुभे बीन अखा' ए' गुण सो कंठे पापाण' ॥ ९ ॥
डाहापण' भोलापण अखा हरि आगे थोऊ'' ओट ।
सो सदगुरु का बालका पे डाइ चल्या वो कोट ॥ १० ॥
अटपटी'' समझे वो अखा सो'' सब छूटे'' छद'' ।
उलट कटारी मारते कहा वे'' ससकर'' बध ॥ ११ ॥
कामसूत' का स'' किया हाड चरम' औ मांस ।
ताकू मूरख कहे अखा हम उत्तम हम खास ॥ १२ ॥
एक मसाला है अखा स्वान स्वपच ओ'' गाय'' ।
एक ठौर उपजे मरे मूरख मरम न पाय'' ॥ १३ ॥
कुम मोहोटा कीरत बडी मन मोहोटा तन स्थूल ।
एक अखा'' अनुभव घटा'' साथे'' सब घुसे धूल ॥ १४ ॥
वे मयादे'' मोहोटा भया ज्यौं फूली मृत'' काय ।
तब'' मोहोटा' दीसे'' अखा'' अंते विनसी जाय ॥ १५ ॥



१ कृपा (सा) २ सो (सा) ३ चढ़ाई (सा) ४ सीप (मा)
५. न्याय— —नमे न्याये (फा) न्याय कर जाने नर नमे (सा) ६ बान
(फ), ७ पन — अखा—आतमज्ञान बिना अखा (सा) ८ सब (सा)
९ पहाण (सा) १० डहापण (सा) ११ वा (सा) १२ ए (सा)
१३ तो (मा) १४ छुटे (फा) १५. बंध (सा) १६ कहावे (मा)
१७ तिरकस (सा) १८ ए (मा) १९. कानु (सा) २० चम (सा)
२१ बहु (सा) २२ गाये (फा) २३ पाय (फा) २४ हरि (सा)
२५ चट्या (सा) २६ तासें (मा) २७ मायातें (मा) २८ मतक (मा)
२९. तन (सा) ३० म्होटाता (सा) ३१ वनिये (सा), ३२ पन (सा) ।

६

सूक्ष्म' अंग

सूक्ष्म मसी है' पुरुष' कू मक्ता नहीं भटकाउ ।
काया सांई के वहे गहेन मया गरकाउ ॥१॥
समझे ते सीतल भया सून्मा बेघन पाय ।
मक्ता भरोसी तब हुआ मखे सा पच्य पच्य' जाय ॥२॥
सांई से हेसा' चाहि वूं जिस घट आई सूक्ष्म ।
सीरवा सुन्या मवरे पखपा मक्ता मागी मसूक्ष्म' ॥३॥
मधर बासु सा सूक्ष्म है कांई भेद मंदे मन ।
मौर मक्ता करत' फिरे रूप पर पठन'' ॥४॥
वह अनुभे क सब्द'' क मे कांई वायन हार'' ।
सो नर सेवठे हरि मिल जावे मन में भार ॥५॥
रतनागर' मीघ्य'' वद रतन मन्ना न आवे हाथ ।
अनुभव''पुरुष सागर ज्यांहां त्यांहां प्रगट मिले प्राणनाथ ॥६॥
सुपने का साथी'' नहीं मीर पंखी कू नहीं छाह' ।
मानी कू महुवा नहीं सरीर कूं सहेज निबाह'' ॥७॥
सेहेज निबाहो होत है, देव नर नाय सब लोक ।
मक्ता कोई जागत अनुभवी सिर'' ले न करत सोच ॥८॥



---

१ सूक्ष्म (क) २ गहे (फा) ३ स्वकु (फा) ४ समज्या (ता) ५ जब (ता) ६ पचपचि (क) ७ मेखा (मा) ८ पशा (फा), ९. मक्ता जाय मागी सुक्ष्म (फा) १ करत्य (फा) ११ ज्यतन (फा) १२ सम्द (पु) १३ मोर्जनिहार (मा) १४ रत्नाकर (मा) १५ बिन (मा) बीन (पु) १६ अनुभवी (मा) १७ साखी (पु) (१८) छाहे (फा) छहाय (पु) साया (मा) १९ निबाहे (फा) बाह (पु) निर्वाह (ता) २० सीर (फा) ।

अनभे[1] अंग

अखा अनुभवी गुरु भला, आडंबर गुरु माहिं[2] ।
हीरा टांक के मूम[3] कु, मणका फटिक[4] न पाये[5] ॥१॥
रष्यकर[6] बड़ा रसायनी सता[7] बड़ो राजन ।
मैरासी[8] साधन बड़ा अखा अनुभे बड़ा ज्ञान ॥२॥
आतमज्ञानी गुरु भला समस्त उतारपत पार ।
ज्ञान बिना मा[9] गुरु अखा सत[10] पापत[11] ससार ॥३॥
बड़ ब्यासी का ब्यास है अखा डर[12] नहीं कीन ।
नीरम नीरस्य[13] रगबंग मबनबा, ऐसा कवी प्रवीन ॥४॥
जैसा सांईयां आप है ऐसा कम्या न आम[14] ।
अखा उसकी[15] बानगी रष रसना पर भाय[16] ॥५॥
पूरन[17] में टिकते[18] नहीं अखा सुष्य के पाउ ।
गीर परे बाहोक[19] चढ़े लागा मनकु चाव[20] ॥६॥



---

१ गुर (फा) गुर को (गु) २ माहे (फा), मोहि (सा) ३ मुम (फा पु) मोम (सा) ४ फटीक (फा गु) स्फटिक (सा) ५ पाय (गु) ६ रीष्यकर (पु) रिद्धिकर (सा) ७ सता (फा) ८ मीरा (पु) ९ मा (मा) १० मरय (पु मा) ११ भापे (सा) १२ भोर (गु) भौर (सा) १३ निरमित (सा) १४ आमे (फा) १५ उनकी (सा गु) १६ भाये (फा) १७ पुरन (फा पु) १८ टीकते (फा पु) टिके (मा) १९ बोहार (गु) बोहरू (सा) २० चाहो (फा) ।

५

अवगत अंग

अदबद मेरा साईं है, साहा' निरतर' साव' ।
मोहामा' माहोटा' ताहे में अखा मात गरकाव ॥१॥
अदबद आसे' नहीं हुआ, त्यूं सूं' दस अवतार ।
अखा अगाध के मध कूं तीर नहीं वार पार ॥२॥
अदबद सूं एकता भई तब आप न देखत' और ।
त्यों सुं ध'' ध्याता अखा ज्यों सु ममका दोर ॥३॥
अदबद ज्यू का त्यूंई है, अखा गुरु गम्मे'' देख्य ।
सब अवतार सीसा वपु,'' दस चौबीस का'' मेष ॥४॥
अदबद मार्नद बसत है आद अंत बिन' नाट ।
ता माग को कहे अखा ज्यांहा खोजी खोज'' न बाट ॥५॥
सप्तदीप समेत भर,'' अदबद में कण'' रज ।
अखा मन की गमता मध्ये पूरन' नहीं समझ ॥६॥
पूरण में आसे'' मिल्या' सब भयो तदरूप ।
अखा' काम हतगई'' है समसो भया स्वरूप'' ॥७॥
अदबद उसका'' आपमें, सेहज समाय्या'' आप ।
अखा पूरन'' की ओर ते, रच न व्याप्या व्याप ॥८॥

---

१ सदा (सा पु) २ नीरंतर (का पु) ३ साव (सा) ४ मांमा (सा) ५ मोटा (मा) ६ मायव (सा) ७ तो स्यूं (पु) तब लमी (सा) ८ दय (सा का) ९ देखे (सा) १० ध्ये (पु) ध्येय (मा) ११ गमे (सा पु) १२ मीपु (का) १३ न्हा (सा) १४ मीन (का पु) १५ पोज (का) १६ वर (पु) १७ करण (पु) १८ पुरन (का पु) १९ मारग (मा) माते (पु) २० मोस्या (का पु) २१ मापा (पु) २२ टेला (का पु) ए तना ज (मा) २३ स्वैरूप (मा) २४ उमस्या (मा) २५ नमर बसा (पु) नबसा दया (सा) २६ पुरन (का)।

अदबद की महता अखा सदबुध्य जाने बीसास ।
ज्यु केसरी सींघ की गोंद में खेलत केसरी बास ॥ ९ ॥
अजब अदबद की सांगन्या[1] जात दसूदिस[2] गेब ।
कोटि ब्रह्माड रोम कूप में[3] अखा दस नहीं[4] एब ॥१०॥
अदबद समझया सब[5] अखा जब रहे नहीं पावनहार[6] ।
अन्बद ताहाँ[7] दूजा नहीं ज्यु का त्यु स्वे सार ॥११॥
अदबद की अगाधता रसना कहो न जाय ।
सुरत अखा तामे समे, तो रसना केमे गाय ॥१२॥
अनत कोट[9] ब्रह्मांड है अरब खरब बहु सेप ।
अदबद ओरे[10] देखते अखा न राई रेप ॥१३॥
अकबद में उलझा[11] अखा सुध्य[12] बुध्य[13] न रही मोय[14] ।
अदबद रस मग में पड्या छूटत[15] ताकी सोय[16] ॥१४॥
बेहेन[17] स्मरत[18] ज्यग[19] के अखा ए अदबद में की मांत्य[20] ।
अखा सब समेत स्वे, ज्युंका त्यु एकांत्य[21] ॥१५॥
खटदर्शन खटपट करे, तरफ वाद[22] तकरीर ।
अदबद ओरे[23] देखते[24] ज्युं तावा सवत कुटीर ॥१६॥



१ सांगना (गु) सभा (सा) २ जात दसू दिस—जाय दशा दश (सा), ३ रमकूपहूँ मे (सा) ४ की (सा) ५ मे (गु) ६ समझनहार (सा) ७ तप (गु) ८ पर्युकरी (सा) ९ कोटि (सा) १० ओरे (सा) ११ उलस्या (सा) उलग्या (गु) १२ सुध (सा) १३ बुध (सा) १४ मोय (सा) मोव (गु) १५ छूटत (गा सा गु) १६ साम (गु) १७ बन (सा) बन्हुन (गु) १८ स्मरीत (गु) स्मरित (सा) १९ जग (सा) जग (गु) २० मांत (सा) २१ एकांत (सा गु) २२ तकरार (सा) २३ अदबद ओरे—अदबद की ओरे (सा) २४ अखा (सा) ।

पूरब जनम[1] अंग

सांईयां माहे स करे, सेहेम सक्ति[2] करप मांस्य[3] ।
अमृत हलाहल ओषधी, अखा उपजे बहु भास्य[4] ॥१॥
ज्युं साहब की मौज में उपज बाहोबिधि[5] तन ।
ज्यु वन में ओषधी अखा त्यु बस्ती म जन ॥२॥
सब कोई पूरब[6] जनम का राखत है टेहेराव ।
सेहेज अखाकु वम गई, सदा की निरंतर[7] साव ॥३॥
जब उपज्या तब पेहेल का, ता आगे कछु नांहं[8] ।
तो पूरब जनम संस्कार की अखा कोन चलाय ॥४॥
मुझकुं मेया आये गया पूरब जनम संस्कार ।
सब के पूरब राम हैं अखा सो इच्छा[9] सार ॥५॥
सब कोई अटक्या अदृष्टकु कहे अदृष्ट होय सो होय ।
अदृष्ट अखा परमातमा ताकु चीन्हे[10] बीरला[11] कोय ॥६॥
अदृष्ट अखा चैतन अखा दृष्ट[12] पदारथ[13] भूत[14] ।
अदृष्ट अर्णव छोलत है सो देपोयत अदभूत[15] ॥७॥
सगुण पिंड सेहेज हुआ तब उत्यम मध्यम ओमधाप[16] ।
अखा काहा संस्कार था जब वम भुक्ता[17] रघुनाथ ॥८॥
सगुन पदारथ ऊपरे[18] ममम[19] करत है कास ।

---

१ पुरब जनम (फा) पूर्वजन्म (सा) २ सकती (फा) ३ मांस (सा) ४ भार (मा) भांप (पु) ५ बहोबीधी (पु) बहुविधि (मा) ६ पुरब (फा) ७ नीरंतर (फा पु) ८ नाहि (मा पु) नाही (फा) ९ ईच्छा (फा) १० चीन्हे चीन्ह—चोन्होने (फा) चीन्हे (मा). ११ × (सा) १२ और (सा) १३ पदाथ (फा) १४ भन (फा) १५ अदभुत (फा, १६ साम्य (सा) १७ मदच्या (मा) १८ उपरे (फा) १९. ममंत (फा.)।

ज्यु नांहीना माहोटा सबकु, अखा[1] डासावत बयास ॥९॥
मरयम सूक्ष्म[2] है अटपटी, देखा सोच विचार[3] ।
सब जीवस[4] अपने वसु, अखा सो छटपा[5] हारप ॥१०॥
सेहेज में हांसस[6] हुआ, कम दीनी करतार[7] ।
गरभ कला पाई अखा, माके आहारे[8] आहार ॥११॥

---

१ × (फा गु) २ सूक्ष्म (फा) ३ बिचार (मा) बाच्यार (फा) ४ जीवे (मा) ५ छुप्या (फा गु) ६ हांसास (फा) ७ किरतार (मा गु) ८ माहारो (फा)।

प्रत्यक्ष' अंग

का कहे राम हो सबा को कहे सब' सेमा अवतार ।
परतख राम गावे सबा ता पर मैं बलिहार ॥१॥
जे नहीं आवत' बोलका सत' उत कायां न आय ।
वसु ताही' की मोज है, दरिया समर सदाय ॥२॥
प्रथम पिउ बिलसी' राया सकल भाव महाराज ।
हु सुं कर आपे रमे सबा अनाद सो आज ॥३॥
परब्रह्म पूरो रह्या गुरुमुख ज्ञान विचार ।
सबा मायांतर है न है, अनुसे आप पुरारथ ॥४॥
सुरत रहे सभरा भरी तब सबद आमाप ।
अगस्त्य सु मागी सबा तब न माप अमाप' ॥५॥
जाग्रत सुपन सुषुपति तुरीयातें परंत ।
धी पप न कहीं की सबा आहीं त्रिगुण' की अंत ॥६॥
परा पारख कछु पेख है क्यांहां ते आपत खेहेरम'' ।
उलट फिरी'' देख' सबा रही पवन की पेरम ॥७॥
सुरत सेसामत' सांईसु निरत' सबा निरधार ।
पच मग सेसाया जे सबा सा सुमन का व्यापार ॥८॥
अंग सेसाया अंग मग लिग सेसाया थाय ।
अंग लिगत'' न्यारा सबा तहां वा दाव न हाय ॥९॥

---

१ प्रगत (स) २ पव (पा) ३ आतम (मा पु) ४ देत (पा)
५ माहो (पु) तागी (धा) ६ पीउ बीलसी (पा) ७ तब अमाप तप
बिल्या आमाप (मा) ८ सु (ता) ९ बीपुख (पा पू) १० सेर (मा पु)
११ फीरी (पा) १२ बांधे (धा) १३ सुरत सेसाया (मा) १४ मीरत
(पा पू) मुरत (मा) १५ माय (पा) ।

मंगसिग का[1] पावना, श्रीगुम भीतर का खेस ।
मखा गुणातीतकुं[2] समासत[3] सेहेम उकेस ॥१०॥
एक कूपका[4] मीर ज्युं, सकस पेड[5] पोपात ।
मीरसु मीर मिल[6] जात है, ग्रुम[7] सबे[8] गेव जात ॥११॥
नीर परपोटा[9] नीर में, सुरत्म दहदिश[10] जाय ।
मखा सुरत्य[*] उलटीं फिरी, सब पूरन पद पाय ॥१२॥
द्वैत खेस दुसाध्य है, मात्यम मनूभे[11] सेहेस ।
मखा मापकु पायतें, को दुसरा महीं गेस ॥१३॥
पीठ पुरणख[11] देखिके मो मन गयो हेराय ।
स्वप्न भोग मिथ्या मया असा जे पड़ी वसाय ॥१४॥



१ मनसंगीका (मु) २ में (सा) ३ समास ही (सा) ४ कुंप (फा) ५ पेठ (फा) ६ मिस्या (सा) ७ रेहे (सा) ८ सकस (सा) ९ पपोटा (सा) १० बहु (मु) बसों (सा) बहुदीस (फा) ११ मनुभव (सा) १२ पूरणता (फा)।

कुमति' अंग

कुमति' पारस पावे नहीं सके न शब्द संभाल ।
भीतर साच अहंकार का, अखा सो उठत' ज्वास' ॥१॥
कुमति आवत देखके सत जन मन भंग थाय ।
अखा' देख्या सर्पकु ज्युं दीपक मुरझाय ॥२॥
कुमति' न होवे अपना जो निसदिन' करे सतसंग ।
तन नमे मन ना नमे अंतर नहीं हरिरंग' ॥३॥
परतख' पीठ पाइये अखा जो सदगुरु" भेद बताय ।
जैसी" कहे एसो" गहे तो सब' वन्ना थाय" ॥४॥
नां छाहे कोई" सदगुरु मिल " मिले ' तो नहीं विश्वास" ।
जा" पथर छूटु" मिल्या " ताहे न मागत वास" ॥५॥
आपा छोड़ सुने नहीं तो ज्युं" भेठ" पाट ।
अखा अंतर भेदे नहीं हीया पथरक पाट" ॥६॥
केहेनहार में सक नहीं सुननहार में एब ।
अखा ऊपर" भुम्य में बीज बाठ" ज्यु" मेब ॥७॥

---

१ कुबुद्धि (छा) कुमति (फा) २ कुबुद्धि (सा) कुमती (पु) ... मीकसे (सा) ४ ज्वस (फा) मास (पु) मास (सा) ५ ज्युं (छा) कुमती (फा) ७ आपना (सा पु) ८ निशदीन (फा पु) ९ हरीरंग (फा ... अखा कुबुद्धि ए बम (मा) १ प्रत्यक्ष (सा) प्रतछ (पु) ११ के भेदु (सा) १२ जैसि (फा) बेमा (मा) १३ एसा (मा) १४ भव (सा) १५ माई (सा) १६ ताहिको (पु) ताहेको (सा) १७-१८ मीले मीले (फा पु) १९ बीसवास (फा ... ज्य (पु) १ पूर्ण (गा) २२ मीस्या (फा) २१ ताके होनन नहीं अखा। २३ माथा का पास (मा पु) २४ बैमे (सा) २५ बैठे (सा.) २६ हीया पाट—हीया पथर का पाट (पु) हीया पथर का पाट (मा) २७ उपर (फा पु) २८ बीज (मा.) २९. ज्युं (सा), मन (पु)।

संत सब्द अजमाम[1] है, ग्रहणहार का भाल।
ज्यु[2] तनको[3] अग्नी बड़े, बाउसो[5] कुम[6] जाय बकी हुलास ॥८॥
निरमल[7] चित[8] बिन ना ठरे अथा गुरु का ज्ञान।
ज्युं अंतर रोगी तापको,[9] बिष[10] खाकर पय पान ॥९॥
ज्यु काच मंदिर में कूकरो,[11] भूस[12] मुया[13] सिरफोर।
भिम्य भिम्य[14] देखा स्यान सब प्रतिब्याव[15] बिना बिचार[16] ॥१०॥
सो ही मदिर में नर बस्या ठोर ठोर देख्या आप।
तथा निरमल[17] जे नर ताकु आतपम ब्याप ॥११॥



१ अजमास्य (का) आजमास्य (मा) २ ज्यों (मु) ३ तनक (सा मु) ४ अग्नि (सा), ५ बाउसुं (सा) बाउसे (मु), ६ बुमि (सा) ७ नीरमल (का मु) ८ चीत (का मु) ९ तापकुं (सा) १० बीष (का) ११ कुकरो (का) १२ भसी (सा) १३ मर्यो (सा) १४ भीम्य भीन्य (का) १५ प्रतिबिंब (सा मु) 'प्रतिब्बीब (का) १६ बीचार (का मु) १७ नीरमल (का मु) निर्मल (सा)।

ससे' अग

जीवका' संसा ना मिटे' जो' होए घट दरसन का भान ।
मिथ्या' आरोपण कर अथा त्युं सत्य का होवे' मान' ॥१॥
कथरत ससा सत्य हुआ होवे हुआ फेसामो ।
ज्युं फिरवे फेर चढ़ अथा प्रथवी नटी के' पामो ॥२॥
सेहेज खेस सना पसे निराधार' निरधार'' ।
अथा आप खड़ा'' क्रिया'' कर्म थापे किरतार'' ॥३॥
ताकी'' कल्पना' सब अथा एसी चली अथाय'' ।
मिथ्या भाय । धारक प्रेरक का नहीं, ए सब मन की पीर ॥४॥
मन सुने मन कहे अथा, पोषण ताका ओर'' ।
सा'' संसा'' कैसे'' मिटे एसी चलो अनाथ ॥५॥
आप भयानक उसते'' अथा तब मागे बाद'' ।
पूत'' पिता'' के नास का मोसी'' सुपापु'' संम'' ॥६॥
त्युं अथा गानी नरा अपना है पद परम'' ॥७॥

---

१ संशय (सा) संशय (पु) २ जीवकुं (सा) ३ मीटे (प्र पु) ४ मो (प्र) ५ मीथ्या (प्र पु) ६ होई (सा) ७ बान (पु) बान (सा) ८ फीरते (प्र पु) ९ न टके (सा) न टिके (पु) १० नीराधार (प्र पु) ११ नीरधार (प्र पु) १२ आप (सा), १३ करे (सा) १४ कीरतार (सा) १५ × (सा) १६ मनसे (सा) १७ ताका (सा) १८ फीना (सा) १९ सराय (सा) २ पोषण ... और नहीं को कर्ता और (सा) २१ तो (सा) २२ सो (सा) २३ वर्ष (सा) २४ उससे (पु) २५ तब ... बार— ... पावे बाप (सा) २६ पुत (प्र पु) २७ पीता (प्र पु) (सा) ... मोसी (पु) अगा (सा) २९ त्युं पावे (सा) ३० मर्म (सा) ... अपना परम—प्रदेश पावे मर्म (सा) ।

पिता पूत सो दो नहीं, पूत पिता का तन।
एक तन का दो तन भया ऐसे[1] हरी हरगन[2] ॥८॥
परब्रह्म अरूप है[3] हरिजन है स्वरूप[4]।
स्यु[5] भया क्युं ऐक हे कहुं दृष्टांत अनूप[6] ॥९॥
चबुक[7] को सत्य[8] भया, लोहो स्यु[9] करे चेतन।
चलता थांबय[10] संग संग फिरे[11] एसे[12] रूप में अरूप के चेहेन[13] ॥१०॥
लाहो में चैतन नांही[14] था, भया सत्या[15] का भेद।
सुरत सततर[16] सांईसु, आपा भया उछद[17] ॥११॥



---

१ तैरे (गु) २ हरीजन (का गु) हरि हरिजन (सा) ३ और (सा) ४ मानी (सा) ५ सरूप (सा) ६ ते (सा) ७ एक है (सा) ८ कहु (गु) ८ अनुप (का गु) ९ चुपक (मा) १ सता (सा) ११ सु (सा) १२ थांडि (सा) १३ फोरे (का गु) १४ ×(सा) १५ चोन्ह (सा) १६ माहीथा था (का) १७ सता (सा) १८ स्वतंतर (सा) १९ उच्छेर (सा)।

सते परिहार

जीवता नर कलपी कहे, परलोक की बात बनाय ।
पल मुर्दा[1] कोई न कहे सखा सुख-दुख पंडित राय ॥१॥

ज्योग अष्टांगी ना कहे, ना कहे भक्त मलीन[2] ।
सीष्य[3] साधक ना कहे सखा नरक और स्वर्ग भोवन[4] ॥२॥

स्वर्गवासी को देव भी न कहे अपनी आय ।
चतुर गुनी कवी पंडिता, सब अबोला जाय[5] ॥३॥

सूक्ष समझ अरु चातुरी, त्यों सु[6] नरकुं होय ।
प्राण यथा परकाठ सब, सखा ज्युं का त्युं सोय ॥४॥

प्रानपती सपि है सदा सब चेतनता ताहे ।
रमाका[7] प्रऐया मन सखा कल्प कल्प सब गावे ॥५॥

मन तरग लेहेव समुद्र[8] की चपल चीत का धर्म ।
मन चित का कल्पा[9] सखा आवागमन[10] का कर्म ॥६॥

जीवत मरतक सा[11] लेहेज है सखा तत्व का भेद ।
चर्ह खाण उपज मरे कबहूं नोहे उछेद ॥७॥

ताम मन पुण्य पाप का सत बल्पी[12] सिर भार ।
आप[13] चीप सब जीव है[14] एहि[15] सखा संसार ॥८॥

---

१ मूआ (मा) २ मलम्य (मा) ३ सिद्ध (मा) ४ भुवन (मा) ५. चाई (मा) ६ सब मनी (मा), सोमु (मु) ७ ताका (मा) ताकी (मु) ८ सर्वा (मा) प्रेस्यो (मु) ९. तिबुरा (मा.) १० कल्पना (मा मु) ११ आवागमन (मा मु) १२ मृग सा (मा)—मरतक सो (मु) १३ गरल (मा), १४ आप (मा) १५ नहे (मा मु), १६ एही (मा मु)।

जो ज्यों[1] पूछ ना पूछे मनुआ आपे चेत ।
निम्रामण[2] उग्या अबा खली म[3] जांण[4] खेत ॥ ९ ॥
सब कोई मरसत[5] नींद में पंडित कवी जन जांण ।
करम करता[6] फल सत्य कहे एहि आपकी हांण ॥१०॥



---

१ जब लगी (मा) जौंपु (पु) - नींदामन (पु) निद्रामण (मा) ३४(मा), ४ जाणा (मा) ५ मरते (मा) ६ करता (पु) कर्त्ता (मा)

शब्द परीक्षा' अंग

साधो परखा शब्द का सोईमों हाथे हजूर ।
शब्द सोहागा मस्तका' अखा गेहेन करे दूर ॥ १ ॥
स्वांत बुंद सतगुरु शब्द जिससू जन सीप ।
ताहाँ आपा जस सुत नीपजे अखा शब्द कु चीप' ॥ २ ॥
कोई जानी' जामत जान ए जीमु मस लिया ऊँकार ।
शब्द एक में नीपजे' क्युं' पची मरे संसार ॥ ३ ॥
महं' शब्द जीनु परखीया, तीमु पाया है आप ।
पट छटपट करते रेहे भेद' पाया अमाप ॥ ४ ॥
जिनुं पाया थे' पावही" अब पावत है येह ।
नुकता एक है" शब्द का अखा होय बिदेह ॥ ५ ॥
असप मति केहे" दूर' है इयाँ' ता साँई हजूर ।
आट दूर हुआ वांई" का सा' पाया महबुर' ॥ ६ ॥
इस दीदे" दीदार करुम जा सु बदे तुज यार" ।
तसब विहोणा तु रहा है हजुर फिरतार ॥ ७ ॥
प्रगट पदारथ साँई है" जिसका यस विसास ।
अखा मदोरीन साँई है दरस्या धाम नीरास ॥ ८ ॥
जिसकी म उघाँई" हूं ज सामा मुज भया ।
सब नटरूप के नटक अखा आपु आप मरेश ॥ ९ ।

---

१ शब्द परिचय (मा) २ वस्तु (मा) ३ जीव (मु) (४) जानें (मा) ५ अखा (मा) ६ कउ (मा) ७ आप (मा) ८ रहे (मा मु) ९ असा (मा) १० × (मा) ११ पावहिंगे (मा) १२ एक है—है एक (मु) १३ कहे (मा) १४ दूरि (मु) १५ यहाँ (मा) १६ दुरिता (मा.मु) १७ अमा (मा) १८ मसूर (मा) १९ इस दीरे—दुई मानी (मा) २० प्यार (मा.), यार (मु), २१ इस दीरे दीदार कर (मा), २२ ओढाई (मु) ।

साईंयां खेलारी[1] खेल का कोई भेद सेंती खेल ।
और सबे खेलरूम में भेद[2] सदा है खेल ॥१०॥
बाजी मोहुत[3] बनाई है, आप खेलनहार ।
काईं भेद भेद अखा और देखे संसार ॥११॥
ससि का[4] सघार है नीरससें[5] का पीउ ।
अंतर नही इसमें अखा नाम मात्र है जीव ॥१२॥
कस माने किरतार की सो कबहू उससें[6] नाहि ।
साईंयां से समरस अखा आपा खोबे माहि ॥१३॥
स्यासी होकर देख ले, सब स्यासन[7] के स्यास ।
अखा वे नाग वसन, सोई हाम[8] वेहाम ॥१४॥
अपने सीर ने खेलीया तिन बांधाया आप ।
हीम भोवन मीरखी अखा तोहे सोच मीटत नहीं ताप[9] ॥१५॥
अखा अमरायस छाडके न करो और की आस ।
मीर मेहेर[10] ओर पावसा[11] सब उनही के[12] पास ॥१६॥



–१ खलारा (खा), खेलार (पु) २ भया (खा), ३ बोहोत (पु), बहोत (खा) ४ पथ (खा) ५. संसारी की (खा) ६ नि संसारी को (खा) ७ उसमे (खा पु), ८. स्यानी (खा पु) ९. आसिक (खा) १० सोई हीम—सो हुमे (खा) ११ तीन ताप—तिन भुवन नरपति अखा ! तोहे सोच का ताप ? (खा) १२ महर (खा) १३ पादशाह (खा), पावसा (पु) १४ उनही के—उनके है (पु) उन्ही के (खा) ।

परीक्षा अंग

कोई भेखु भेदे सखा मोहे मर्म बुझावें[1] उर[2]।
आकास, समावे फरीस[3] से सो आमण[4] है किस ठोर[5] ॥१॥
इतना[6] जाने[7] सोई सा तीनकु है आदेस।
मरन जीवन न्यारा सखा तीनके है सब भेष ॥२॥
सब भेखु खेसार ए[8] सब उनहिके नाम।
बुझे में पाइये सखा नहीं पकड़े का काम ॥३॥
पाये का परमाण ये[9] आपा खोवे माँहे।
खोये ते प्रगटे सखा आपे आप सहुराहे ॥४॥
चीन्हा[10] चाहे चीवकुं[11] तो इस बीच्य[12] आपे हाथ।
पच पाड भोमे[13] राखा करत सखा मुख बात ॥५॥
पड़ भीतर जकवत है, चेतन होय समाये।
स्थूल सूक्ष्म साखी[14] सखा दूर रहा से हैराय[15] ॥६॥
जमका है खसार ए तबका है ए खेल।
नावे घटे बढे सखा नर छांया की बेल्य[16] ॥७॥

१ बतावे (सा) २ मीर (सा) ३ फरहमें (सा) ४ आसम (पु) ५. दूर (सा), ६ एतना (सा) ७ बूझे (सा) ८ सोही (सा) ९. खेसार ए—खेला रहे (सा) १० ज (सा) ११ चीहीना (पु) १२ बीज (पु) १३ बीच (पु) १४ भोमे (सा) १५ साखी (पु) १६ से हैराय—सहराय (पु), १७ बेल (पु)।

मिश्रेक श्वेता-अग

कारज कारण दोउ नहिं कह्या न लागे भाउ ।
ता पद का जे मर अखा सो बेकीमत्य बे भाउ[1] ॥१॥
गगन अगोचर गम नही नही मन बुध्य चीत अहंकार ।
काई भेदु[2] बुझे अखा ज्यांहां करत्य नहीं किरतार ॥२॥
वे पद दूर निकट नही नहीं नीचा नही ऊँच ।
हलका भारी नही अखा आद नहीं उर[3] बीच ॥३॥
स्थुल सुक्षम कैसा[4] नहीं गरम सीत भी नाय[5] ।
चचल थीर[6] नहीं अखा कठन नरम न काय[7] ॥४॥
कल्पे जल्पे कछु नहीं[8] ईछा नही अखा मामा[9] ।
में नहीं ते नहीं वे नहीं रूप अरूप समाआ[10] ॥५॥
रक्त पीत कैसा नहीं नील नहीं स्वेत[11] स्याम ।
गम भगत[12] मांन नहीं अखा, कामना नहीं नीहकाम[13] ॥६॥
नाम ध्यान पूजा अखा सेवा नहीं कोई स्पिग[14] ।
एक अनेक सख्या नहीं बीम उठा सुभग[15] ॥७॥
बीन नेत्रा देखना बीन श्रवनु की धुय ।
बीन रसना का बोलना एकु नहीं अखा चेहन ॥८॥
जांहां[16] बांनी का उपरांम है[17] नीगम हारे करी भाउ ।
अकथ कहांनी पांन के अखा गेब गरकाउ ॥९॥

---

१ बेबाउ (का) तबे बाहु (गु) २ भेद (गु), ३ ओर (गु) ४ कैसा (गु) ५ नाहे (का गु) ६ स्थीर (का) ७ काहे (गु)। ८ कल्पे नहीं—आप नहीं इच्छा नहीं (का) ९ माव (का) माउ (गु), १० ममाव (का) ममाउ (गु) ११ शुभ्र (का) १२ भगत (का), १३ अकाम (का) नीकाम (ग) १४ सिम (का) १५ सुभंग (गु) १६ जहां (का) १७ हो (का)।

ता' घर की उत्पाई कुं परखे कोई पुमान ।
षटदरसन वेत्ता अखा न करे कोई समान' ॥१०॥
हुआ न होना अब है षेहेन नहीं ताही सेप ।
अछता साछता' अखा एसा पुरुष असप' ॥११॥
गगन मझ्धे' वेठके अघत' सरफल खाय ।
गेब' में बसे अखा संगी जम न बुझाय ॥१२॥
आठु पेहेर' एसा रहे कबहूं मोहे गमाय'' ।
जागृति'' में सुसुपती'' अखा ध्यान'' एक समाय'' ॥१३॥
सुग सारा'' हांसी भया विसे'' हुआ सब द्वंद्व ।
मुल मिटया' सनेह का' तब अखा आनंद ॥१४॥
नीज घर पाया गेब का चीत चेतन सनमुख ।
ध्याता या सोधे हुआ'' एक अखा दो रूख'' ॥१५॥
तब दृष्टांत हे जन को'' जैसा दीप रतन ।
पासा'' का बस नही'' अखा चाहे नहीं जतन ॥१६॥
कल्पतरु स्वभाव ज्यों जे चाहें सो'' देह ।
मान नहीं कोई'' बात का एसा पुरुष वीदेह ॥१७॥
आपा पर नही ता बीपे नही मान उपमान ।
नीज पद बेठा रेहे अखा आया सबे समान ॥ १८॥

★

१ ईस (सा) २ माल (प) ३ सा छता (सा) ४ मनेक (सा) ५ परपे (पु) ६ अकिन (सा) ७ बेबीसुं (सा) ८ अमम (मा) ९ पहोर (सा) पाहोर (पु) १० मसान (पु) म्यान (सा) ११ जाग्रत् मे (सा) जाग्रत् (पु) १२ सुपुपति (प सा) १३ ध्यान (सा पु) १४ समाव (सा पु) १५ जग (सा) १६ बिसय (सा) बीसे (पु) १७ मिटी (सा) मीट्या (पु) १८ की (सा) १९ ध्याता – हुआ–ध्येय ध्याता सन्मुख हुआ (सा) २० रूप (पु) २१ जुं (पु) २२ आसा (१४६) ग्वासा (मा) २३ जस नही—जतन ही (मा) २४ तिस (सा) २५ तिस (सा) ।

निष्ट[1] ज्ञान अंग

ज्ञान कथे बीत ना घटे तो सरव भोग न खाए।
चामक[2] गगा तीर का तीपा[3] कबहूँ[4] न बुझाए ॥१॥
ज्ञान कथे बीत ना घटे तो तरव न लागे भोग।
मरकट गुंजा ताप ज्यूं सीत न मेटे[5] बड़ रोग ॥२॥
ज्ञान कथे मीत ना घटे तो तरव न लागे भोग।
ज्यूं छाया मेत्रे[6] फिरी गई सो नहीं देखण जोग ॥३॥
ज्ञान कथे बीत ना घटे तो हुआ सो ऐसा नाम[8]।
धातुक्षय भोजेन अखा भखे सो अंग न लाय ॥४॥*
भक्ति भरोसे[9] भ्रमकूं[10] उपासत सबहू लोक[11]।
चेतन कूं जान नहीं व्रत मीटे नहीं सोक[12] ॥५॥
चेतन कूं जानत नहीं पादुका पूजत[13] वस्त्र।
हरि तो कहूये रेहे गया[14] सेवत[15] कागद पत्र ॥६॥
साचा सतगुरु ना मिल्या, हुआ न आप प्रकाश।
ज्यूं और[16] काई मुक्ते वृध कु[17] गो मूपाव[17] पास ॥७॥
हरि भक्ति आई नहीं आया बिष[18] और भ्रम[19]।
हीरा गमाया[20] आपमा रह्या सगडे धम[21] ॥८॥

---

१ नेष्ट ज्ञानी (सा) २ ज्यूं चातक (सा) ३ तृपा (सा) ४ कहीं (सा) ५ मीट (मु) ६ मेघुं (सा) ७ फीर (मु) फिर (सा) ८ म्याम (सा मु) ९ भरूसे (सा) १० भरम (सा) ब्रह्म(मु) ११ उपासत... सोक—ब्रह्म उपासे लोक (सा) १२ चेतनकू... सोक—चेतन की वंदना करे, दिन दिन बढ़ त्युं सोक (सा) १३ पूजे (सा) १४ हरि ...गया—हरि हीरा कहीं रह गया (मा) हरि तो कह रेहे गया (मु) १५ सेवे (मा) १६ और (सा) १७ गो मूपावे—गोमू प्यावे (सा) १८ विषय (मा), १९ मर्म (मा मु) २० खोया (सा) २१ धर्म(मु)।

* सामर महाराज के अनुसार यहाँ से मरममीत अंग का आरंभ होता है।

महोत सवादी बातके सो[1] साँई सबादी नांहि ।
सती सवादी कंथ की सो तन डारत दव मांहि ॥ ९ ॥
जो चाहे अखा पीउ को ता तन मन वारी डार्‌य ।
ज्युं कदली[2] कटे तन आपना सो फल से नीकसत बाहार्‌या[3] ॥१०॥
साँई कु सब सारीखा अपना पर नहीं कोय ।
ज्युं घर घर अग्नी है अखा[4] पण[5] किया सो दीपक होय ॥११॥
बीना[6] ईसक[7] पीउ वा मिल्य हे सिर साटे का खेल ।
भोग का रसिया हेम[8] समे[9] तिनकुं[10] साँईयाँ सेहेम[11] ॥१२॥
भक्त मिले ज्ञानी मिले पण मासक बीरला कोय ।
ज्यूं रण म छाड़[12] सूरमा जा टूक टूक तन होय ॥१३॥
जो मूं चाहे पीउ को तो मान मेद डर छोड़ ।
तन मन मत अटके अखा साँईया सति जोड़ ॥१४॥
ज्ञान भक्ति नैराग्य हृत्य[13] सब हे वाको अंग ।
सो पद तब पाईय अखा जब सदगुरु मिल्य सुपंग ॥१५॥
सदगुरु बिन बिश्वास बिन पची मरे सब लोक ।
सीष्य मपट अरु कामीना तातें न मीटे साक[14] ॥१६॥
सदगुरु साचा स। अखा जाकु साँईयाँ सति मीलाप[15] ।
सोही मिलाव[16] सिष्य कु जा[17] पाया होये आप ॥१७॥
जिज्ञासु साप्य अरु[18] सदगुरु जब मिल्या ए[19] प्रसंग ।
ज्युं दीप क[20] दीपक नीपजे[21] जब परसे अखा अंग ॥१८॥
परस्या तब पारस[22] हुआ भ नहीं वा जोत्य[23] ।
सर सरिता का नीर ज्यु म्यागा किया[24] न होत्य ॥१९॥

---

१ × (सा) २ कदली (सा) ३ म्हार (मा) बाहार (मु) ४ ज्यु... अखा—घर घर अग्नि ज्य अखा ' (मा) ५ × सा) ६ ईश्क (सा) ७ हरि (मा) ८ ए (सा) ९ हिम (मा) १० सबे (सा) ११ मू (सा), १२ मोहेम (सा मु) १३ छाडे (मा) १४ तन (मा) मन (मु) १५ छाडे साक—अखा ! टरे नहीं जोड़ (मा) १६ नैराग (मा) १७ वैराग (सा) १८ जे (मा मु) १९ × (मा) २० मिलोआ (सा) २१ दीप के—दीप (सा) दीपके (मु) २२ परस्य (सा) २३ जोते (मा) २४ ज्योत (मु) जोत (सा) २५ भया (सा) ।

ापु[1] आप हुआ अखा पवन मही नीर तेज।
भवाकाश नहीं परठना ओर जांया सो ए हेम[2] ॥२०॥
ृ सो सब एसा अखा कोई वीरला पाव[3] भेद।
निरगुन सरगुन[4] दोउ रेंहे गए की[5] हुआ सो[6] उमेद ॥२१॥
ारज्य कारण ते[7] अखा है सो[8] न्यारा[11] सम।
ापे पच नीशान[11] है सो घसे बसावे[11] खेल[11] ॥२२॥
ोय[11] गया ना होयगा जे है सा अस आप।
व्यासक बीन व्यासी नहीं व्यसक व्यासी का व्याप ॥२३॥
अखा अतर कछु ओर है बाहर हुआ कछु ओर।
ना मीतर ना बाहरा[11] जब पाया मन ठोर ॥२४॥
मे[11] जाना[11] हरि ओर है मे भी हउगा ओर[11]।
ए[11] मता कहु रेहे गया जब पाया मन ठोर[11] ॥२५॥
पारा मन एक बाम्य[11] है कथा[11] करे खराव[11]।
अनुभे अशी[11] जब पचे[11] ता नया[11] करे अखा आप ॥२६॥
मे[11] पीउ पायर आप मै[11] सब गये हु तु दोन।
एही अचवा होई रहा अब अखा सा कोन[1] ॥२७॥
किमत नहीं हरिजन की ज्यु मे कीमत किरतार।
किमत मा[11] आप अखा सो सारा संसार ॥२८॥
सन मैं बसता देखीएँ आप अखा आकाश।
देह[11] सा द्रपण[11] भई चतनका[1] आमास ॥२९॥

---

१ आपे (सा) आपो (गु) २ भोर ए हेम—और जांम्या सो राम) सहेब अंतरका हेम (सा) ३ जान (सा) ४ सगुन (सा गु) कोई (सा) ६ और (सा) ७ और (गु) ८ कार्य (सा) कारज) ९ बिन (सा) १० ए (सा) ११ न्यारया (गु) १२ बानिषान ४०) १३ बस्यावे (२६७) १४ खेम (१४०) (२६) १५ हो (सा) १६ ्रा (सा गु) १७ हम (सा) १८ जाम्या (सा गु) १९. मै ओर—मैं कोई ीका और (सा) २० सो (सा) २१ ज्यब... ...ठार राम मसा सब ठौर (मा) बांन (गु) बानि (सा) २३ कथ्या (सा) २४ पराय (गु) २५ अमि ं), अम्ने (गु) २६ जब पचे—अनुमवे (सा) २७ मता (सा) २८ हु ा) २९. आप मैं—मुज में (सा) ३० कौन ? (सा) ३१ किमत मा— मत में (सा) ३२ देह (सा), ३३ दरपन (गु), ३४ चैतन्य (गु)।

विरही' अंग

हूँ हांसी' मखा पीयसु तु थम मोजी कीरतार ।
दूती' न माने परय' मखा सो तुही करे इतबार' ॥१॥
गुणहीनी सजण बुरी नहीं कंथ रीझावण जोग ।
करबा करुय मांजी पिया ते अपनी कर दिण भोग ॥२॥
मघट घटावे पीउसूं' 'घटता वे जो बेहाय' ।
इतय न देख्या मेरजा ज्युं त्युं मीहे' मिलाय" ॥३॥
बिरहा पीउका जीव हैं बिरहा पीउ नहीं दाय ।
बिरहा सा सायां" मखा ओर मत" जानो' कोय ॥४॥
विरहा ज्यु मेहा मखा मेह त सब कछु होय ।
हरीया" हरी" तो दीपीया" जो बिरहा लाग्या मोय ॥५॥
ज्युं तांबा परसतु' पारसु" तब कंचन होई जात ।
त्युं बिरहा परसत जनकु सा नर तब हरी" थात ॥६॥
कम करे सांईया जीसे" तिनकु पेहेले बिरहा देह ।
बिना बनी चाहे मखा तम" भेज जरी मेह" ॥७॥
बिरहा एसा चाहिये' हाये" मे जीउ जाय ।
अवर जमन एसी अखा तब पीउ प्रगटे आय ॥८॥

---

१ थी बिरह अंग (मा) २ हमीआ (सा) ३ दुनिया (सा) ४ पर (सा) ५ सा इतबार—सो तू हि करे इतबार (सा) सो ही तुही करे बतबार (मु) ६ पीउसूं—पियु ! सूं (सा) तूं बीमा (मु) ७ और (सा) ८ > (मा.) ९. बहाई (सा) बिहाय (मु) १० मिया (सा) मीले (मु), ११ मेलाई (सा) १२ मांईया (मा मु) १३ म (मु) १४ चांवे (मु) १५ हरिया (सा मु) १६ हरि (मा) १७ देनीआ (सा) १८. परसत परसा (सा) १९ पारसनूं (मु) २० हरि (सा मु) २१ जब (सा. मु) २२ तो (सा) तब (सा मु) २३ मा पद(सा) २४ वे(सा) २५ हाय (सा मु) ।

आगे तो जलपे[1] अखा सुवे[2] तो सुपने माहि ।
रोंउ रोंउ[3] विरहा बसे बीन अग्ने जल जाहि ॥९॥
साँई न चाहे चातुरा रूप बरन कुल जात्य ।
भाव भरोसा देखे अखा तब पीउ पकड़े हाथ ॥१०॥
जब चोरहा लाग्या अखा सब तन मन प्राण[4] समान ।
जीव साटे पीउ पाईये[5] सो भी नहीं मुज ज्यान[6] ॥११॥
विरहा सा बड़ी वस्तु है काहा कहूं विरहा बात ।
बीन विरहा मो नार कू कोन सभा में गात ॥१२॥
सारू में विरहा बड़ा साईयां के दरबार ।
अखा सो जाने बिरह कू के जाने करतार ॥१३॥
भक्ति भक्त कू तो फबे जोग ध्यान सा आय ।
जान[7] अखा तब[8] ऊपजे जो विरहा हुये मन माय[11] ॥१४॥
साधा हरिजन सब सुनो जो चाहो दीदार ।
फिर फिर विरहा मांगीया केहे अखो निरधार ॥१५॥
विरहा खूनी है खरा निस दिन मारे मुज[12] ।
के मिलके गू मार से मेहेर[13] न आवे तुज ॥१६॥
बिरहा बाज जीव तीतरा[14] तोरि तोरि[15] मुज खाय ।
नांतु मिले यो तनकसे रोवत निसदिन जाय ॥१७॥
राते देखीय नेम कू पण रोम रोम रोवे मोय ।
गाता देखीय गाम सा निसदिन मो मन रोय ॥१८॥
बिरहम झरे[16] एकली राहा सीर बेठी रोय ।
दिन जाय दीदार बिन सिर पर करवत सोय ॥१९॥

५

---

१ तमपे (सा) २ सोवे (सा) ३ रोम रोम (गु) रूँ रूँ में (सा) ४ प्राणे (गु) अग्नि (सा) ५ तृप (सा) ६ पांमोये (गु) ७ जाम (सा) चोन (गु) ८ चोर (सा) ९ जब (गु) भाग (सा) १० तो (सा) ११ मन माय—समाय (सा) १२ मोज (फ) १३ महेर (सा) मेहेन (गु) १४ तेतरा (सा) १५ तोरि तोरि—तोड़ तोड़ (गु सा), १६ झूरे (सा) ।

१६

तत्त्व भेद को अंग

स्थूल सुक्षम चेतन बीये पण स्थुल सुक्षम को नाहि ।
मारग[1] भेद चल्ये अखा सब चेतन की परछांहि ॥१॥
मत्ते आद बीचारिला चस्या मत बीचार ।
मध्य बीचारी देखिये[2] मे[3] नहीं नहीं नीरधार ॥२॥
दुनी[4] पाछे पैदा हुआ[5] वसक आगे रूप आउ ।
अखवासा बिच हे अखा तो काहा बात बनाउ ॥३॥
पांचों का ए पेचहे[6] घूमावे स्वर होय ।
ठिनुं का[7] तंतु दुटसे मरण कहत है सोय ॥४॥
तिन चले दो स्थिर[8] रहे खल चल बहो भात्य ।
चेतन सारू सारिखा[9] अखा चली यू जात ॥५॥



---

१ माने (सा) मांग (पु) २ देखने (मा) ३ हुं (मा) ४ दुनीय (पु) ५ और (मा) ६ पेचाय (पु) ७ ठोरूपा (मा) नीनका (न) ८ छूटने (सा) ९ बीर (पु), १० सारखा (सा.)।

विभ्रम[1] अग

जाकु संग जेसा मिले तांहां तेसी नीपज होय।
ज्यूं सीत संग मीर पत्थर भया तो तेज सग होय सोय ॥१॥
मक्षा फेर वहु सग में कृपा हरी की माय।
ज्यों कांस[2] ईख होइ नीमझ्या[3] सो कमपाल की साख्म* ॥२॥
१



१ वीभम (प्र गु) इस अंग के प्रारंभ की ८ साखियाँ गुजराती में होने के कारण छोड़ दी गई हैं। २ काष्ट (मा) ३ नीमझ्या (मा) नीमडे (गु)।
* यह साखी ह लि प्र सं १४० में नहीं है।

रूवे अंग

जेसा तेसा साँई है मो मन ए निरधार।
टेका सीमा हो अखा[1] है[2] आपु आप किरतार ॥१॥

काई मईं[3] ता सोह की निरभय[4] ता मीं[5] मोह।
सब रंग माटीका अखा नहीं[6] मुखर कहीं सोह ॥२॥

बीज पसर्‌या[7] तो वृक्ष भया वृक्ष फल ता हु[8] बीज।
अखा पारस परस[9] देखते राम मोहो पर मीज[10] ॥३॥

कैके सम्ब करता रहे पूरनता परताप।
मोहोना मोहोरा नीरम नथा करनहार हे आप ॥४॥

पूरनता में[11] बुदबुदा सदा निरन्तर होय।
अनंत फल हे एक मैं[12] अखा सो जाने कोय ॥५॥

अनंत अवतार है ईसका[13] पलपल न्यारे वेस।
कोई भेद्द जाने[14] अखा जाना अनुभव[15] पेस ॥६॥

जड़ चेतन नाम ताहे के जाका नाम न रूप।
अमत अलप सकती करे अखा खेलत राम अनूप ॥७॥

कब न होता कब अवतरया कर लीला कांहीं आप।
सगुन निरगुन का फेल दे पधरे सोई समाय[16] ॥८॥

---

१ हो अखा—कोई कहो (ला) २ × (गु) ३ भसी (धा) ४ निर्भै (सा) ५ तोमी—भसी तोहु (ला) ६ नहीं (ला गु) ७ पसरया (मा) ८ तब (सा) ९ तोहु—तब (सा) १० पारस परस—परस्पर (मा) ११ मीहीज (सा), १२ पूरनता मैं—पूरणपरस्त (ला), १३ मा (धा) मां (गु) १४ ईसका (सा) १५ बूझे (सा) १६ अनुभे (सा गु) १७ पधरे—समाय—पधरे भो इजमाय (फा), पीमसे सो ही समाई (सा)।

है सीला सब सांई की फूला फल्या' राम।
मा' सो आमन मानका भूतम का विसराम ॥९॥
भनत रग अम्बर विष आकसमात आभात'।
आप उपरये प्रगटे आप मध्ये गव जात ॥१०॥
नहीं न्यारा सो भूत पे' बर्तें न नाहि होत'।
अनंत सक्ति है सांई की' अखा आप ओत प्रोत ॥११॥
मोहे बनी एसी अखा अनुभे भठा ठीक।
रमता राम सु मिल गई सार लोह पर लीक ॥१२॥
बड़ा अचम्बा मीतका पे साव महे सब ठौर।
अंतर मेनु देखते नहीं अखा तु और' ॥१३॥
आप' हे तो आप कु पावनहारा कोन।
मोल करे आपे आपसु अखा धरभाका गोन ॥१४॥
जाका कीमा सब होत है सोई जानत मूल मर्म।
अणसत्ता आत्यम' अखा देख फेल'' ओर धर्म ॥१५॥
अतर में कछु ओर है बाहर'' हुवा'' कछु ओर।
राग आल'' न्यारा अखा सारी मन की तार ॥१६॥
मन केहेवे मन ही सुण धनी बनाई बात''।
भीतर का भेदु अखा'' वसो' जाने धात ॥१७॥



१ फाल्या (सा) २ नाहि (सा) ३ मा मात (सा) ४ सो ... भूत पे—विभूतर्ते (मा) ५ वर्ते ... होत—वेते बना हाता (फा) सवे से न होरव (गु) ६ अनंत ... की—अनंत सक्ति सियराय की (मा) ७ बन (सा) ८ अंतर... और—वेन मैन निमेष मग माहो अखा ते और (सा) ९ आपे (सा) १० आमन (सा गु) ११ फैल (सा) १२ बहार (सा) बाहोर (गु), १३ हुए (सा) १४ नाभिमास (मा) १५ मन ... बात—मन कहे मे मन नहीं सुने धनी बनाई बात (सा) १६ सो (सा) १७ जानत (सा)।

दीसा' अंग

दस' दीसा' भा भीतरे ता' भर में स्थीत कीन ।
अखा दीसा' की काहा चली जब भया महामीष्म का' मीन ॥१॥
योग ध्यान तप सत्य क्रीया सुरत नरत सीरसाज ।
'यारी 'यारी है दीसा अखा सो साधन काज ॥२॥
पण राखे पूरा अखा जीनु जे पकडी टेक ।
ताकी दसा' सहरात है पाछे लोक अनेक ॥३॥
मन मनसा के" खेल हु से ध्याता की साध्य ।
अखा सो नर काहा करे जाकुं नहीं अह बाध्य ॥४॥
सूर्य के उदे अस्त ते" पडता" दसो दिस" नाम ।
अमीत रह्या ताथे अखा तांहां पहोंची" ध्यय हाम ॥५॥
दसा सपदसा" जीनकुं" जात्युं मान्या" मन ।
मन दिनकर माहामीष्म मीस्या रह गया रेहेणी दंन" ॥६॥
दसा रेहेणी सीम्य की समकुं" ए" प्रतीत ।
ए उर मावे है बाहर" मनुभे" धरणातीत ॥७॥
पेहे" सो आपे सदा ओर अखा सो कोन ।
सोध्य रहेणी तांहां दुसरा है" माया के गुन" ॥८॥

---

१ दशा (सा), २ वनुं (सा) ३ दशा (सा) ४ सो (सा) ५. दशा (सा) ६ महामिथि (सा) माहामीम (पु) ७ मीरत (पु) सुरत (सा) ८. × (मा) ९. दोशा (सा) १० का (पु) ११ चे (पु) १२ पडत (सा पु) १३ दसा दस (सा) १४ पोहोंची (पु) पहोंची (सा) १५ उपदीसा (पु) १६ जीसकुं (पु) जब लगी (मा) १७ माया (मा) १८. रेहेमी दंन रेमीदन (सा), रेमरीन (पु) १९ सबनकी (मा) २० × (सा), २१ ए उर .. बाहरे—अखा ! उरला बहेवार है (सा) ए उरला वेहेवार है (पु) २२ अनुभव (मा), २३ पेही (सा) २४ एहे (पु), २५ मीन (सा) मोन (पु)।

देखे पर आवे अखा सो देख्य साहब' के रग।
मा सो ज्यूं का त्यूं सदा' मत पकड़े तु मग ॥९॥
ना कछु देखत ना कछू' जो है सो' वही वस्त।
अखा पड़कू देखते भैं' हेरानी मस्त ॥१०॥
अस्प अलीक और अटपटा देखते देहे' वेहेवार।
अखा सामथ अजब है जीनु मुल्ता कीरतार ॥११॥
अखा अजब कोई कोहरा ना कछु उर' वसवंत।
जेसा तेसा तु पीया ! तु ईस्वर तु जत ॥१२॥
सामथ देखी कर ग्रहे सो पकरावे देह।
सो तो क्षण भगुर अखा सटके' करत" वीन्हे ॥१३॥
होता देखीयत जाही से" तासे कछु न होय।
रुप अरूपी होय रमे एक अखा के" वोम ॥१४॥
देखन जेसा जे नहीं सो देखे सब नेन।
अखा उलटा" भेद है जे समझे" सो एन ॥१५॥
आप गमाया अही" अखा वनति है सब बात।
हतु बीन हतु" रहे ज्युं लोहो पांगर एक जात्य ॥१६॥



---

१ साहब (सा) २ बसा (मा गु) ३ भी (सा) ४ सा (सा पु) ५ भई (गु) भयी (सा) ६ देह (सा गु) ७ वहेवार (सा) ८ सामर्थ्य (सा) ९ और (सा) भार (गु) १० सटको (सा) ११ करे (सा) १२ तें (सा) १३ है (सा) १४ उमर (सा) १५ समजे (सा) समसे (गु) १६ नहीं (सा), १७ तू ज (सा)।

समदष्टि अग

ऊँच नीच री मक्ति[1]कु एक[2] कहा मत कोय[3]।
[4]धदन बावस, अग्नी कुं मिलते[5] एकता[6] होय ॥१॥

ऊँच वण भेव नहा नीच वर्ण नोहि दूर।
ज्यों नर मम्मा आर ठीपना[9] कोई सूबत नहीं सूर ॥२॥

ऊँच कुं मूपण मध्या[10] दूपण दीमा मीष[11]।
राम न पावे सो अखा वे[12] नस्या भ्रम[13] की कीष ॥३॥

उत्तम मध्यम जात का रूप[14] नहो[15] वेहेवार।
अखा हरी का भव हुआ पूग साफर[16] मीस्या वार ॥४॥

अखा वर्णाश्रम का ये कोई राखे[17] मान।
ज्यो नर-नारी होवे[18] नट रमे ना काम सुख संतान ॥५॥

साहो केहेते में मन मई[19] हरीजन[20] कहाँ[21] समसाम[22]।
सो नर काहा बणसे[23] अखा जाको मुस सुण्यो पर आय ॥६॥

अखा काठ के नाव बिना[24] कोई न पावे पार।
त्यों हरीजन[25] सब बीना छूटे नहीं संसार ॥७॥

---

१ मक्त (सा) २ काहो (सा पु) ३ होय (सा) ४ धप (सा), ५ मिलते (सा) ६ एकट (सा) ७ मीकर (सा) ८ और (सा) ९ ठीकम (सा) ठीकप्या (पु) १० पपा (पु) ११ मीच पुलना मीच (सा) १२ × (सा) १३ कम (सा १४ कम (सा) रूप (पु) १५ ताहि (सा) ताई (पु) १६ सागर (पु) १७ रातन (पु) १८ होय (सा पु) १९ साहो .... कहे—नाम्हे कहे तेम न कहे (सा) साहा कैहे तेमे मन कहे (पु) २० और (सा) २१ कहाँ (सा) २२ गुमनाम (पु) कमसाई (सा) २३ बिनमे (सा), बनमे (पु) २४ बिन (सा), २५ हरी (सा पु)।

अखा सत्य[1] भाषण कीयो माता मारे पूत ।
त्यू वेसासघ के बालकू[2] सब कहे[3] अनाहूत ॥८॥
किसर बाहावरे[4] जीवकू[5] न होय भक्ति नीवाहो[6] ।
अखा ताहीं[7] न पतीजिये बु मया मुहारी साहो[8] ॥९॥
सो नर साचा सूरमा जे मरते न ताके ठोर ।
त्यों हरीजन एक रामबीन अखा न देखे ओर ॥१०॥
राम भरोसा राखके रेहेत माठु पहेर मस्त ।
बोज्यकते[9] करता[10] नहीं अखा न ताके[11] न्मस्त[12] ॥११॥
हरीजन मा नीज सामत पूरण बासे मास ।
ज्यु सागर पूरण आपते नाहीं ओर की आस ॥१२॥
अखा अतर मैं नहीं भ्रांत्य खोत्य[13] सबसेस ।
हरीजन हरीसूं मिल रह्या समर भरा[14] सरबेस ॥१३॥
दरिद्र नहीं बन के छिपे नहीं दीनता दभ ।
पूरनते पूरम अखा एसा अनुभे सम[15] ॥१४॥
हरी हरीजन दो नहा अखा जैसे अरणव लहेर ।
क्रीडा कारण दोउ है अंतर[16] ज्यु की त्यु ठहेर ॥१५॥
बाना[17] मेखे बोहोत है पण हरीजन बीरसा कोय ।
बीन सींप्या हरिमा[18] रहे जे पीये पाताले तोय ॥१६॥
नर माखा[19] मोती अपा ठेसे हरी हरीजन ।
अंतर में[20] दोउ एक है[21] न्यारे[22] देखीयत तन ॥१७॥
मान मीटया[23] कुल जातका ध्यान रह्या नीज धाम ।
अखा पीछे काहा[24] रह्या जेसा तेसा राम ॥१८॥

---

१ सत (धा) २ बचन का (सा), ३ कोई (सा)। ४ बावरे (सा) ५ ष (पु) ही (सा) ६ निभाव (मा) ७ ताहे (मा गु) ८ साथ (सा) ९ दोजग (गु) को सच (सा) १० डरे (मा) ११ ताहे (सा) १२ बेहेरत (सा) १३ खोल (सा पु) १४ भरपा (गु) भर्या (मा) १५ संभ (सा) १६ अति (धा), अंतर (पु) १७ बाना (सा) महाना (सा) १८ हरा (सा) १९ नरमाथा (पु) २० बामनासु (सा) २१ और (मा) २२ न्यारा (मा), २३ मीटवा (पु) २४ पया (सा) ।

आप ओलख्या तोहे आतमा' ना ओलख्या' तोहु' लोय ।
जीहीनी' सीधी आरसी अवा मीज दरसम होय ॥१९॥
अवा अधिकता एही है जे हरीजन के हे' सब' लोक ।
जीहीना शरीर समेत' स्वे सोधा रोकारोक ॥२०॥
तेरी ओरते मे' खरा मेरी ओरते नाहिं' ।
पडखख्या'' पड मठ में बोलणहारा सांई ॥२१॥
मीज साम्रथ'' ना मावरे'' ना जीवे मीज बल कोय ।
वडा अचम्बा एही अवा बीच करता जीव'' होय ॥२२॥
भला बुरा सबकु भखे चतुर गुणी भूपाल ।
जनम्या मू'' जुटे'' परा बडा बेमरूजत'' काम ॥२३॥

*

---

१ और २ चीन्या (सा) ३ है (सा मु) ४ चीन्या (सा) ५ कहे (सा मु) ६ ×(मा) ७ सो (मा) ८ जौहा (सा) ९ हुं (सा) १० मांहे (मा) मांहि (मा) ११ पड छंडा (मा) पर छंडा (मु) १२ सामर्थ्य (सा), १३ समावे (सा) १४ जर्व (मा) १५ को (मा) १६ छूटे (सा) मूं (ह लि प्र न २१७) जहे (ह लि प्र न १८०) [illegible] (मु) १७ बेमुरत (मा)।

२१

भोरी[1] भक्ती अग

अखा तुं[2] भोरी भक्ती कर्य जो सांई रीझाया चाहे[3] ।
पचीस कमा में मत पड बुध्य अक्षर में जाय ॥१॥
पचीस कला सो हे भली होये अक्षर का ज्ञान ।
ज्यु पानी काटत[4] मेलकु पण भतर अपणा रहे थान ॥२॥
भोरा भक्त एसा अखा जैसा कालका पूत ।
वचन बोलत तोतरे तब[5] प्यारा अदभुत ॥३॥
पीछा भगावत कठ तब मुख चुम्बत लोतराई ।
भाटु[6] वचन बोलत भया तबसे[7] अग[8] न माई ॥४॥
कब ध्रु प्रह्लाद पींगल पढे कब व्याकरण नामा कबीर ।
भक्ती पथ[9] भये अखा सब सतन[10] के पीर ॥५॥
भोरी भक्ती पीत की लगन अतर चले अपार ।
अखा अनल का पीतुआ ज्यु भाय[11] मील परिवार ॥६॥
भारी भक्ति एसी अखा चात्य चातुरी हीन ।
पाउ पांख बिना परखरे ज्यु जल नीध्य मा[12] मीन ॥७॥*
भोरी भक्ती एसी अखा लासन सु रहे लास ।
ज्यु नौका जलनीध का[13] चलत न देखियत चास ॥८॥
भोरी भक्ती एसी अखा सच्म भाउ प्राणस ।
मील दीन चलत सांईसु भोर नहीं उदस ॥९॥

---

१ भामी (मा) २ × (सा) ३ चाहए (मा), ४ ता (मा) ५ काट (सा) काढत (गु) ६ त्यु (मा) ७ ममाबे (मा) ८ चाग (पु.) तार्ते (सा) १० कठ (सा) ११ भंमर (मा गु) १२ मामु (मा) १३ मार (सा) माप (गु) १४ मिग (सा गु) १५ मध्य (गु) ।

* चिह्नित साखी पत्र १४० में नहीं है ।

मोषी भक्ती एसी अखा कल्या न आये अग ।
नेम बेन बेहेन एक हे बेसा जस¹ तो रस² ॥१०॥
रस्य लागी जब रामसु तब काम नहीं ओर बात ।
पद तारा³ सब खीग⁴ भये जब ते प्रगट्या प्रात⁵ ॥११॥
रस्य लागी जब रामसुं प्रेम आतुर वैराग्य ।
रय रग राम रमी रह्या नहीं चातुरी कु जाग्य ॥१२॥
रस्य लागो जब रामसुं प्रीतम मिलीया⁶ सेज ।
अखा भ्रकुटी⁷ डर⁸ दे जब नेनु माया नेज ॥१३॥
रस्य लागी तब रामसु काम नहीं ओर बात⁹ ।
माता स्थन¹⁰ मीस अखा तो कोन धुप¹¹ तात ॥१४॥
रस्य लागी तब¹² रामसु तो सकल रीध्य¹³ ता माहे ।
रिद्ध भयुं¹⁴ रेहे अखा कल्पद्रुम की छाहे ॥१५॥
रस्य लागी तब रामसु पाई पीउ की मोज ।
अखा पीछे काह्या¹⁵ रह्या जब समस्या¹ पीद की चीज¹ ॥१६॥
ईत उत चीत स्यु सा घसे जो स्यु नीरखन हाय ।
चींतामण पाया अखा तो कोडी को कोन जाय¹⁹ ॥१७॥
पढीत सो ब्रह्म¹ भसा भक्त भसा रस्य राम ।
मा उनकी जीवका सघ¹¹ पण भक्तन कु बेकाम ॥१८॥
भक्त भर्लसा साई का गाम रस्या दीन रात ।
अखा सती ओर सुरमा न करे दुजी बात ॥१९॥
पढे पढीत ओर सेवका¹¹ बात करन के काम ।
भक्त पाया हरी प्रेमपन हु म हो बीजरी गाम्य ॥२०॥

---

१ कर (पु) अजका २ सरंच (सा पु) ३ × (सा) ४ खीणा (सा) ५ प्रभात (सा) ६ मलीया (पु) ७ भ्रकोटी (सा) भकुटा (फ.) भकुया (१४०) ८ और (१४०) बार (सा पु) ९ ज्य (मा ग), १० काम बात—पुन को मोही न चहात (सा) ११ स्तंन (म पु) १२ धुप (सा) १३ जब (मा) १४ रथ्य (पु) रिद्धि (मा) १५ भैय (पु) १६ रहा (मा पु) १७ चीहीसी (सा) १८ चोज (मा) १९ मा जोय—तबको कौडी जाय ? (मा) ता कोडी दीवे कोवे (पु), २० ब्राह्मण १४०) ब्राह्मण ब्राह्मण (मा. पु) २१ सम्ये (पु) २२ औरसे बड़ा (सा)।

सगार' सतीका ओर है कुमकुम काजर नाहे।
कुमकुम काजर हो म' हो प्रीत्यम प्रम मीसांहे' ॥२१॥
साध सती ओर नीज भक्त दोनु की एक टक।
तन मन कु' पहेसु दीया मव' को' कर अबिवेक' ॥२२॥



---

१ पृंगार (सा) सीगार (मा) २ हाग (सा) ३ प्रोत्यम ह—प्रीतम मऊ मिलाइ (मा) प्रीतम प्रेम मीलाये (पु०) ४ ता (फा) ५ मजा (पु) ६ कोन (पु), ७ बीवेद (सा पु)।

२२

अधम अंग

पुरण ब्रह्म पुगी रह्या ता[1] बीन नहीं अभु ठाम।
ऐसे आने बीन अखा मप्य[2] पावे आराम ॥१॥
अखा सततर समक्ष[3] बीन पीव उसमाता जाई।
पुरण ब्रह्म पद पाये बीना वाहु'स क हाथ बिकाई[4] ॥२॥
असग पद मरम[5] मातठै तव सूख सुख का पाम।
वो सूख अखा अपार है पे रस स्य होता गाम ॥३॥
जब पुरणते वीक्षक्रया माम सीआ आप अमग।
जीव होते ईश्वर भया बेमस्य भूमा[6] समय ॥४॥
आप एक ईस्वर बड़ा मीश्यम भया ठेहेराओ।
पंच गीये सागया तबें[7] मतर गस्य[8] में बाहो[9] ॥५॥
अखा पीडा[10] ताहु की[11] मांखम सागया बीम।
दवी देव[12] पामाप प्रहे[13] सबका भया आधीन ॥६॥
बन्दे अपतना[14] बकरे[15] पंच धांहा पंचवीस।
परठपची पाछा पड़ ज्यांहा प्रीस्य[16] जगदीश ॥७॥
प्रीत्यम प्यारा हाय जा सा[17] गुणत आवे गुर।
दात मेन खुम रहे ज्यु कमस फुमत[18] सग सुर ॥८॥

१ जा (मा) २ मा (मा) न (पु) ३ समस्या (मा) ४ × (का पु) ५ बहुताप (मा) बेगाम (प) ६ प्रम (पु) गर्व (मा) ७ अधार (मा पु १८१) ८ बेमनि (मा) बेमव (पु) ९ भूम्पा (मा पु) १० अखा (मा) ११ मन (पु) गनि (मा) १२ कराब (मा) बाओ (पु) १३ दिश (मा) १४ बा (मा) १५ भून (मा) १६ मर (मा) १७ बितनी (मा) बनमो (पु) १८ बन (प) १९ मीनय (पु) २० मो (सा प) २१ फूप (पु) फूमन (मा)।

नेन खुल ताके रह जाका हीरदा खोला हाय ।
अज्ञाने घहेरा' अखा ताव मीचे दोय ॥९॥
अखा केहे आतुर थका केहु साभल्य' गुण ग्राम ।
खरी खेप कीधा वीना काल नहीं राख' माम ॥१०॥
करठो काठ ससार मी फुल सोरा गाल ।
हरी गुण सामलतों अखा भेंपि मड अई भाल ॥११॥
डाह्या चतुर ससार माहा' सत संग त्यांहा सठ राज्य ।
मृखपण साथ नहीं भने हरी गुण सुनता लाज ॥१२॥
माड़ भवाई माम्यमी वहीं ते राता थाय ।
गुण सुणसां गोविंदना ऊंघ के ऊठी जाय ॥१३॥
आसा अदावत नहीं अखा ज्यु अदावत नहीं आग्य' ।
वनखंड' कु दहन करे तो ही भुम्या बाड जाग्य'' ॥१४॥
आस्या पुरी नहीं कब आ परवत सागर पाय'' ।
अखा मोहो'' बीन सीगल एसी पडी' बलाय ॥१५॥
आस्या गई सब अंग भया जे कोई पुरन ब्रह्म ।
आस्या बध्या जीव है अखा समस्त न मर्म ॥१६॥
कुधान कुदेव कुमाणसा नप पशु ब्रहा लाय'' ।
सावधान'' रहणार अखा गाफल सारयुं' थाय ॥१७॥

★

---

१ मरे (सा) पेरया (गु) २ भोमल (सा) ३ मुके (गु) ४ मू (सा) ५ मड (सा) ६ मां (सा) ७ मड (पा) ८ माड पाठ—मांड भवाइ म्याम्यमी त्यां हो तेरा हो था" (२६७) माड भवाई माम्यमी ताहां तेरा हा थाये (१४०) ९ आशा ..माप्य—आसा अवत नहीं अखा ज्यों प्रावन नहा भाग्य (१४० गु) १० मव (गु) ११ ता पाठ—ता मा भुम्या भाग (गु) १२ पार्ड (सा) १३ माह (गु) माहे (सा) १४ बड़ो (सा गु) १५ नर्प पाठ—निर्प पसु बहिलाड (२६७सा) नृप पसु बही माय (१४०) १६ सावधान (गु) १७ मामा (गु) ।

सुर्मा'

मरदु के मेदान में जब नीसान मर्बत ।
सुर मकसावत' मरमकु' होमु' मास पर्बत ॥१॥
हुक्म लागी हीय कु मो फौर फीर ताके ओट ।
सुरा साटबे सीसकु सबे मुख पर चोट ॥२॥
नीआहीत' सब्द के संतका मीरबाणी मीरदोप' ।
सो गुर्रं मुखी गहें' आवता मनमुखी फेर दें' मुख ॥३॥
सुरे साहब को सीर' दीया ताहे' रुङ न छाड़े खेत ।
रयुं तमा मशा" मधे अला मव" शम्म सा" छाडा" देत ॥४॥
मरद सबे सो मरद सु हीय कु" नारे नाहि ।
सुरा सो" सनमुख लड़े हीय सो मुख फीराहि ॥५॥
भाजे तासु" मा भड़े सो ज्ञानी सो सूर" ।
मला शब्द मा सहे सबे' भटक्या" भाजे मूर ॥६॥
संत समसेर मा लड़" करे सब्द को चोट ।
भला टीका तो ताह दे सटक्या तो काई सोटप" ॥७॥



---

१ सुरमा (सु) सूरमा (सा) २ सूरम कमावत (का गु) बब सूर नाचे (सा) ३ मौर (मा) ४ हिमत (सा) ५ नीहाहीत (१४०), म हुप) नीपाहीत (प) ६ निर्दोप (मा) नीरदोप्य (प) ७ बरे (सा गु) ८ बे (मु) ९ मीर (सा) १० माहू (सा मु) ११ मम्म (सा) मम (प) अब (१४ २१७ सा मु) १३ × (सा प) १४ मिजाहा (मा) १५ मं) १६ मला' (मा) १७ निमम (मा) १८ मड़ (सा) १९ सूर (पा मु) ५ (मा) २१ भटक्या (मा) २२ बछ (मा) २३ भला सोटप टिक्या तो तासुं देख्य टिक्या ता पाई चोट (१४) भला' टिक्या तो ताडरे सटक्या तो लाई मोड (मा) भला टीका तो मीरे पटक्या ने पाई पाट (मु) ।

हेरा' अग

सांया' तेरी साहबी' बन्दे कही न जाय।
अखा अकस पग न टीके ता रसना केसे गाय ॥१॥
तेरी अकल सु मुझ अकस तरे बेम मुझ बेन।
तु तेरा भेदु अखा तु तेरे सांच' नेम ॥२॥
तुज पर वारू हूँ पणा तुज मम पर कीरतार।
अखा के भेसु हज तु पर' मे' न सहूं तुज पार ॥३॥
अज भुतारा मीत सु भी' भासें मो' गम।
माठु पहर'' एसा रहे ता माहा लागे तुज एम ॥४॥
मे हु ता मो तुज हे तुहे मो मी तुज।
मसा नाम आमे करो तू आप दुरावे क्युन'' ॥५॥



१ हेरान (सा मु १४०) २ सांईया (सा मु) ३ साहेबी (मु) साहेबी (सा) (४) क्यु कर (मा) ५ वेसे (मा) ६ पग (सा मु) ७ हु (मा) ८ मजब (सा मु) ९-१ मिसी (मा) ११ पहेर (मु) पहोर (सा) १२ क्यु । (सा)।

सुर्‌यमा'

मरदु के मेराम में जब मीधान मडंत ।
सुर मकसावस' मरनकु' हीमुं' भाख पडंत ॥१॥
हवबड मागी हीज कु मा फीर फीर ताके ओट ।
सुरा धाटवे सीधकु सबे मुख पर चोट ॥२॥
नीमाहीत' सब्द मे संतका मीरभामी नीरदोप' ।
सो गुर्रु मुखी मटे' मावता ममसुखी फेर वे' मुख ॥३॥
सुरे साहब को सीर' दीया ताह' रख न धाडे सेव ।
त्युं तभा मगा'' मये अभा बव'' सब्द सो'' भाका'' देव ॥४॥
मरद सड सो मरद सु हीव कु'' मारे माहि ।
सुरा सो'' सनमुख मडे हीब सो मुख फीराहि ॥५॥
भाजे तामु' ना मडे'' सो मामी सो सूर'' ।
मखा शब्द ना सहे सके'' भटकया'' भाजे सूर ॥६॥
सत समसेर मा सड'' करे सबद को चाट ।
मसा टीका तो ताह दे लटकया तो चाई खोटप'' ॥७॥



---

१ सुरमा (मु) सूरमा (सा) २ सुरम कसावत (का मु) अब सूर भावे (सा) ३ बीर (मा) ४ हिजब (सा) ५ नीहाहीत (१४०), म हुत) नीमाहीत (म) ६ निर्पोप (मा) भीरदोप्प (म) ७ कहे (सा मु) ८ वे म) ९ सीर (सा) १० नाहे (मा म) ११ मम्म (सा) मम (म) अब (१८- २६७ सा म) १३ × (सा म) १४ निभाता (मा) १५ से) १६ भसा ! (मा) १७ निभमु (मा) १८ मरे (सा) १ सुर (का म) अ (सा) २१ भटकया (मा) २२ वउ (मा) २३ भगा - खोटप । टिपका वा ताही देप्य टिपका तो पाई चोट (१४०) मगा ! ग्मिया तो ताको लटकया तो भाई खोट (मा) मसा टीका तो मोर्‌ व लटकया तो पाई पाट (मु) ।

२४

हैरा[1] अंग

सांया[2] तेरी साहबी[3] वन्दे कही न जाय।
असा अकल पग[4] टीके तो रसमा केसे[5] गाय ॥१॥
तेरी अकल सु मुझ अकल तरे वेन मुझ वेन।
तु तेरा भेदु असा तु तरे आंख[6] नेन ॥२॥
तुझ पर वार्रु हूं पणा तुज कदम पर कीरतार।
असा के भेसु हक तु पर[7] में[8] न सहूं तुज पार ॥३॥
अज भुलाया मीठ तु मौ[9] आसें मो[10] गेब।
आठु पहर[11] एसा रहे तो माहा लागे तुज एब ॥४॥
मे हु ता मो तुज हे तुहे नो मी तुंज।
असा नाम आगे करी तू आप दुराये मुज[12] ॥५॥

---

[1] हैरान (मा पु १८०) २ साँईया (सा पु) ३ साहेबी (पु) साहेबी (सा) (४) कदु कर (मा) ५ केसे (सा) ६ पण (सा पु) ७ हु (सा), ८ अजब (सा पु) ९.१ मिली (सा) ११ पेहेर (पु) पहार (सा) १२ मुझ। (सा)।

हस परीक्षा अग

बग हंसा रग एक है' वोउ मवे पाणी पाल।
बग ताके असा मछली मोती चुमे मराल ॥१॥
सांमा एक देपीमत' अवा मसारा था मंठ।
काया वाकत कबुधी 'हरीजन हरी हेरत ॥२॥
धन हसा महे खीरकु मारमा करके नेह।
चम चटाई गुरुकमा मवा बरपण एह ॥३॥
हरीजन' की कसा अवा हरी थापा के हरीजम।
जिस दाचानम जुगजरें' नाहा न याम तत ॥४॥
गुरु पदा चकार सिम दसा कसा अपार।
अमृत पोव चपमा सो बसते मब मगार ॥५॥
चंद बसत आकाश 'म भूपर' बसत चकार।
तो अमृत कानें' उतरे सो' मुमा अमा कह ठार ॥६॥
मसग' मुरत्य ताकी रहे सुतें' सुधा पाराम।
एसी मवा माबी बन मो हरीजन हरी पाय ॥७॥
पा रतन उपजे धमकू' हरो मजब का माव''।
ता अवा गुरु काहा कर ज्यु आपा त्यु जाउ' ॥८॥
ज्यु पाणी में पत्थर पड्या मीसा भया सवास।
तापर मण म उसरे असर नहीं रसास ॥९॥

---

१ मे (मा) २ दीमे (मा) ३ मौर (स) ४ म्याग (सा पु) ५ हरिपुर (मा) ६ जाने (मा) ७ मम (मा) ८ तब (१४०) मन (सा) ९ मीर (मा) १० भूमें (मा। ११ महानें (मा पु) १ > (मा) १३ मछ्छ प (मा १४ मुरत (पु) मुरते (मा) १५ जा जनकु—भावन उनके शिष्य का (मा) जा गय म उवज धमकू (पु। १६ भाव (पु) १७ जाव (पु)।

ज्यु मीरतर बरसत बरसा[1] भाउ भेद कछु माहे ।
द्रुम सकल हरा होतु हे अवा अरु सु काहे[2] ॥१०॥
हाम न माहावें[3] हठ करी तो अवा मील्ये क्यूं राम ।
ससोपतो माहाराम सु[4] आदर दुनीया वाम ॥११॥
आदर सरय[5] ससार पर हरी भगती सो[6] टोम ।
सो फल[7] कामु धामी[8] भवा[9] ज्यु[10] भस कीये बीना रोस॥१२॥

---

१ कृपा (मा) २ मवा हे—और मर्द मुकाता बाई (सा) मवा मरक मुवाहे (सा) ३ पाने (सा) ४ मीर (सा) ५ मरम (गु) मगति (१४०) ६ हरी.. ..सो—और हरिजन मों (मा) ७ पद (गु) ८ पामे (सा) ९ हुवा (सा) मा (गु) १० × (गु) ११ × (सा)।

क्रम[1] गड अग

पट दर्सन वेश[1] अबा तामे सारे बीगुबे[2] पैंम[3]।
आत्म मश बोन अंध है भम कर्म के मेम ॥१॥
मन मेला ब्रह्मज्ञानी बीना तम मेसा भीम बीर।
कर्म कल्पम[5] में कल्प[6] रहे पाये न पेली तीर ॥२॥
सब बाबे अज्ञानने गेहेनु कीये खराब।
सुपने में सरपु इसे सो भमे दमे देहे जाय ॥३॥
सागर आम्या ब्रह्मका बीच्य प्यासा मरे संसार।
मापा फोड[7] पानी पीये जो सदगुर मीले सार[8] ॥४॥
भेदू बीना भटकत अबा उसटा करत अम्यास[9]।
कचन काया आतमा ताकु[10] दे कर्म कपीर का पास ॥५॥
दीया मसामां रांगका[11] कंचम कीया खराब।
खाक[12] कर्म खोहोया[13] अबा त्युं गमाया आप ॥६॥
हुसि[14] जीव हुवा अबा हुवे[15] करावत कर्म।
कर्मे जडता उपजै ए माया का धर्म ॥७॥



---

१ कर्मजड (१४० सा गु) २ सोमे (सा गु) ३ नपुचे (गु) बिपूचे (सा.) ४ मैंम जैंम (गु) ५ कलप (सा गु) ६ कमी (सा गु), ७ छोड़ (सा) ८. सोमार (मा) ९. अभ्यास (सा.) १० ठाई (मा) ११ रंग (गु) हेम (सा) १२ मी (सा), १३ खोया (सा) माया (गु) १४ हॅसि (मा) १५ और (सा)।

अकल अंग

हम देसी होवे अखा जा[1] जाने हमारी रीत्य ।
परदेसी पीछे फीरे[2] दी देख भये भेमीत्य[3] ॥१॥
सेहेर सतसर एक रस जांहां[4] दुजा न समाय ।
आबादान सदा अखा[5] कोई कसत नहीं काय ॥२॥
दुख दारीद्र तांहां ना मीले[6] यहुं बसत दीवाने लोक ।
अलक पुरी आस मे सपने न मीले सोक[7] ॥३॥
लोक वेद पोहोचत नहीं[8] आप मुरादी सेहेर ।
कोयेक सत्र मेसे अखा[9] बाहार[10] न काहाडे[11] सेहेर[12] ॥४॥



---

१ सो (सा मु) २ सो (सा) ३ भय... भीत्य—भये भयभीत (सा) ४ तांहां (सा) ५ तांहा (सा) ६ × (मु), ७ अलक सोक—अलख पुरी आकाशमा सुपने न मिले सोक (१४०) अकलपुरी आकाशमे सुपने न मीले शोक (मु) अकलपूरी आकाशमे ज्यहां सपने न मिले शोक (सा), ८ ज्यहां (सा) ९. तो (सा) १० फिर (सा) ११ कोइ (२६७ मु) १२ काढ़ (सा) ... (सा) १३ पेर (सा मु), पेह्य (१४०) ।

कर्म[1] कौ अंग

षट दर्सन देख[2] अला तामे खरे बीपुधे[3] जैन[4] ।
आतम मता बीन भम है बस कर्म के मेन ॥१॥
मन मेला ब्रह्मज्ञानी बीना तन मेला बीन बीर ।
कर्म कस्मण[5] में कल्म[6] रहे पाये न पेसी तीर ॥२॥
सब खाये अमाममे गेहेनु कीये सराब ।
सुपन में सरपु डसे सो भमे बमे वेहे बाय ॥३॥
सागर आम्या ब्रह्मका बीच्य प्यासा मरे संसार ।
आपा फोड़[7] पानी पीये जो सदगुर मीले सार[8] ॥४॥
मेघू बीना भटकत भया उलटा करत अभ्यास[9] ।
कचम काया आतमा ताकू[10] दे कर्म कपीर का पास ॥५॥
दीया मसामा रांमका[11] कंचन कीया खराब ।
खाक[12] कर्य खोहोया[13] भला रयू ममाया आप ॥६॥
हूंसि[14] जीव हुवा भला हुंस[15] करावत कर्म ।
कर्मे पडता उपजे ए मामा का धर्म ॥७॥



---

१ कर्मबंध (१४० सा पु) २ सोजे (सा पु) ३ बयुधे (पु) बिपुधे (सा) ४ जैन जेन (पु) ५ कश्मल (सा पु) ६ कल्मी (सा. पु) ७ फोड (सा) ८ सोनार (सा) ९. अभ्यास (सा.) १० ताहे (सा) ११ ऐम (पु) हेम (सा) १२ भी (सा) १३ खोया (सा) खोया (पु) १४ हूंसि (सा) १५ और (सा) ।

अकल अंग

हम देसी होवे अखा आ[1] जाने हमारी रीत्य ।
परदेसी पीछे फीरे[2] दी देख भये भेमीत्य[3] ॥१॥
सेहर सतंतर एक रस जोहां[4] दुजा न समाय ।
आबादान सदा अखा[5] कोई कसत नहीं काय ॥२॥
दुख दारीद्र ताहा ना मीसे[6] जहूं बसत दीवाने लोक ।
अमक पुरी आस मे सपन न मीसे सोक[7] ॥३॥
सोक[8] वेद पोहोचत नहीं[9] आप मुरादी सेहेर ।
कोयेक संत मेसे अखा[10] बाहार[11] न काहाडे[12] सेहेर[13] ॥४॥



१ मो (सा मु) २ तो (सा) ३ भय... भीरम—कभी भयभीत (सा) ४ ताहां (सा) ५ ताहा (सा) ६ × (गु) ७ अमक... सोक—अकम पुरी आकाशमा सुपने न मिम सोक (१४०) अकलपुरी आकाशमे सुपने न मीसे शोक (गु), अकमपुरी आकाशमें ज्यहां सपने न मिमे शोक (सा) ८ ज्यहां (सा) ९ तो (सा) १० फिर (सा) ११ बोह (२१७ मु) १२ काढ़ (सा) काढ़त (सा), १३ पैर (सा गु) पैठ्य (१४०) ।

भक्ती वीवेक अंग *

मन सकम हरीया भखा फुले फले ममराय।
ताहाँ' माप ममामी मांस मीमा बांधे भुख मर माम ॥१॥
मीठी सेवा समुलकी मोसा ब्रह्म जमान।
पख पामोका अर्थ ना कर मखा ईसुका पाम ॥२॥
पामी' कारन ईसुका ताम मधुरा मीसा बीकार।
स्यु' चैतन सब' समरा मरपा कामना सो साकार ॥३॥
मर्मि' ध्यामकु' सिध्य' मही ए कर्म' सीध्य अपार।
फीरते वाकु पुवसी' केसे'' सीख वीस्तार'' ॥४॥
ज्याकु'' आप दर्मा मही सो कर आप'' उपचार।
प्रतिबोध क आंबका'' कीनु फल मरप्या रसाल'' ॥५॥



---

* इस २८वें अंगकी ५ साखियाँ मा में अलग अंग मे मिलती है। १ थम (मा) २ ज्यु (मा) ३ मिगुम (मा) ४ × (सा) ५ और (मा) ६ ढिपा (मा) भरमी (मु) ७ ममवा (मा) भामकुं (मु) ८ सिद्धि (सा) सिध (मु) ९ एक मनो (मा) १० बका' (मा) ११ ममु (मा) १२ बितार (मा) चीतार (मु) १३ जिनकुं (मा) १४ और (मा) और (मु) १५ प्रति ...... आंबका—जब पानी कि अंबका (मा) १६ प्रकार (सा)।

२९

नदीक[1] अग

पहेल्ये[2] होड पामबा कल्ये[3] कल्य[4] करवा काम ।
तब[5] मन धन बारा[6] बाना अखा मील्ये समम राम ॥१॥

मुख प्यारा माहाराज कहे[7] ग्लमां प्यारा दाम ।
ज्यो कुसटा प्यारो आरहे[8] ओर प्रगट पीच को नाम ॥२॥

नदीक नर आर सूहर[9] का सेहेज एक सुभाई ।
आ मधा करे को मल मखे दोउ पाक[10] करी मगी जाई ॥३॥

नदीक नर ओर गुहडके[11] के बेसा[12] उघडे मेन ।
राम[13] अर्क तहा अंध है देखत नथा[14] रेन ॥४॥

नदीक पुरुष अरू काग का एक सुभावे वास ।
हरीगुन हरीमा वृक्ष तजी ताकत मथा सास ॥५॥

नंदिक नर बुधा गधा दोउकी[15] कुमत्य बीसास ।
हरीगुन ग्रन्थ मे बुबरा माता मथा उनाहास[16] ॥६॥

हरी मीथा हरी सहो सके पण जन नथा न सहेवाय[17] ।
ज्यु आमे असपर वाढीमे पण मीर पर बस्या न जाय ॥७॥

मदिक नर मथा कर हसी हसी सहेज सुभाय ।
ज्यु हुसे अफीण कु खाइमे पण अते अफीण पुवाय[18] ॥८॥

---

१ निन्दक (सा) २ पेथ (मा) (३ ४) कठ कठ (मा) ५ पण (मा) ६ वार्पा (मा) ७ भीर (मा) ८ दिस (धा) ९ स्नेही (मा) १० मुवर (सा) ११ पातक (सा) १२ भुवड (मा) १३ कवला (मा) १४ भान (सा) १५ निन्दा (मा) १६ देनी (सा) दामु (मु) १७ नगाम (मा) उड्गाम (मु) १८ मुहाय (मा) १९ मन माप—उमटा ताकु नाम (धा.) ।

हरीजन मीसा[1] हरि पाइमे भ्रामण[2] मीसा संसार ।
वाकु जाकी चप आवा सो तेसा करे[3] उधार[4] ॥९॥
भ्रामण[2] मीसा कर्म जडकरे हरिजन करे हरि रूप ।
ज्युं पाणी कु सीत जडकरे फीरी[5] रस करे सु धूप ॥१०॥

---

१ मीसे (पु) २ बाम्रन बाम्रण (मा) ३ करा (मा) ४ उपचार (पु) ५ कर्मी (सा) ६ ताहे (सा) ।

गुलतान अंग

पेनर[1] की पक्ष न करे मन के नीकट न आय[2]।
एकातीत वे हो रहे सो बरसा[3] जुग माय[4] ॥१॥
अखा आमी कुं नहीं मता मत जांहां तांहां संसार।
मत पींज्यर फुट होए पड्या सो जीव रह्या नीरधार ॥२॥
पींजर पड्या पडे सुआ ता पर रीझत बत।
पण बेहद का बोले अखा सो कोईक मसमस्त[5] सत ॥३॥
ताथे ताउ मीस नहीं ए माया का फंद।
स्वांग पहेन्या सांई[6] मा मीसे मासा मुग्ना पुर।
मीर पुपक सहते नही अखा मढता है कांई पुर ॥५॥
सुप माठी स[7] सड़ तो भी है समसेर।
भार मगोरे स[8] फीरे पण[9] सुरा आगे जेर ॥६॥
*अखा मन संसार का नीस्चे न रहे मुंच।
बोहो बीध्य करी समझाइये पण ज्युं[10] कुंजर का सुंघ ॥७॥
अधा पढ परचा बीना सुणे सुणावे ज्ञान।
कीधुं गाढ़ी मेख ज्युं[11] ठहेरत नहीं नीरबांण्य ॥८॥
जाहा राखे मन ज्ञान की तो पर्दा दोतु[12] फाड़्य।
के है मसा दो को[13] रहे म्यान एक तरवाड़्य ॥९॥

---

१ पंवर (सा) पनर (पु) २ आइ (का) ३ बिरसा (सा) बीरला (पु) ४ माहे (का) म्हाय (सा) ५ समभत (सा पु. ३४०) ६ मति (सा पु) ७ पीव (पु) भांडिका (सा) ८ × (मा) ९ मै (सा) १० बरे (मा) ११ बोर (सा) सो (पु) १२ पण ज्युं—फिरी (सा) १३ निशान (सा) १४ सोनु (सा पु) १५ बधु (सा) क्यों (पु)।

* सा के अनुसार यहां से अधीर अंगका आरंभ होता है।

हे एसी' बो' ना मह्रे तो का' मारे नीरम सीस्य ॥
सुरा बाली मा फीरे सोनु पास बकसीस' ॥१०॥
चीत न छोड़ चातुरी चाण पमेका चोर।
अबा चोर काहा' चीत र जे' आपे हो रहा मार ॥११॥
मान बड़ाई बीष्म पडी पनवन का अधकार'।
सोई साधन मान्म अबा ताम नहीं दीदार ॥१२॥
सोन' बडाई जानीय जैसा तमकु होइ'।
तन गोरा सा देखीये अबा सा अग कू वाश्य ॥१३॥
पडते पीच न पाईये मत काई राखो माम''।
अबा ज्यु बांदा हेम का रैंणमा म आवे काम ॥१४॥



१ तेसा (सा) मो (मा) ३ सबा (मा) ४ बधिम (सा) ५ नहीं (सा) ६ जो (मा गु) ७ अधिकार (सा) अधीकार (गु) ८ मांभा (गु) ९ मान (मा १४०) मान (गु) १० चोम्होर (१४०) ११ मोम (गु) माम (मा)।

३१

मीटक अग

अड बेमासा[1] साध अखा त्यौंसु साधक नाम।
वतन बेधी जब हुआ तब पावे आराम[2] ॥१॥
अखा संगत्य सा भली जे अनुभे आत्मम भाय[3]।
आत्मम बोध जाभे नहीं मत तासु[4] पसिआय[5] ॥२॥
हीतकारी भी हे रीपू जाभे नहीं आत्मम अभ्यास।
सो संगीकु सेता जरे ज्युं वृक्ष पलेटा[6] घास ॥३॥
दाना छोडय नागानगी कर्म अड केरा सग।
अखा[7] फल ईन्द्रवारणी मत रीसे नूरग[8] ॥४॥
कबुधी सगी नहीं भला सु प्रीत्यम कु करे उमान।
राधक साथ बाधे अखा वीमुख करे भगवान ॥५॥
आपे कोई नीरखे नहीं[9] खंड सवकु बाध[10]।
वचन बीडारे बेदके अखा जे आप अनाथ ॥६॥
सोई बीटका[11] मन मुखी नहीं कोई की परतीत।
ताका सग करे अखा सो राम न पावे मीत ॥७॥
नीरख नही ताहीं भक्ती[12] का नहीं ग्यान[13] बैराग्य।
धुकम कुटत नीरख अखा कबहु न पावे जाग्य[14] ॥८॥
आप आयुध मीरयधरे आर कु भी सुझाय।
"सुरपमा[15] यारा अखा ताका नहीं उपाय ॥९॥

---

१ बेगा (१८० २६७ गु) बिथा (सा) २ अमाम (मु) ३ आत्मम साम—भ्रंनमलाई (सा) ४ ताहु (मा) ५ पतिहाई (मा) ६ लपेट्या (मा) लपेटे (मु) ७ ग्यु (मा) ८ इन्द्रवारुणी (सा) ९ तु रम (मा) १० बीर (मा) ११ बाद (गु) बाध (मा) १२ बिटका (मा) १३ भान (मा) १४ भक्ति (सा) १५ ताग (मा) ग्याप्य (गु) १६ सो भी (सा) १७ सूर (पु)।

असन बसन बीन जे फीरे सोहि अभागी नाहि ।
अभागी ताकु जानीये जे हरी हीरा गुमाय ॥१०॥
असन बसन के कारण सेवे रामखार ।
रामकु बोध' बोधे अखा ताको काहा ईसबार ॥११॥
माथा मुना जे फीरे कर ले अपना सीस ।
वेसासच्य बोले अखा सो नर देखे' जुगदीस ॥१२॥
मान' मीट्या' चोर मग मुआ तमकु दीया तसाब ।
सा साँई ते भीन्म नहा ज्यु फीरी जस महीं साथ ॥१३॥
अखा अगमकु' कथि कथि आपा रहा गुमाय ।
आप' गुमाया उबर्‍या' सा ता कथ्या न जाय ॥१४॥
अखा आपा मेल्से साखा गया ससार ।
गाढा साहार मगाईमा हार्‍या' हाकणहार ॥१५॥



---

१ बाबद (सा) २ बप (सा) ३ मान्व (पु) ४ मीना ५ जब (पु) ६ अमम (१८) ७ आपा (१४०) ८ वमा (१४) ९ उबना (पु) १० हामा (पु) ।

क्रीपा' अग

हरी क्रीपा तब मानीये जब हरीजनसु हाये प्यार ।
राम मुसका मोफ्डा हरीजन नाका तार ॥१॥
जन छडा हरी सुसका जो आवे कमहु हाथ्य ।
उलसण सब' मागे' भखा सब देखे रघुनाम ॥२॥
हरीजन ताकु जानीये ज पक्ष करे नहीं पास ।
नीरदावे बसत भखा सोहो सत की आस ॥३॥
ऐसे जनकु सेवते ततक्षण पाइये राम ।
मार उपाय ससार कु मार्वे साधन काम' ॥४॥
हरी अरथी कोई भखा मत अरथी बहु मोफ ।
मनम उधारे ज' करे सो राम न पावे राम ॥५॥
मस्य' कु सत्य माने भखा पण' सत्य सु नहीं पहचाणा ।
तेमे जीवसु बोलते होरा आपका जान ॥६॥



१ क्रपा (मा) २ धारी (सा) ३ गई (गा) ४ मौर _ काम—
ौर उपाय मवे भखा ! मन साधन की माम (मा) ५ बहु (सा) ६ मत्
मा) ७ मौर (सा) ८ एम (मा) ।

१२

ज्ञानदग्ध अंग

ज्ञान दग्ध न नीपजे ज्यो कुम्भक[1] सामे माठ[2] ।
अवा न पावे[3] आगडू[4] ज्यां वास सो मन[5] काठ ॥१॥

ज्ञानदग्ध न नीपजे ज्यों राँधे अपनी आर ।
ज्यूं पाव[7] नीरायां आव फल सो पाकत नहीं ॥२॥

ज्ञानदग्ध न नीपजे ज्यूं पेहन सुधांणा मीन[8] ।
ज्यूं मठा[9] सुध[10] मस[11] नही जा कीज कोट उपाय[12] ॥३॥

ज्ञानदग्ध पड़े अवा सो वाद करन के काज्य ।
जैसा बोसण गुहड़का पीरया[13] रूप अवाज ॥४॥

चतुर गवैय्या गुनी मीस आर[14] अगम निगम का[15] ग्यान ।
पुरा कोई बीरला अवा जाकु[16] हुरा सेवी पेहचान ॥५॥

नीरदावे का नर अवा कोई बीरला पुग[17] माहे ।
दम[18] समाध जत्क कु एक यहात पड[19] ज्याहा साह ॥६॥

नारदावा न नीपजे पाव[20] गामन[21] सल्प[22] ।
अवा उतरना उदधि आर कठे बोधा सल्प ॥७॥

---

१ कुम्भक (१४०), कुम्भई (सा गु) २ आठ (सा) ३ पाके (म
४ गामड़ (सा) ५ वास सो मन—जारै मोमुम (२६१) जारै सा मन
(सा) ६ काम (सा) घातु (गु) ७ अब (सा) ८ मन (सा गु
९ बंठ्या (सा गु) १० पच (सा), ११ ममरै (सा) मीस (गु) १२ मन
कोट अतल (सा) को कीसे काए जतन (२६७) १३ बिमर (सा
पीना (गु) १४ × (सा) १५ × (सा) १६ पुरा जाकु—अग
सानें मा मिले (सा) १७ मव (सा) १८ दाम (सा) दम (गु) १९
(सा), २० और (सा) २१ × (सा) २२ बिन (सा)।

नीरदावा का मर अखा जसा काठ का नाउ[1]।
दावा पथर नीमझ्या[2] सब समेत गरकाउ ॥८॥
समुझ साचा सो अखा धड[3] पेहेचाने जेट।
लख पेहेचोग्यां नीपजे भत[4] न देखे देह ॥९॥
देहे दरसी कुरमती अखा सत्य थापे[5] ससार।
सो सुधा[6] समझे नहीं जसा ज्ञान मीचार ॥१०॥
ज्ञानी यहे छाड अखा आ सत्य थाप[7] ससार।
सुपने[8] मे सरपु टपस्या सो जाग्रत काहा उपचार ॥११॥
आपा थापे नही अखा ता रहेणी का काहा थाप।
आपा मनि[9] अणछता सो मीथ्या करता अलाप ॥१२॥
रेहेनहार[10] रेहेनी नही एसी केहेनी मोम।
अखा धुअर वाचका भरताहे सब काय ॥१३॥
ज्यु चलीये त्यु चाल्य हे ज्यु रहीये त्यु रेहेन।
सब गत्य राम रमे अखा देखो गुरु के नेन ॥१४॥
सब रेहेणी हे राम की हे अक्त त्य अगदीस।
अखो केहे[11] बल आपे रमे त्यु अछता काढ सीस ॥१५॥
कोई केहे केहेणी[12] हे भली कोई कहे रेहेणी सार।
आत्यम दरसन बीन अखा सब कोई करत पाकार ॥१६॥
सीधा टेढ़ा मत कहे तु अपना[13] छाड़ सियान।
जसा हे सेसा हरी मीथ्य सु क्या हाय आन[14] ॥१७॥
ऐस जाग्य बीन अखा रुदे न सीतल हाय।
मोसु प्यास म भाग्यही अखा[15] अखा हरी ताये ॥१८॥

---

१ काओ (गु) भाव (सा) २ नीमरया (गु) मावडा (सा) ३ कन्य (गु) कल्प (मा) [४ भत्ते (मा) ५ सम्यक (मा) ६ थाने (मा) ७ त्यु (मा) ८ सरया (मा) सरा (गु) ९. माम (सा) पाप (गु) १० ग्यहो (सा) ११ × (मा) १२ रहेणी (मा) १३ तेरा (सा) १४ जेमा ...आन—जसा ! भारे है हरि तो तुं कयु हाय बिन आन ? (मा) जसा पैसा तेमा है हरि बीच तु क्यों होय आन (गु) १५ पीमा (मा)।

अजब तमासा आप मा जानत बीरला[1] काम ।
हु सो तु हुं ही नहीं[2] एक अखो केहे[3] दोम ॥१९॥
हु हुं को पेहेचान से तु तुज ताकी देख्य ।
ज्यु का त्यु मीहासत रेहे अखो केहे सेप ॥२०॥
समझ अखा तु[4] साई कु मेनु भीतर माहो ।
आपा मोटु आप हे ज्यु पवन क बाग[5] राहा ॥२१॥
पवन[6] बीन न पाइये राहु दरसन की काम ।
तु[7] सोब समकण में भासीये जीव सा[8] आम पपास ॥२२॥
जेही पडप मे प्रान[9] बमे ताही[10] बसत प्रापस ।
कागल मोट नहा अखा ताहा बोध्य पड़े[11] बहुन्स ॥२३॥

---

१ नाही (मा), २ तु सो हं हुं हु नही (मा) ३ है (मा) ४ कहे (मा) बदके ५ मोरे (२६७ १४०) ६ पव (मा यु) ७ नोई (सा.) ८ त्यु (यु) × (मा) ९ सो (यु) १० प्रापी (यु सा) ११ त्योंम (सा.), १२ पस्पा (गु) ।

समस्या अग

स्वान¹ समझ कर पेहेनीया मेद कीया भगवान।
सो क्यु चाल चले² अबा काहा कछु हे नादान ॥१॥
नट ज्यु स्वांग लावे सबे सो बोली बोलत चास्य।
जब³ आप देखावे मूलगा ता अबा नहीं बन वही ख्याल ॥२॥
आप मुकाना लोक में लिया जक्त का रूप।
ज्यु नरपती नट होई खेलते⁴ केसे⁵ केहे मे भूप ॥३॥
ए⁶ बीचारो अनुभवी देखो⁷ दस के माहे।
ज्यु दरपण मे मुख देखीये पम मुख में दरपण माहे ॥४॥
त्यु पड्य मध्ये पीउ हे ज्यु आरसी भीतर अग।
बोलण डोलण पुस⁸ ना अवा साईयां सग ॥५॥
अजब कला आनन्दघन कुध्य केस¹⁰ कर बीचार।
"पार नहीं प्रतीबीबका "तु सबी¹¹ समझ सानार ॥६॥
खाजत खोजत खप गया ख मध्य खोजनहार।
तब अखो केहे सा¹² रहा आका वार न पार ॥७॥
सांई मखा केहे सबे मीस जे खोजे ना देस।
फीरत ही फीरत फना भया बीनु खोजा परदेस ॥८॥



---

१ स्वांग (मा गु) २ चूक (सा) चम (गु) ३ मा (सा) ४ मूर्पति (गु) ५ मा (मा) ६ मधु (सा) ७ ए हि (सा गु) ८ विचारा (सा) बीचारो (गु) ९ पुम (सा) १ पुरुष (सा गु) ११ मधु (मा) १२ ज (मा) १३ मा (मा) १४ बीबी (गु) १५ सब (मा)।

२५

मरूँसा[1] अग

जो जन होवे राम का ता राम भक्ता रास्य ।
कहा[2] च्युधी भटकत फीरे सुन अजगर की साख्य ॥१॥
अजगर रेहे आनन्द में न करे आस उमेद ।
सो पशु मे पुरुष नीच है जे अबा न समझ[3] भद ॥२॥
जो खाना सीना सींच का तो मन नीमझे सीमास ।
काट[4] भागा आनंद ग्रहु तो अबा न सागे काल ॥३॥
नीधणी भापर का धणी[5] साचा सरजणहार ।
धणीयाते वेसा अबा अदक[6] पद को भार ॥४॥
तुष्ट पुष्ट मन मे पशु नही काहू की आस ।
धणीयाते देखो अबा पीठु मीक्सा माम ॥५॥
नीरासम मीष्य में रहे[7] काईक नरखड़ भाग्य ।
देहे दरसी दुरबस अबा रहेत मष्यारपु[8] साम्य ॥६॥
मर हावे नाराण्य[9] का ता मठ भटक सु भाहार ।
अबा न ताग मनकु ज[10] चाहे देदार ॥७॥
जब सुरीजन सांहांमा हुआ तब असन महो भायास ।
ज महाराजा (म)मामी अबा मा[11] मीष्य तार्ग पास ॥८॥
परने[12] का जुमती[13] पसा सगार[1] सती को साज ।
जा[14] असन मसन कु उर धरै ता अबा हाय अकाज ॥९॥

१ मरोमा (मा) २ बसा (मा) ३ बाबै (सा) ४ पोम्पा (मा) ५ दु (पु) ६ काट (मा पु) ७ नीधणी धणी—निधणीआ वाका धणी (सा) नीधणीआ का है धणी (गु) ८ जे (मा) ९ जन मये (मा) १० मीर (पु) ११ रप (मा) १२ आधार (पु) अविनंबन (मा) १३ नारायण (मा पु) १४ मा (गु) १५ मव (सा पु) १६ जमनै (सा) १७ मुक्तो (मा) १८ माज (सा) १९ तब (मा) × (पु) ।

मन हो रहे महाराज का मुल्या मीज मर आय।
आत्मम जाण्या बीन अखा' हाटु हार वेकाय ॥१०॥
सठ मन सो साधन करे ज्युं जीव की जड़' जाय।
मंद मत्य मन मारे नहीं त्युं त्युं पड़य' पोपाय ॥११॥
जड़ काटा' फल उपजे सो फल जानम गुरुधाम।
जे जड़ सींचा फल उमटे' ताकु खावे काम ॥१२॥

---

१ ज्युं (ता) २ जाण्या (मा पु), ३ पेड़ (मा), पड़ (पु) ४ काटे (ता), काटयां (पु), ५ उपजे (पु) परमटे (मा)।

३९

कपट अंग

कपट लोभी लालची नीर्लज चोर लबाड़ ।
अखा असत्य नही आत्ममा जैसे छाया ताड़ ॥१॥
जैसो कुमटा नाम्यमी कूटा मन फजीत ।
सो हरे फरे हरीजन में पण एसी मन की रीत्य ॥२॥
सो कपते बदते देखीये कहे सुने गुनग्राम ।
ज्युं अखा कंठ पयोधरा' अखा न आवे काम ॥३॥
मामन की सेहु' गाय' हे मस ता' मसनी साम्य ।
अखा मसे जो अगमी' तो वकया' रहे रघुनाथ ॥४॥
से तोन बीम ज' श्रीहरी मोर' सीर दव सग नारूप ।
आप पकावत'' पंच में सास्का सीरदार'' ॥५॥
कपते बदते देखीये'' सुणत सुणावत ज्ञान ।
मस पावत रामकुं'' अखा कपट का मान'' ॥६॥
माप अधिक'' नहीं मारपये'' घन आसे धर्म नीप ।
मत आगे सत्य ना कछु' जे कस'' बीप में कीच ॥७॥
पंकज' पछी'' वस रहे दादुर दुरवस जात ।
त्यों सत्संग छाड़'' अखा'' पसु बीपे पंक खात' ॥८॥

---

१ मो (सा), २ सै (पु) मम (सा) ३ समायठे (पु) बाण (सा) ४ रहे (पु) ५ अपना (मा पु १४०) ६ पन्ना (मा १४०) ७ पवी (मा) ८ मंतम (मा) ९ कपजे (मा पु) १० × (सा) ११ पंचावे (मा) १२ मीरदार (मा) १३ कबते ...देखीये—मुख तित्य मिथ्या करे (मा) १४ केम रामकुं—तो हु न पाव आतमा (मा) १५ ज्यों न (मा) मोन (पु) १६ अधिक (मा) अधीक (पु) १७ नारा (मा पु) १८ अखा (मा) १ पौ (मा) २० ज्यु (मा) २१ पै (पु) पर (मा) २२ छोड़ि (मा) २३ रहे (मा) २४ खात (मा) ।

पाप ताप सब बामीमे अबा सत मे संग ।
सा मीकट ये दुर पड़ ज्यु भैन बस्यो' कंठ गग ॥९॥
अबा मीपय की मक्तो ज्यु जबन के' द्वारे गाय ।
सेवपग' स्वारथ लीयां' सो' जानत' नहीं महिमाय ॥१०॥
मीप भो सतसग करे सो मीष पड़ बीघात' ।
ज्यों भाग्यहीना' रसायनी अबा'' न घाते घात ॥११॥
आसा मुखी अभागीया जो घर मुस गजराज ।
दघीच''पे'' जाचक भया अबा देख' देवराज ॥१२॥
नराती नर राज्य'' है जा कटी'' न मीलत'' कापीन ।
अन मागे' सो नाथ पे कबहु म माख दीन ॥१३॥
मत'' मुकीने मानवी वीष्यसु करा बीचार ।
मा भण आयास आत्यमा सहेजो' पाम्या' पार ॥१४॥

ग

१ मसत (सा) बसे (गु) २ जबन के—जबने (गु), ३ सो (सा) ४ लिये (सा) ५ पग (सा), ६ मूर्ख (सा) ७ बोपई (गु) विषयी (सा) ८ मा (सा गु) ९ व्याघात (सा) विघात (गु) १० कर्महीन (सा) ११ ताहे (मा) १२ दधीची (सा गु) १३ का (सा), १४ देव (सा) १५ राज (मा), १६ करी (मा) १७ मम (मा) मीम (गु), १८ म (गु) १९ न (मा गु) २० मान (१८०) २१ बसा (सा)।

१७

चीदाकास अग

आेड्य' भग्क' अम्दनो बीपे' ठर्ष बाम चसचीस ।
गश्बड़ सारो महो भवा है ज्यु का स्यु जगदीस ॥१॥
अता' जाद जाद काहां जायगा आगे-आगे आकास ।
गाम गाय काहा गायगा बाचा' पाब्द चीसास ॥२॥
ज्यु पार नही आकादा का स्युं दाब्द भी अनत अपार ।
मथा तपासो ताही कु पे कोण हे बोलणहार ॥३॥
बोले सा बोलता नहीं हे अबोलते का' भेद ।
एसे' आवे बीम अजा काहा पडे होये बेद ॥४॥
हरीजन हाजर ा हुकम हरी त ।
नेम वेन वेहेन एमे ॥५॥

दुमति अग

ज कोई दुरमति जीवकू हरीसुन मीलत हेत ।
जसे कुलटा काम्मनो पती तन जारकु' मेत ॥१॥

हरी प्यारा ताकु' अखा मावत' हरी की वात ।
रीझ परे रग बहु बने होत नहीं बीधात' ॥२॥

मखा छेहेम जनमकु हामे ज्ञान की प्रतीति ।
नहीं तो अटके भव मीघ' ज्युं सती बहेल की रीरय ॥३॥

अलप मति अभागीया कब' मीले हरी सग ।
होप देव' सा दुरमती ज्यु त्यु पह ताकु'' भग ॥४॥

हरी त्रीपा बीण्य'' सुन अखा प्राणी पगु समाण्य ।
उपदेश अंग'' त्यागत नहीं मक मनत नीखाण्य ॥५॥

अखा आत्मम प्रगट ता आग कर्म अनेक ।
ज्युं अनेक'' उडगण आथमे जब उदे भया अर्क एक ॥६॥

आत्मम ज्ञान बीना अखा भुंई'' जानो'' ससार ।
''सो मण केस जलाईये न ताप न खाक अगार ॥७॥

सुग्या सुनामा काहा भयो जो सुनत म आद् पाति'' ।
अखा बजायो का भयो ज्यु बेहेरे भाग सत्र ॥८॥

---

१ जारे (सा) २ मनकु (मा) ३ मने (सा) ४ कबहू (सा) ५ व्यापात (सा) ६ भव बीचे—भुवन में (मा), ७ ×(सा) ८ बम (मा) ९ अभागीय कब—अभागीयाकु का कदि (मा) १० देन (सा) ११ बिच (मा), १२ बिन (मा), बीनु (पु) १३ मति (सा) १४ मगठ (सा) १५ ऐसा (मा) १६ ए (सा) ज मै (पु) १७ ज्युं (मा.) १८ भोल (मा)।

३७

चीदाकास अंग

बाम्य' अटक' अम्यनी बीप' उप पाम वसबीस ।
गड़बड़ सारी महीं भखा हे ज्यु का त्यु जगदीस ॥१॥
भखा' बाय बाय कांहां बायगा आगे-आगे आकास ।
गाय गाय काहा गायमा बाघा' धम्ब बीमास ॥२॥
ज्यु पार नहीं आकास का त्यु धम्ब भी अनत अपार ।
भखा तपासो ताही कु जे कोप हे बोलणहार ॥३॥
बोसे सो बोलता नाहीं हे अबोलसे का' भेव ।
ऐसे आवे बीन भखा काहा पडे होये वेद ॥४॥
हरीजन हाजर हे भखा हुकम हरी के माहि ।
नम बेम बेहेन एम हे एम नेह नीबाहे ॥५॥



---

१ माडव (सु) २ ए (सा) ३ ७ (सा) ४ × (सा), ५ मव कि (सा) ६ बोलनै (सा) ७ येही (सा)।

दुर्मति अग

ज कोई दुरमति जीवकु हरीसुन मोलत हुत।
असे कुलटा काम्यनी पती तन आरकु' देत ॥१॥

हरी प्यारा ताकु' अखा भावत' हरी का वात।
रोस परे रग बहु बने' होत नही वीघात' ॥२॥

अखा छेहेल जनमकु हाये ग्यान की प्रतीति।
नहीं तो अटके मव बीप' ज्यु तसी बहेल की रीत्य ॥३॥

असप मति अभागीया कब' मीले हरी संग।
दोप देब' सो दुरमती ज्यु र्यु पड़ ताकु" भग ॥४॥

हरी कीपा बीण्य" मुम अखा प्राणी पशु समाण्य।
उपत्देश अग" त्यागत नही नर्क भजत मीखाण्य ॥५॥

अखा आत्यम प्रगटे तो आग कम अनेक।
ज्युं अनेक' उडगण आथमे जब उदे भया अर्क एक ॥६॥

आत्यम ग्यान बीना अखा भुंई" जाना" ससार।
"सो मण केस जलाईये न ताप न खाक अगार ॥७॥

सुग्या सुनाया काहा भयो जो सुनत न आइ पोग"।
मघा बजायां का भयो ज्यु बेहेरे आगे सत्र ॥८॥

---

१ घारे (सा) २ जनकु (सा) ३ घमे (सा) ४ बबहु (सा) ५ म्यापाउ (सा) ६ मध बीगे—मुबन में (मा), ७ ×(सा) ८ बत (मा) ९ अभागीप कप—अभागीयाकु बो कर्ग (मा) १० देमे (सा) ११ बिच (सा) १२ बिन-(मा), बीमु (गु) १३ मति (सा) १४ मनत (सा) १५ ऐसा (मा) १६ ए (सा) ज मे (गु) १७ ज्युं (सा) १८ बोत्र (मा)।

सुने सुनाया काहा भया जा अंतर ज्याव न हाय ।
पाणी मोग्या मुग ज्यु उलटा मरमी साहाम ॥९॥
कथे कथे' कथा सुने' अथाह' न लाग हाथ्य ।
नीरमल नेत्र बिना अला काहा करे वीसालास ॥१०॥



१ कथे (ना मु) २ पण (ना) ३ अर्थ (ना) हारत (मु) ।

आत्यम परीचा को अग

मुज बास्या' ते बोम ै मे आमा बोमे बीब ।
बीब देमसे नहीं मना ज्यू का स्यु है' सीब' ॥१॥

स्यु स्यु बोमण हृदमा बेरद भी बक ओर ।
मसा सद ज्याहो सूरमा बोम सांहां की ठोर ॥२॥

बीब केहे में' दो मया मीब तांहां बोमण न होय ।
बीब ईस्वर बामें' मबा सा बानत बीरमा कोय ॥३॥

मोरम बाम को ही मबा ठोर नहीं ज्यां ही नाम ।
मत कोई मुस' मम में बमता देखी बाम ॥४॥

हरी देखे सो हरी मबा' मोम देखे सो बत ।
ताकी मीमत्य ताही में मोर माहा'' पडे'' तत ॥५॥

माग सहो के सतगुग सहो मब तब एही उपाय ।
हु तु धीम है आपे हरी समाम्यां दैत पसाय'' ॥६॥

हुं माग्या तो भस मबा' तु बाया तो'' मम ।
हु तु'' एक ठेहेरे नहीं ताप गाते दम ॥७॥

पाणनहारा आप मबा बमस्य म माबे आस ।
पे मागे' जुग तरफडे ते पमु माम पंपास ॥८॥

---

१ बोमीठे (पु) बाबनि (सा) २ मीम (पु) ए (पा) ३ पीब (मा) ४ स्यु स्यु हुं तु (मा पु १४० २१७) ५ महेतेमें (मा) बडे मे (पु) ६ ता (पु) ७ पूम (मा) ८ जिम (मा) ९ मूमो (मा पु) १० मीर (सा ११ मया (मा) पड़ा (पु) १२ पाड (मा) पड (पु) १३ मैं नहीं महा तु हरि तब हुं तु बोमु माया । हुं तु बोम हेमाये हरी समभा है पैमाब (पम १४०) १४ के (मा) १५ महाप (मा) १६ पम (मा १७ माने (मा पु) ।

वीरची वीगत्य करी मध्य सके मरक न लहे पे हेमुसाम ।
ते पोत प्रकास भये अखा पाम्यो अमृत पोम ॥९॥
भेद न समझे मम भी[1] वेहे मुपण नो भार ।
दुपण[2] द्वैत कंठे अखा न चीन्यो सच वीचार[3] ॥१०॥
अखा वीच्मारे वीपु[4] नहीं दो[5] दुपण सामुं[6] होत[7] ।
त्यांहां ये धाता न समझे ज्यम अग्नी न लागे सीत[8] ॥११॥
आत्यम त्यांहां भटकण नहीं अखा भटकण त्यांहां[9] माय ।
सच जाने[10] सापी[11] कसो न त्यांहां आंहां[12] अभ्यास ॥१२॥
सेहेजानद समरस सदा भोग[13] पीना नो साहो[14] ।
गगन गामी गुरुमुखी अखा ते जागे सेहेज समाहो[15] ॥१३॥
सब कोई कुहत पीउ को मे सो बुदु बीम जीम[16] ।
माया रंभन सा अखा[17] सेहेज ही सेहेज सब सीम ॥१४॥
मत कोई खोजो रामकुं[1] आपा खोजा जाई ।
आपा खोजत राम हे और अखा कांहां धाई ॥१५॥
सीम पेंड सव भल जात[18] बरम[19] कुल नास ।
टेकी चाल पम अखा जे[20] मीमा स्यासीक[21] के स्याल ॥१६॥



---

१ मने (मा), २ ते (सा ३ म वीचार—विना सर्वविचार (मा.) ४ वपु (मा) ५ ता (मा) ६ मपहामु (मा) ७ हैत (सा) ८ सीत (सा) ९ त्यां ज्यहा (मा। १० सब जान—सर्वजाने (सा) ११ मादि (सा) १२ म आंहा—त्याम त्यहा ज्यहा (मा) १३ ए (मा) १४ स्हाव (मा) १५ समाव (मा) १६ × (मा), १७ मा अखा—माम ए (सा) १८ गुम (मा) १९. मैंमा (मा) २० वर्म (मा) बरम (गु) २१ जब (सा) २२ स्यास (गु)।

उपदेश अंग

जो पे कुबुधी जीव हे काहा भयो कथीया ज्ञान।
ज्युगला[1] न छाडत कालमा जो साम पढाया[2] पान ॥१॥

मधा कथे पे कछु नहीं जो ल्युं अंतर राग।
साधे पम सीधे[3] नही जेसे भांड का ज्योग ॥२॥

कह्या सुन[4] जो सत का[5] तो जीवत मुक्ती कु[6] पाय।
ज्यु पासा गस्य[7] पाणी हुआ ज्यु भव वेदना जाय ॥३॥

काम न मंडत[8] कुबुधी टेक न छोड़त टांक।
प्यास[9] सर्पया मर गया तो काहा गगा का वांक ॥४॥

ताहे भवा 'तुं गुरु करे[10] जे नीरदावा मीसंघ[11]।
ज्यु कुमी के बीदुमा[12] सुरत ही आवत[13] पद्य ॥५॥

हरी गुरु संत सास्त्र केहे 'केहु साधारण बहु लोक।
आत्यम[14] ज्ञान पायां भवा[15] सब सटीजे[16] सोक ॥६॥

सोक मीटा[17] सीतल भया[18] मीसे सोतलता गुरु पास।
अगा सा गुरु[19] खोज स जो काटे मन की आस ॥७॥

तन मन धन सब वारीयें जो कोई दे ब्रह्मज्ञान।
जीव टासी स्वे धीव करे सदगुरु द अमेदान ॥८॥

---

१ ज्यु पमी (धा गु) २ भरावा (मा) ३ सीम (मा) ४ माने (मा) ५ भसा (मा) ६ मुक्त हि (मा) मुक्ता कूं (गु) ७ भी (मा) गम (गु) ८ माने (मा) माहे (गु) ९ प्यास (मा गु) १० कहे (मा) ११ सावत (मा) १२ निशक (मा) नीसंक (गु) १३ इंडमा (मा) १४ सुरते – मापत—सुरत नीआवे (सा) १५ भौर (मा) १६ वात (मा) १७ मिमा (सा) १८ मद मटीजें—मिट नहीं (मा) मधम्मी म (गु) १९ मिटे (सा) २० भये (सा) २१ गुरु का (मा)।

सन मन का बड़पन काहा जो पाईये गिरधार।
दिखे ते' अहरण' न होईये जो पोहोचावत पार' ॥९॥

सतगुरु सीपत्रू हरी बीया सीप गुरु कु कहा देह।
तन धन गया पासध' में सीर रण' का रह्या संदेह ॥१०॥

अखा भक्त सब आत्यमा सो भेदो' कु भोग।
पण जीव हरी कु तब मीसे जब सतगुरु मीसाये' जोग ॥११॥

मान मुकीने मानवो करा संत को' संग।
नहीं तो काया मरसो अखा'' ज्यम बीज बस मन भग ॥१२॥

गुणी काहाव्ये अवगुण थयो ''गुणनमु वड़पु गुमान।
ना प्रीछ मा पुछी सके ज्यम ''ब्रह्म आपमे मोण ॥१३॥

गुण गाने गसीत पा कांई थप करीने हरीने खोल्य' ।
पण गायेज गोविन्द नहीं मस''हीरा'' जाण्या बीना रोल्य' ॥१४॥

सेतमेत संत देस ह स्ये सकी सो स्यो एह''।
पुकार पुकारी की हे अखा माया बाहोर'' वीगुपण होहे' ॥१५॥

प्रसग मील्या हरी ना मील्या गुरु ज्ञानी के सग।
''जीव ममामी ''कांगड़ु जस परसत नहीं अंग ॥१६॥

अखा सागर ब्रह्म का मये सत के साथ्य।
सब्द रतन तांहां प्रकटे सा थह'' पारपय' के हाथ्य ॥१७॥

छीप जस समुद्र मे'' सो आतुरता होई भाई।
ताकु'' धन तेसा फर्म मुक्ता स पर'' जाई ॥१८॥

---

१ × (सा) २ अहुरम (सा) अहुरण (गु) ३ करेन असा गिरधार (सा) ४ पण (सा) ५ पासंग (मा गु) ६ भ्रण (सा) ७ भेदु (सा गु) ८ जीव मीले—दुनिया न पावे राम का (सा) ९ जब मीलावे—बिना सद्गुरु के (सा) १० मो (सा) ११ अनुपिया (सा) १२ में (मा) १३ गायो (मा) १४ सोल्ह (गा) १५ ए (मा) १६ हरि (सा) १७ रोल्ह (सा) १८ स्यो एह—मोह (गु), स्यो मीय (सा) १९ बहुत (सा) २० हाथ (मा) २१ तो (सा) २२ मांपतका (सा) २३ जाय (मा) २४ पारेग (मा) पारप (गु) २५ मध्य (सा) २६ तो (मा) २७ परी (मा)।

जाकु रत्न जसी अखा ताहां तेसी नीरपज्य होय[1]।
ज्याके मोती नीपजे[2] मही मुख[3] सीप होई सोय[4] ॥१९॥

अखा आत्यम आप में पण जीव न जाणे पास।
आपमा दुख अनुभवे नहि ज्यु गो मुपावे[5] घास ॥२०॥

अखा रक भी समुजा[6] सुखी असमजा दुखिया राय।
+बांधा कचन भी[7] न तरे काठ तरें नै[8] तराय ॥२१॥

अखा समझकू हद नही असमझ[9] बोध[10] ब्रह्माड।
समझा निर नवामका अब समझ्या पाणी भाड ॥२२॥

अखा अनुभव अर्कबीन दहु दस नाहे प्रकास।
साथे सेवो सदगुरु जे[11] कर्म गहेन करे नास्य[12] ॥२३॥

सदगुरु कारन मुक्ती का ज्युं भोग का कारन हे धन्य[13]।
साथे सेवो सदगुरु ज्यों चाहो राम रतन* ॥२४॥

ज्युं रत्न मीले रत्नागरे त्यु राम मीले गुरु पास।
साथे सेवो सदगुरु जे पूत दरिद्र करे नास ॥२५॥

जीव सकल पथर अखा सदगुरु करे ताहे देव।
सोई जक्त में पुजीये ए सदगुरु का भेव ॥२६॥

मोह्यो[14] सबी जीवकुं बसा सदगुरु साहत[15] ताहे।
पण जीवते पीवकुं[16] उतरे जे भाव भरोसा माहे ॥२७॥

अखा चदन सदगुरु ज्याके पासु बन बसाय।
"+वांसु बास न भेद ही गाठ्य पड़ी हृद[17] माय ॥२८॥

---

१ भाय (सा) २ सो (सा) ३ मुखे (सा) ४ जाय (सा) ५ गोमू चावे (सा) गो मुपावे (मा) ६ समझ्यां (गु) समज्या (सा) ७ ज्यु (मा) ८ बाधा (गु सा) ९ × (सा) १० × (सा) ११ मण समज्ये (सा गु) १२ नपे (गु) नम (सा) १३ × (गु), १४ माहासा (गु) माग (सा) १५ भाग कारण है धन (गु) भाग का कारण धन (मा) १६ माहु सर्प (सा) माही मरपु (गु) १७ कारठ (सा) १८ जीव" गु—जीव ताको विष (मा) जीव ते पुं पीप (गु) १९ पण (सा) २० ए" (गु) हृदे (सा)।

* यहाँ से सा के अनुसार 'सद्गुरु अंग' प्रारम्भ होता है।

मखा गांधी बीब हे सब ओपध बाके' हाथ'।
सो बैद बीमा मरे रोगीया साहे' सवा गुरु' सतावे' वार ॥२९॥
ओही' गुरु का खोज से जे देखे देखादे राम।
के आये हि भरकत फीर्दे काहा करे आगले काम ॥३०॥
जीव थापे सा जीव हे'+ ब्रह्म थापे सा ब्रह्म।
जीव ये पारत पाईये जे''+ मसाबे'' कर्म ॥३१॥
सीस सदगुरु करता नही'' गुरु'' बीना न सरे काम।
गुरु'' सीस बीना नीपजे अखा सो ही'' पुरव धाम ॥३२॥
पर वेधी'' जे सीह अखा सखमे आय सदरूप''।
जी सुर्त'' पकड़त'' नीरतकु' सा सदगुरु'' सीस अनूप'' ॥३३॥
रूप बेधी माया'' यह शब्दबेधी सा ब्योम।
सेहेज्य बेधी सेहेज्य मा रमें रूप बेधीकु रोय ॥३४॥
रूप में बोहूत'' राम'' हे'' अरूप अभिसम्ब काय।
रूप समाणा' सेहज में बीदेही'' काहावे सोय ॥३५॥

५

---

१ भरण (मा) जाके (गु) २ हाट (गु.) ३ रतु (मा) ४ (सा) गुरु (गु) ५ देखावे (सा) ६ अखा (मा) ७ ४ (सा) ८ अपने) ९ और (मा) १० अखा (मा) ११ देखाड (मा) १२ सीस — नहीं—शिष्य करे नो गुरु नहीं (मा) १३ और (मा) १४ पण) १५ सो (मा) १६ ४ (मा) १७ सहमा नावे रूप (मा) पुरन (मा) पुरन (गु) १९ पकडे (मा) २० सुरतको (मा) नीरतकु २१ सद्गुरुका (मा) २२ भूप (मा) २३ जोदा (मा) माथी २४ बहागु (मा गु) २५ रमे (मा) २६ पप (मा) २७ समावे २८ बिदेह (गु)।

गिरीबि[1] अग

अखा गरीबी हे भली मनस्या वाचा काय ।
आप मिटाया आप[2] रहे हरी काज सारे आय ॥१॥

सुख गरीबी चेतना साच[3] बीच्यार समाय ।
और अखा गरीबी नहीं ए तो[5] ढीग आगे हार खाय ॥२॥

अपना आप बोच्यार के समझ[6] गरीबी कीनी[7] ।
पडया प्राम मेरा नही एसी अखा सुझ[8] चोहीन ॥३॥

सच सामृथ[10] होता साई का विप्य मेरा होता टाक ।
तो भी मन में मानता[11] अब नाई अखा में रोक[12] ॥४॥

अखा गुरु तू ते करे जेहेने तोहे प्राण पिंड ।
बाकि सब ससार द[13] गरु सीस साहब मंड[14] ॥५॥

नाम रूप मर ने बीये ज्यम मोहोर पड़े छे घात ।
पण बीदसे मध्य व्यापरें धात सघ मे[15] साक्षात ॥६॥

वस्तु[16] बीचारपे वस्तु[17] छे नाहीं ताहो अखा उपाध्य[18] ।
जेसी[19] आंधी भोम्यकी[20] ते मुचरने माध्य वृध्य[21] ॥७॥

---

१ गरीब (सा), गरीबी (मु) २ मीटाया रहे—मीटायोपा रहे (मु) मिट्या आपा रहे (मा) ३ सोचो (मा) ४ बिचारी (सा) बीचार (मु) ५ जो (सा) पे (मु), घोम (सा) ६ समजी (सा), ७ लीन (मु) ८ पिंड (मा) पंड (मु) ९ गुरु (सा) १० सामथ्य (सा) सांप्रत (मु) ११ मानता (सा) १२ माई " रोक—नही अगा मे रोक (मु) नाहि अखारा रोक (सा) १३ मे (मु) १४ मंडप (मा) १५ मपळ (सा) १६ १७ वस्त (सा) १८ नही तो छे उपाप (सा) १९. मगा ! (मा) २० भूमिनी (सा) २१ आपम्याप (मा) ।

मत्था करे तो ए करे विष्णु'+ मा करे
सर्वातीत तु स्वें थई गण्य मोरो उपदेस'
बासम्य पीछम्म वेसरी' कमसी भानी का
गण फ्रमे मत भोगेवे फाथा पछी थइ था

*

*'ब्रह्म सागर' अग

अखा वीचारथी जोयतां सागर ब्रह्म सदाय।
सुंत्यु[1] रेहे सभराभरी जो मीच्यारमहार वीलाय ॥१॥
मीस्चे[2] नरने दाहलो वस्तु गरयनी वात।
वेहेवार वीटपण मोखने बंधन ए उतपात ॥२॥
मह समे अखा सकल्प वेहेवार नीस्चे परमांथ।
अहंमो सोहं भली गमुं वाण गया रही जोण्य ॥३॥

४

---

१ विचार अंम (सा) २ मुग्त (सा) ३ मिस्चय (सा) ४ गई (सा)।
* इस अंगकी २ और ३ मामियां बिलकुल गुजराती होने की वजह से छोड़ दी गई है।

४३

श्रीक्षा[1] अग

पद[2] रहे तो पद सीप्य पे क[3] पद सीयस[4] अगम्य ।
पदारथ पद में कबे का होय सक्षा गुरु मम्म ॥१॥

पव सोधें ते पव रहै गाते भमी कहेवाम ।
मीप्टान[5] भोगयन[6] ता भमु को पचे म बमन[7] म पाय ॥२॥

सीस मखा का का नहीं गुरु सारा संसार ।
होते होने हो गई समम्रे[8] मायां[9] पार ॥३॥

ना गुरु का कीआ सीप हु'व ह सीप होव अपने माय[10] ।
मखा मीपजमा मेपपे सो सब कोई तामु काहाय[11] ॥४॥

मतमता में रेहे गया अखा सब ससार ।
विप[12] में पतीया नाम न ताकु मही वारपार ॥५॥

मीप सारी दरियाव में सा दरीमा सीप में नाहे ।
मखा मतामत बाहरा सबकी विमल्य कराहे ॥६॥

माही मता पंचभुतकु मत मही गेबी साई[13] ।
मखा मतामत में[14] मत पड़े तु सा सेहेज्य समाई ॥७॥

अया ज्ञानी सा परा जे पत्नी बीरबम रामा ।
टुक भी सीस माग चले[15] पण पीक्षा म घरे पाया ॥८॥

---

१ सिष्या (मा) सीक्षा (पु) शिष्या का अग (१४०) २ पद (सा) ३ दीजबे (मा) ४ सीस (मा) ५ मिष्टान (मा) मिष्ठान (फ) (२१७) ६ भोजन (मा २१७) ७ वमन (मा) बीषन (फा) ८ तिन (मा) मीप्य (पु) ९ समझत (मा) समझत (पु) १० माबे (मु) पाय (मा) ११ भाव (मा) माय (पु) १२ पाव (मा) चाप (पु) १३ बन (मा) बन (म) १४ राज (सा मु) १५ × (मा) १६ म (सा)।

परपंच पसारा मत करे हुकमी[1] बोधे सोहे।
सोही रामजन साचा भखा भे मुवस आपा सोहे ॥९॥
अतर अपना मत करे कोहु किसी का नाहे।
नरके सग मारी असे असा सो अपने तांहे ॥१०॥
हासी खस हराम दे हांसीये होये जान्य।
हासी मे गया भखा मादम कुल छेमान्य[2] ॥११॥

✢

---

१ हूक मी (हा) २ लप मान (ला गु)।

४३

षीक्षा' अग

पव' रहे तो पव सीप्य जे व' पव सीयस' अगम्म ।
पवारम पव में मड़े जा होय अखा गुरु गम्य ॥१॥
पव सोधे ते पद रहै गाते भसी कहेवाय ।
मीष्टान' भोज्यन' ता भसु बो पवे म वमन म वाय ॥२॥
सीस अखा का का नहीं गुरु सारा संसार ।
होते हाते हो गई ममस' आया' पार ॥३॥
ना गुरु का कीआ सीप हेस ह सीप होत अपने माये" ।
अखा नीपज्या मेवप ता सब बाई ताकु पाहाय" ॥४॥
मतमसा में रेहे गया अखा सब संसार ।
बिप" में पढीया नाव ज ताकु नहीं वारपार ॥५॥
बीप सारी दरियाव में सा दरीया बीप म नाहि ।
अखा मतामत बाहरा सबकी किमरप कराह ॥६॥
माही मता पवमुनकु मत नहीं गेबी साई' ।
मसा मतामत म" मत पड तु सो सहेज्य समाई ॥७॥
अखा ज्ञानी सा घरा जे बसो बीरकम शया ।
टुक मी दोस आग पसे" पण पीछा म घर पायो ॥८॥

---

१ शिक्षा (मा) सीसा (पु) शिष्या का अग (१८०) २ पद (सा) ३ सीगजे (मा) ४ सीस (मा) ५ मिष्टान (मा) मिष्टान (फा) ६ बिरव (२९७) ६ भाजन (मा २९७) ७ वमन (गा) बीमम (फा) ८ समजत (सा) समझत (पु) १० माये (पु) माया (मा) मीप्य (पु) ९ ममजत (सा) ११ भाव (मा) माप (पु) १२ पाय (मा) बाप (पु) (मा) १४ राप (सा गु) १५ × (मा) १६ वरे १३ बग (मा) बप (म) (सा)।

परपच पसारा मत करे कुबमी[1] बोधे तोहे ।
सोही रामजन साचा मचा थे मुरख मापा सोहे ॥९॥
अतर अपना मत करे कोमु किसी का नाहे ।
मरके संग नारी चले मसा घा अपने ठाहे ॥१०॥
हासी खेम हराम दे हांसीथे होये आन्य ।
हासी थे गया मखा यादव कुल छेमारग[2] ॥११॥

५

---

१ दूक भी (सा) २ सम माम (सा मु) ।

४४

नुगरा सुगरा की पेहेच्यान[1]

नुगरा[2] सुगरा[3] जीवकु क्यों पहेचान्या जाय ।
ताकी कीमरय ए सखा गुरु बचन[4]+ ठेहेराय ॥१॥
सुगरा बोले ईसना जैसा होय मीबाही ।
नुगरा बोहोत बके सखा ज्युं बोमारा[5] वाही ॥२॥
सुगरा बरते मुक्सीमां[6] नुगरा बरत बोस[7] ।
सखा नुगरा सींग[8] ज्यों सो फीरी फीरी वाके बोस ॥३॥
एक गुरु के सीख सखा नुगरा सुगरा दोय ।
ज्युं चार पयोधर रहे[9] अजा दो दुध दो पानी होय ॥४॥
दोनु कपनी एक है फेर बोहोत[10] सम माहे ।
हंस बग जस कंठ के के मोती मछरी खाहे ॥५॥

*

१ नगुरा मग (मा) २ नगुरा (मा) ३ मगुरा (मा.) ४ वे (मा ५. न (मु) ६ बोमारी (मा.) ७ बास (मा) ८. नगुरा बोले इसना (मु नगुरा बरतन गुरु मिले (मा) ९. दोय (मा मु) १० मिह (मा) ११ (मा) १२ नहो (मा) ।

हेरान अग

म्याणपणा बाते मने बधते[1] बध बसाय ।
है उलटी एसी अखा फोरे ही फारक[2] ही जाय ॥१॥

मोक कहे पाया काहा होय पावनहार पं मास[3] ।
माखा सर समीता[4] मील्या मीर भीम्य एक तास ॥२॥

जाता आता नहीं अखा होत मावना फर ।
इत ओरु संसा रहे[5] उत आरू सु सेहेर[6] ॥३॥

इत उस मन समास्य मने[7] बेहेत हु बात बनाई ।
घटमट[9] मन की गई अखा तब कोन काहाकु[10] पाय ॥४॥

तन बढते मे[11] मन बढो मन बढते बढी बसाय ।
मन घटते सब घट गया कोन कोनपे जाय[12] ॥५॥

तरकारी[13] बज्यारकी[14] हुरो[15] घर[16] दी ब्यार ।
एसो काया सब मखा मन राखे सु प्यार ॥६॥

जसा ओसा निर का परत परत गस[17] जात ।
अखा ऐसी देह है ताकी केतिक बात ॥७॥

जेसो घन की बादुरी परी पसक की छांहि ।
इत घड़ उत उतरे मया एसी जाय ॥८॥

---

१ बढते (सा) २ फारगत (पु) ३ पे मास—पायमास (सा) ४ सराता (मा पु) ५ मसार है (मा पु ३८०) ६ संघेर—सुमिर (३४०) ७ बिना (मा) ८ × (मा) ९ घटमठ (मा) १० की (मा) ११ × (सा) १२ पाय (सा) १३ ज्यु (मा) १४ पहाणकी (सा) बनारकी (पु) १५ रही (३८०) १६ पड़ी (सा) परी (पु) १७ पीर (सा) पीस (पु) ।

वेसे बगुला' बाठका मोहे' मैं हो बोसाय ।
इतने पर इतरी' काहा अबा तुव मम गुमराय' ॥९॥
पवकसा ज्यु' देह है पुरा तपे एक रात्य ।
चौदस परवा संम है' अबा समझसे' बात ॥१०॥
जेसा माव स्यु देह हे वायू के हाथ्य मदार ।
अबा मस्वा ताहेका राखे सोही गुमार ॥११॥
जेसा भंगुर देह हे तेसा भंगुर भोग ।
वास्ये रहे तन धन अबा मृतु' भागत योग' ॥१२॥
हसी हसी देते तारीया धम्म जीवन के चोर ।
वाकतुर'' उठे अबा ज्यु बकला रहित कटोर ॥१३॥
ज्याका सर्ग'' ईठे अबा सो ही भागत सर्ग ।
तेरे जीया'' का मुलकि' एक ठोर एक क्षण'' ॥१४॥
ज्या'' अप्पली मु उगीया ताव'' उग्या संसार ।
इरिहर अज सग एकमू अबा जी देख्ये बीच्यार ॥१५॥
कही मु उग्या कल्प वृक्ष कही सो उग्या तर्ण ।
पाषण पानी एक है अबा रूप और वर्ण ॥१६॥
स्वर्ग मृत्यु' पातास के मात्य माम सहु'' पर्यंत ।
उपज बीनरो रहे जगत पातु'' पयु का स्युं अंत ॥१७॥
अबा भात्य की भावना बीन अतीकी'' माहे'' ।
दबा महीं मबहो सुनो इत वत परे परायें' ॥१८॥

---

१ बगुला (मा) बंगुला (मु) २ बारे (मा मु) ३ इतनी (सा मु) ४ गुमराय (मा) ५ त्य (मा मु) ६ चौदस पता संम है—चौदस परवा मम है (मा) ७ समझाव (मा) ८ मदार (मा) ९ स्युंमपु (मा) मपु त्यु (मु) १० भार (मा) भोग (मु) ११ अर्भगुर (म) अभेगुर (मा) १२ मारग (मा) १३ जिया (१४० २६७) काडे (मा) १४ मुगती (१४० २६७ मा) १५ परण (२६७ मु) वर्ण (मा) १६ या (मा मु) १७ निम (मा) १८ मृत्यु (मु) १९ सहु (मु) सब (मा) २० पीचे (मु) पाय (मा.) २१ आमी (१४०) २२ स्महाव (मा) लाय (मु) २३ मवे (मा) २४ अठे—अराय (मा मु)।

मखा बोसी बातकी भात्यन का मरमा नाम।
डरावनी डरपनो' भात्मको ज्यूं त्यूं दृष्ट' देहे' पाम ॥१९॥
सत्य' पुरुष और वीयरा' परवस भाव' करोइप।
पटत बढ़त म दोव मखा सग दोप न छोइप ॥२०॥



---

१ डरानी (सा) डरना (पु) २ भ्रष्ट (पु) दृष्ट (मा) ३ दह (पु) दहे (मा) ४ संत (मा) संत (पु) ५ वीयहा (मा) ६ परवस (मा पु)।

हरिजन अग

अला हरी का मावता सो दुनिया भापत नाई।
जे दुनीया सो मीलसा रेहे सोही है दुनीयाई' ॥१॥

वे अला हरी का भावता ज्यों पानी में का चंद।
ताहे मछी' जानत मीन है सो परसत माहीं बंद' ॥२॥

अला हरीका भावता परमा' न धरत सोक।
मीहारवती बास नहीं सादा रोकारोक ॥३॥

अला हरी का भावता भीतर तैसा बाहारय'।
बकता बोस बोसे नहीं संकुच' नहीं संसार ॥४॥

अला हरी का भावता मामत नहीं मतमुक।
मागे थे मनुआ मुर्या' हौस' गई सब सुक ॥५॥

मला हरी का भावता जैसा जुहर' सोह।
रग रग रस बस'' रामसु घसा आत नही साह ॥६

अधा हरी पा भावता मा आवरय'' कीमरय माहे।
असा पारस मनी गरा मोस तोस न बेकाये'' ॥७॥

---

१ ज दुनीया-- पा"—ज दुनिया में मीलता बसे सो भी है दुनिआही (१४०) जे दुनीयां मु मीलना रहे मा भी है दुनीयाई (गु) ज दुनियामों मिलना रहे सोही है दुनिया" (मा) २ मच्छी (मा) ३ चंद (१४०) ईदु (गु) बद (मा) ४ प्रभा (गु) परवा (१४०-मा) ५ बहार (मा) ६ संकुचा (मा) ७ मनुआ (मा) ८ हुवा (मा) ९ हौंस (मा १४०) १० जौहर (१४ मा) ११ बरस (गु) १२ मा मावरय—नावन (मा) १३ न बेकावे—न बे बाई (मा) न वे बाहे (गु)।

।

मखा हरी का मावता हुवा हे आकाश ।
माप बाप केसा[1] नहीं ना स्वामी ना दास ॥८॥
मखा हरी का मावता मोठ हाथ का नाही ।
घेसा सरणा पाठका[2] मवीरप[3] मारसा[4] आहे[5] ॥९॥
मखा हरी का मावता नहीं क्रय मा भेप ।
यौं कृष्नागर नीपजे सहस सहस रेहे सेप ॥१०॥
अखा हरी का मावता सदा सेहेत[6] नहीं कोम ।
ज्युं तारा मंडल पान्यकुं[7] परा ममत न होय ॥११॥
अखा हरी का मावता[8] का[9] भी मनकी ठहेरे ।
घरे परे बसता नहीं हे गगन ज्यु गेहेर[10] ॥१२॥
मखा हरीका मावता माप्यमी बरसत[11] मग ।
ज्यु गगम की बादुरी कोब[12] मावत रग ॥१३॥
अखा हरि का मवता काहू के सरण म जाय ।
ज्यु गलो मीली रेहे सदा सीत तीत परी पोपाय[13] ॥१४॥
अखा हरी का मामता अम्बर का सा सुभाव ।
तातासिमा वेसीये सो मुतन का भाव ॥१५॥
मखा हरी का मावता पाम दीदेषा देख ।
पाउ पेडा वांहां पंग हे यनत छपन का मेघ ॥१६॥
स्वप्न मीटापर्यं पा अखा काहे कू करो मटाट ।
फिरत फिरत फना भया मुख गमामा माट ॥१७॥

---

१ होवे (२६७) २ पाठका (मा) ३ मवीरम (सा १४०,२६७) ४ बाध (मा १४० २६७) ५ आई (सा) ६ महन (सा), ७ बार (सा) पाम (पु) ८ मबद (सा पु) ९ फावना २६७) १० कांहां (पु) मया (सा) ११ है गगन... ...गेहेरे—हक गगन मेही पैर (मा २६७), हक गण सजे पेस (पु), १२ बरस (सा) १३ कांहावें (सा) नहीं (पु) १४ पोपात (सा)

* नं० १५ से नं० २६ तक की साखियां सा और पु में नहीं हैं। ह मि प्र नं १४० में दो 'हरीजन को अंग' दिये हैं। एक में १२ साखियां हैं और दूसरे में पांच। ये पांच साखियां सा के पृ १०४ पर मिल जाती हैं।

सुपने में भोजन कीआ मखा अघाया कौन।
जागन ताई काम है ना वो भखा भोयन ॥१८॥
स्वीति बाध्या ठेहेरा मखा आपो आप पर हाम।
धौ सोना की मोहोर मा सारे आये दाम ॥१९॥
ठेहेरा सो ठाकुर भया फरता चाकर साम।
तिन भोजन भूपति भखा तो भी टेहेर ना होय ॥२०॥
नर बेठा कोइ नाव मा चल्या चोहो दिस आये।
धरनि पाउ धरे नहीं सफल दृष्टि में आये ॥१२॥
दाम दया तप सील सत्य तिरथ व्रत सब कीन।
पब नीज पर पाया मखा सम वाके आधीन ॥२२॥
पन करत एहि समझ के सकल कर्मे फल जाये।
मूक्ती सुन्य सी जानिय्ये धरत बीमे छीपाये ॥२३॥
प्रगट बीपके जीव सब करत मुक्ती के नाम।
मूक्ती माया मीथ्या भया टुटत मन की हाम ॥२४॥
मुक्ति मानत है सुन्य सी मीथ्या सब हो जाये।
एह लोक परलोक की मखा सूप क्यो पाये ॥२५॥
गगन गंग की धारते सकल लोक पोषात।
प्रानत्व जीव समस्त नहीं माया डेहेके जात ॥२६॥
मखा ए उलटी भई सब सीख्य बीपे कू चाहात।
मीसरी को पूतना महुआकू बीसलसा* ॥२७॥
पेच पीमा का काहा कहूं जारो आप की एब।
खोल देखूं तब मैं नही भया जात सब गेब ॥२८॥
खेमे तुमरे सोगटी कधी पक्की होये।
इत भगा सो काहा करे स्यामी स्याम तू दोये ॥२९॥
मैं कुसधना हरी भया ऐसी कहे सब लोक।
इत भया कु पनती नहीं काठ के भर सीर ठोक ॥३०॥
बाजीगर की पूतली छद करत वहो भात।
काहा गुदरत है काठ की मखा गुडी की जात ॥३१॥

---

* इस अंक की म० २७ से ले ३१ तक की सालियाँ केवल ह लि ग्र सं० ३४० में मिली हैं अन्य प्रतियों म नहीं।

मे मुरा साइया मभा मोज की माछो बात।
न्याहित भव देखुं मखा पुं सेलत सब पात ॥३२॥
मुरा करन कु मैं हुंभा पुदरथ का कपी मोर।
गोला छुटपा नास से सो दारु के जोर ॥३३॥

५

प्राप्ती[1] अग

साईमां पाई सुंदरी कैसे जानी जाय।
अग रग प्यारे सुने एक साग रहाय ॥१॥
साईमा पाई सुदरी कैसे जानी जाय।
गुन गावे महरनोस सदा त्यूं त्युं साईमां चाहे[2] ॥२॥
साईमां पाई सुदरी कैसे जानी जाय।
ज्युं आसक मेहबुब पर धन्य[3] तव वारे जाय ॥३॥
साईयां पाई सुंदरी कैसे जानी जाय।
सुम ससार भावे नहीं सबे वैगारी ताहे ॥४॥
साईमां पाई सुंदरी ज्युं जुवती सम पार।
कुम काम्यथा छाड़ के पास अकेली माहार[4] ॥५॥
राम भक्त चोसो[5] भया सोप रहे[6] पंडय प्रान।
मामा मंदीर व सुंदरी सब भावे बेकाम ॥६॥
सो राम भक्त साधा भया टूटत हरी मे ताप।
प्रसन्न होत सीम वासज्युं मारत गयकुं प्याय[7] ॥७॥
राम भक्त साधा भया पालत गुरु के बेन।
धरनी[8] बोम परे नहीं गुरु की मानत एन ॥८॥
राम भक्त साधा भया गुरु गोविंद एक।
अमीनता[11] छाड़त नहीं साधी मम की टेक ॥९॥

---

१ प्राप्ति अंग (ला) २ चाहत (पु) ३ धन (ला. पु) ४ काम्य "—
—काम वीपय अथवा (ला) कामना छाड़के (पु) ५. तार (ला) ६ चोसो—
साधा (१४०) साधा (ला पु) ७ मौन रहे—सो परहे (पु) सोंपी रहे
(ला) ८. ताई (ला) ९. पाई (ला) पाव (पु) १० धरती (पु)
: अमानता (ला)।

राम भक्त साधा अधा मान बड़ाई त्याग।
जैसे बेहेर[1] झाडी रहे बाजीगर का नाग ॥१०॥
राम भक्त साधा अधा करे सो पर उपकार।
ज्युं सपर[2] उबारत मयनकु आपे ही सेहेवे मार ॥११॥
राम भक्त साधा अधा करे न काहु की आस।
ज्युं मच जीवावे अजनकु आपे रहे उदास ॥१२॥
राम भक्त साधा अधा सदा सेहेज औपास।
बस तारत तु बड़ा ऊँच नीच पाताल ॥१३॥
राम भक्त साधा अधा सकम माय संतोप।
ज्यु प्यास मगत नहीं नीरकु सबन करत नीरदोप ॥१४॥
राम भक्त साधा अधा कन्या[3] आस नहीं सक्ष।
सूरज का सुभाउ ज्युं खोलत सबके चक्षु[4] ॥१५॥
राम भक्त साधा अधा बोलत आत्मम हेत।
जसे बाबा भाग का[5] दोउ दास सुरातन देत ॥१६॥
राम भक्त साधा अधा अपने अनुभे सास।
जु सोनाय सब सेमीये आपे आप पेमास[6] ॥१७॥
राम भक्त साधा अधा मसा[7] रहेत नही माहे।
दरपण मेका बिब ज्युं संपुट मे न बंधाय ॥१८॥
राम भक्त साधा अधा दरसत है एहलोक।
कुंजी[9] सुर्त[10] छुपाईये[11] पडप रहेत परलोक ॥१९॥
राम भक्त साधा अधा बिन मादक हि मस्त।
दो ज्यग ते डरता नहीं चाहता नहीं सो[12] मस्त ॥२०॥*

---

१ महर (सा) २ पुर (सा), ३ कम्पा (सा), कस्पा (मु) ४ चस (मा. मु) ५ सपंम (मु), संम (सा) ६ जु ⁗ पेमास—ज्यु सोनाजें सब सोमीए, मारे आपमें मास (सा) जी सोमावे मब सोमीए आरे आप में मास (१८०) ज्यु सोनावे सब सोमीये मारे आप पेमास (मु) ७ मिम्पा (सा) मस्पा (मु) ८ माव (मा मु) ९ ज्युं (मा) १० मूरत (सा) मुग्त (मु) ११ घर्मा हीयें (सा) छुनाये (मु) १२ × (मु)।

* यह वार्तिक धामी सा में नहीं है।

राम भक्त साचा अखा नावाना नादान।
गुडीमा खेमठ गगन में अरूप पीउ के ठाव ॥२१॥
राम भक्त साचा अखा धरती राममय सायो'।
अमयु में आसमुं का बुरा न हो ए मामों' ॥२२॥



---

१ अरूप —के—अद अला बापु का (मा) अरूप ठाउ (पु)
२ धरतीकामा स्वभाव (मा) धरति राममय भाव (पु) ३ अरा में आस
(मा) आसमने आसमु (पु) ४ बुरा न हो है भाव (पु) बैराम हो
महाव (हा)।

राम परीक्षा अग

खाण्य सुसी हे घट में नीकसत रत्न अमुल्य ।
परखन वाला कोई अखा ज्याकी बुध्द अलोल्य ॥१॥
राम रतन का पारखी साच कराहे काम ।
राहोसमे' म चल अखा दरसी परसी कहे साय ॥२॥
राम रत्न का पारखु भरा' गया नही' गाम ।
अखा सींघ सुभाव ज्यु बीवत' गज फू खाय ॥३॥
राम रतन का पारसी साहो ठाहार रेहे ठान' ।
भावन बान नहीं अखा 'चद तारा ससी भान ॥४॥
राम रत्न का पारखु टुटत पाई' भाग्य ।
कथता सीनी अगम' ज्यु परसत हो गई भाग्य ॥५॥
राम रत्न का पारखु एके बेर नीहाल ।
ज्यु सुहा' परसत पारसु हुआ सो हुआ लाल ॥६॥
राम रत्न का पारखु करे न सोदा वोहोर ।
एक बीमजमे'' पाईया अखो कहे भागी दोरप ॥७॥
राम रतन का पारखु करता ताका तक'' ।
गुनातित मोन थे'' अखा हाथ न यावे'' वाक ॥८॥
राम रतनु का पारखु मगमोग बीनजत माह ।
मगा सोदा सोही करे वे नावात'' पानी'' मांह ॥९॥

---

१ रू हुं (सा) २ मथा (सा गु) ३ ना (मा) ४ बोबते (गु) ५ रेह ठान—रैठाम (गु) रहेठान (मा) ६ न (सा) ७ टूटत (मा) ८ पामा (सा) ९ अभि (सा) अमन (गु) १० साहा (गु सा) ११ बनिज (१४०) बनज (सा) १२ ताक (मा) १३ बनमे (मा) बनजे (गु) १४ बहावे (सा गु) १५ नावन (मा गु १४०) १६ पावन (सा) पानी (१४० (गु) ।

राम रत्न का पारखु मास कु' सम मन देत ।
अखा मुक्ता फण आनके बानबत सीप समेत ॥१०॥
राम रतन का पारखी गोटारत सातुं घात ।
पास सम्बवेधी है गोटपका' अखा करत मेय' एक आत्म ॥११॥
राम रत्न का पारखु मुंदल' खात न खोट ।
अखा बेशा' मोम्यका' खासी परख न चोट ॥१२॥
राम रत्न का पारखु सब कोई द्रष्टा होय ।
सुर्यरथ बेठे अखा सो सारी अप्यती खोय ॥१३॥
राम रत्न का पारखु सोध्य बीना मीच्य बान ।
अखा न ईष्ठत अपकु सेहेज्य फलत एकसान ॥१४॥
राम रत्न का पारखु सतुं' पावत साम ।
अखा मीटाया आपकु बुसन साग्या आम ॥१५॥
राम रत्न का पारखु राम ही बेठा ठीक ।
अखा वसम न साज" कु दुरका सब नजीक ॥१६॥
राम रत्न का पारखु नफा बोहोत मीहाल ।
सतन भर बतीसका कर्म कर्म बहु मास ॥१७॥
राम रत्न का पारखु अहं गया रहा राम ।
अखा कछु उलटी भई सुन्य ओर सुंदरसाम ॥१८॥
राम रत्न का पारखु राम ही राम ही जाय ।
अखा ही मासा रामहे बाहोर" ना पोछा आय ॥१९॥
राम रत्न का पारखु रुखा राव सबका सार ।
अमृत हुसका नीरखे अमरा पीवनहार ॥२०॥

*

१ मुल (पु) २ मुटिम (सा) गोग्मा (पु- २६७) ३ हेम (पु
२६७) मेम (मा) ४ मुरम (सा) ५ बेमो (मा.) ६ मूमिका (सा)
मीमका (१४) मीचका (पु) ७ को (मा पु) ८ × (सा) ९ सीरर
बोन—मिठिबान (सा) १० मुरत (पु) म्यु रखु (मा) ११ सीच
(सा.) १२ बहुरी (मा) बोहो (पु) ।

संसारी अंग

अखा समझी सोपमा[1] दुनीयां है दम[2] फेर।
अपनी भावे ओर की बाटन की समसेर ॥१॥

अखा समझू नर कोन दुखदायी भव लोक।
घर की पासी ओर की सोह[3] पीवन की झोक[4] ॥ २ ॥

अखा मन दे मत मीले दुखदायी जीव संग।
ज्युं सावसी[5] ऊर सोहा घडे[6] तो जरे नहीं अंग ॥ ३ ॥

अखा पथ मीपम हे को मजम[7] पोहोच्या चाहे।
ओपट घाटी लोभ की तु उबट[8] ही धर जाहे ॥ ४ ॥

अखा संसारी जीव कू लूट लेन सूं काम।
मात पीता सुत बंधवा सारा ठग का गाम ॥ ५ ॥

हीतकारी संसार के एसे से सुभाय।
बच्का कुटंब[9] अखा उमडे[10] खाकू खाय ॥ ६ ॥

मुवेकु रोवे मरे ज्यु गधा मुवा कुंभार।
मेरे बारे मणका मीजीये[11] कोण उठावे खार ॥ ७ ॥

सूना अधा रोगीमा खसम पुत मरी जाय।
रोवत लोका लाजकु सीरपे गई बलाय ॥ ८ ॥

अखा संसारी जीवसु रखी परी रेहे नादान।
जेसी इयारी[12] भूतकी अंसे जीव को[13] ग्यान ॥ ९ ॥

---

१ मुई (सा) सोई (पु) २ दिम (सा पु), ३ सोहा (पु) सी (सा) ४ जोप (घा पु) ५ सांकसी (सा) सींडासी (पु) ६ घटे (मा) ७ बो मंजल (मा) वोमजल (पु) ८. उसट (पु) ९. कुटुंब (मा) कुटंब (पु) १० अमडे (पु सा), ११ बोजीया (मा पु) १२. यारी (मा) ईयारी (पु) १३ का (सा)।

अमा सुख संसार का हरसद का सा नीर।
सीसत मीठा पीवेते' सो पावे' मोहीकी सीर' ॥१०॥
अमा संसारी जीव की प्रीत्य सो पुन्यमचंद।
आय्य आय्य छीनी' परे पुरा रेहेत नहीं ईद्' ॥११॥
अमा संसारी जीवका अेता सुख सराय।
ज्युं पसु जबनके द्वारका अधोमुख टांग्या जाय ॥१२॥
अमा ससारी जीवसु मोहोत न रहीय' लाग्य।
ज्युं दुरते दीपक कीजिये परसत उठत आग्य ॥१३॥
बीरमा' ही भला भला करते बड़े' कमाय।
इतने में माया सबे साधन पुन्य और पाप ॥१४॥

★

१ पीवते (मा गु.) २ पिवत (गु) पीवे (मा) ३ मोहीर (मा) ४ पोषी (गु) तीषी (मा) ५ इन्द (मा) ६ न रही ये—नरहीये (मा) न रहेना (मा) ७ × (गु) ८ विरम्या (मा) ९ बड़ा (गु)।

गेबी अग

गेबी[1] राम जाने बीना सबे जाम बेकाम ।
घे[2] जहा[3] ध्याता ईहां उपजे बयुं आराम ॥१॥

अषा गेबी राम की अलोकिक सी बात ।
नेन खुले नहीं ना बीना सासों सास सहुरात[4] ॥२॥

अषा गेबी राम की कला अलोकिक साल ।
हाथ पकड्या[5] हुवा[6] करे[7] हरदम केहे हु हलाल ॥३॥

अषा गेबी राम के अटपटे से चेहेन ।
आप बतावत दूरकुं सो बोलत आपे बेन ॥४॥

अषा गेबी राम की केसे कहु मे बात ।
नेन बेन में प्रेरमा सो केसे पकरात ॥५॥

अषा गेबी राम हे सो परगट भी और गोप्य ।
राम कहा वास नहीं ताके नाम सबे आरोप ॥६॥

अषा गेबी रामकु केसा कह्या न जाय ।
भाग दीया टांक ना भखे ओर उपज्या सारा खाय[8] ॥७॥

अषा गेबी राम के अग बीना बोहो[9] रग ।
श्लपीत नामु[10] बासदे असल नाममा अंग ॥८॥

अषा गेबी रामकु घुघट बोहोत सुहाय ।
ज्युं बादल ओढु दामनी दुरी दुरी रूप देखाय ॥९॥

---

१ अखा (मा गु) २ घो (मा) घे (गु) ३ जहां (मा) ४ हुरात (सा) ५ पकड्यो (सा) ६ हुवा—हू वा (सा), हुवां (गु) ७ करे (म गु) ८ खात (सा) ९. पान (मा) १० बहु (मा) बहो (गु) ११ नामा (सा) नामे (गु) ।

अखा गेबी रामकू नाम नहीं बहु नाम।
बुरत ठोर पाइये नहीं मोर सकल ठोर आराम ॥१०॥
अखा गेबी रामपर' पग पेंड' न' पोहोचाय।
पंथी पंथ माही मरे जो मीले तो मील जाय' ॥११॥
अखा गेबी रामकी जो उपजी हेरांथ'।
हर खासुमें' हेहेहि निमखत चेतन धाम ॥१२॥
अखा गेबी राम कू एक नहीं कोई बात।
एकांकु' है एक सब आपेही सकल सहुरात ॥१३॥
अखा गेबी राम बीच खाली न परत' चोट।
हर हासु' में आप है सो' से गुमकी ओट ॥१४॥
अखा गेबी रामकी रसना काहा'' करे बात।
अ ठर धी'' रेहे राम की सोही भीमु'' बात ॥१५॥



---

१ राम के पर (मु) २ पेंड (मु सा) ३ नब (सा) ४ जो मीले ..
ाय न मिले जो मिले ज्यां त्यांय (सा) ५ है राम—हेरान (सा) ६ क्यामों
ा) ७ एकी (सा) ८ न परत—नीबडत (सा) ९ हासों (सा) १० ने
सा) ११ क्या (सा) १२ सीहीर है (सा) १३ भी (सा)।

महाकला अंग[1]

अजब कला उपजी अखा चला पुरातन पंथ ।
चलते चलते ताहाँ गया आपा रह्या नहीं अंत ॥१॥
अजब कला उपजी अखा अंग सींग बीना एम ।
नीरालंब अविलंब नो समझत सैनूं[2] छम ॥२॥
अजब कला उपजी अखा नीराकार और आकार ।
अटपटाई आकार मां मापे पीछें सार ॥३॥
अजब कला उपजी अखा ना पंथ ना पंथी गाम ।
चंदन माया नीर मां तो काहा कुच मुकाम ॥४॥
अतीत वस्त एसे अखा नेडा दुर[3] नीदान ।
सभ्या ताणी बीच मा एरखम मत समान ॥५॥
ना सोता ना जागता ज्याकु नहीं रूप नाम ।
आपे पीछे एक है बीच्य अखा धुमधाम ॥६॥
जो उलझा[4] तो मन अखा सुलझा तो मन का भेद ।
समझा कु नहीं भटकणा ज्यु कोठा चक्राबेध ॥७॥
चक्राबेध के कोट कु ना जंजीर कपाट[5] ।
समझा बीना रोधा[6] मरे फाष्ट[7] बाई बाट ॥८॥
अजब कला उपजी अखा बीज पर का वीस्तार ।
जाके मठमें सब मता गरक भया[8] सब भार ॥९॥
धरनीका[9] बहुरंग फीरे फीरे मेघ मंडान ।
देस काल के बस अखा फिरे नहीं बीरान ॥१०॥

---

१ महाकला (शा) २ जैसो (शा) ३ भूर (शा) ४ उलझ्या (शा)
५ कपाट (शा.) ६ रोप्या (शा) ७ फाटक (१४० सा) ८ हुवा (शा),
९ धरती (शा)।

भीतर के अग रंग फीरे फिरे नहीं आकास।
वोसो आत्म फीरे नहीं फिरे नहीं ज्ञान प्रकास ॥११॥
यस बिपस का धर्म है गुनन का व्यापार।
गुनातीत न चले अवा सबका पोषण हार ॥१२॥
देस बीदेस वीसे[1] अवा और और ईष्ठ[2] आराध[3]।
नाम रूप गुण कर्म मीन और वस्तन मे नहीं आध ॥१३॥
अजव कला आछी अवा ता पर ये स्यीस कीन।
सो सागर में मीस गया हरीहर ज्याके मीन ॥१४॥
मुजव ना बड़ा अवा ना कछु माते माहे।
मे सोई[4] सुरका जानना ज्य वजे सांस[5] सब माहे ॥१५॥
अव्यक्त वृक्ष पसरया अवा बहु दस[6] मुम्या डास।
आत्मम सम रह्या पातकु भेंवु पेड वीसाल ॥१६॥
पाद झरे[9] अव[10] मीस्य नवा स्वामी सेवक दोय।
काल न पोहोपत पेड[11] लग अवा तु एवे जोय ॥१७॥
अजव कला उपजो अवा जे है सब की आध।
ताही सुं भेटा भया देरया आप अनाध ॥१८॥

*

१ विस (मा) २ वृष्ट (मा) ३ आराध्य (मा) ४ सोही (मा)
५ ज्यस... ...मोस—वै सब बैना (मा) ६ दिस (मा) ७ पेट (मा)
८ पान (मा) ९ झरे (मा) १० मोर (मा) ११ पेड (मा)।

गुरु को अंग

हितकारी सदगुरु बीना और नहीं संसार।
रासे भवमां भटकतो पलमे पावे पार ॥१॥

मात पीता हीतकारी है पढ[1] उछेरनहार।
पर[2] गुरु हितकारी धुर लगे अखा जे छोड़े पार ॥२॥

हितकरता कू हितकरै ए[3] दुनिया की चाल्य।
गुरु हितकारी आस बीना चम्दे करत नीहाल ॥३॥

सदगुरु मेघ समान है करत न काहू की आस।
मेघ बरसत चमत चीन बने[4] गुरु काटत भव पास ॥४॥

सत धरत हैं देहकूं ज्यों धरत[5] देह नाम[6]।
परमारथ के देह है अखा न राखत चाओ ॥५॥

सूरज का मार संत का माटो[7] एक सुभाओ।
चर्म-चक्षु चोमन रिमकर मान चक्षु संत फेंसाओ ॥६॥

निसप्रही[9] साचा गुरु नहीं मानव का भेस।
कल्पद्रुम एसा[1] अखा ईछा[11] फलत उदेस[12] ॥७॥

सेहेज्य सुभाव ऐसा पड्या जैसा सातल चंद।
सबकू पोष किर्ण सुधा अखा देत आनंद ॥८॥

पाप ताप संसार के बस चीवक ठौर।
बिन सतगुरु सीतल करे अखा ठोर नहीं और ॥९॥

---

१ पिड (सा) २ पन (सा) ३ ई (सा) ४ चीन बने—चीवानते (सा.) ५. है (सा) ६ नाव (सा) ७ स्वाप (सा) ८ भाव (सा), ९. निस्पृही (सा) १० पैसा (सा), ११ इच्छा (सा), १२ प्रद्य (सा.)।

राता माता रंग मरया राग रग के सास।
संत मताछी दूरहैं अता सदगुरु का वास ॥१०॥

पानी में पावक जसे ऐसा सूख संसार।
ताहे सीतलता दूर हे विना गुरु उपगार' ॥११॥

साची सीतलता अता सदगुरु केरे संग।
और गुरु संसार के पोपत हे सब रंग ॥१२॥

चिकणा कुम कोई कास का कोरा मन खराप'।
ताहि' वचन नीर भेदत नहीं अंतर ज्ञान' अपाप ॥१३॥

अता न्यारा' देश हे गुरु ज्ञानी का वास।
मोर उपदेस उपर छसे ज्युं बस जास भुस' पयास ॥१४॥

साधा गुरु सीस अता तो अंतर करे उद्योत।
साचा सीप्य ग्रहें अता पे' सील रहा वोत प्रोत ॥१५॥

साचा सदगुरु सीसकू करी छोड़ हरीरूप।
साचा सीप गुरुदेवकू माने पारब्रह्म अनूप ॥१६॥

गुरु करया जे सीप्यकू पुरण पद के देत।
ता सीस सब संसार दे म्ये धाता' समेत ॥१७॥

कान फूंक सीप सों स्यूं सहे सीपज्य सेहेज्यमा होई।
जैस कांटा बेर का टेढ़ा सीध्या दोई' ॥१८॥

तन-मन देषते राम नहीं और नहीं रामते दूर।
ज्युं किरण मुकावत सूरमें पर अता न मुकावत सूर ॥१९॥

किरण छपे' जाय सूर मे पर'' सूर्य साप्या'' नहीं जाय।
निरगुन फूल्या स्याघरा'' फूले'' सो कम्मावे ॥२०॥

---

१ उपकार (सा) २ खराब (सा) ३ वाहें (सा) ४ अज्ञान (सा) ५ न्यारें (सा) ६ भुस (सा) ७ जी (सा) ८ म्ये ताता—म्येव म्याता (सा), ९ होय (सा) १० छपी (सा) ११ पग (सा) १२ सुन्यो (सा) १३ भरी (सा) १४ पग (सा)।

आतम[1] कहे परमातमा मेरे सीर कहा[2] भार।
सब घट एही सूझ है जे मेही[3] समावनहार ॥८१॥
परमातम[4] कहे सुण्य मथा गुड़िया तु[5] सब जीव।
मे[6] बापू मुक्ता करूं मुझ[7] कर डार सदीव ॥८२॥



---

१ आतमा (मा) २ क्या (मा) ३ मैं ही (मा) ४ परमात्मा (मा)
५ तु (मा) ६ मैं (मा.) ७ मुझ (मा)।

आसा को अंग

अखा' आसा जनने' फांसू करे फजेत ।
इछु' तहां आवे नहीं आवे तो सींग रहेत ॥१॥
जदकू' ओछु देखिये विद्या धन रूप राजि' ।
ए काम वसे छे कालमा' आपे ते महाराज ॥२॥
केहेनुं' सेहने कोइने आस तो विसे कास ।
मूढ' मरोडे मूछने असूछ' भूपाल ॥३॥
अखा आसा जीवने करावे कपिनो ख्याल ।
आली दीन ऊभो रहे "बेसे तो उधा "गुडा पास ॥४॥
राजस वे चढ्यो गास दे दे हसी हसी राखे होठ ।
आसा ए अस्त" माजिमां" पण" माहे से क्रोध मु कोट ॥५॥
राजस बहु" अन्याय" के' ताहां जी जी" कहेता जाय ।
मूठा ने साचो करे" अने साधु करे मिथ्याय ॥६॥
आसा जनवे प्रभवे" देस बीदेसे जाय ।
दाम काम मयँ अखा करता" आयु गमाय ॥७॥
काई न पाये जीवनुं कसू" पण अहंकार' ता मन मोह ।
पसके मन पोहे चडे पसके" पण माहे छोड" ॥८॥

---

१ अस्का (सा) २ जनको (सा) ३ इच्छु (सा) ४
(मा) ५ राज्य (मा) ६ कामनु (मा) ७ कोईनु (मा) ८ आस
९ रत्ता (मा) १० अमी छु (मा) ११ जो (सा) १२ मूछ
१३ अंग (मा) १४ मागणा (मा) १५ अस्ता (मा) १६ राज अव
बहु (मा) १७ चडु (मा) १८ बके (मा) १९ जी ! जी
२० कहे (मा) २१ परमवे (मा) २२ करता ज (सा) २१ क
२४ अहंकार्ता (मा) २५ अने (मा) २६ चोड (मा) ।

जन ना भोमे' पाछो भरी भासाद' ढकेल' पूठ' ।
प्रत्यक्ष भागवे दुखंम माहे ते' सुखनी मुंठ' ॥९॥

मन गमतुं मिस नहीं मिले तो न रहे भोग ।
भाव भाअके भोगी मरे के जोव ता भोम बेरोम' ॥१०॥

पावस बेसके थम बसे करे ते' धूम्रपान ।
ताप्ये' तृष्णा ना" फरे माहे राखे बहुमान" ॥११॥

ज्यम भिक्षुक भिक्षा करे एकठी, कहीं समग" बेठि खाय ।
मंननी पंच स्वाल तहाँ पूंछ हलावता जाय ॥१२॥

जप तप करे धमे देहने मन वहे धर्म ध्यान ।
तहाँ तन धन ना मर्पी घणा टिमताय ससारी स्वान ॥१३॥

मध्णा" बधावे" जीव ने एह लोक परलोक की" भाश ।
कोई" न थाए पीव पी फने हां" सखा बास ॥१४॥

देव आगल दुख दाखव द" पहर" एकान्ते जाय ।
उसका भर तो सब" कहैं न बोले न प्राप्त" थाय ॥१५॥

बेहरा" पावस भीत न भरतो दीस बाय ।
धुस चाटे पहुला चोपड मुखमां पाल हाथ ॥१६॥

प्रेम मास बधाव जीवने नरसुर चौदह लोक ।
ज्यम दड़ो डोटावे" नर भला लाग लाप हरख सोक ॥१७॥

वेष पहिरी थाक" बीध्ये" घेर-घर बंदवा" जाय ।
भासा कंठ" गामो करी" कपिली पहर' मचाय ॥१८॥

---

१ भुवे (सा) २ माना (सा) ३ धकेले (सा) ४ पूठप (सा) ५ ×(सा) ६ पूठप (मा) ७ भाय के (सा) ८ पीवे.... बेरोप—जीवत मोक्षवे रोप (मा) ९ करतें (मा) १० ताप्यो (मा) ११ मो (सा) १२ बहुमान (सा) १३ मछगो (सा) १४ तृष्णा (सा) १५ बधुवे (मा) १६ की (सा) १७ काई (मा) १८ तो (सा) १९ × (स) २० पहार (सा) २१ दुख (सा) २२ प्रापत (मा) २३ बहेरा (मा) २४ चोपडावे (मा) २५ चाई (मा) २६ बिंधे (मा) २७ बंदावा (मा) २८ कंठे (मा) २९ करि (सा) ३० फेरे (मा)।

करमां बांकी कोयसी जपे ते छामो' बाप ।
अंतर आराधन' प्रेतमु स्वामि मुने कादि' सीधी' आप ॥१९॥
मण्णा तरणी' मिस्य गई' भिन्न-भिन्न बांधे बिनाश ।
पग पसारि ते सोवे, मथा बे कापे आस ॥२०॥



१ जपे .. छामो—करतो दीसे (मा) २ आराधन (मा) ३ × (मा) ४ मिटि (मा) ५ तरणी (मा) ६ गयी (मा) ७ मुझे (मा)।

नैरासी को अंग

नरासी नर मे अखा नप्य' नथावे काल ।
माचता देखी नर भला माग्या होस' उल्लास ॥१॥

नैरासी नर ते' अखा यहे न मूके रच ।
हास आसा गई' मंगबी तेहने' प्राभव' न करे पच' ॥२॥

स्थूल सूक्ष्म पोखे टल्यो त्यारे काई नही राय रंक ।
बहु पक्ष ने मूकी रह्यो त्यारे सदोदित मयंक ॥३॥

नर नीरास' थया विना मूल उद्योत न थाय ।
महाउद्योत थया विना मूलथी आस न जाय ॥४॥

मुक्ति लगी आसा अखा आसा वैकुंठ वास ।
अष्टमा सिद्धि' ने अनुभवे ताहा लगे द्वैत नी आस ॥५॥

वस्तुता ज आसा' थकी कत" करवु त" आइ ।
जीवा माहा" नेहो मम' तोहू लाये "साइ ॥६॥

ज ईछेव" त मापदा क सौख्य क संसार ।
अमृत महीं" साकर मल" आवा" ते दूखण" सार ॥७॥

दूषण तथा" भूपग अखा सुरज न सो दीप ।
वस्तू तहां वेहेवार सो आकास नो" है खड द्वीप ॥८॥

१ मन (सा) २ हुंप (सा) ३ ज (सा.) ४ थया (सा) ५ तेज (सा) ६ पराभव (सा) ७ पांच (सा) ८ नैरास (सा) ९ अष्टमा सिद्धि—अष्ट महासिद्धि (सा) १० कई करवु (सा) ११ ✓ (सा) १२ तेह नो (सा) १३ माहि (सा) १४ मठे (सा १५ नेह (सा) १६ ईच्छीए (सा) १७ अमृत मही—अमृतमा (सा) १८ मठे (सा) १९ अखा (सा) २० दूषण (सा) २१ त्यां (सा), २२ तोहे (सा) ।

नैरासी इमि[1] आणवा जिमि[2] देव महा[3] सालिग्राम ।
पण प्रतिष्ठ[4] पूज[5] छे तिमि[6] स्वैच्छ[7] पूरण काम[8] ॥९॥
निराधार भासे अकल अनाम अरूप अभोग ।
जहाँ[9] अन्य साधन अलगां रहे नैरासी ते योग ॥१०॥
सगुणना संसर्ग नहीं निरगुण लक्षण[10] भावे ।
अखा नैरासी ते खरा नेहेज[11] सहेज समाये ॥११॥
असा[12] देखि अस्पा[13] नहीं गाधर ओलख्यु जे[14] आप ।
ऊभे तहाँ आसा अखा नाहे धंन कोरे[15] ने पाप ॥१२॥
पुरण तहाँ आसा नहीं अपुरण तहाँ आस ।
पुरण ना प्रताप[16] मक्षा[17] वरते स्वामी दास ॥१३॥
पूरण थी कंई नहीं पर एम अवनी मांहीं बहु रिद्ध ।
स्वामी सेवक रिद्ध अखा ! पूरण सहुनी सिद्ध* ॥१४॥
जीव पामे छे कर्म फले ! पण फल छ पूर्ण प्रताप ।
सहुज मनमां सवळां, उत्तम, मध्यम पण माप* ॥१५॥
पूरण अंश अपुरणनो पूरणना बहु वेष ।
अभिलाषे मोघा पद समजे सहु सर्वेश* ॥१६॥
पूरण कटक नमी पगु बहु बाधक पण एक ।
ज्यम घन बुंद बहु दीसे अखा पण नीरे थोता एक* ॥१७॥
अखा ! एम समजे थके थममो तम मदाय* ।
चाले भरत देहने ते रममनो स्यम प्रीय* ॥१८॥
माया आपना छाड़के[18] निज भाग निराधार ।
अखा सो पूर्ण काम नर आमो रह्यो संसार ॥१९॥

१ एम (मा) २ जेम (मा) ३ देवमो (मा) ४ प्रतिष्ठा (मा) ५ पूजग (सा) ६ एम (मा) ७ नैरासी (मा) ८ काम (मा) ९ त्यहाँ (मा) १० लक्षण (मा) ११ जे (मा) १२ पर्वो (सा) १३ पमे (मा) १४ × (मा) १५ पन कोरर—पन को दर (मा), १६ पतमाप (मा) १७ मही (मा) १८ छाण्डे (मा.)।

* चिह्नांकित पाँच साखियाँ पंजा न० २ ट. पत्र ५ २६७ और ३४० मे नहीं है।

प्रभु पाया तब मानिये जे मर' मया मीरास।
एह लोक परलोक की आसा टाल्यौ' वास ॥२०॥
तन मन के सुख कारण पराधीन सर्व लोक।
तन मन सौंपा कामकर सब हरि थाणा थोक ॥२१॥
आसा भुलावत आपकु जे चैतन्य भीरूप।
अखा परत' औ' केहरी छाया देखिके कूप ॥२२॥
अखा सतगुरु सेवणा ज्ञान' निपुन' नैरास।
सार भले संसार में अंतर माग' दास ॥२३॥
अखा एक सदगुरु बिना संग सकल उपाध्य।
बरसत माम बिसम्बना' बखता सेतो ब्याध ॥२४॥
जा नाक निकस्यां आर्कू साबे मीठा मणीहार।
सकल अंग लेपन करे' तो करे' प्राण परीहार ॥२५॥
समझ से बोलत बहु पण समझ्या'' कोरमां एक।
मन कर्म'' बचने निमम दोस दरस गया छेक ॥२६॥
ऐसे बहुत मिले अखा ज्या छाति भाम'' करे कोय।
आम्य बुझा'' गधक सग सो फर भभूका हाय ॥२७॥
बाह्याभ्यांतर निरमला मन बम रस रूप।
एमा नर नारायणा जाय नही महुसा'' धप ॥२८॥
पूराका ह आपमा'' मूराका हे सील।
दूजे' राजा स्वांत्र के भरे मीख का भाव ॥२९॥
पढ़ गुण' मुक्ति'' त्याग ते सह ब्याधि न जाय।
जामिम रोग मिटे तबे जब राम तबीब गमाय'' ॥३०॥
कथनी आमे ज्ञान की कोउ'' ज्ञाना जनके सग।
'अह ब्याध मिटे नहीं भीतर वासना लिग ॥३१॥

---

१ चे नर जप निर्गम (मा) २ मो मु (मा) ३ पहन (मा)
४ ज्यु (मा) ५ आभो (सा) ६ पूर्ण (सा) ७ मापाके (मा)
८ विटंबना (सा) ९ बीभा (मा) १० मो करे—हाम (मा) ११ समझ्या
(सा) १२ × (मा) १३ भूमि (सा) १४ बूझ्या (सा) १५ बहे (सा)
१६ उपमा (सा) १७ और मो (मा) १८ गमे (मा) १९ मुक्ति (सा)
२० मिनाय (मा) २१ कोई (मा) २२ पम् मा)।

आगमा[1] जनकूं सीख दे पण मन परमोघ[2] नाहिं ।
ज्यूं दीप देखावत और कूं [3]तसे अँधेरा माहे ॥३२॥
उपनिषद् के अरथ करे स्लोक सुभाषित सार ।
रसना निरमल देखिये पुनि[4] अंतर घोर अँध्यार[5] ॥३३॥
जैसे फटिक की कोठरी भीतर भरि बहु रिध्य ।
दूर स देखिये मस[6] अखा पण आय न पैठा मध्य ॥३४॥
पूरण पद पहुँचा बिना अखा सब उरसी बात ।
आयुध थपरे काहा सहे मध्य सुर[7] बिना साख्यात ॥३५॥
पूरण पद ऐसा अखा भग सिग सयसील ।
आप नहिं और काहा कहे ए[8] पुरा पद की चीहोन ॥३६॥
बिन पंडया[9] कोई नीपजा की[10] पडथा[11] नीपजी[12] कोय ।
दोप दरसन सब[13] गया तब पुरण पद सोय[14] ॥३७॥
नैरासी ऐसा अखा जैसा पारा[15] नीरास ।
अरोगी सबकूं करे आसी माया दास ॥३८॥
आपा से बाले नहीं और न थापे थाप ।
सो अखा[1] नर नीपजे देख अपणा व्याप ॥३९॥
सुढ[16] ग्यानी की एक अखा महुत हैं[17] ताको पख ।
चित्र सिंह जहां तहां सब सा[18] साचा सिंह की चख ॥४०॥
आसा अपनी काटिके निज भोग निरधार ।
अखा सो पूर्णकाम नर जाआ रहा संसार* ॥४१॥
प्रभु पाया तब जानिये हिरदे ग्यान प्रकाश ।
अखा सबका हित करे हरिजान सर्वावास ॥४२॥
नैरासी नीपजे अखा ! जेय मनसनु अंग ।
समफूटये मधागति हुठी, चेतन उग्र ब्रह्मांड* ॥४३॥

१ अमना (मा) २ परमाद (मा) ३ पण (मा) ४ पण (मा)
५ अंधार (मा) ६ × (मा) ७ पद (मा) ८ × (मा) ९ × (मा)
१० पडया (मा) ११ के (मा) १२ पडयो (मा) १३ नीपज्यो (मा)
१४ सब (मा) १५ होय (मा) १६ मून (मा) १७ मो अखा—मोही (मा)
१८ गुरु (मा) १९ सा (मा) २० जहां—सो—आरे, अखा ! (मा) ।

नैराश्री नरसे, भक्षा ! नाहे भिगुमनु भास।
ज्यम सहस्र भमर सरिता पड़े पण नीर एक पाताल† ॥४४॥
नराश्री मरमु, भक्षा ! मूसमे आप्यु मन।
ज्यम शरद ऋतु मसी शोभीए श्राघ टम्यु गगन† ॥४५॥
परमेस्वरमु पद भक्षा ! प्राप्त पातुक नहीं सेम।
वेसाने पगे पडे बाला देसा देसां† ॥४६॥
नौका मे नैराम मर आहता मोहे भाप।
शरण आवे ते तरे भक्षा ! पण इच्छ नहीं मेलाप† ॥४७॥



* ये दो साखियाँ का में नहीं है और † चिह्नवाली साखियाँ पंथी में नहीं है।

आमसा' जनकूं सीख दे पण मन परमोध' माहि।
ज्यू दीप देखावत और कू ताले अंधेरा माहे ॥३२॥
उपनिषद् के अरथ करे स्लोक सुभापित सार।
रसना निरमम देखिये पुनि' मतर घोर अंध्यार' ॥३३॥
जैसे फटिक की कोठरी भीतर भरि बहु रिध्य।
दूर से देखिये मस' अखा पण जाय न पैठा मध्य ॥३४॥
पूरण पद पहुंचा विना अखा सब उरसी बात।
मायुध वपरे काहा लड़े मध्य सुर विना साक्षात ॥३५॥
पूरण पद ऐसा अखा भेग लिग सयसीन।
आप महि और काहा कहे ए' पुरा पद की चीहीन ॥३६॥
बिन पंडया' कोई मीपजी की'' पंडया'' मीपजी' कोय।
दोप दरसन सब'' गया तब पुरण पद सोप'' ॥३७॥
नैरासी ऐसा अखा जैसा पारा'' मीरास।
अरोगी सबकू करे आसी माया दास ॥३८॥
आपा ने बोले नहीं और न पापे पाप।
सो अखा' नर मीपजे देख अपमा व्याप ॥३९॥
सुद्ध' ज्ञानी की एक अखा महुत है'' ताकी पख।
चित्र सिह जहां तहां सम सा'' साखा सिह की पख ॥४०॥
आसा अपनी काटिके निज भोग निरधार।
अखा सो पूर्णकाम नर आभो रहा संसार ॥४१॥
प्रभु पाया तब जानिये हिरदे ज्ञान प्रकाश।
अखा सबका हित करे हरिजाने सर्वावास ॥४२॥
नैरासी मीपज अखा। जेय अमसनुं अड।
बणफूटये अधागनि हूती चेतन उर्ध्व ब्रह्मांड ॥४३॥

---

१ अपना (मा) २ परमारे (मा) ३ पच (मा) ४ पप (सा) ५ अंधार (मा) ६ × (मा) ७ पच (सा) ८ × (मा) ९ × (मा) १० पावी (मा) ११ के (मा) १२ पइया (सा) १३ मीपज्यो (मा) १४ कब (मा) १५ हौप (मा), १६ मून (मा) १७ गा असा—सीही (सा) १८ पुत्र (मा) १९ सा (सा) २० वहा—हो—मारे बता! (सा)।

नैराधी नरने, अखा ! नाहे त्रिगुणनु भास।
ज्यम सहज भमर सरिता पड पण नीर एक पातासं† ॥४४॥
नैराधी नरनु, अखा ! मूलगे आप्पु मन।
ज्यम धरव ऋतु घामी घोभीए घाघ टप्यु गगन† ॥४५॥
परमेश्वरनु प॰ अखा ! ग्राह्य ग्राहक नहीं लेश।
बेसाने पगे पडे भामा देखा देख† ॥४६॥
नौका मे नैराश नर आहता मोहे आप।
धारण भावे ते तरे अखा ! पण इच्छे नहीं मेलाप† ॥४७॥

★

---

* ये दो साखियाँ मा र्ग नहीं है और † चिह्नवाली साखियाँ पंची के है।

देह दरसी को अग

जे कोई आमत है अखा मे सत्य मेरी काय ।
पाप ताप संताप सब देह दरसी कूं ताय ॥१॥
देह दरसी राखत अखा वर्णाश्रम का भार ।
दावा देह अभिमान का आतम नहीं विचार ॥२॥
देहाभिमानी नर अखा काम क्रोध बस होत ।
मोहो' ममता तहाँ कामबस आरम नहीं उद्योत ॥३॥
देहाभिमानी उपर 'अखा बस चलावत काम ।
पंडित ग्यान सील्यवंत है रंक ही के भूपाल ॥४॥
देहाभिमानी नर अखा अंतर बसत का है अंध ।
बाह्यक्रिया बना रहे' बांधा सरीर के बंध ॥५॥
देह दरसी जे नर अखा देखत देह के दोष ।
चैतन्य' क जानत नहीं मानत कर्म परोक्ष ॥६॥
देहाभिमानी नर अखा सब चोरासी ताहे ।
जागत" मे ज अनुभवे" सो आवत सपने माहे ॥७॥
जागत" मे ज अनुभवे" सा आवत सपने माहे ।
दुख देवे तो देह कुं सुख चाहे" ता देह ।
पूजे ता भी देह कुं राम न जाने" तेह ॥८॥
पाप पुन्य जे ग्रंथ म "सब देह दरसी के काज ।
छद्र" दाग ओषधि माना सब रोगी का साज ॥९॥

---

१ मोह (मा) २ उसरे (मा) ३ × (मा) ४ छिद्रिवंत (मा) ५ चपु (मा) ६ ठिहा (मा) ७ पत्र (मा) ८ बांध्या (मा) ९ चैतन्य को (मा) १० जाग्रत (मा) ११ अनुभवे (मा, १२ देवे (मा) १३ जानत (मा) १४ मवरा (मा) १५ गद्य (मा) ।

धर्मीमम का भार बहे रथ न खोवे राम।
जौं' हासर' की सकरी भार' महत बे काम ॥१०॥

देहदरसी माने भमा सत की उलटी बात।
प्रसज राम आवे अखा ताकूं कहे उतपात ॥११॥

हाय ममा के होयगा ताके नाम सहरावे।
वे सागर के बुदबुदा जाकूं' जानत' माये' ॥१२॥

देहदरसी मानत भमा बीठ हाय देहमास।
तत्त्व जौं' जानत नहीं मेरे मूम पाखास ॥१३॥

देहदरसी सींचत अखा पात पात कुं नीर।
आतमदरसी देव कूं सिंचंत' एम' सरीर ॥१४॥

देहदरसी देवे अखा भीव भान'' के दांन।
आतमदरसी आत्मा पोषत ''है निहकाम'' ॥१५॥

देहदरसी सब'' भूत को मखा माने के रक।
आत्मदरसी मानत'' अखा खेलत राम निसंक ॥१६॥

देहदरसी हित आचरे देह सर्मध'' प्रीत हेत।
आत्मदरसी आत्मा ज्यानत सकल समेत ॥१७॥

देहदरसी आचरे अखा कही केहेर' कहो मेहेर।
आत्मदर्शी आत्मा सम रेहे आठो पेहेर ॥१८॥

देहदरसी आचरे अखा स्थूल कर्म लोकिक।
आतमदर्शी आत्मा मीस रहया लोकोलोक ॥१९॥

देहदरसी सम धर्म के दुख सुख केरा पात्र।
आत्मदरसी देह में रहे बरतन मात्र ॥२०॥

---

१ × (मा) २ हासीम(मा) ३ अखा (सा) ४ मावे (सा) ५ ताको (मा) ६ वैसे (मा) ७ माहि (मा) ८ त स्वबो–तरवर प्यु (सा) ९ पोषत (सा) १० राम (मा) ११ जामि (सा) १२ रहे (सा) १३ निष्काम (सा) १४ सत् (मा) १५ देखे (सा) १६ सबब (सा) १७ कहेर (सा)।

संसारी मौर संत है एक पेड़ मे दोय।
जी बदरी[1] कांटा मवा एक सिप्या[2] टेढ़ा होय ॥२ ॥
समारी मौर संत के[3] फेर बहोत सख माह।
ज्यों सारदूल मावत अग्निते चकोर अमृत करी ग्राम ॥२२॥

✣

१ बदीवा (मा) २ सूखा (मा) ३ में (मा) ४ मांस (

आतुरता' को अंग

कृपा गुरु गोविन्द की माना ए नर' नार।
ज्यों निपज्य सारि मेघसे अखा भूमका सार ॥१॥
क्रिपा' ते नर नीपजे सो अनुभ' आत्मसमान'।
जहां बारे' मास बरष बरषा' सदा षटऋतु' सब' समान ॥२॥
जती क्रिपा नीपजय तेती कहत अखा विचार।
ज्यों नदी नाले के मावठ तरे न दरिया पार ॥३॥
अखा क्रिपा सो एतनी आतुरता की तोल।
जती आतुरता नीप कर ऐसा मोति अमूल" ॥४॥
अखा आतुरता बीन मरा जैसा स्वामी मोहा।
मूमुक्षात" पण "मायो बिना भक्ति बैराग्ये थाक ॥५॥
आतुरता गंभीर ज्यु तेसी नीपज बेग।
अखा ग्रीषम बहु तप एसा बरष मेघ ॥६॥
आतुरता मन उपजी धारा" हरि पर आप।
"ज्यों रवि प्रगटा" रेणी घटी" 'आत्मसमान अमाप ॥७॥
अखा आतुरत" मिलै राम रतन भंडार।
जहां अमीस मच्छला" प्रगटे" तहां कम-कर्म घमसार ॥८॥
अखा आतुरता नही सरो भीग सांग बनावे ससार।
'ज्यों बम्पा के उछंग" पर खेल कहां स कुमार ॥९॥

---

१ मन इणा अंग ११ १ (सा) २ नर नार—निरधार (सा) ३ कृपा (मा) ४ अनुभव (सा) ५ आत्मस्वमान (मा) ६ बारे (मा) ७ बरषात (सा) ८ असा (मा) ९ षटरत (मा) १० सदा (सा) ११ मोल (मा) १२ ममतात (मा), १३ भावना (मा) १४ मार्यो (सा) १५ ज्यु (मा) १६ प्रगट्यो (मा) १७ घट (मा) १८ तेम (मा) १९ तो (मा) २० नाना (मा) २१ अवतरे (सा) २२ × (सा) २३ उत्संग (मा)।

मखा आतुरता बिना यों अमसी का ध्यान।
निसे' पिसे' मांग' के बायु मिमावत तान ॥१०॥
मखा आतुरता बिना बिना रत की मृष्ट'।
मीपज्य न हावे ताही पे धो मन' मीगी सृष्ट ॥११॥
चेहेरी' आतुरता मखा ज्यौं समुद्र का उफ्यान'।
कोटि नदी नामा भरे ऐसा राम निदाम ॥१२॥
घहेरी आतुरता अखा वैसा राम का बाण।
एकहू ग्यानी मां पड उपम आरम जाँग ॥१३॥
आतुरता चाहिए' अखा ज्यों मणि गमाया' नाम।
रोवे तलफ तरफड तावे तनका त्याग ॥१४॥
अखा आतुरता धरी ज्यों रूई लपेटी आग्म।
छिपाई'' छिपे'' नहीं तो वह'' आतुरता' माग्य ॥१५॥
अखा आतुरता धरी ज्यों महि में नवनीत।
मतुर बहुत मथन किया'' हात दीसा'' अदेत ॥१६॥
मखा आतुरता बिना बीबडा ज्यौं अवास।
बिना फप फूल धारी'' मर रोता होवे नास ॥१७॥
बिना आतुरता राम की जा आर'' आतुर'' तो होय।
ज्यूं कोयस छाना कागकू काम न मावत काय ॥१८॥
बिना आतुरता राम की अन्य उपासन बोहात''।
अखा ज्यों'' दिसोगा साप'' को परमा बहाामा'' हात ॥१९॥
बिना आतुरता राम की तीरथ व्रत तप त्याग।
ज्यों मूषर को मारे अधा पण लबर न मारे बाघ ॥२०॥

---

१ भींमी (सा) २ पीसी (सा) ३ भीगवे (मा) ४ बृष्ट (मा ५ दिम (सा) ६ बहुति (मा) ७ उफाम (मा) ८ गड़पा (मा ९. चाहे (सा) १० निगम्या (सा) ११ छुपाई (मा) १२ छुपे (मा १३ यह (मा) १४ आतुर (सा) १५ किया (मा) १६ दता (मा १७ मार्गी (मा) १८ उर (सा) १९. आतुर नो—आतुरता (मा) २० होत (सा) २१ × (मा.) २२ मार का (सा) २३ बहामी हाद-बाहा मोत (मा)।

पहेरी आतुरता अवा तन मन लग्गा[1] तास।
ज्यों राज पुत्र का सोमणा[2] हिरा-मामक[3] माल ॥२१॥
पेहेरी आतुरता अवा जैसा मोसा काम।
माइ अटक मानत नहीं अपनी करत नीरास ॥२२॥
पहेरी आतुरता अवा रामचरम सू राग।
जो बुझाई बुझत नहीं पे लागी बाग्रो में आग ॥२३॥
पहेरी आतुरता अवा रामचरन[5] पर चोर[6]।
सिंह ज्यूं मारत गज मसा पसू न मारत चोर[7] ॥२४॥
एसा राम ताकै अवा जे सबके सिर का ताज।
पे नहीं आवण आप का मारा गोका साज ॥२५॥
आतुरता का पावणा यौं[8] अमर का अंग।
कुल कुटुंब मारो सड़े साईं[9] सुरा मनुष्य ॥२६॥
पेहेरी आतुरता अवा घरे उपरे नहीं थांभ।
ताकूं मीना अंक में ग्याकूं[10] अंध स्यग सुति[11] न भांस ॥२७॥
पहेरी आतुरता अवा फांसफूस न सहुराव।
जौं सकर लाग[12] बनामरा समर[13] लाजो लाम ॥२८॥
पहेरी आतुरता अवा एक पेड़ मा[14] बैकुंठ।
जौं वामागर का उडण बापन को नहा मूठ ॥२९॥
पहेरी आतुरता अवा आपा पर दलि जाये।
आपा पर बिना भाग हु सा रमना पार न आवे[15] ॥३०॥

---

१ लरगा (सा) २ माइया (सा) ३ मोमी (सा) ४ ज (सा) ५ दोर (सा) ६ मोर (सा) ७ जैसा (सा) ८ अम्मर (सा) ९. अपा। (सा) १० जाई (सा) ११ सुरन (सा) १२ लार (सा) १३ लाकर (सा) १४ पेड में (सा) १५ पार न आवे—पर आहि (सा)

क्रीपा' को अंग

कोई मत तीरथ करा मांग' यांग' करो कोय ।
भखा 'बैठा तुज पर हाथ पाव को ग्रोम ॥१॥
ना में पकूपा गुग्य भखा ना मोहि हृदय का चोर ।
गमीया बेहेस' पाम्याम पीव' देख्या अपनी ओर ॥२॥
ज्यों मगस मा उतरया माहा काह गे बिराय ।
छिन' 'एक में मस्ती हो गई भोर की कमे भमाये ॥३॥
गाज बीज बिना बरखीआ' महा कोई मेघ माहाराज ।
हरी भई अपनी भखा सहेज मां सरिया काज ॥४॥
मुसकस" पाइये कुदरते सा माया अपनी माज ।
मर माठि मावा मिल्या धगा न वेग्मियत फाज ॥५॥
निद का गेहेरा अखा कहा थाम प्रतिकार ।
अपनी मावा" आपक दाउ दिया" दीगार ॥६॥
ज्यो बिलके छानाई" के नेन कुम्सत वेग्नि हेम ।
मास पाया' मामकू भखा पाउ का प्रेम ॥७॥
माहनवेस" माम मिले जैस कूबड कुमार ।
खोजत "पाइय नही मखा' सो गुरु साया किरतार ॥८॥
अविरस धारा भम पर्सी मो मुग निज घर' बात ।
म्याहाम" हावे साजी" मर बन्ना मेहि ए" बेमकु माहाम" ॥९॥

---

१ मन पुगा बग (मा) २ ×२ ३ ग्रोप माम (मा) ४ मो (मा) ५ बैम (मा) ६ गाम्याम पीउ—र मया तिरा (मा) ७ लाग (मा) ८ × (मा) ९ बरसीआ (मा) १० मुदिरत (मा) ११ मोमू (मा) १२ दोड दिया—दोरी दीगा (मा) १३ छोमाहि (मा) १४ माम पाया—मामे मिलिया (मा) १५ बैम (मा) १६ मे (म) १७ × (मा) १८ पर (मा) १९ मिहाम (मा) २० सो (मा) २१ म हि ए—मे मेहि (मा) २२ महाम (मा)।

अखा सोभा निद में पारस' गरिया' गेव।
दरिद्र भाग्या दूर सब थी' अज्ञान की एव ॥१०॥
ओड पड्या म ससार मूं गारि पिसे दांत।
वरि रामकू' सुवरी अखा मिलि नहि पांत ॥११॥
लागे नेना माहा के' असलपमा में जोर।
पुलति' हाते मांनीया अखा सा बोसी मोर ॥१ ॥
प्रेम मिल्या पिउ सुं अखा मौर भांत का मोग।
मेन बेन रस रूप ही चल्या आत' सयोग' ॥१३॥
लाज काल की नहि अखा प्रमदा पीउ के संग।
नेह मीरतर चलत है ज्यो साहेर'' तरग ॥१४॥
गुपत हेरामी बहु छिमां'' अब' भई मासम' माय।
नाता माही'' दखिमा अखा सो जानत कोय ॥१५॥
''कठो हाथ हे परसपर'' में भार मेरा नाही'।
आकार अखा जाओ रही ''मिटे न भीतर'' भाया'' ॥१६॥
उलस रही तीसा'' बिना मुपने अहम'' साथ।
करोट फीराया कथ न अखो कहे अने'' हाथ ॥१७॥
कथी'' भामिनी पी अखा सुपन सहराती साथो।
खरी आग्या पकी'' भई प्रत्यक्ष पीउमू दाभी ॥१८॥
सोही भोग कथा अखा ये धनाजनी'' मरजावें।
मेदू मेद' भुक्ते खरा कबहु खता म खाये ॥१९॥
पीउ मरण को'' नही अखा प्यारी मर मर जाय।
रस बस होय मिले नहीं टले' नही हाय हाय ॥२०॥

---

१ परमा (मा) २ गिरिआ (सा) ३ मेथी (मा) ४ चोरी (सा) ५ रामकी (मा) ६ माही के—म्हाब में (सा) ७ पुल्डी (सा) ८ पची (मा) ९ १० है जोग (सा) ११ सायर (मा) १२ बिना (सा) १३ अब (सा) १४ मामूम (मा) १५ न्हाब (सा) १६ कंठ (मा) १७ परस्परे (मा) १८ म्हाब (सा) १९ मा (मा) २० अंतर (मा) २१ भाव (सा) २२ कोई (मा) २३ असमु (मा) २४ सपने (मा) २५ काथी (मा) २६ नाको (मा) ७ पिया प्यारी (मा) २८ भाव (सा) २९ का (सा) ३० टरत (मा)।

भमर कंथ अंक में अबा कंथ के अंक मा आप।
सा' मिलिन बिछुरत नहीं बिछुरत पथका पाप ॥२१॥
न्यारी न परत माहो ले' जो सुंदरी समझी होय।
भितर भाव ऐसा भवा गरम भसा सी स य ॥२२॥
अंग अमासी' भोग हु अषा डेस का खेल।
मोहो निसा का पेखना भरत बासता वेस ॥१३॥
साजी समारत सांग' कू बहोत 'जीवन की आस।
रूप' रग मिल्या भवा छोड सकूं नहीं पास ॥१४॥
सखियां चलियां सेहेस कू स्वर्ग भोवन का भोग।
प्रीतम' मुर्ख' छुड़त नहीं राखत सहेज्य संयोग ॥१५॥
परबस सारे पखीमां सबि डोर पर सास।
मोजां खेलत आपणी 'हुर घस मये मये हास ॥१६॥
मैं तो उड़ सकता नहीं राख्या अपने हाथ।
ज्यों चीतरे'' के हथिया चड़ा सो चढ़या माहुत'' ॥१७॥
मेरी मैं ममम् मही तो भसा क्यू समभ्यू'' भोर।
ज्यो देखियत बहुरप मादरी भवका'' रम फिरेगा बहार ॥१८॥
मेरी सा ऐसी भवा बिन बासों' सी बात।
साते ठोर यामा'' पर तव अक्षर बासत तांत ॥१९॥
जैसा भान रवाब का'' एसा बालम माय।
बाजा खुदत अरुपिया ना मवा ते होय ॥२०॥
ज्यों स्यों रहूंगीस'' बोल्या भवा तब मागत सब सोय''।
चका'' भीमही भई ''अबे ''ताका ''बेसा काय ॥२१॥

---

१ माही (मा) २ न्हारनें (मा) ३ आपासी (मा) ४ मयीआं (सा) ५ स्वांग (सा) ६ जिम (सा) ७ रूपा (मा) ८ भीतम (सा) ९. मुखे (सा) १० अबा (मा) ११ चित्र (मा) १२ महान (सा) १३ ममझे (मा) १४ महा (मा) १५ बाबो की (मा) १६ भाव (सा) १७ भान रवावका—भानर बाबका (मा) १८ रहुम (मा) १९ कोव (मा) २० चलिया (मा) २१ अबा ' (मा) २२ ताका (मा) २३ बेसा (मा) २४ बा (मा)।

केहि' न आवत बातमां सो ही बोलत' बोल।
मर भूपण मेवे अखा माणक' मौल अमोल ॥३२॥
अखा अलख का लखणा ज्यों छिहिमी का पयपान।
और पसु अब' मा सकें बमा' अपत एहि छान' ॥ ३३ ॥
मो रसीमा का' माहात्मा आप मैं सब गरकायो।
छोहांमा कोई रहेवे नहीं पसु पंखी बर्क' सायो ॥ ३४ ॥
तस्व दरसी का पेखणा' मात साहि नहि काम।
चेहेन चरित्र न्यारे अखा बेन'' मध्ये आराम ॥ ३५ ॥
बोसन मंते चूप है चुप का स्फुरण सा'' याम।
नाही चूप मा'' बोलना अखा अब देख्या वास ॥ ३६ ॥



१ औ (मा) २ बोलावत (सा) ३ माणक (सा) ४ अबो (सा)
५ बमा (सा) ६ अपत एहिछान—पीवत एक शान (सा) ७ मा रसीमा का—
मार गमाका (सा) ८ रहामा (मा) ९ गुप्त (मा), १० देखणा (मा)
११ बैन (सा) १२ मैं हि (सा) १३ नाहि (सा)।

हीरा' को अग

जीव जात्य' हीरा भया साम्या रग' का दोष ।
आपे ते सूधा भया तब नहि बमन मोक्ष' ॥ १ ॥
भया अवस्था भेद है क्यूं निद्रा जाग्रत जाय ।
जागे थ' क्यूं का त्यूं ही है ।'समस्या' मेहेम समाय ॥ २ ॥
जाग्रत कही जाता नहीं बाहर तें भिद न आये ।
भया अवस्था भेद ह जो साक्षीवत रहाये ॥ ३ ॥
जाता जाता नही कछू है जाण पणे का वास ।
भया जीव करोलिया उमसत अपनी लास ॥ ४ ॥
स्वर्ग बैकुंठ ब्रह्मनाक सौं जामो सब संसार ।
अटल पद न्यारा भया जहां' माणत माहि उपार ॥ ५ ॥
अक्षर के आधार कर्य' क्षर वस्तु होये'' रहि जाये ।
जाका लक्ष नाम भया सोही सो पद कू पाये'' ॥ ६ ॥



---

१ हरि (सा) २ पाने (मा) ३ मंप (सा) ४ बंध और मोक्ष (मा) ५ आम्मे (मा) ६ त्यु (मा) ७ समसमु (सा) ८ मांगी मुग़ ९ जहां (मा) १० नव (मा) ११ नव (मा) १२ कू पावे-पद रहाव (मा)।

भेष को अंग

ज्ञान तिलक दीयो भलो एक भावना माल ।
दीनी छाप निरजनी भम्या वैरागी माल ॥ १ ॥
टोपी सिर अघ मात्रिका' गुदड़ी रंग पख सूत ।
फूल मास निरवासना' सेसी सुरत्य अदभूत ॥ २ ॥
निज नहचा' † उडायनी जगोटा सो निरास ।
आडध मघ एक सजबा' सरम लगोटा पास ॥ ३ ॥
वस्तु विचार' सा कूबड़ी अचरा सहज सुभावा ।
आसन पिंड ब्रह्मांड पर जहा' जीव का न टिके पावो ॥ ४ ॥
सुत नित'से बोलणा चलवो बिद आकास ।
ध्याता ध्येय और ध्यान का जामे सब समास ॥ ५ ॥
रेहेणो करणी आपसीयो सबी करणाहार' ।
समरथ गुरु सिग्रारम में'' का गुरुमुखी लगा विचार ॥ ६ ॥



---

१ धरी मन माला (मा) २ निर्वासना (मा) ३ नहैचा (मा); ४ सा (मा) ५ सच (मा) ६ बराग (मा) ७ रहा (मा) ८ टिकत (मा) गु । .. म—सूरत सूरत मच (मा) १ बगार (म) ११ सुर ... मे—सुर लियो रमे (मा) ।

असंत को अंग

तिलक बनावत रुचि रुचि[1] हैत नहिं हरिनाम ।
जद्यपि टसका[2] स्वांग हैं[3] जात न कटनी बान ॥ १ ॥
मनुआ तो समरथ[4] महीं भेख समारत बाहार ।
जैसो सोमभ उमरा करत[5] प्रान परिहार ॥ २ ॥
हीरा मोती हरि किया कोई भाग्यवान के काज ।
[6]सत्य भाम भोग भवा कोई एक भंस[7] महराज ॥ ३ ॥
जैसे सीसम काष्ठ में पमरा रहत है विष ।
[8]"अवा भगत ए" आत्मा बिन कुबुध्य की कीथ ॥ ४ ॥
अथा सदगुरु के मिले कबुधि न मीपजे नेम ।
लोहा[11] परसत पारस काई न होवे हेम ॥ ५ ॥
एक असंत दूजी मन की मध कुबुद्धि छिपाय ।
त्यों[12] अवसर आया[13] बस पना[14] ज्यों का त्यों हो जाय ॥ ६ ॥
अथा सदगुरु के मिले असंत संत न होय ।
"ज्यों नीर नरम सब कू करे पण कछुवा नरम न होय" ॥७॥
असंत आसा चामड़ा बरतत एक सुभाय ।
गिला तब गला अथा सूखा कठिण हो जाय ॥८॥
असत खरा मानास का प्रेरणदार दुख देत ।
धूप धुप रहे ताते अथा वे किया न पाप हेत ॥९॥

---

१ रुचिरुचि—रुची रुची (सा) २ पण (बा) ३ टीलुवा (सा) ४ पन (सा) ५ मुभरत (सा) ६ करे सी (सा) ७ रमु (सा) ८ मोथी (सा) ९ अंस (सा), १० सीसम (सा) ११ रहत है—मीपज (सा) १२ रमु (सा) १३ है (सा) १४ मगु (सा) १५ × (सा) १६ पापा (सा) १७ सम न (सा) १८ × (सा) १९ नरम ......होय—नमे न कोय (सा), २० बारा (सा) ।

[1]आंबा पूगा सत घन फलसे ममता जाय।
असंत एरंडा जब फल्या तब ऊँचे मुख राहाय ॥१०॥
असंत दूजा नहीं अवा मानस नहीं उपकार।
अवसर आया फूफवे[2] जो होये पय पावणहार[3] ॥११॥
अवा राम ताकू मिले, जे सच्छनवता[4] होय।
संत दांत गमीरता दोप न देखे सोय ॥१२॥



१ एक (ता) २ फूके (ता) ३ पीलावणहार (ता) ४ लक्षण वंता (ता)।

६१

अथ सीख[1] अंग

बाव म कथ[1] अखा कोई सूं ज्ञान रतन अमोल ।
बे कीमत मत हारवे कोई पारख आवे तोल ॥१॥
अजर प्याला ज्ञान का कोई मत गेहू सहुराय ।
छिमर कुप्प[2] का नर अखा दाउ बात ते जाय ॥२॥
सिंघ न मारत सियाल कु चोट करत गजराज ।
बाला[3] देखि मत बके ज्यों मोति न हावे पाज ॥३॥
कूप्डा[4] भासन ख्यार का मरम सिहनी का दूध ।
ब्रह्म रस ठहेरे तब अखा हाय सोला हेम तन शुद्ध ॥४॥
मुसकल[5] ब्रह्म रस पावना पचना भी मुसकल ।
ज्ञानी और रसायनी चाहिये पुगता दल[6] ॥५॥
जैसे तसे जन कू बकबक मत[7] विगाड ।
अखा सुधे सरप[8] के मरम न कूता हाड ॥६॥
सोई[9] नर निपजे अखा आमे सब[10] समाओ ।
[11]हाद्या[12] परखाम[13] उपर बेसु मे का पाओ ॥७॥
मासी मसका पाथा ते भाओ शब्द का चोर ।
मरे की पीधा चाहाहे अखा[14] दादा[15] नीकस बाहीर ॥८॥
अखा दाम[16] जाको पच्या ताकू सब पचमा सेस ।
पथर पच्या जा पेट[17] मे तब[18] कोण कणा रह्या गेस ॥९॥

---

१ सिखा (सा) २ कर (सा) ३ कुम्प का—बाबना (सा) ४ कहामा (सा) ५ प्याज (सा) ६ छोसी (सा) ७ मुस्किल (सा) ८ मुगत (सा) ९ बिम (सा) १० मते (सा) ११ सपे सर—सूर्यं वर (सा) १२ मोहे (सा) १३ धाम (सा) १४ शघु (सा) १५ पीहामा (सा) १६ पद (सा) १७ म (सा) १८ बिड (सा) १९. और (सा) ।

ज्ञान उपदेस मत अबा कसुसी बाहमा होय ।
जो नाम पढ़े अमूक मुवा' तो' प्राण हाण करे सोय ॥१०॥
मखा खोवी समर कर मत संत गमावै भाय ।
खोवा हरि हा' निमट मा तो छार होय भाय ॥११॥
इत लासण ससार की उत' लासण परमाक ।
बनज उधार दोड है राम रहे पास' है दाक ॥१२॥

---

१ अमूक मुवा—उम्मुकमुवो (छा) २ × (ना) ३ होय (छा) ४ और (ना) ५ मवा (ना) ।

मीष्ट ज्ञान[1] को अंग

निष्ट ज्ञानी[2] ऐसा भया भाव भरोसा हिन[3]।
सतगुर की आदर नहीं[4] जीव काके[5] आधीन ॥१॥
निष्ठ ज्ञानि[6] ऐसा कपमी रहत आकास।
करत्ये[7] भवत कीच में राखस जीव के पास ॥२॥
नीष्ठ ज्ञान ज्यूं जानिये सबन[9] कुटंब परिवार[10]।
ज्यूं कुलटा कंत कू तजै[11] चाहत मिथि बिन प्यार ॥३॥
निष्ठ ज्ञान ऐसा भया सीधी सुम करे बात।
गुरु मूल[12] गुरुआई की आमत[13] नहीं सो मात ॥४॥
तठे[14] सोइ बाजीगरा अपरस काटत[15] अंग।
मेंहि कसा खेसे भया तब पाया[16] गुरु संग ॥५॥
कपमी कहनी अस भया पर रहनी में कुरामो।
निष्ट ज्ञान पाम्या पड़े मायावन धन पाओ[17] ॥६॥
निकस्या पिछा न फिरे शुद्ध ज्ञानि और सूर।
तब धर्मा[18] जीवमा मा धरे सड़े सो राम हजूर ॥७॥
शुद्ध ज्ञानी और सिंह की एक टेक एक भाम।
फिर देखे आगे चले भया न मारे माम ॥८॥

---

१ नैष्ट अंग (सा) २ ज्ञान (सा) ३ हीन (सा) ४ सतगुर... नहीं—भाव नहीं सद्गुरुका (सा) ५ काया के (सा) ६ निष्ठ ज्ञानि—नैष्ट ज्ञान (सा) ७ करते (सा) ८ बरतत (सा) ९ कुल (सा) १० पर प्यार (सा) ११ मेंवरी (सा) १२ कुली (सा) १३ समझत (सा) १४ ठते (सा) १५ काटत (सा) १६ पाम्या (सा) १७ आवा पाओ—धन तन आवा दाव (सा) १८ कु (सा)।

निष्ट ज्ञान' और उदरा चोपट' न मसे पाम।
मुख समार्व' पचमा सान पान सही मास ॥९॥

गुरु गोविंदो' परखा' नहीं धमकी घमकी चाहे।
अखा चास पहो' संत' की नहो मानाकानी साये ॥१०॥

परमोधे परकू मसा पण परमोधत' नहीं आप।
मेसा दीपक चीमका तेज करे न ताप ॥११॥

साधु सत को टेक है साकू धरत म कान।
जेसे सूत' गुण का बाण्या" †"पीता नहीं पहचान" ॥१२॥

जे फल पावया" साहबे ताकी महमत" और"।
गुरु गोविंद" ते जे गया सा टूट पड़ था कटोर ॥१३॥

गुरु मरण" पाया नहीं भास्त" स्पष्टोनी' गोष्ट।
अखा अमस नहीं संचरे काहा भयो खरखपोहोठ ॥१४॥

सत्यज्ञानी" एसा अखा जैसा सूर्य" सुभावो।
दिन सापत पोपत निसि चनद्रकला के भावो" ॥१५॥

मिष्ट ज्ञानी एसा अखा ज्यों दूध अचाया नाग।
हलाहल हो भीमडपा कर पड़त है आग ॥१६॥

सतज्ञानी एसा अखा सदा रहत गुरु सरण।
सत गुरु के सतमा तन मन" गुरु के चरण ॥१७॥

ज्यू मुहुरत्य" बिष भरी निपजत सहित अबेव"।
सत्य ज्ञानि" एसा अखा जिनु सम्या गुरुदेव ॥१८॥

---

१ निष्ट ज्ञान—नैष्ट ज्ञानी (सा) २ चोबट (सा) ३ दुरावे (सा) ४ रा (सा) ५ चास (सा) ६ वै (सा), ७ साधु का (सा) ८ प्रमोदे (सा) ९ प्रमोदत (सा) १० पुत (सा) ११ गुनका बाण्या (सा) १२ ताहे (सा) १३ परिछान (सा) १४ पावत (सा) १५ महमत (सा) १६ ठोर (सा), १७ से (सा), १८ हुरा (सा) १९ भास्य (सा) २० विनाखी (सा) २१ ज्ञान (सा) २२ सूर (सा) २३ न्याय (सा) २४ × (सा) २५ मूर्ति (सा) २६ अबमेव (सा) २७ ज्ञान (सा)।

समझ कर[1] सीपजे[2] सबा गुरु सा सीजवे सोय।
सब समान सीझा रहे तो बिम्ब†[3] प्रतिबिम्ब होय ॥१९॥
टुक भी पग आगे धरे †पिछा न धरे[4] पाछो।
सबा या सीख धरे[5] तो बहोर न पावे वाको ॥२०॥



१ करी (सा) २ सेवे (मा) ३ सा (बा) ४ पग (मा.) ५ बाठ (सा) ६ धरे (मा)।

६३

अजब को अंग

अपणा आप विचारिया चेतन्य चिन्हा धाम।
अखा पथ चलना रह्या जहाँ तहाँ नीज धाम ॥१॥
अजब मता पाया अखा आपा पीछाना एम।
मह्ता भेद[1] चित्त[2] ते टर्‌या मैं करता दिन रैन ॥२॥
अजब मता पाया अखा दूजे[3] ते दखिय सून्य।
मन मीष्य तामे[4] नीपजे [5]दोसत सब[6] घोर मुन्य ॥३॥
अजब मता पाया[7] अखा बिन चकमक की आग्न।
सुलगत सो दखिये नहीं मोर[8] नही काई[9] पाग ॥४॥
अजब मता पाया अखा चल्या अगोचर धाम।
सो थयामी मां मिल गया जाके है सब धाम ॥५॥
अजब मता पाया अखा छाम्दा[10] ठौर दिखाय।
आपे राह्यामे रहे पया चेतन चीत में माय ॥६॥
अजब मता पाया अखा आप न परस्या अग।
ज्यूं मेघ बुंद दरिआ गिरी अपनो न कोना[11] संग ॥७॥
अजब मता पाया[12] अखा ज्यों गर्भ रह्या पा बाये[1]।
आप बिसामा अंतरे को कहे नर मादाये[13] ॥८॥
अजब मता पाया[14] अखा सबका दृष्टा आप।
पिंड ब्रह्मांड चले हुमे मां नीज पाप उपाप[1] ॥९॥

---

१ मेन (सा) २ चीचर्दे (सा) ३ दूज ते—दुजन (सा) ४ तेसी (सा) ५ काजें (सा) ६ ता (सा) ७ भी (सा) ८. पाया (सा) ९. पही (सा) १० और (सा) ११ उगर (सा) १२ कीम्हा (सा) १३ कमा उपजी (सा) १४ वाय (सा) १५. माताव (सा) १६ कमा पाई (सा) १७ उपचार (सा)।

अजब मता पाया अखा प्यारों[1] बा के तीर।
जाग्रत स्वप्न स्वपोमती[2] तुरिया[3] का सो नीर ॥१०॥
अजब मता पाया अखा चैतन्य[4] चराचर चीहीन।
सोहि सागर की लेहेरियां हरिहर जाके मीन ॥११॥
अजब मता पाया अखा सुत[5] सत्व सब सार।
उपज्या सो बोल[6] भया[7] पण प्रगत[8] न अतर तार ॥१२॥
अजब मता पाया अखा कहे सुणे[9] से दूर।
सम्बोधि का पंथ है सुरत सुरत से[10] नूर ॥१३॥
अजब कला उपजी[11] अखा करनी हारी काम।
मुझे के मुकाम में ज्यों का त्यों हि[12] निवास ॥१४॥
अजब कला सोहि मता जो[13] से ध्याता बिन धाम।
जैसा तैसा आप है को कहे राम अराम[14] ॥१५॥
अजब कला पाई अखा ज्यों का त्यों हि सदैव।
भया गया से बाहिरा[15] सब जीवन का जीव ॥१६॥



---

१ प्यारे (मा) २ सुषुप्ति (मा) ३ प्यारे का (मा) ४ चुम्म (मा) ५ चुम्म (मा) ६—७ बिसय भया (मा) ८ x (मा) ९ टग्ग (मा) १० सुणे से—सुण्यनें (मा) ११ नव (मा) १२ पाई (मा) १३ x (मा) १४ x (मा) १५ आपम (मा) १६ बाहरा (मा)।

उपास अंग

उपास भय सो नहि है जे तपावे अपना अंग ।
पंच तत्त्व का पुतला करे को¹ भेषि ढंग ॥१॥
मेरी तेरी नहि मना जहां है साइयां आप ।
ए मत मत कुं² खेवटे³ हासम गया अमाप ॥२॥
माहि हरी हिंदू भया नाही मोरा मुसलमान ।
बिच खपावाणो मत करा पण पीरका नहीं पहचान्य ॥३॥
जो कर जाने बदगी तो आपा छोड गुमान ।
भला-बुरा मत कहे मना एतो आपे आप दीवान ॥४॥
फाल्या फूल्या भया फीरे कहा देखावे अंग ।
काम फना हो जायगा जैसा रंग पतंग ॥५॥
मातसमामी ए भया जाना सब संसार ।
समरतें दिन भुजरे मार⁵ फना होत नहि बार ॥६॥
निरदावे का बाचणा⁶ मना जो⁷ धड़का जूस⁸ ।
सो रिपु बिना रनमा सड़ मोर⁹ भाजन की नहीं सुम ॥७॥
ज समरिकरो¹⁰ जूस¹¹ जो पड़ सो साचा संग्राम ।
सो मरे मार¹² भया त्यूं हरीजन कु राम ॥८॥



---

१ को (सा) २ मत मताहब को (मा) ३ बिच (मा) ४ सराव (सा) ५ × (मा) ६ और (मा) ७ × (मा) ८ मूझ (सा) ९ पम (सा.) १० बसामर (सा) ११ जूपर्दु (सा) १२ मरे मारे-मारे मरे (सा)।

खल शाली' को अग

सा सगत पे सूमरे नहीं मे कुटिल विपई' †'बम ।
मवा† पग की मघमी सा धावत नहीं नुरमघ ॥१॥

हरोजम की' तामस मवा पस चंद की धाम ।
तेव करे तपे गहीं †'उपदेसे माराम ॥२॥

मर मरहरी बिष महीं मवा † कागदवा की मोट ।
†'महंमामीनता' मोच पड़ी मीप्या वध्र का कोट ॥३॥

जो कोट होय पथ्य का तो तोड फोड संप जाये ।
एतो माया बड़ी' माया" बिना ताठे कोई हाम म बाहे" ॥४॥

जेसी प्यारी मछमी मोर" जैसा प्यारा धर्म ।
ऐसा प्यारा राम मा तो क्या' पुस जाता कर्म ॥५॥

मुरख के मन मा मवा दाम धाम पर प्यार ।
दाकू माहोता' दीजिए सो बापे पर वार ॥६॥

माता तन मासम मवा पिता पुत्र काई" एक ।
माता तन माता" मजे मोर' पीता पुत्र विएक" ॥७॥

एक पसकम मार पीउ बिन' बा लाप्या" होय माहा" सो मेह ।
पतो प्रपसि" तन" बाहेर' फिरे †"दे दूरी पन" की देह ॥८॥

---

१ खल अंग (सा) २ विषमी (सा) ३ खल (सा) ४ म्बु (सा) ५ मा (सा) ६ मोर (मा) ७ एक (सा) ८ पग (सा) ९ हुंमामीनता (सा) १० बड़ी (मा) ११ माप्या (मा) १२ प्याय (सा) १३ × (सा) १४ पताहा (सा) १५ माहुना (मा) १६ को (सा) १७ माया (मा) १८ तन (सा) १९ व्यतिरेक (सा) २० बिस्वा (सा) २१ मायतु (सा) २२ पुरयसी (मा) २३ × (मा) २४ बार (सा) २५ मवा (सा) २६ दुर्मगु (सा) ।

हरिजन ते हरि में रहे मनसा बाचा काय।
बाहार भीतर माहीं भखा तो काहाते काहाकु बाप ॥९॥*
ऊपट पसे मन राम का ज्योंहा वन वस्ती दो माहि।
बटकी खटपट में भखा कमहूं मन न बाहि ॥१०॥*
भूधर कु सब मे भखा भौर बेघर कु कछु माहि।
त्यु देहदर्शीकु सब दमन भौर तत्वदर्शी तत्त्व माहि ॥११॥*



* यह तीन साखियाँ का हा ली प्र २६७ ३४० में नहीं है। सा के अनुसार है।

दुनिया अज्ञान अंग[1]

अखा सारा समुद्र का नीकसत माही पार।
एक दरीआ मीर ज्ञानी मता समझत नहीं संसार ॥१॥*
दुनिया हरिजन कुं ना मदे जो नीकट रहे दिन रात्य।
ज्युं गींगाडा गीमान का दूध छोड़ लोहु सात ॥२॥*
संसारी सांसे भर्या कवूष्य जाके साह्य।
अखा सो न बूझे अर्थकु सो अनर्थ ले घर जाय ॥३॥*
बस न सके माया अखा जाकूं है अहं व्याप्य।
जे लागा वेहदसूं ताका मता अगाध्य ॥४॥*
दुनिया कटणी कूकरी काटे सबक पामो।
कर[2] साठी ले ज्ञान की निरमें हरि गुन गामो[3] ॥५॥
ज्यों जाने त्यों कर[4] अखा आपे चेत[5] ओसांन[6]।
ए दोनु टेके ना टले एक दुनिया दूजी कमान ॥६॥
दुनिया राखी ना रहे ज्या त्यों काढे एव।
अपना काज समार ले अखा छाडदे कर गेव ॥७॥
परवत ताल्या दव पीमा आनि दिया मदवास।
सो हरि पर दूनी राखी नहीं अब अब न जैन देत है 'गास ॥८॥
स्तुति निंदा दोनु अखा 'ए ठग माया की जात्य।
"दो पर दिस जा' राखिम ता भोसर थो" करि' हाथ ॥९॥

---

१ दुनिया अंग (मा) २ करि (सा) ३ मार्ड (सा) ४ कर्ये (सा) ५ चेल्य (सा) ६ उसाण (सा) ७ भाव (मा) ८ दुनीमा (मा) ९. अब न जैन देत है—देन मदन जग (सा) १० × (मा) ११ दोनूं (सा) १२ × (सा) १३ मू (सा) १४ करै (सा)।

* ये चार साखियाँ मूल आधार प्रत ह ती प्र २६० व १४० में नहीं है। परंतु सा के अनुसार है।

वंदे पच पच नर नींदें एहि दुनिया कीं बाम्य ।
दानु ठग माया अखा मत धरें तु काम ॥१०॥
अखा धान के खेत मा जो खडम्यान रेहेण म पावे ।
सो हरीजनमा बस मीमे सा अघबाम्य ये गाये ॥११॥
अखा बस जन जानिये का तिलमे का पाहाम्य ।
जतन जतन करि करि'वासही' पण गध न रहे''मिरवाण ॥१२॥
अखा लमषक ना लगे †'' मृगमद फूल बरास ।
''†बस अवगुन मागे करे अते अपना वास ॥१३॥
त्यो हरीजन मा बस रहे जौं बकमकमां आग्य ।
ठपके ते' बहुनी'' नीकसे अखा पावै जब लाग ॥१४॥
*नर नारायण ओमखो नर नरहरि'' छ एक ।
साचा गुरु मल अखा ता'' पामे एह विवेक ॥१५॥
विवेक विणा वणमे' षणा हदे'' ना जाणे राम ।
पसूनी पेरे थई मुआ अखा मरू' नहीं काम ॥१६॥
काम ग्राम धन धाइयो ग्राम कीधो ग्रध ।
गुरु गोविंद'' न'' ओमख्या ते आंख्याला नहीं'' अध ॥१७॥
अध अधान्ध नप्य सहे मजूवालू' मप्य दिठ ।
त्यम हरिजन देख''नहीं बे रंग म्यहोणा धीठ'' ॥१८॥
हरीजन यो हरि पामिम जा हरिजन'' मू हाय हेत ।
जनकी'' बे'' नींदा करे ताके मुख मांरेत ॥१९॥

---

१ पंमर मंदे (मा) २ × (सा) ३ करे (सा) ४ × (सा) ५ त्यु (सा) ६ मध्यमें (सा) ७ कंकर (सा) ८ पहाण (सा) ९ × (सा) १० वासीम (मा) ११ लप (मा) १२ त्यु (मा), १३ त्यु (सा) १४ लप (सा) १५ बहुनी नीकसे—मुलसे बरा (सा) १६ न (सा) १७ ते (सा) १८ बाम (मा) १९ हुरे (सा) २० मर्म (सा) २१ हरि हरिजन (मा) २२ मब (मा) २३ मै (मा) २४ अजबाळ (सा) २५ ओळखे (सा) २६ धीठ (सा) २७ जमपु (सा) २८ हरिजन (मा) २९ × (सा)।

* सा के अनुसार यहां से विवेक अंग का प्रारंभ होता है ।

रेत पड़े क रू पचे हेम तेज होय नास ।
हरी बिमुख तिह' लोकमा पीछा फिरे नीरास' ॥२०॥
जो' दिनकर साहाम् देखते नेन तेज' छाडि' जाये ।
हरी बिमुख तिन लोकमा' ताका राम न हाथ साहाय ॥२१॥
*हरीजन छोना' राम के ताकु प्यारे प्यार ।
आराधा' हरी हूल करे बिरोधा दे मार ॥२२॥
हरीजन हरिके माइमें बसे सो हरि की मोज ।
टेक मेन आपड' करे तापर कामकी फोज ॥२३॥
हरीजन छोना रामके ज्यों गउका छीना बछ ।
सिर मारे अरु पय पीये त्यों त्यों लाग अछ ॥२४॥
हरीजन परहित मानर तापर हरि अनुकूल ।
जनकी जे नींदा करे ताके काढ़'' मूल'' ॥२५॥
पर निंदा पापी करे मारे अपना फन्द'' ।
हीरदे हरिना भासत्ना' एहि हरि का दंड ॥२६॥
सो नरपे †''चार भना जा नींदा न करे नीम ।
हरी भजे ना निंदा ''करे सा पुरुष तें पसु तफीम ॥२७॥
सूकर कूकर कागहू निंद कहा मत बाप ।
ए अपनी जीविका करे और न करे †' बदनाप ॥२८॥
मन मैला मूरख करे †''तन धोवे दिन रान ।
तिन कू साइयां दूर है जाके मुखमां दांत ॥२९॥
चितमू जो चोपग भला बेपग नीबुधी बास'' ।
बेपग कुम्य बड सू करपु चोपक'' दिया दमाम ॥३०॥

१ तिन (सा) बेह हुवे हरिदास (सा) ३ गपु (सा) ४ ज्योत (सा) ५ जर (मा), ६ त्यु हरिजन की निंदा करे (सा) ७ छोने (सा) ८ प्यारे (मा) ९. आराधे (सा) १० / (मा) ११ काटे (मा) १२ मूल (मा) १३ निंद (सा) १४ हरि नाके मना (सा) १५. भप (सा) १६ नहीं (सा) १७ को (सा) । १८. और (सा) १९ बाहम (मा) २० चोपस (सा) ।

* सा के अनुसार यहां से हरिजन अंग प्रारंभ होता है ।

हरी हरीजन तो एकहे स्यूम देखो सोच्य वीचार ।
सब बामा हे साईका तो एक कहा मीरधार ॥३१॥*
हरीजन कू माना नही एतो अरथी पेहेक्येना मेप ।
वाकू जेसी बन गई दरसन देखा वेष ॥३२॥*
जामे पप चलना अखा सा सीग बनाव साज ।
जे नेह रिस भर्‌या भर लीया ताकू नही कछ काज ॥३३॥*
जिम्र मेघलद् मस्ती ता पर माइयां का प्यार ।
अखा औरस वारी आवे हे लसकर का भार ॥३४॥*
मूप चाले अमृत भप और भूपन भूपित अग ।
मोड म राजा द्वारका अखा साहब सौ रग ॥३५॥*



* विहित ५ साखियां इ स प्रत से १४० में है।

प्रेम प्रीछ को अंग

प्रेम प्रीछ नर का मनी भखा सो जाने कोय।
प्रेम मिलाव पीयु को प्रीछे समरस होय ॥१॥
प्रम अकेला क्या करे जो' प्रिछ न होवे साहाय'।
ज्यों बांहे बस बाप बसे अस्त्रा ['नीरत' नीसान बाय ॥२॥
प्रम पियाये पाइये और प्रीछ गुरुते होय।
प्रेम प्रीछ ते बाहरा वाम न तेरे दोम' ॥३॥
बोहात पसु चोपाइ में मेया मेय' बेसमाये'।
गवरु' भरोसे मातके सबम तलो मुख 'बाये ॥४॥
पशुपास ता' मछकू पकडि मिलावे मात।
त्यों भखा गुरु ये हरि मीस महि तो बाता सबनि की सात ॥५॥
भखा संसारी जीव कूं न कहिए सीधी ठीर''।
प्रम-प्रेम बीना फीरे से हुरो बीन देखे और'' ॥६॥
भया तमासा अजब हे जे'' पचसत ना नहीं नाम।
देख न देखे देहमें जे पकड़ि रह्या कोंणा प्राण ॥७॥
पवन पानी का पुतला क्या क्या तामें रम''।
अया ताकू याव स जीस गवी के रुग'' ॥८॥
अ-- सब'' गुरुदेव का संसारा संत गाये।
फि-- --- और दुनिया कू बह' जाये ॥९॥

) १ और (मा) ४ नूरम (मा)
६ मर्दा --- ७ महीप (मा)
(ग) ९), १० मा
(मा) और—जैमा
(मा)

जेहि सब्दकू खोजते संत पारागत जाये।
सोई सब्द दुनिया अखा सान गीत में जाये ॥१०॥
नेम कान भुजग का डोले नाद सुनि सीस।
अखा बडा काम खरका कहा भया आंगल बीस ॥११॥
तब धन हीणा मी' भला अखा हरि के जाण।
साकूत हरी जाण्या नहीं [१]कहा भयो बहोत समाण ॥१२॥
विम मैथुन मार नीपजे अग रग मधुरे बेन।
माता माई' बिछुवा भया सबम कु दुख देन ॥१३॥
हरीजन की नीपज्य अखा सेहेजमा होइ जाये।
बेहेन बैन उपदेस कर जगत का [२]दरद गमाये ॥१४॥
बोहोत विद्या बोहो दिम पढे खाली कीना' सीस।
अखा वाद करत मरया चीन्हे नही जगदीस ॥ १५ ॥
अखा बिन देखा हूंस क नामे सब कोई' सहराय।
प्रकट अलूक के बचन ध सब काई मन भंग थाय ॥ १६ ॥
ज्यों' साकूत लस के बचन ये सब कोई होये दिलगीर।
अखा बचन हरीजन के सबकी भाजे पीर ॥ १७ ॥



१ वि (सा) २ नो (सा) ३ माप (सा) ४ भवनकूं—जगत (सा) ५ विनाश (सा) ६ सब कोई—सबको (सा) ७ स्यु (सा)।

प्रेम प्रीछ को अग

प्रम प्रीछ्र नर को मसी अखा सो जाने कोय ।
प्रेम मिमावे पीयु को मीछे समरस होय ॥१॥
प्रम अकेला क्या करे जो[1] प्रिछ न हावे साहाम[2] ।
ज्यों मांहे धम धाण धसे असा †[3]नीरत नीसाने जाय ॥२॥
प्रेम पियाये पाइये और प्रीछ गुरुते होय ।
प्रेम प्रीछ ते बाहरा ताकू म तेरे दाम[5] ॥३॥
बोहोत पसु चोपाइ में मेघी मध[6] बेसगाये[7] ।
गवर[8] भरोसे मातके सबम तसो मुख[9] 'बाये ॥४॥
पसुपास ता[10] मसकू पकड़ि मिसावे मात ।
त्यों अखा गुरु पे हरि मीस महि तो खाता सबनि की सात ॥५॥
अखा ससारी जीव कूं न कहिए सीधी ठौर[11] ।
प्रम-प्रेष्ठ खोना फीरे जे हुरो बीन देख और[12] ॥६॥
अखा तमासा अजब हे के[13] गफमत मा नही प्राण ।
पेच न देखे पेचमें के पकड़ि रह्या कोंणा प्राण ॥७॥
पवन पानी का पुतला क्या क्या तामें रग[14] ।
अखा ताकू खोज स जीस गखा के संग[15] ॥८॥
अखा सब[16] गुरुदेव का ससारा संत गाये ।
हरिजन के हिृदे रहें मीर दूनिया कू बह[17] जाये ॥९॥

---

१ जे (मा) २ राह (सा) ३ और (सा) ४ सूरत (मा)
५ अखा सो भजन न होय (सा) ६ मधा बेप—मड़िपो महीप (सा)
७ बेसगाय—बिमधाय (मा) ८ गमह (म) ९ न्हाव (मा) १० मो
(सा) ११ न ...ठौर—नहीं सुधी चहिचान (मा) १२ ज... और—जैसा
बन्द मकाम (सा) १३ पन (सा) १४ संग (सा) १५ रंग (सा)
१६ यस्र (सा) १७ बही (सा)।

जेहि सब्बद[1] चाखते संत पारांगत जाये।
सोई सब्द दुनिया अखा तान गीत में गाये ॥१०॥
नेन कान भुजंग का जोसें नाद सुनि सीस।
अखा बड़ा कान खरका कहा भया आंगल बीस ॥११॥
तब भ्रम हीणा भी[2] अखा अखा हरि के आण।
साकुत हरी जाण्या नहीं [3]कहा भयो बहोत समाण ॥१२॥
बिन मैथुन मोर नीपजे अग रग मधुरे बेन।
माता मोई[4] बिछुवा भया सबन कु दुख देन ॥१३॥
हरीजन की नीपज्य अखा सेहेजमो होइ जाय।
बेहेन बेन उपदेस कर जगत का दरद गमाय ॥१४॥
बोहोत बिघा बोहो दिन पढ़े स्वामी कीना[5] सीस।
अखा नाद करत मरघा चीन्हे नहो जगदीस ॥ १५ ॥
अखा बिन दखा हुए के नामे सब कोई[6] सहराय।
प्रकट मलूक के बचन ए सब काई मन भग पाय ॥ १६ ॥
ज्यों[7] साकुत सल के बचन पे सब कोई होय दिग्गीर।
अखा बचन हरीजन के सबकी भाजे पीर ॥ १७ ॥



१ बि (मा) २ तो (मा) ३ कोण (मा) ४ मबनकू—बमन (मा) ५ किमार (मा) ६ सब कोई—सबको (मा) ७ ल्यु (मा)।

चेतन को अंग*

मखा भक्ति कैस करने को मीसर भ्रम' कपार।
मोसंतो' सुम्या नहीं ना कैसे' होय भव पार॥ १॥
मोसतो सुम्यों जब तब पाया सब भेव।
मखा सत्य करि मानिय वासता देव का देव॥ २॥
चौद भुवनमा चेतना चैतन्य की चीस' जाग्य।
चीनु परखा पामा मखा तहाँ भक्ति भई निरबाम॥ ३॥
समसण जैसा साँई है और पकड़म वैसा नाहि।
पकरे में आवे मखा मंठे सो' बिसय वाय"॥ ४॥
उपजे में जैसा होइ प्रम आतुर बैराग्य।
मरताई नीव है मखा साँई पुरुष बड़भाग्य॥ ५॥
मंत्र मागी मुख करके दा दिन रहे मन सूर।
मखा परवत का नासिया पसक बहे भरपूर॥ ६॥
मखा मन की गरजमा समकु मानंदकार।
सिंह अपन' महंकार सु मर सा मोस पखार॥ ७॥
मगन महंकारी बंतरा' मर मो मपनी माग।
मखा मार मरया कपडा "†उठे उड़ गाम भाग्य"॥ ८॥
†मखा दुनिया कू यथा यह को फर महोत सदा माह।
या मघोमुख पामी यस" मार' तेज उधमुख' जाय॥९॥

१ सर्वे (मा) २ बोल ताका (मा) ३ क्योंकर (मा) ४ ...
(मा) ५ मे (मा) ६ माँहि (मा) ७ × (मा) ८ पूर ताहि (मा)
. मो मार (मा) १० मगरे (मा) ११ गुरु (मा) १२ माथ (मा)
। पामी चर्ने—नीर की (मा) १४ × (मा) १५ उर्ध्व गति (मा)।

* मा के अनुसार अभी भीतर अंग इस 'चेतन अंग के अंतर्गत आता है।

† 'मा' का सेहत वाचि अंग इसी अंग के अंतर्गत चलता है।

पसू बास पृथवी चले अमगत' होत एहि धाल्य।
प्रगट' होत उड अखा मेहेज विहंगम बाल ॥१०॥
नां डूबे नांहीं तरे नां चाहे वार पार।
मीनकला अखा रम मीन पाया वस्तु विचार ॥११॥
मीनकला सो माहाविसा' जान काई एक मव।
एही कला चाहे ज अखा' साही' करे गुरु' सब ॥१२॥
काम गाम ठिमर नहीं ना विछरन वियोग।
अखा मागर सहेज कु पीछे हि यार' प्रियोग' ॥१३॥
देहका कृत्य दुनियां लगे मनका नत्य मन साई।
अनुभे कृत्य आगे अखा जहां मन और तम दोउ नाई ॥१४॥
अनुमव जाम अनुभवो ओर दुनिया देख काम''।
तो अखा कसे बसे जोन देक्या दही धाम'' ॥१५॥
तममन सम अनुमवी करखो आको धाम।
तहाँ मामव मत'' मटके सही' अखा उठे बहु झाल'' ॥१६॥
मामम ये उमटा चले अनुमवी पुरुष बासंग''।
ज्यौं पडत प्रतिविम्ब नीरमां भखा माकेसे' विहग ॥१७॥
जगत बराबर देखतें मावे सोवे मर जाम।
ऊँच नीच देखें अखा सा मागा मन का बमाय ॥१८॥
सुई माके ये मांकरा अखा हरी का द्वार।
'†ताके मन में दोन हें जीनु पाई'' वस्तु विचार ॥१९॥
दुनिया दाखा ल रहे अनुमवी सहेज सुभाये''।
ज्यों सबकू मासाई'' मूरज''आ मूरज'' को नहीं†' छाये ॥२०॥

---

१ अगमन—अग्म (मा) २ प्रछब (सा) ३ वस्तु (मा) ४ महा दया (सा) ५ एही .... कला—जिनकुं डूबन का डर अखा! (मा) ६ × (सा) ७ ठीमर की (मा) ८ प्रीछय (मा) ९ पार (मा) १० प्रयाग (सा) ११ कम (गा) १२ जीन .... वर्म—जीव पडया देह धर्म (मा) १३ मति (सा) १४ मही (सा) १५ जाम (सा) १६ असंग (सा) १७ माकासे (सा) १८ गग (सा) १ पाया (मा) २ मचाई (मा.) २१ उघाई (सा) २२ सूरजें (मा) २३ आ सूरज को—पग सूर पर (मा) २४ सोई (मा)।

दूजा तहाँ दाबा सही और जमीं का त्या तहाँ राम ।
बखना समाण्या सो सेहेजमा आप मध्ये आराम ॥२१॥
जप तप संयम साधना सब मन' का ब्यापार' ।
बखना आतम ता एम ही तथा दिवस महि तिमिवार ॥२२॥
समझ भली रे साधना' सीखान की एक' बात ।
बखना समझ तांहां आप है बिन समझे सब जात ॥२३॥



१ देह का (छा) २ ब्यापार (मा) ३ है (मा) ४ तांहां (मा) ५ साधुना (मा) ६ × (मा)।

६१

असंत को अंग

सुकवि देख्या' कुकवि जरे ज्यों असूझ रिसावै घन'।
अखा त्यों' ज्ञान की बात सुनि साज अज्ञानी जन ॥१॥
उसूझ न समझ आप में है मन मे का' खोप।
सूर देखावे जगत कु तासु अखा काहा रोष ॥२॥
चाहत नहिं का राम कु सब कोई चाहे मान।
अखा आप बड़ाई कुं सबका टूटत तान ॥३॥
जस सागर के अगुवा' मात्स्यम' जाका नाम।
हरी सागर के अगुवा अखा ज्ञानी जन अकाम ॥४॥
बिन मास मसौका' वुसी अंध धंध कहि' जाय।
कहेत अखा भेद बिना जहाँ तहाँ उरझाय ॥५॥
चाहे अधिकता गुरुपणा ए दुनिया की बान्य।
केहे अखा भरतार बिना चाहत है सतान ॥६॥
कवि दाता पंडित गुनी चतुर सूरा'' धनवंत।
एह अखा माया गुना ताथे न्यारा संत ॥७॥
सबन कु खाय न भगे दो दिन रहे हरि जाय।
गुनातीत समझा अखा सा दिन दिन अधिक बढ़ाय ॥८॥
सब रूप रंग रंग माया अखा मृत्यु'' देख्य अघाय।
जा घर में उपजे सबे खोजत तू जहाँ जाय ॥९॥
कुमो'' उपज्या कुनी धप ' गया पलक रह्या रग कीम।
अखा सो सागर ग्यारस जान है सब'' मीन ॥१०॥

---

१ देखि (मा) २ दिम (मा) ३ × (मा) ४ मेरेवा (मा) ५ माछूमा (मा) ६ मामय (मा) ७ बागु (मा) ८ मर (मा) ९ बाम मसोवा—मामम मौरा (मा) १० चाहो (मा) ११ कमीन (मा) १२ मत (मा) १३ पुनि (मा) १४ मर (मा) १५ त 'मा)।

गुणातीत आम्या विना सत्य' रासे समज्ये का मान ।
मखा बजाना सीप का रूपा मोहे मीदाम ॥११॥
पारब्रह्म पारस मणी परसत हि हेम होय ।
केहेत अखा परराम विना मोह रहे सब कोय ॥१२॥
पारस' ब्रह्म का परसण मखा समझ म भेद ।
सब सुम्या' सोमा करे ज्यौं गोटका सम्य मेघ ॥१३॥
एसी मीपज्या से अखा पारब्रह्म का भेव ।
ज्यौं मंडा मचर भया त्यौं पसद्या अहमेव ॥१४॥
पारब्रह्म का परसना सो पारब्रह्म का सख' ।
अखा ज्यो हुका माथ का रहेत उसर सन मुख' ॥१५॥
के हरिजन दोहा दिस फिरे के मठा करे एक ठार ।
पण सक्ष मखा माहि फिरे जाके मन नही ओर ॥१६॥



१ मन (सा) २ परि (मा) ३ सब मुम्या—सम्य मु त्यो (मा)
४ गोटका—गुटिका (मा) ५ मसा (सा), ६ मुम (मा) ७ के ...
दोहो—केहरीजन दउ (सा) ।

कपटि[1] को अंग

सो हरिजन साचा जाणा भीतर तैसा बाहर।
जे बाहर भीतर[2] न्यारा रहै सो कबहू न पावै पार ॥१॥
कपटी भक्त स्वांगी जाणा, माना बधिक का जाल।
बाहर दिखावन[3] मेहेलीका तान दूर दयाल ॥२॥
विषय[4] बचन मीठ जाणा मार भीतर भर अंगार[5]।
देख्या मास मीठी[7] जैसे मोपची कुंभार[8] ॥३॥
एक मांडा दूजा कपटी नरा एक बाग है दान।
आछा तेज देखिये जाणा[9] कटले न गिने कोम ॥४॥
सूरज सीतल[10] नहि बणा चन्दा गरम न होवे।
त्यों मन और[11] परमातमा तन भेस[12] सब खोये ॥५॥
मन के सिर मंडाण सब सज्जन[13] दूरी जन मन।
उलट फिर्यां परमातमा[14] नहि तो मन्या दूरी जन ॥६॥

★

---

१ कपटी अंग (मा) २ बाहर भीतर—अनर बाह्यस्य (सा) ३ भरमावन (मा), ४ मांदू (सा) ५ वैप (मा) ६ अंगार (मा) ७ नहीं (मा) ८ कुंभार—कुंभार (मा), ९ पण (सा) १० शिला (मा) ११ उजवन (मा) १२ भेसा (मा) १३ मन बन (मा) १४ परमात्मा (मा)।

गुणातीत जाण्या बिना सत्य' राखे समझ्ये का मान।
भखा खवाला सीप का रूपा मोहे नीवान ॥११॥
पारब्रह्म पारस मभी परसत हि हेम होय।
केहेत मखा परराम बिना लोह रहे सब कोय ॥१२॥
पारस' ब्रह्म का परसण अखा समझ से भेद।
सब सुण्या' शोभा करे ज्यौं गोटका' सब्द बेध ॥१३॥
एसी नीपज्या से मखा पारब्रह्म का भेव।
ज्यौं भखा अमर भया त्यौं पलट्या अहमेव ॥१४॥
पारब्रह्म का परसना सा पारब्रह्म का सब्द'।
अखा ज्यो हुवा नाव का रहेत उतर सम मूंघ' ॥१५॥
के हरिजन दोहूा दिस फिरे के बेठा करे एक ठार।
पण सम अखा नाहि फिरे जाके मन नही भोर ॥१६॥



१ मन (मा) २ पर (मा) ३ सब सुण्या—सबर सू त्यों (मा)
४ गोटका—गुटिका (मा) ५ सदा (मा), ६ मूल (मा) ७ के ...
दोहो—केहरीजन दउ (मा)।

कपटि[1] को अग

सो हरिजन साधा भला भीतर वैसा बाहर ।
म बाहर भीतर[2] न्यारा बके सो कबहू न पावै पार ॥१॥
कपटी भक्त स्वांगी भला, बाना अधिक का वास ।
कक्त छिवावन[3] येहेनीआ ताते दूर दयास ॥२॥
विषय[4] बचन मीठ अला आर भीतर भरे अगार[5] ।
ऐस्या मास मीठी [6] जैसे आपथी कुमार[7] ॥३॥
एक सांदा दूजा कपटी नरा एक मान्य हे दोन ।
मासा सेज देखिये मला [8] कटस न गिन कोन ॥४॥
सूरज सीतल[9] नहि भला मन्दा गरम न होये ।
त्यों मन भीर[10] परमातमा तन मेल[11] सब खाये ॥५॥
मन के सिर मवार सब सज्जन[12] पूरी पान मन ।
उलट फिरया प्रमातमा[13] नहि ता भला पूरी जम ॥६॥



---

१ कपटी अव (ला) २ बाहर भीतर—अदर बाह्य (ला) ३ प्रभावन (ला) ४ वाद्ू (ला) ५ वेद (ला) ६ संसार (ला) ७ नहीं (ला) ८ कुमार—कुंवार (ला) ९ पाम (ला) १० छिपा (ला) ११ उजम (ला) १२ मैला (ला) १३ सब जन (ला) १४ परमातमा (ला)।

अनुभव को अंग

पारप' ऊंची हृरि मा मिले अनुभव ऊंच हृरि गाय ।
ज्यों सीह में मुख दखिये भखा कचन में न दिखाय ॥१॥
अनुभव सो वड़ि वस्त है अम्मा देख विचार ।
ज्यों लाह की आरसी भई सा लोहो की भई तरवार ॥२॥
खड्ग खपाव जगत कूं दरपण दरसाव आप ।
त्यों हरिजन अनुभव आरसी अखा जीव अनुभव पुन्न-पाप ॥३॥
वस्तु विचार ऐसा भखा जैसा गगम मगन' ।
पखास का पंप है † पम देखा नहि पम ॥४॥
पस पाया पन्नी उड़ पम मर पसु का नहि माग ।
मण' गरय है मचरी जोव धरे क्यु पाग ॥५॥
में भी इहा था अखा आइ अचामक पन्न ।
अहंता माला छाड़िया उड़या आइ मिसंग' ॥६॥
अखा पंख का आवमा सा पसु का मुसकम वात ।
प्राये'' पन्नो को ईश्वला रया अनुभव आतम-आरय ॥७॥
साम्या मूख्या ज्ञामा भया अखा साई सयांन'' ।
ज्यों चींटी कू पंख भई सा नही जात' का थान ॥८॥
मा सावरो' उड़'' अखा'' ना ताहि परसी'' पास ।
करज्ञीम' ज्ञाम एमा अखा दासु नहीं नीरास ॥९॥



---

१ पानि (गा) २ भाई (सा) ३ वहो (मा) ४ ✗ (मा) ५ ✕ (मा) ६ ममम (मा) ७ पानामा वा (मा) ८ पम (मा) ९ मत्ता (मा) १० ममम्र (मा) ११ प्राव (मा) १२ मोई मयांन—मो ऐमा ज्ञान (मा) १३ जानि (मा) १४ वा गारीमी (गा) १५ उड़ (मा) १६ मढे (सा) १७ गरीमो (सा) १८ दूरिमद (सा) ।

प्रतीत को अंग

हरी भरयी अे को मखा सा सेवे' गुरुदेव ।
वर्णाश्रम देखे नहीं ।'हरिजान' करे सेव ॥१॥
वर्णाश्रम बिन देखिया सा क्यों' दय राम ।
मखा हरी कैसे मिले जिन देख्या देह धाम ॥२॥
पिंड समेत परब्रह्म हैं अरु पी स्पवान ।
ऐसा ध्यान सेव मखा सोहि भक्त समान ॥३॥
ज्ञानी धन' कू मतगिने भक्त' बरावर अंत ।
मखा संत तर साँई स उर्या का नहीं आदने मत ॥४॥
मखा अब गणना मत कर माया हरी नहीं भार ।
ज हरी जन थे उलटा फिरे ताहै तिनमोक मही ठोर ॥५॥
हरी कू मान सा हरा हरीजन सिर मही सींग ।
मखा सहमदा रामजन आक सिर 'हरी ठिंग' ॥६॥
हरीजन गांभा काई का आय नहीं नोरधार ।
मखा सा बड़रामजन" मूरता का फिरतार ॥७॥
मया" जग कहेफीया मस्म माम्या संसार ।
मखा आतमम भालस्या तार नहीं भवपार ॥८॥



---

१ माबे (मा) २ मो (मा) ३ मानी (मा) ४ मही (मा)
५ भर (मा) ६ अपत्र (मा) ७ स्वतंत्र (मा) ८ माहमारा (मा)
९ हपे (मा) १० भींग (मा) ११ ता बड़रामजन—शब्द रामजन (मा)
१२ ए माया (मा) ।

७१

अनुभव को अंग

आरय' ऊंची हरि ना मिले अनुभव ऊंच हरि भाय'।
ज्यों लोह में मुख देखिये अखा कंचन में न दिखाय ॥१॥
अनुभव सा वड़ि वस्त है अखा देख विचार।
ज्यों' लोह की आरसी भई सो लोहो की भई तरवार ॥२॥
खड़ग स्वभाव जगत कुं दरपण दरसावे आप।
त्यों' हरिजन अनुभव आरसी अखा जीव अनुभव पुण्य-पाप ॥३॥
वस्तु विचार ऐसा अखा जैसा गगन मगन'।
पखास का पंथ है † पग पेंड़ा नहि जन ॥४॥
पग आया पंखी उड पण भर पसु का नहि लाग।
अण' गम्य है खबरी जीव धरे क्युं पाग ॥५॥
में भी इहां था अखा आइ अथानक पंख।
अहंता माता छाडिया उड़ण जाइ निसंक' ॥६॥
अखा पग का भावना सो पसु का मुसकल बात।
प्रावे'' पखा को ई इसा स्या अनुभव आतम-आरय ॥७॥
सासमा सूण्या भानी भया अया साई सयान''।
ज्यों चींटी कू पग भई सो मही आस'' का बान ॥८॥
मा सागरो' उड़' अखा'' ना ताहे परसी' वास।
करत्राम' भाम एमा मगा दानु नहीं नोरास ॥९॥

*

१ आनि (मा) २ भाई (सा) ३ जही (मा) ४ × (मा) ५ × (मा) ६ ममन (मा) ७ पानामा का (मा) ८ पग (गा) ९ मगा (मा) १० अमकर (मा) ११ प्राय (मा) १२ साई मयान—मो एमा भाव (मा १३ आनि (मा) १४ सा नरामी (मा) १५ उड (मा) १६ मटे (मा) १७ मरीनो (सा) १८ दृथिम (मा)।

प्रतीत को अंग

हरी अरथी जे का अखा सा मेव' गुरुदेव।
वर्णाश्रम देख नहीं 'हरिजान' कर सव ॥१॥
वर्णाश्रम जिन देखिया सो क्यों दख राम।
अखा हरी कसे मिले जिन देख्या देह धाम ॥२॥
पिंड समेत परब्रह्म हैं अरु पी रूपवान।
ऐसा धाम सेव अखा सोहि भगत धंमान ॥३॥
ज्ञानी भ्रम' कू मतगिम भक्त' बराबर जंत।
अखा सात तर साई स ज्यां का नहीं आवने अंत ॥४॥
अखा अव गणना मत करे ज्ञाना हरी नहीं भार।
ज हरी जम ये उमग फिरे ताहे तिनमोक नहीं डार ॥५॥
हरी कू जान सा हरा हरीजन सिर नहीं सींग।
अखा सहजदा रामजन जाक सिर 'हरी ठिंग' ॥६॥
हरीजन गोजा काई का आय नहीं मोरधार।
अखा सा खडरामजन'' मूरता का फिरतार ॥७॥
भया'' अग डहेकोया मरम मान्या संसार।
अखा आतमम आसख्या तार नहीं भवपार ॥८॥



---

१ गाबे (मा) २ मो (मा) ३ ज्ञानी (मा) ४ नहो (सा) ५ भर (सा) ६ जगत (मा) ७ रवजनर (मा) ८ - नाइआरा (मा) ९ हरो (सा) १० बीज (गा) ११ सा खडरामजन—नावड रामजन (मा) १२ ए माया (सा)।

अनुभव को अंग

आस्य[1] ऊंची हरि ना मिले अनुभव ऊंच हरि भाये[2]।
ज्यों लोह में मुख देखिये अखा कंचन में न दिखाये ॥१॥
अनुभव सो मदि वस्त है अखा दख विचार।
ज्यों साह को आरसी भई सा माहो की भई तरवार ॥२॥
खड्ग खपावे जगत कू दरपण दरसावे आप।
त्यों हरिजन अनुभव आरसी अखा जीव अनुभव पुन्य-पाप ॥३॥
वस्तु विचार ऐसा अखा जैसा गगन मगन[3]।
पखास[4] का पंथ है ┼ पग पेंडा महि जम ॥४॥
पम आया पंखी उड़े पण मर पसु का नहि लाग।
मण[5] गरप है अपरो जीव धरे वपु पाग ॥५॥
में भी इडा था अखा आइ मचालन पग्र।
महता मासा छाडिया उड़ पा जाइ निसंक[6] ॥६॥
अखा पद का आवना सा पसु का मुसवस वास।
प्राये[11] पंखी को ईक्सा त्या अनुभव आतम-आस्य ॥७॥
सोस्या मूण्या मानी मया अखा साई सपान[12]।
ज्यों चींटा कू पंख भई सो नहीं आव[13] की वांन ॥८॥
मा सापरा[1] उड[14] अखा[15] मा ताहे परसी[16] वास।
करीम[1] शान एसा अखा दानु नहीं नीरास ॥९॥



---

१ आनि (मा) २ भाई (मा) ३ जरी (मा) ४ ╳ (मा) ५ × (मा) ६ मगन (मा) ७ पाखाना का (मा) ८ पग (मा) ९ मणा (मा) १० अमन्र (मा) ११ प्राप (मा) १ कोई सवांग—मो ऐसा मान (मा १३ आनि (मा) १४ सा मरामी (मा) १५ उड (मा) १६ तके (मा) १७ नरीनो (मा) १८ हरिजन (मा)।

मूत भेद माका[1] भया देखणहारा भ्रम ।
भखा उलस्या आप ए ज्यों था त्यों पद परम ॥१०॥
भ्रम नहीं भ्रमी नहीं ज्यों का त्यों चिद आप ।
जल तरग केहेवे भखा नही जवरी नही साप ॥११॥
जोड़ावा[2] कछु केहेवे कू नहीं तहां नही मही नीरधार ।
जहा कछु केहेवे कू नहीआ[3] तहां भखा ससार ॥१२॥
गंमे[4] संसेई मठ[5] ह मुख बुझावन हार ।
अंतर मा उपजन[6] भखा साहि मूल ससार ॥१३॥
उपजे नही सो आप चिद भोर उपजण का नाम माये ।
एसा समज्या जे भखा सो नर सेहेज समाये ॥१४॥
भर कटा[7] भेदि चली आमी सुरत[8] भमम ।
भखा उसटी[9] मा वाहोकी[10] पल पल न पलटे रंग ॥१५॥
नाही मुमा न जीवता धर्‌या कर्‌या कछु नाहि ।
एतो ज्यों का त्यों भखा व्योम रहे[11] वि समाहि[12] ॥१६॥
ए भेद भसा गवी रमे[13] भखा वासमामी[14] खस ।
एहि आन्य[15] उसमन भई[16] अंतर हुमा उजेस ॥१७॥
भखा भगव गत्य उपजी एन मिलीया[17] भाय ।
भोम पाया भागी विना चीहीमा परित्र भपाय ॥१८॥
गेबी जाने गेब गत्य गुह्या नहीं दरदाव ।
भखा भचानक उपजी सेहेज ["] भया समाव ॥ १९ ॥

★

---

१ मांडा (मा) २ जोडा (मा) ३ हुमा (मा) ४ गमार (मा) ५ गमेरे—संसारी (मा) ६ मूढ (मा) ७ उपज्या (मा) ८ उपज्या (मा) ९ नराह (मा) १० मूरत (मा) ११ उमट (मा) १२ वाहा वरे (मा) १३ वि समाहि—बीच माहि (मा) १४ × (मा) १५ समसामी (मा) १६ आम्ने (मा) १७ गई (मा) १८ माठा (मा), १९ ही (मा) ।

अथ ज्ञान को अंग

हेम के परवत जमे बिना घटा[1] घनघोर ।
अखा एसा ज्ञान की सुझ[2] भई है मोर ॥१॥
गेब आकाश अकाश का सो घन बिना गरजे नाहि ।
त्यों[3] हरिजन का पंड[4] घन अखा आप अपने गुन गाये ॥२॥
परब्रह्म अगम अरूप है एसा बेद बर्णन ।
सो सीब मास मता पढ़ जो बुझ हरा मन ॥३॥
परब्रह्म सागर के मध्ये मरजीवा कोई एक ।
गड गहियर[5] मा बाहाड़े करे सा कर ज्ञान विवक ॥४॥
परस्याता[6] क बचन कू पावनहार पतिआवे ।
ज रण जुध[7] मे राता रहे अखा सा अजब गत्य पाय ॥५॥
आरागा सब कछु मग और[8] रोगी रुचता पाय ।
कछू ना भले सा[9] अखा सो बांध मुख मर जाये ॥ ६ ॥
ज्ञानी क मन ब्रह्म सबे भीर मकसम कूं प्रतिमा राम ।
ए दानु[10] नीरख[11] नहीं अखा साधू[12] नहीं आराम ॥ ७ ॥
अरद ना पद चोपदा षट पद आठ अनंत ।
तरअरतसी नर जे अखा सो जी का त्यों विहीर्मत ॥ ८ ॥
जस काष्ठ को पुतली चोगा[13] कीया अबेव ।
दारु[14] ज्यों का त्यों अखा ए तत्त्व दरमी का भेव ॥ ९ ॥

---

[1] घटा (मा) [2] सूज्य (मा) [3] × (सा) [4] पड़ (सा) [5] गहन गहर—गाहन हा (मा) [6] पारख (मा) [7] जाहे (मा) [8] × (मा) [9] गदरा (मा) [10] जब (मा) [11] × (मा) [12] जे का (सा), [13] चोज (मा) [14] पेहलाम (मा) [15] ताने (मा) [16] लोदी (मा) [17] दार (सा)।

भूत भेद माहा[1] मया देसणहारा भ्रम।
अखा उसरया माप ए ज्यों था त्यों पद परम ॥१०॥
भ्रम नहीं भ्रमी नहीं ज्यों का त्यों चिद आप।
जम तरग केहेवे अखा नहीं जेवडी नही साप ॥११॥
जीहांवा[1] कछु केहेवे कू नहीं तहाँ नहीं नहीं नीरधार।
जहा कछु केहेवे कू नहींमा[2] तहाँ अखा ससार ॥१२॥
मंमे संसेई[५] मठ[६] हे मूस बूमावन हार।
असर मा उपजन[७] अखा सोहि मूस ससार ॥१३॥
उपजे नहीं सो आप चिद भोर उपजण का नाम माये।
एसा समज्या जे अखा सा मर सेहेज समाये ॥१४॥
अब कटा[९] भेदि चली ज्ञानी सुरत्य[१०] अभग।
अखा उसटी[११] मा माहोंडी[१२] पल पल म पलटे रंग ।[१३]१५॥
माहीं मुआ न जीवता घर्या कर्या कछू नाहि।
एलो ज्यों का त्यों अखा कोण रहे कि समाहि[१४] ॥१६॥
ए गेब कला गेबी रमे[१] अखा आसमानी[१५] खेल।
एहि आन्य[१६] उसमन भई[१] अंतर हुआ उकेल ॥१७॥
अखा अजब गत्य उपजी एम मिलीया[१] आय।
भाग पाया भाणी विना चीहीना चरित्र अपाय। १८॥
गेबी बाने गेब गत्य गुह्या नहीं दरशाव।
अखा अचामव उपजी सेहेज †[११] भया समाव ॥ १९ ॥

★

---

१ मीहा (मा) २ जीहां (मा) ३ हुवा (मा) ४ ममार (मा) ५ संमेई—संसारी (मा) ६ झुठ (मा) ७ उपज्या (मा) ८ उपज्या (मा) ९. वटाह (मा) १० सूरत (मा) ११ उलट (मा) १२ वाहा परे (मा) १३ कि समाहि—कीस माहि (मा) १४ × (मा) १५ असमानी (मा) १६ आन्ये (मा) १७ गई (मा) १८ मखा (मा) १९ ही (मा)।

७४

असमानी[1] को अंग

अथम दिवाना में अखा रीझे दिवाने लोक ।
मुझकू एक भला भई जे[2] 'दृष्टि पडि सब फाक ॥ १ ॥
जान पीया की जीव सम महो[3] अखा भई भीर ।
जडिसा[4] परसा पार[5] से गया तोमा रही माहार ॥ २ ॥
जीव जाग्याथा आईगे परमाण पीया क पास ।
अब तो अखा उलटी भई हुआ आपका नास ॥ ३ ॥
जहां पीया तांहा पिया पिया पीया न्याउ है नाम ।
जल तरंग जेसा अखा चतन्य सागर राम ॥ ४ ॥
पीमा मेन में पुससो मो मन बेठी ठीक ।
मनसा वाचा कर्मना अखा माहु पर लीक ॥ ५ ॥
ना मोहि[6] सिष्य स्वामीपणा मा माहे केहेर करामात ।
अखा अजब मरम उपजी हुतु[7] जिन मजलात ॥ ६ ॥
जोग जाप बैराग्य जप सीध्य[8] सबा तप त्याग ।
इस सीध्य का एके बिना बरमा मग्ग का माग ॥ ७ ॥
कहेन पर आया अमे तबे अखा एही बात ।
ज्यांहां जैसा तैसा तूही नाही अग्रा पक्षपात ॥ ८[*] ॥
अखा असमानी धम पर मापा गया भराए ।
येवी सिधि गरबाई भी काईक माजा पाय ॥ ९[*] ॥
अग्रा गेब की गहेन मू एब मगन उड जाई ।
अनहाना मनका मना तहा काई गहेन म पाई ॥१०[*]॥

१ असमानी का अंग (मा) २ (मा) ३ दुरव (मा) ४ पहचा (मा) ५ मही (मा) ६ जपु गरमा (मा) ७ कारज (मा) ८. जीमा (मा) ९ मांहै (मा) १० गुज (मा) ११ पूर्ण (मा) ।

गेब गेब सबको कहे अखा भस गई भान।
भूत भविष की सूझसें गेबको दूर पेहेचान ॥११॥*
भूत भवीस को जाणवो वाग् सिद्ध ईष्ट आराध्य।
तन-मन साध्य होवे अखा पण गेब नहीं मन साध्य ॥१२॥*
वहेत वाय अवनि चले पुरुष भेखा दसबीस।
अधिक धीर रमटे अखा पण पार न पाये धीस ॥१३॥*
ऐसे गेब की रहेस, अखा आवत नहीं अदबद।
आवे सो मनका मता तातें दूर बेहद।१४॥*
पिंडसूं परब्रह्मांड पर अक्षर अकल के पार।
ध्यान करि गेब कहे अखा ! पण गेब सो अरूप अपार ॥१५॥*



* विशिष्ट साखियाँ—८ से १५ तक आधार के रूप में स्वीकृत ग्रंथों में नहीं है वे यहाँ से ली गई है।

मानक को अंग

सासच माम स्था फिरे जे रस्मधी ससार ।
मन की रस्यवसगा फिरे सो नर पाये पार ॥१॥
मन की मस्म फिरती नहीं तो स्यूं न सरे काम ।
सिमा साफ हुए बिना मबा रहै क्यीं राम ॥२॥
सब सरीर में राम हैं ठोर न खाली काय ।
ज्यों अगिन काठ में दे सही पण मथ्या सो प्रगट होय ॥३॥
मथते मासम सब पड़ होमे दीमम ज्योत प्रकास ।
बिन मथ्या अंधर है' राम न जानत पास ॥४॥
राम मिले तब जानिए जब स्था' फिरे उदास ।
सरस' रहै हरीजन मु बरतत एकै सास ॥५॥
नर नरबी सत बित धरे ज्यू का त्यू हि प्यार ।
बात बनावत राम की ' ठग्या चाहत संसार ॥६॥
माया प्यारी मन में मुख प्यारो महाराज ।
मन प्यारो माप पड़ तन तो उपर का साज ॥७॥
धनतन माया उपदृप गरचत पाहोचत साहो ।
जो धरम हरि हेत मुं सो सिर ते उतारत दाया ॥ ॥
हरीभामि मन उप्पस तो हरि का उससत मन ।
मामा देखि उसस सो मेलि' आति सब धन ॥९॥
माया जास में मन पड़्या का काढ़' सबे निरवार ।
प्यार दिया सू ता उपज्ये जा करे तन मन धन बलिहार ॥१०॥

---

१ कहां (मा) २ बचा रहे (सा) ३ मुखा (मा) ४ मरमा (सा) ५ मुन (मा) ६ मया (मा) ७ सहाव (मा) ८ उम्मते (मा) ९. में (मा) १० मामी (मा) ।

घा बोज न डारत सीस मे तो कैसे हलका होय ।
धन तन हे राम का बिच जीव बोझिया होय ॥११॥
मास पराया आन के नेहेचा' करे जो मन ।
नेहचा बीन फमता नहीं सात' खाली मन ॥१२॥
फमता हे नेहेचा अखा आदर आतुर सग ।
राम सदा भरपूर हे ज्यू लागे मन कू रग ॥१३॥
सुख सपत आनद में अखा कथ बहु ग्यान ।
दुख आया सबे वेह गया जैसे धक का पान ॥१४॥
हे धन विद्या कुल चातुरी पण राम न जानत जन ।
ज्यूं मुदल' सज्या आभूपणा [4] माहे नपुसक तन ॥१५॥
आतम ग्यान बिन अखा ज्यू काठ की तरवार ।
बाहर सोना मुठ हे' पण काटे नहीं ससार ॥१६॥
पण राम पूरा अखा तो बनी आवे सब बात ।
नहीं तो धम्या घुणा बायु कर साच बिना सब बात ॥१७॥
प्रभु प्रसाद करयसे' रहा जो से ब्यहार कोई होय ।
प्रेम आतुरता चाहे कुं गाहक ताका सोय ॥१८॥
रस बस होय के हरि मिले कधू म राखे ओट ।
आतुरता भक्त चाहिए अखा राम औरे नहीं खोट ॥१९॥
अखा रसीया राम का ताकू भावत बात ।
आर सब सेहेज्यू सुने आतुर सूनी सहरात ॥२०॥



१ निश्चय (मा) २ सातें (मा) ३ प्यारन (मा) ४ नष (मा)
५ मुठ हे—मु मढे (मा) ६ करी (मा) ७ सबमहार (मा) ।

खोजी' को अंग

हरी पाइये हैं साजते उत्त टोल समुवाइ।
प्ररक जे पच्छी सका साखी अखा सदाइ ॥ १ ॥
दूर जहीं देसांतरे है' पोत भाम्य के न्याई।
सदा' विचारय के साम्य है गुरु गम्य जान्या जाई ॥ २ ॥
ममक्ति बसावे भक्ति कूं ए तन 'प्रत्य काल बसात।
आय मसेव' राम सु सो हि नर सासात ॥ ३ ॥
रिष्य सिष्य मा इचि अखा ज्युं दीप नहि बाहत सूर।
ईश्वर जे बीच में हि या सा मिल गया गेबी नूर ॥ ४ ॥
मौसने का मारग अखा अटपटा सा एन।
सिष्य' साधक स्वामी पणा चाहे नहीं कोई बेहेन ॥ ५ ॥
मेम चुकावनि है अखा जे है अणघति अम्य।
आय मसावना आय सू बार सबे उपाय्य ॥ ६ ॥
राम मिलन एसा अखा जसा अमक अग।
भुपण भोग चाहत नहीं राख्य राम के रग ॥ ७ ॥
चतुराई चकिगाहि सब अखा कछू ना चाहे।
एक सान के माग में दूजा रहेणा ना चाई ॥ ८ ॥
मान सामा धरते अखा तामे सब उपाय्य।
आमन' चूं इच्छा मही प्रम्य' मही मही इवाप्य ॥९॥

---

१ खोज अंग (मा) २ रहे (मा) ३ नद् (मा) ४ हृन्य (मा)
५. मैसावे (मा) ६ माम्प (मा) ७ अमन (मा) ८ बजि (मा)।

मुसकस पाइये ये मता मखा मुये की ठोर।
पीव विमे का जीवणां मखा एक मा मीर ॥१०॥
सही करणा साइयां मखा फेस में मन ना बाहे[1]।
गुसतान मता[2] पाया बिमा सबको फेस वहामे ॥११॥



१ बहाम (मा), २ मुसताम मतां—गमतां मबतां (का)।

कजा को अग

काजी पटदरसन के थे कोई ज्ञानी जन।
पक्षपात बोले नहीं अथा न राखे मन ॥१॥
खडताम बांदा ज्ञान का मीर दाना मी रास।
सहेज उपदेस सुभाव सुम' ना स्वामी मा बास ॥२॥
कजा सो साची मथा कजा करे ते कीफ'।
सोना समासे मापणा आपा मिटया मोहो सीफ ॥३॥
छोरे पहेचे' कछू नही किस पर करे हुकम।
फोम किया फना हुआ मार सकत नहा हुम ॥४॥
खुद कु सही करना मथा एही जाणो पेर।
हुक बिगर कछु है नही हुग्दम है ना पेर' ॥५॥
बिना ईभा' थाई से' नही किस पर करे पुमम।
फाम हुआ फना हुआ मागी मन की गम्य ॥६॥
रंब' बीगर रीवा नही तो किसे बताय राहा।
मफम सा मुसी एम में मल्या जाय पित का पाहो ॥७॥
त पीत मया कजा करे बजा एन की मोग।
हुकम बिन' रहसता नहीं पीपल पान एक ठोर ॥८॥
निम में दाना मा रख के हुआ के एक।
फाम होत फना हुई मत मेहू'' पब का टेक ॥९॥
चुप रहे मोन सा कमा जेजे करे मन मोर।
ठहेरा पाना'' टीक रहे मगा होवे कछु मार ॥१०॥

१ पुण्य (मा) २ गहपीव (मा) ३ पहे थे (मा) ४ मामिर (बा) ५ बार (बा) ६ मप् (मा) ७ रब (हा) ८ मती एम में—मूलीन म (मा) ९ बिमर (मा) १० ममहब की (मा) ११ ठहेरा पाना—ठहेराया म (मा)।

क्या छोड़ क्या सही करूं ऐसा मेवक ताल ।
पकड़. पीष भाजे पंनर ऐसा है' गास गोस ॥११॥
अवा मजय गम्य एन की बेन में आवत नाय ।
हारे ये हाजी कहूं अगम पंथ उरझाय' ॥१२॥



१ ना (ना) २ उमझाय (ना) ।

महा विचार को अंग

वार पार एकत भया सो नर पाया पार।
पार उतरणा एहि है भला सद्वीचार ॥१॥
रोटी कू मुख पूंछड़ा भला कह्या न जाइ।
त्यूं पुरष[1] महा विचार तें थूका रहेनेम पाइ ॥२॥
कछू पराया ना रहे आद रूप[2] ते आप।
कछु न राख्या काठने तब स्वे ह्वा मीमडया ताप ॥३॥
भक्त[3] पूरी तब भक्त कूं ज्ञान पुरा तब ज्ञान।
आपा खोट मीटे भला तब पुरा परम धाम ॥४॥
बड़ी वस्त विचार है सद्गुरु सम समेत।
न्यारा कछू न रहे भला सब आपा मे मेल ॥५॥
बिन वीचार असनी भया हंस भई हुई भोर।
महलोक परलोक की भया करत सो दोर ॥६॥
अंत और स्वामी मानड़ा आतम भास गमाइ।
स्वामी दुर्लभ के डरे पावर कर्म बहाइ ॥७॥
देव नर नाग पसु पंखी भला[4] सब भेल लिया करतार।
नजरबाज ज्ञानी भया जुग जुग देखनहार ॥८॥
सत पता द्वापर कलि न्यारे चारू मापर्म।
ज्ञानी दृष्टा ताहे का सब किए के[5] धर्म ॥९॥
बुढ़ापा नहीं बालकू दिनकर[6] नहि रेन।
ताता[7] सीसा भम महा त्यूं ज्ञानी कूं नहि चेन ॥१०॥

---

१ त्यु पुरष—मंपुरष (सा) २ आद रूप—आद्यरूपेते (सा), ३ भ (सा.) ४ पसी भला—पसीआ (मा) ५ सब किएके—सबरी एके (सा) ६ दू (मा) ७ तता (सा)।

बोग बोमल है देह का मानी बासत माँहि।
अखा मेद मासम पगा तमा माम घरामें ॥११॥
अखा वस्त के बीच सब पच तत्व एक ठौठ।
भेद पाया मे मटि गया भमा गुरु मम्य पाठ ॥१२॥
जोग जाग जप' तप दया अखा सब उरली बात।
हुरी सागर की लेहेरियाँ पण बस्तु मींपु साक्षात ॥१३॥
अखा मया देशांतरी बषमी कीना भटाट।
अकल बर्सा आकाश मां तो बग मीन बेठा पाट ॥१४॥
ज्यों मीन बसा जम निष्य में फिरन गमाया जाय।
पण दरीआ न महि बाहिरा तम अखा समाय ॥१५॥
तन-मन मीना फिर्या अखा दह दिस दीवया हीर।
आतम क्यू का त्यू हि है मेरा सकल शरीर ॥१६॥
धरया पीड हार अखा अधर न हारे अंत।
मागे करणा सा अब हुआ गाया अंतर तंत ॥१७॥
हार जीत जाम नही महीं मकर का ठोर।
मोई माया सपुन में बाद केहेता मोर ॥१८॥
तप त्याग पुजम बिना ध्यान धर्म बनवास'।
अखा मा कछु कर मक्या मिम गया मासोसास ॥१९॥
मपन जम मनुमान करप प्रीत साधन जार।
अखा हारया हाम बिन बम महा मरी मोर ॥२०॥
कमम उमर काळ म स्व नीमा गोर होवे।
ज्य कमम म्य है अखा बहत ह गर्वा तावे ॥२१॥
पाप बिना उहत अखा काक बाम कम जार।
मनसा वाचा कर्मणा में महि मतर मार ॥२२॥
काहा छोड कहा यह अखा मरण आप बिचार।
ममम पराय माम पर करे मब बिना बिचार ॥ २३॥

---

१ बन (का) नम्मा (का) ३ बिम (का) ४ ठमरर मीआ—
उपाना उमरे जो मोमे मा (का)।

नेहेमा पण सिरताज है मया मतर मरप मेव।
वाम्मो[1] मरम बिन ता[2] पीने पण मतर वामी मोल ॥५४॥
मया बापु माय बिन कोन कहासे हाए।
मंधेरा सूर के माम में कमहूं न कहे काए ॥२५॥
परतीत पकपा पुरा हुमा मोर नहीं मटकामा।
मया समसत सो मया न कोई है बेवाहो ॥५६॥

1 बापु (ना) 2 मा (ना)।

७१

भिस विकार अंग

भला जंगल म उधार जा बस्ती का अंत ।
कर्म धम कामु ना पडे जा सेहजाहिमा महत ॥१॥

एकाएक बे संग त सीखत भ्रमना भेद ।
दरसन मत अजाण पना' काई कुराम काई बेद ॥२॥

आहार निद्रा समय' मीथुना इतना देह बेहवार ।
इतने मायें ब करे सारा संग बीकार ॥३॥

का बंधन सुण्या नहीं ता मुक्ति काहे का चाहे ।
आप बधाणा जान के भला मन छूटन जावे ॥४॥

आप अकरमी जान के करत कम पर दोस ।
संग दाप मदक लगा कला सां बरजे कोस ॥५॥

संग दाप सब क लगा विद्या अविद्या ग्यान ।
दरस बढते बढ गया भूले मनही भान ॥६॥

काम क्रोध मोह मछरा बलवर क मी होय ।
गण मामीमता संग त वर्धा अला सा बोहोत बिगोय ॥७॥

ज काई मुक्ति चाहत भला सो बस्ती छोड़ वन जात ।
मग दोप मीटावने माय करत साधात ॥८॥

मनताई बीकार है मन ताई कछु नाहि ।
हुम बढत है संग ते बढन बढत बढ' जाए ॥९॥

मन चाहत परलोक कूं जे ही सुनाया लोक ।
सेहज्य मन समझ्या बिना वह फिरत हृदय माक ॥१०॥

---

१ अजाण पना—पापपना (ला), २ × (मा) ३ देहे (ला) ।

जाण पणा विप पच का चतुराई सब चाल।
ज्यू अपणी माल' करासिया उसमत है जजाम ॥११॥
सब चोरासी सत्र मरे कोई न होवे भूत।
मनुष जात क सब' सम्या जा जाम पणा अदभुत ॥१२॥
मेहेज सहेज रहे मथा तो तो हो' चेतन।
मे मेरी सब छाड़ क' दे हरप सोक पाप पुन्य ॥१०॥
अथना सरप हाथ मगा देह कर्म बेहेवार।
ज्यूं काम बिना कंचुकी महि क तनकूं मार ॥१४॥
जरा नहीं कू होत है सो मग माधावत मेन।
त्यू जाण पणा जीव क बड़ा सा माट होत है ऐन ॥१५॥
ज्यू का त्यू ही आप है नाम घरया मा जाय।
नाम घरपा झूआ मया तब मानरपा और उपाय ॥१६॥
अचित आधारे चीत है सा चीत लेत है सीस'।
आप छही कीना जबे सब माया रक मोर ईस ॥१७॥
जाण पणा ससार का एहि मन क रोग।
जाण पणा समावणा निमा ह प्रयाग ॥१८॥
जाण पण स जोब हुमा सो जाण त टरी जाय।
ज्यों अग्नि जरया मग अग्नि ते सीतल थाय सहराय ॥१९॥
उमटी सो एही बात है मथा महराबत काए।
आपु आपको भोगता सहेज्य म नीराग्य होप ॥२०॥
अष्पन मोर का ठाठ सब चित मामत ह कर्म।
ताते पार पावत नही ह कछु चीत का मर्म ॥२१॥
गगन ते केहता नहीं चीत मध सब बात।
चीत मानत मानी कही चहजा जात उतपात ॥२२॥
मेरी मीया हाता नही होता है सब पेब।
मथा नमी समझ ले जाये धारी एव ॥२३॥

*

१ आप (मा) २ मन (मा) ३ मन (मा) ४ × (मा) ५ मीन (मा) ६ भोक्ता (मा)।

राम रसिया अंग

राम रसीया मिले दादूसा साच कराइ कोय।
सेय टेक न मानके एसे साहातु होय ॥१॥
ज कोई रसिया राम का माहाटी मन की हाम।
ज्यूं नर के संग सती चली तब धन तन भया बेकाम ॥२॥
रसिया ऐसे हाय रहया ज्यों आसका[1] मेहेबुब।
भला बुरा मेहेबुब का ठाक मन सब खुब ॥३॥
सखो कहे रसिया राम का मद मसुम मन[2] मन।
जैस मरणा समुद्र का चढता जाये गगन ॥४॥
सखो कहे रसीया राम का मीट गया वादविवाद।
ज्यूं गरभ धरि बीचरत नहि दासी क जनमाय ॥५॥
सखो कहे रसिया राम का देह का साम्या साहो।
ज्यूं गरभन सम्या आभूषण सो मात पिता का माथा ॥६॥
सखो केहे रसीया राम का सदा सीतल मन।
ज्यूं भर दरिया की माछली कु पाम न मागत अग ॥७॥
सखो केहे रसीया राम का मत दरसम नहीं माम।
जे धरती पाना धरे नहीं ताहे बचन काम उपान ॥८॥
बाकु हीरा मानक ना मिले सो काच कथीर सहराय।
राम बीना ख्याली नहो कहां त कहांकु जाय ॥९॥
जे नर प्रेम छुटया रहू मामन मोचसत शास।
बकत किमारे कठ के साहाव करत गाम गोल ॥१०॥
मध्यनार[3] को मन क मिथी समझत काम।
अंतर जरमो मीठी गई सम्या कहावत माय ॥११॥

---

१ के (मा) २ दिल दिल (मा) ३ तम्बा नर (मा) ४ सुषी (मा)।

राता माता रस भर्या सो मानत ही एही बात ।
ज्यूं मोदा' कृष्णागरा बाधा बुगत साक्षात ॥१२॥
पद पोहोच्या सा मर मला माम मीट्या मयलीम ।
अंतर भाप मीटी मया को चाहे दुनिया दीन ॥१३॥
जब पारा पुरा मुआ तब गई चपलता बेहेन ।
तब आग सेके भंग' कु करत भरागी ऐम ॥१४॥
पका मेघ पूरा हुआ तब सात' नक्षतर माम ।
तव मुक्ताफल मीपज आसम साहि सहरावे ॥१५॥
वा पक्ष बिच्च भाया सती होय सफल कसा ममत ।
पक्षापक्ष में जे रहे सा समझत नहीं हरि हुत ॥१६॥
पुराह कांई पक्ष नही मक्ष मक्षासगामो ।
बाण मीसान तब मम जब होय सकल भग एक ताभो ॥१७॥
पुरा पाम मा समझसे छाक्षा सलक्त जाई ।
पुरा का ए पारखा मकल सम्द पचाई ॥१८॥
सकस मदा क मप र मकल मदी कू चसाई ।
भाप घटे बढ नही ए पुरे का महिमाई ॥१९॥
अक्षर ताता मीमरा बबह नम म हाम ।
मव उगाध्य भाप म पचे पुरा कहावे सोय ॥२०॥
मन मे पुरा एकड़ा माय करोडा गिणाई ।
घटे बढ़ मो टम कणां मया एक रहाई ॥२१॥
पुरा मस चाही मया नहीं और बात सू काम ।
मब' कोसीस माम अधा जब त मया राजम ॥२२॥
पाट बेते सो पाटवी कूल म देले कोए ।
पुरा पुरा कोई हा पद पावे मा सोए ॥२३॥

---

१ मोदा (स) २ मग (मा) ३ स्वाति (मा) ४ जेम (मा)
५ र (मा) ६ मबको (मा) ।

केसका ते माइयां के हुवा सोह का हम ।
सरीखा रंग मोल क जे पाया नीलम नेम ॥२४॥
एब नहीं मेघ बिंदु क जब लगी अमर आकाश ।
स्यी पुरा आप अंबर[1] रह करता मथा कपास ॥२५॥

१ अमर (ना) ।

शीष्य आतुरता को अंग

आसा न कर और की आप करे उपगार।
एसा नर मानुं अमर पर्मासमा अवतार ॥१॥
मन सिगी और अनुभवी निपुण निरतर नक्ष।
एसा गुर करमा मना सो आमत सिप्य की बक्ष ॥२॥
माओ भरासा भक्ति भम सागर गुण गमीर।
एसा सीप्य गोपरम अमा सुध सुभाव मतिधीर ॥३॥
बप न पमटे सिप्य नवा गुरु क भाव भाव।
सावधान सदा मम' पीधा न धर पाव ॥४॥
मान बडाई चाह बिना करत गुरु की मव।
मरन धार उपदेश घर मा ममझ गुरु भव ॥५॥
गुर मब्द मं सीष्य ह क है मदा क सीध।
बिन मवा गुरु मा फले ज्यु अग्नि बदमक क मध्य ॥६॥
गुरु पूरा नहिं नाम बिना मिथ्र मासा बिश्वास।
बहुस बसि ममार मं गर सिप्य स्वामी दास ॥७॥
मम भरामा भक्ति' क मरवा कर निहाम।
अग्नि अमृत मनार क नाम नग्र दना साम ॥८॥
गुरु करत ममार मब महुन गहमा मब साप।
सिप्य पूरा पूरा गुर गाम अमा मिम राक ॥९॥
अमा आतुरता ऋम मा बात की बात।
जमद आहू मेहू धर बिन माता बिन तात ॥१०॥

१ बिन (मा) गवर तमर—गवर मवे (मा) ३ मम्न (मा)
(मा)।

गुरु हीये गेहलाया' हायरा पण सीष्य आसुरता लाय ।
ज्यू मन पार कपड़ा मरपा उठम हुआ' नाल आम्य ॥ ११ ॥
असा स्वामी सिष्य सिप गुरु सिध्द हाना हाय ।
स्वान गम विनसा घरे जा आतुरमा हाय ॥ १२ ॥
असा नापज्य गेम तें पण आतुरमा मार भार ।
ज्यू मधुर रहे मही बीज म पण पाणा करन पमार ॥ १३ ॥



१ गेहरा (मा) २ नाले (मा) ३ मान (मा) ४ मद (मा) ।

सती' को अंग

नर संमे बहु नारियाँ सब चाहत सुख सज।
पण भक्ति सेज में रमे मसा सो बड़ ममुभे बड़ हेज ॥ १ ॥
मम' सेज की सुंदरी आठ पहेर' हुंसियार।
सोभा सेज बराबरी ताहे प्रीत मग्निपरी बार ॥ २ ॥
प्रगट भाग की भाम्पनी मतरछी गहे मोग।
पण एक अग की भंगना मसा ताक दोनु जोग ॥ ३ ॥
सोपन देख सास के मोर बोसे पीयु के बेन।
सो पतिव्रता पदमिनी या श्रम दिन रेन ॥ ४ ॥
सती सोहागण है सग जिमु आप्पा पिउ संग।
असती राड हाय रुए चाहे पस पस पसटे रग ॥ ५ ॥
एक नर की सब नारियाँ का भाग्य हीण्य बड़ भाग।
असती का नर निरप मर सती सग साहाग्य ॥ ६ ॥
सती-सती सबको करे पण मति का दूर पहचान।
तन जारे सा सूरियाँ सती सो जउ' पीयु ग्याम ॥ ७ ॥
तन जारे सा सती नही तन' जारे सो मन।
तन त्यागी बोहोत मिल पण मनत्या भाग गत ॥ ८ ॥
मन त्यागी माहा मग में डूबो नीकस बाहर।
ताकी फूकू' फाग्नि जब बोम्य' मब" द्वार ॥ ९ ॥
मसा भामी अम फूकुदा उड़ बुरे तर धाम।
चाह गरप अग्य महा ए भामी का ध्याम ॥ १० ॥

---

१ भव भक्ति भग (मा) २ भक्ति (मा) ३ पहोर (मा) ४ सोभन (मा) ५ ज (मा) ६ मन (मा) ७ मनस्या मन—मनत्यागी अथवा (मा) ८ बहार (मा) ९ मै (मा) १० सोमे (मा) ११ नाम (मा)।

मसि सरप मग डस्या सपने में त्रिलोक।
अखा अगाये सत' और भ्रम श्रम सब फाक॥ ११॥
ज्ञान जगावे गहेन ते अखा सब्न में साध्य।
पथ जीव गत जा मिल गया सा करे जड बुध्य॥ १२॥
जीव गुरु क्यों जानिये जे कर्म विखाव रित।
सा सिष्य मय' करे अखा जैसी निज परतीत॥ १३॥
मण स्यंगी कू' सहे अखा जे मणस्यगी हाय।
ज्यों हिरे हिरा बधिये ताहे घास न वेध न काय॥ १४॥
जीव ज्ञाना कू न सहे साधि आवे साज।
चटी मापण कू चली अखा ज्यों गजराज॥ १५॥
पाइये पार ज्ञाना मिल तहां चतुर्थी कबेर।
मला कहे-कह काहा करे जा साहेब की नहीं मेहेर॥ १६॥



---

१ मरघुर (ता) २ यूं (मा) ३ को (मा)।

ज्ञानी' का अंग

नाया श्राय मा मन करे अरु ज्ञानी साध जाग।
अस्रा ज्ञानी ताहा कर साक नहीं कछ र ग ॥ १ ॥
सघन रागी क ममी स्या जाव का भन कन।
मवन रागी नही अस्रा ना क है क मृषर्य मम ॥ ॥
कम वहा वहा कामना नाहा कामना जाहा जोव।
कामना काम जहां न मस तहां महज्य अस्रा मव जाव ॥ ३ ॥
जोव सीव का मोसान ए सीव पुग्ण जीव पाहा।
जोव नपत ताह नहा तृपन्य अस्रा हा आया पाहा ॥ ४ ॥
परग्र 'राप गा परब्रह्मा अ वान बोमन हार।
ाद्य अस्रा वामे महा तमा ग्रह्म विचार ॥ ५ ॥
पशापस्र प्रगम म जहां दुनिया दगम धर्म।
अपा महेज्य आकाश ज्या नहीं मीमा नहा गर्म ॥ ६ ॥
अग्रा अनल का कमा ज्ञाहार गव गगार।
गण हरा हिरा ना पारखी †'काय क राम का मार ॥ ७ ॥
० काम कबीरा [मा राग अगा जरा महाजन।
नव ग्रण नाप्प मीपज न आवा वह रतन ॥ ८ ॥
महापन प्रकट धरनी त गा भवम महाराज।
नो ग्रह्म पावा क मा बम गा ज्ञानी क काज ॥ ९ ॥

---

१ ज्ञान बल (मा)   भिव (मा) ३ नरानि (मा) ४ बारे (मा)
ो (मा) ६ न (मा) ७ X (मा) ८ हिजि (मा)।

मुक्ता मोजन ए हंस का अन्य पंखा मन पाहाण ।
त्यों दुनिया ज्ञान सह नहा लह परमहंस परमाण ॥ १० ॥
साधु सप कीटे कहे' परे पतन्य पर चाट ।
मृत्यक' मख पीयानियां त्यों दुनिया ज्ञान सह नहीं' ॥ ११ ॥

१ मध चीट कर—मिथु मनि एक है (मा) २ मगर (मा) ३ ज्ञान
नर्म को क्षार (मा) ।

बेहद को अंग

बहद मे हद हुई है बेहद भी हद माहि।
हद फटे फाटे अखा' बेहद जहां का तांहे ॥
बहद सा चेतन्य भरया और दुनिया सा साक चीन।
अखो सो आवे रेहे मर सा चेतनसागर मीन ॥ २
दुनिया सहेरी ब्रह्म की उत्पति स्थिति लय सहु।
अखा धुआं' सब वस्तु का तहां कार्ण कर्म ॥ ३ ॥
धुआं निकस्या अग्नि ते चसता देख आकाश।
ना ठहेरा ना पीछा फिरे सहेज्य अखा समास ॥ ४ ॥
कोई अभ्यासी अखी क कोइक सीधा निरधार।
कोई धूम्र हुआ अखा एतीन का बिचार ॥ ५ ॥
धुआ स्थानि सा जीव हे और मोस्या ईश्वर का धाम।
अग्नि आ कवस्य अखा ज्ञानी का आश्रम ॥ ६ ॥
ए तीपन ब भी माहामती साई ज्ञानी साई सत।
साही आप हरी अखा ए पद ठहरे माहत ॥ ७ ॥
आगे पीछा नही कछू माही नीमग मीराम।
भाप आप जाम अखा जमा धाम बिश्राम ॥ ८ ॥
जीग धाम कोई ध्य नही ध्याता नही धसी भूर।
कास कर्म नही अखा नहीं मठा नहीं दूर ॥ ९ ॥
दृष्ट पदारथ जनना मूरत पदारथ जहे।
बावन मा बाम्या अखा धम्म न सुख तहे ॥ १० ॥

---

१ रण (मा) २ धुआ (मा) ३ कर्ण काम (मा)।

आकार की हे' बासणा नीराकार की सग।
तहाँ' सूरत जाय भेसा करे †' असा पडे न पग॥ ११॥
जा मूरत बसि ता निररय सूं जाई पासो हाम।
पच पग पेड़ा तहाँ नहीं जहां असा आराम॥ १२॥



---

१ आकार की हे—आकारका (मा) २ तहां (मा) ३ पच (मा)
४ जा यह (मा)।

लासन' को अग

धन तन मन क ना गण मसम आ॰ि मा साम।
मह्याद र्ध मागम मा माहब मा माम ॥ १॥
ज्य गुरय' दिप माहामा नहि आग जाग्य वि ।।म।
मन मन अपणा म गण मा माहब मा माम ॥ २॥
मायया तुर निदाम पर आदर भवम इताम।
हाजर का मिय्य भागहे मा माहब मा माम ॥ ३॥
ईर होइ म मरि बिया मय माहब हर माम।
मीटमम नजा गाडिया मा गाहम का माम ॥ ४॥
मम म मामो तुर माना अग गन ममाम।
वाया न शमायम मामी म मी माहब मा माम ॥ ५॥
धीन ना पाहन नहि फगागाम फीम काम।
जु पा ग्य रह मना मा माहब मा माम ॥ ६॥
तह नाम परमाक का पका म धरम बाम।
अरपम् आया गण मा गाहब मा माम ॥ ७॥
गिप्प मिप्प र दया' म धर रा हा म भूराम।
ममन यरावर मय गण मा ताहब मा माम ॥ ८॥
मान बड़ाई मिन उगा भना बुरा मब माम।
मह माई माया नहा गा माहब मा माम ॥ ९॥
जगम पका तन मा ि मरामर माम।
मान मनाई म म मा मा माहब मा माम ॥ १०॥

—

मान म (मा ... मा। १ माहब हर माम—माहब का हाम
) २ मना (मा। २ ... (म (ध्यान मा) ३ माम मा)
मन (मा)।

अंग कू आपा ना मिले [१] कैसा भुख पयाल।
सब सरीर ज्यूं देह है सा साहेब का लाल ॥११॥
उनमत सा माता फिर काया अदवद भास।
जाकी परीछा ना करे सो साहेब का लाल ॥१२॥
किमत ना आवत नहीं क्या भी मन का क्याल।
सबया[२] सबे मै नहीं सो साहब का लाल ॥१३॥
पानी मा पावक बरे जैसे बिजरी पूछ लाल।
अकल मता एसा धया सा साहेब का लाल ॥१४॥
आनै किए ना[३] लगे अरत नहीं बयार।
ऐसी रहणी रह अखा सा साहब का लाल ॥१५॥
सोना कु समता[४] नहीं भी बिच जात बहु काम।
अजब कला सोही उपजी सा साहब का लाल ॥१६॥
दूजा कू दाब नहीं आया भास पम्याल।
एसी नीबहत[५] ओडसु[६] सा साहब का लाल ॥१७॥
ओपमा कू अटकठ नहीं आपा नविम नीरास।
कोई ताकू कैसा कहीं सा साहेब का लाल ॥१८॥
राज करे के रमनी रम मे ओडस मृगछाल।
ज्यू रहे त्यूं छेहेज्य मां सा साहब का लाल ॥१९॥
कहां न जात कैसा नरा लगे न सत्र बबाल।
सोहे गुरु मेरा अखा सा साहब का लाल ॥२०॥

*

१ लिख्या (ला) २ अभे किए ना—अमसे कोराना (ला)
३ समामना (ला) ४ कोई (ला) ५ निमहत (ला) ६ आडमु (ला)।

सर्वांग अग

ज्यू चेतना उभा चढ़ सूर्य सबपरपे' आये।
मन्मा छाया ताहे करी' माहि पड़ भ्रम' आये ॥१॥
तस आग्म मध्य के भीतर आव न काय।
देह दरसन टर मन्मा हुतु सब य माय ॥२॥
अनुभव क अंग बिन नही अतर उपज का भय।
जो मरकक का आनंद मन्मा सा मत दुरसन बेग ॥३॥
नाना बानी मत मुन मन्त्र आन बहुमान्य।
लागि लागी बीमार मन्मा जैसे गई लात ॥४॥
एक मरद कू प्रही रहै माया एम बीमार।
म नहिं' हे हरि मन्मा मन्पतहिं' सम्या संसार ॥५॥
जगत घाट बैठ नहीं नाना मारय बहुबाण।
पर दरसन के मत मन्मा एक एक के मधिक मयाण ॥६॥
जैसे तसा रेहेन दे मटपटा रूप मनान्य।
भूख मानम मन है मन्मा पण नही भूठ क साथ ॥७॥
गद का सत न रहै मन्मा सुरत नीरत मिद्धान्त।
सत्य मीथ्या नही कहन क आमर नहीं माथ मन्त ॥८॥
जो जाम मैं मग्य हूं पिद प्राप ममार।
सद्गुरु का मत म मन्मा मरप अपना आधार' ॥९॥
काहू मं माप म हुआ जगत रूप ससार।
काहू के भाग न टर ताका करा मन्मा नीरधार ॥१०॥

१ तरपे (मा) २ माहिकी (मा) ३ भू (मा) ४ हा मत—बिनत (मा) ५ माथि मामी—लाग लाग (मा) ६ मे वहि (मा.) ७ ममतत (मा) ८ बहु (मा) ९. अस्वार (मा)।

सब अनुमान' कसपी कहे पुर्व आधार ज' मात ।
पण' ए तो ज्यौं का त्यौं अबा ना को आदिन साथ ॥११॥
माये हा रहे भणसता करणहार किरतार ।
माका कीया सब होत हे सो पिढ बसावण हार ॥१२॥
अबा पीछे कया रह्या जब समझ्या ए मरम ।
माप मेटे' से आप रहे भाग्या भारी' भ्रम ॥१३॥
पढ़ते पढ़त पची मुआ व्याकरण पिंगलसार ।
माया अधिक बढ़पा अबा जाक्ता जाय' ससार ॥१४॥
मीथ्या सत्य सत्य होउ है कण्ठी' कम धाय ।
जौ घुनत घुमत भरम भया अबा अरोगता जाय ॥१५॥
मपम्झपा पढ़पा दोउ सारिखा जा नहीं आरम लख ।
सादिं' पोतरी सत्या' अबा बराबर' बुझन'' पक्ष ॥१६॥

*

---

१ अन मान (सा), २ अ (✓) ३ × (मा) ४ मिटे (सा)
५ भै मरी (मा) ६ माता आप—उपम तामाई (मा) ७ कबत (मा)
८ के (मा) ९ मिला (सा) १० सरली (सा) ११ बूझन (मा) ।

सर्वांग अंग

पे जेतना उथा चढ़ सूर्य सवयरमे' आये।
अखा छाया ताहे करी माहि पड़ भ्रम' माये ॥१॥
नैम आरम भक्त के मीरट आप न कामे।
यह दरसन टर अखा हुतू सब पं माप ॥२॥
अनुभव कू अंग मिग नहीं अतर उपज का भेव।
जी अरपक का आमद अखा सो गम दुरगम वेव ॥३॥
नाना बानी मत मुम पान्द जान बहुमारय।
लागि सामी दीजरे अखा वैसे भई तात ॥४॥
एक मगद कू प्रही रहे माया एन मीचार।
मे महिं' है हरि अखा मुम्पतहि' सम्मो संसार ॥५॥
जगत पाट बेठ नहीं माना भाग्य बहुबाण।
पन दरसन के मन मथा एक एक थे अधिक सयाम ॥६॥
अम तता रेहेन दे मटपटा रूप अवाच्य।
बुद्ध मानम पक है अखा पन नहीं मूठ के साथ ॥७॥
गद का मम स रहे अखा सुरत मीरत सिद्धान्त।
सरस मीप्या नहो कहन क माना नहीं माव अन्त ॥८॥
जो जान मैं गम्य है पिंड प्राण ममार।
मदगुरु का मस ल अखा मरप अपना माधार' ॥९॥
काहू के माप न हुआ जगत रूप समार।
काहू के मागे न रर ताथा मदा अखा नीरधार ॥१०॥

१ तरण (मा) २ नाहिकी (मा) ३ भू (मा) ४ सो गत—विगठ (मा) ५ मानि मागो—ताग माप (मा) ६ मैं यदि (मा) ७ ममगत (मा) ८ बहू (मा) ९ रूपार (मा)।

सब अनुमान[1] कलपी कहे पुर्व आचार ज[2] बात।
पम[3] ए तो ज्यौं का त्यौं अखा ना का आदिन साथ ॥११॥
आये हा रह अणक्षता करणहार किरतार।
जाका कीया सब होत है सा पिंड बनावण हार ॥१२॥
अखा पीछे क्या रहा जब समझ्या ए मरम।
आप मटे[4] ते आप रहे भाग्या भारी[5] भ्रम ॥१३॥
पढ़ते पढ़ते पंथी मुआ व्याकर्ण पिंगलसार।
आया अधिक बढ़पा अखा जाकता आय[6] समार ॥१४॥
मीथ्या सत्य सत्य होत है कपतें[7] कम धाम।
जौ धुनत धुनत भरम भया अखा अरागता आय ॥१५॥
अनभया पवया दाउ सारिखा जा नहीं भारम लक्ष।
सादि[8] भीतरी सस्या[9] अखा बरावर[10] बुझन[11] पक्ष ॥१६॥

★

१ जन मान (मा) २ ज (×) ३ × (मा) ४ प्रिं (सा)
५ भे भगी (मा) ६ जाना जाय—ज्यम ताबाई (मा) ७ क्षत (मा)
८ के (मा) ९ गिला (मा) १० सरसी (मा), ११ बुझन (मा)।

शब्दातीत अंग

सोसमहारा वाष्पका[1] ज्यों का त्यों ही सदावे।
कुर्म कन्यासी है मथा तरब अकूर[2] समाये ॥१॥
बोसता यया मवाष्य में तात[3] सारी धाप।
धाप अबासा मोस दे च मसा मवाव ॥२॥
अबोसता की मोज है बास मामा बोस।
मन्या इसारत ताही मी दम्यो भापा साम ॥३॥
जान मावन का मीमही[4] जासु बचन विवेक।
मथा ! पंथ का कोहेरा बोसी चरिम अमेच ॥४॥
चतुर बीवेकी पुप अरु मैतन चपम मतिमंद।
तत्व भेद नामा मसा न्यारा परमानंद ॥५॥
जहां कछू नाही ताही वहै[5] चाहा कछू है ताहा हेम।
बासम तोई राम हे मठ मांचे मगा तु पेज ॥६॥
बासन हीसन रामसू पच तत्व का जाम।
जद चेतन सब कोहूरा मन्मा माग ममान ॥७॥
ना कोई मुमा मजीवता नाता ह मापन जान।
तेहुज वास आप अथा कहा करे कोई समान ॥८॥

★

१ वार्णीता (मा) २ कुर्म कमामोर—नारमी ममा ठिने (मा) ३ ताव मकूर—नरउमको न (मा) ४ जाने (मा) ५ बो (मा) ६ हेम है (मा) ७ × (मा)।

नुगरा[1] को अग

मुगरा १[2] सबका गुरु मस्ता बाली हीकमत[3] मार ।
बिन समुम सब किया करत न सागी मार ॥१॥
मुगरा स मूमरे सम[4] मस्त भेदू ण कोम ।
माम नोसाना नहीं मस्ता वास मोसावे सोम ॥२॥
मुगरा की गस अजब ह कहवे आप[5] बेहेकाय ।
दुई कम सस मस्ता ! ना कछु मूगरा भामे ॥३॥
सम्द करे छांना रहूं प्रगट पाकारे आप ।
मास तास जाको तहां ताका ठोस अरु माप ॥४॥
हाथ पाव जाका नही ताका सीर मुस हाप ।
चुप रेहवे बोले बरा बहुरूपी हे माप ॥५॥
स्व पद तहां[6] गुरु सीष्य नहीं[7] क्या का स्यीहि सवाये ।
मस्ता बीज मा नहीं कछू ग्रस मे भाम्य बमाये[8] ॥६॥
मस्ता दुई मो दुई नहीं मारत चेतन मोज ।
चकमक रूपी हीरसा कोई भेदू पावे चोज ॥७॥
मासम मारा[9] भाम ह हीरा अरूपी आप ।
माप भेद सर्व माम ह मस्ता कहू व्यापा व्याप ॥८॥
जगत हैं कें जुगदीस हैं कछु भी कह्या न जाय ।
मस्ता कदली मंम ज्यों सार फसत सदाय ॥९॥
न्यारा करण का नहीं मस्ता[10] जैसा वसा आप ।
कदली की सी गस्य हे पेडो पेड़ हीत व्याप ॥१०॥

---

१ मुगुरु कम (सा) २ राम (सा) ३ हुकमत[4](सा) ४ है (मा)
५ भवे (सा) ६ भी (सा) ७ करी (मा) ८ म (मा) ९ बरे (सा)
१० है मो (मा) ११ बन जाव (मा) १२ मीरा (सा) १३ × (सा) ।

अरुपी रुप' हुआ फीरे रुप अरुपी होय।
पघर पखर' अमात है जैसे पाला तोय ॥५१॥
मार्ग है सुत' धाम में भक्त हेत अवतार।
एतो केस का सूत ज्यों अखा चरित्र बिहार ॥५२॥
सूबे केस न नीपजे नीपजत पेडा पेड।
अखा बीज अरूल है जगत रुप का हेड ॥५३॥
जे ह सो ए ही अखा हाजर प्रगट प्रमाण।
हाय गया के हीयमा भापा मत परमाण' ॥५४।
इत आठ तां' जीव है उभे आठ सर्व होय।
इत उत केहुणा रेहें गया अखा' ज्यों का त्यों जाय ॥५५॥



१ रूप (मा) २ पखर-पखर—पीगलो पीगली (मा) ३ मार्ग सुत—आवन सुत (मा) ४ आता परमाण—के के औखदा एकाय (मा) ५ ओ (मा)।

८९

अथ माया को अग

ममता तेसी, मन बपम, माया भाणी फेर।
अखा पिलाये कामना और हाता आय उमेर ॥ १ ॥
ए जीव जग जीव मा तर्मा कर्ता माया काम।
तांहा गुरुमुखी मखिया भया अखा सा अच्छा भास ॥ २ ॥
अखा शब्द कू खोज से शब्द ब्रह्म शब्द गास।
जा बरते ए उपजे ताकी करो संभास ॥ ३ ॥
शब्द पहोचावे वस्त कू और शब्द तें पढिये भास।
शब्द का पर निःशब्द मैं, अखा सो धाम बिलास ॥ ४ ॥
आपे साहब आपमें माधा रच्या ससार।
भम मार्गे भम अखा, तांहा कौन दिखावनहार ॥ ५ ॥

✱

१०

अथ प्रीछ अग

राम नाम सो आलसी जो अवसर पाम्या आज ।
ए बण पाम्यो ठाला थया, ता मसा ! दी रहे वेसाम ॥ १ ॥
तत्पर थइने ते करा जेम वहोले मावे बात ।
ए हरि जाण्या विण सुग अथा ! पथा घसता मथा हाथ ॥ २ ॥
मानव देह पामे थक, मर्म न समज्यो एह ।
जे हुंते कोण ? कोण आतमा ? ए भाग्यो नहीं संदेह ॥ ३ ॥
आतमा जाण्या विण मथा, कीधो सुकृत करे अनेक ।
ज्यम ओम बिन्दु आन्र करे घट न भराये एक ॥ ४ ॥
आन्र करी अंतर थको ज्या उपासी राम ।
सकल तीरथनु फल अमा ! पामी एके ठाम ॥ ५ ॥
गंगा प्रयाग गोदावरी माहातीर्थ तीरथराज ।
ते महातो फल तो प्रगटे जो मध्या जपिये महाराज ॥ ६ ॥
अथा आतममर्मने मेथा सद्गुरु संत ।
सरशास्त्रने शोधते मथ टमीजे पत ॥ ॥
हेमा मांहे हरि मम जा सद्गुरु ने धार्ये पाय ।
ज्यम रत्नागरथी रिद्धि पामिय जा हरि हाथे माहि ॥ ८ ॥
साधु संत एम कही गया एम कह श्री महाराज ।
हरि हरिजम मे सवतो अथा समरे काज ॥ ९ ॥
जीव शिव जुगते प्रीछिये जा सेविज साध ।
विचारे वस्तु पामिये मथा जो बाध अगाध ॥ १० ॥
मोटी वात महतमी न गाईता सुगम पद ।
कल्पद्रुम जम कृपणना मथनो मध फल जद ॥ ११ ॥

९१

अथ भवबोधक अंग

एव आनद अभिलाष फल एज लाभ लख कोटय ।
आतम परमात्मा जे मल अखा मागे बहु आकय ॥ १ ॥
अखा आनन्द हे लटे जे आव्यो कहीं न आम ।
धन तनना रूप योवने रखे तु पतियाय ॥ २ ॥
धन दारा सुत पशु पिता माता विविध व्यापार ।
अखा ए आनन्द पामवो ते मधु चाटे खड्ग धार ॥ ३ ॥
मूरख मलकातो फरे आप सूंढ़ अंक ।
पण जे भोग भूपति भोगवे तांहा रमता दिसे रंक ॥ ४ ॥
आहार निद्रा भय मथुने सरखा छे सब कोय ।
अधिक न्यून माने अखा ! देहकाणा छे दोय ॥ ५ ॥

☆

अथ सहेज अग

माया ठगणी, काम ठग तिन सब ठगिया संसार
कामना चोरी कंठ में सब करते फिरे पोकार
राजा रक मागे सबे और मागे चतुर सुजाण
एक न मागे मन राम का जे भया नहो हरि आंन।
चापंता भूमो पड ए मुगरो बाण संप।
मागे माम्यो भूसमा मसा मागम बंप॥
वनस्पति सब एक है स्थावर जंगम दाय।
सहज फले सुप सत्य भया तुलता किसे मर्य हाय? ॥४॥
मधा योग सब सहज का हम तो किया विचार।
बिन कह्या पहेले करी काया ए किरतार॥५॥
पहेले मधु हुमा पीछे हुमा पुमान।
बाणपणा पीछे बडपा तो मसा। घरे क्यू मान? ॥६॥
हम तो एसी जाणिये जैसी कही महत।
भया ऐसी जानतें मय टली जे मत॥७॥
मनूमा मत उलटा फिरे, सापी सुप से लिख।
सहज पाप्या बिन मया कबहु न टले बीक॥८॥
माप अर्पी रहे इयाम हरि मांहीं मूक हकार।
ज्यम का मर नौका चढ़, ते भया। पामे पार॥९॥
*सहज बनी ता बन गई मधा। गुप्ती वाणि।
पण कहे न माने नही ज्यु मोमे सोहडु पाणि॥१०॥
होमारा सा हा रह्या जे इच्छा था हरिराय।
ज्यु माला कण वेध मया। पण मन्य मग बिष्या मब जाय॥१०॥

---

* मूल प्रति मे यहां से दूसरे सहज अंग का प्रारम्भ होता है।

ना होवे नर का किया, सब नारायण का जाण ।
शुक सारक पढ़ते सुने, कब नग कू उपजी वाण ॥१२॥
जे कछु करे सो हरि करे नर का किया न होय ।
नर का किया होवे अखा ! तो कबहुं न मरे कोय ॥१३॥
ज्युं नीर विषे नौका रहे तो वहे काटि मण भार ।
त्यम नारायणमां नर रहे, ते सहित तरे संसार ॥१४॥
नवलगो अंतर ना सूझे तो कहेते काहा होय ! ।
ज्यु पुतली के नेनां अखा ! देखन के नहीं दोय ॥१५॥
अखा ! अंतरथ ऊपजे सो अनुभव आत्मस्यमान ।
ज्यूं मूरातन सिंह का, सो कुदरत की वान ॥१६॥
सहज माया शरीर सब, सहज अखा नर जाय ।
सहज मोमेडा होत है, तो ताकु रवे बलाय ॥१७॥
दाम धाम सब सहज के सहज हुआ परिवार ।
अखा ! समजे सो सुखी, नहीं तो पिट पुकार ॥१८॥
नर तनमां महेरो, अखा ! ज नर ने अधिकुं ज्ञान ।
रण अहार निद्रा, भय मैथुने, सघला पशु समान ॥१९॥

★

११

अथ विरह-रूप अंग

जाका नाम तू नित सुणे सो कहे साहेब किस ठाम।
अथवा भगत ता मगरे पड़ जो समझो कहिये राम॥१॥
समझे साँई सों मिल रहता। रहे नहीं न्यार।
ज्यूं सागर के मच्छ कु नीर बिना नहीं ठार॥२॥



१४

अथ कुगुरु को अंग

गुरु-गोविंद जाकूं मिल्या, तबते भाग्या भम ।
पण कुगुरु पंथ बताइया सो अधा न समझ मर्म ॥१॥
सो उल्टा माथे भमयो, जामे नहिं गुरु भेव ।
सा चेतन कू समजे नहीं, माने जड़कूं देव ॥२॥
कुगुरु मारग दूर है अगम कोट पर गाम ।
सदगुरु मारग सोहेला कमे त्रम निज धाम ॥३॥



अथ हरिजन को अंग

हरि हरिजन तो एक है, तुम देखो सोच विचार।
सब बड़ाना है साँई का सो एकै कहा निरधार ॥१॥
हरिजन को बढ़ाना नहीं, ए तो मर्म पहुंच्या भेष।
जाको जैसी बन गई दरसन देवादेव ॥२॥
चाहे पंथ चलना भला! सो सांग बनावे साज।
जिने हरि समरा भला, ताको नहीं कछु काज ॥३॥
जिस बेगम को मस्तो भया! ता पर साँई का प्यार।
भला! और सदारिया, बहे लश्कर का भार ॥४॥
मुख बासे अमृत भख और भूषण भूखत अंग।
मांडण राजद्वार का, भला! साहेब सुरंग ॥५॥

*

अथ लक्षहीण अंग

बहुमा निपजे को भक्ता ! भल ज्ञानी बुध सिद्ध ।
और केसकी कैसे फटा होवे सुंदर सुगंध ॥१॥

जाका मता अगाध है, सो धीरता जग बोध ।
और भवा उपजे मरे, ज्यूं कीड़ा भाई कीच ॥२॥

भवा ! कथनी तें राम कु, जाणो दूर दराज ।
ज्यूं निशान कहीं मि रह्या, कहीं हुवा तोप का अवाज ॥३॥

हीरा छाटे सिर टोक का, दूजा है हरिजन ।
दोउ दुलभ ससार में, भवे ! बिचार्या मन ॥४॥

कथतें गातें हरि मिले, तो भांड दूध सरी जाय ।
प्रेमे गुरु सेव्या बिना, हाटे हाट वेचाय ॥५॥

कथणी कुकस कुटसे, धेप न पामे पार ।
गुरु सेवा बिण सुण भवा, ज्यु पंगल का होय दार ॥६॥

पलकुंभी हरि उद्धरे, जो छोडे छल बाल ।
तनवा छूटया विन भवा राम नहीं मालाम ॥७॥

सांईया साहा हुवा बिना, नो पावे सुख सीहोर ।
हदे होठे मुखवा, सो बेकिम्मत वेपीर ॥८॥

मन मुगी मारण बिना, अधा कथी कहां जाय ?
ज्यूं अंध बहोणा अरण्य में दिन राख्या रोवाय ॥९॥

मन मुगी मेला भया ! जो कथणी कथे दिन रात ।
छे मोप्या तलप्या उजला, क्या कमी ना जात ॥१०॥

मनमुखी दुःख दे सबा ! वे को करे उपकार ।
ज्युं अग्नि नरम करे मोहकु वाहे देवरावे मार ॥११॥
माहातम न सहे मनमुखो और मान बड़ाई चहाय ।
ज्युं पहेला डोहम मीरकु वो पीछे पीया क्युं जाय ? ॥१२॥

☆

९७

अथ मरद को अंग

मर्द मस्ता ! सो जानिये, जे मरदे अपना मान।
और सब मरदानगी, से होय साहेब का जान ॥१॥
दावा धरे मन मरद का और भीतर भरीया दर्द।
मस्ता ! कहा मरदानगी, जो दावे बीन्हा गर्द ॥२॥
मस्ता ! साहब सुं मिल रहे नेन बेन कर एक।
और कर्म के पेट में भरीया विघन अनेक ॥३॥
सा मर साहेब कु मिला, जे आप न रहवे रंच।
ज्यूं माता के गर्भ में अपा न लागे वच ॥४॥

☆

अथ अनुभव शब्द को अग

सर्वंग सत्त राचा पीए, ताहू कृपा महेंस समाई।
ए अनुभवी मर्थ अपना सघ, पाये सकर फैलाई ॥१॥
स्वाति बुदकी सीहीरका, पावे सीप सबाद।
रस पकघा मुकता भया ताते पावे जगत माहसाद ॥२॥
राम ऐसी औषधि भया, मर्ष सजीवनी आप।
ताके सुख फिमर्ते माहारा भया साधु जाये जगत दुखताप ॥३॥
ए महावेत्ता ब्रह्मरस भये मनसा वाचा काया।
अथा! सोहि इकार सृ जगत पारयत आमा ॥४॥
अथा! जीव की हानि ए, जे माम बडाई चाहृ।
जिन हुं आप पहेचानीआ सो सहेजहि सहेज समाय ॥५॥
भय भ्रांति सज्या अथा! स्तुति निंदा जीवधर्म।
जा पटते ए षष भये सोहि रामपद पर्म ॥६॥

★

अथ एक साल अंग

जगत कहो जगदीश कहो माया कहो कोइ काल ।
सखा ! मते विज्ञान के, सब चिद्रूप एक साल ॥१॥
सत् त्रेता द्वापर, कलि चार न्यारे चाल ।
सखा ! मते विज्ञान के राम रमत एकसाल ॥२॥
उत्तम मध्यम अधमाधम गौ ब्राह्मण चंडाल ।
सखा ! पारस के मते, धात धात एकसाल ॥३॥
मठ, मरघाट, बनारसी दम्पति गृह, दलाल ।
सखा ! मते आकाश के, शुद्ध अशुद्ध एकसाल ॥४॥
आठम, चौदस एकादशी नाहिं गणत देशकाल ।
सखा ! मते ज्यु मृत्यु के मरत सिमि एकसाल ॥५॥
माणक, मोती हेम घट, उत्तम मध्यम निर्माल ।
सखा ! अगनके मते त्याग जोग एकसाल ॥६॥
वन दवानल हेमगिरि पाट औघट आसमाल ।
सखा ! पवन के मते सब अवनि एकसाल ॥७॥
घट पट दीप दिन रैन की, ग्रीषम ऋतु शीतकाल ।
सखा ! मते ज्युं अर्क के, सकल ऋतु एकसाल ॥८॥
नील पीत मरकत मणि श्वेत मिश्र और लाल ।
सखा ! स्फटिक के मते सर्वगता एक साल ॥९॥
रिपु हितकारी सबको रहे पट घपामा बाम ।
सखा ! हुताशन के मते भक्ष करत एकसाल ॥१०॥

अथ कुमति अंग

हरिजन के मांहे अधा ! बुरा न भासत कोय ।
ज्यूं बालक पकड़त अग्नि कूं बरजे स्वभाव साय ॥ १ ॥
हरिजन सब माने कहू कुमन संत एकाद ।
ज्यूं मन गरज तन हेत कू विष एक मरजाद ॥ २ ॥
कुबुद्धि मानत नहीं अधा ! सद्गुरु का उपकार ।
दूध पाया ज्यूं नाग मुख सो होय हलाहल जहर ॥ ३ ॥
कुबुद्धि भला सीखे सद्गुरु केरे संग ।
ज्यूं मूंग पकाया पंगसल सा होता जावे तंग ॥ ४ ॥
कुबुद्धि महिमा ना सहे सद्गुरु का उपदेश ।
ज्यूं मुवा भी दूध देखता पाहूंस के भेस ॥ ५ ॥
न्हाना के धन मन मरे मरा मामो ये यात ।
ज्यूं बाज न छाड़त देखता भूख पखावें साथ ॥ ६ ॥
कुबुद्धि की मति ना फिरे जो सत्संग में सब राय ।
अधा ! पंथ का मण्ड ज्यूं पीड़त नहीं बन्धाय ॥ ७ ॥
तन पातक है नास करि पण अधा ! न पावन मन ।
होय पीवता इन्द्रफल कड़वा होत दिन दिन ॥ ८ ॥
कुबुद्धि काढ़ा सर का सत्संग मिसरी मिलाय ।
पे मरे के उठ चले पण मौसत नहीं स्वभाय ॥ ९ ॥
कुबुद्धि पीवत नागदा मग सम दुख पात्र ।
निरदोष नर भोगत जो कुण्डा होय गात्र ॥१०॥
कुबुद्धि संगम काम का सत्य न पावे का पाप ।
परो पड़ो आशा रहे पूरा न हास निभाव ॥ ११ ॥
सागो लाड़ा निरख कहे कुबुद्धि सुबुद्धि दय ।
सुबुद्धि सर्प ऊपर रहे कुबुद्धि पाद हि धोय ॥ १२ ॥

सुबुद्धि मानत है अखा ! सारा गुरु उपदेश।
कुबुद्धि कहे समजे नहीं दोनु न्यारा वेश ॥ १३ ॥
एक पेड में उपजे जसा कांटा घोर।
त्युं एक गुरु के शिष्य अखा ! कोई गुण ग्राही गुण चोर ॥ १४ ॥
लक्षण विन साफा सही सूखा न भावत घाट।
गुरुमुखी भल नीपजे ना तो बारघाट ॥ १५ ॥
कुमति जीव समरे नहीं साच बात की बात।
कुमति एतना भी करे बिनु हरि कु मारो लात ॥ १६ ॥
कुमति समर्या गेवतें ज्युं सुमति समर्या गेव।
फर फार ह्वावे अखा ! हा लगे किरतार कु एव ॥ १७ ॥
चार चडाल कुमति नहीं सो तो है रोजगार।
कुमति का आचरण अखा ! सो मन ही का व्यापार ॥ १८ ॥
खडग समार्या लोह का लोह न काटे अग।
मोह की मूर्ति मारसे तो भी करे अग भंग ॥ १९ ॥
कुमति का मन कठन है कुल फला ही जात।
ज्युं बादल छाया दिन भला उजरी लागी रात ॥ २० ॥
दैवो असुरी सृष्ट नहीं जात भात का काम।
ज्यु सरासर जगत भला बुरा चार का नाम ॥ २१ ॥
कुबुद्धि पंडित भी बुरा अपढ भला बुद्धि शुद्ध।
ज्यु पत्थ्या डुबावे बापरी तारे तुंबा म्हों मध ॥ २२ ॥
उजवल अपढा कुमति सुमति भला होय।
ज्युं उजला सामल प्राणहर कालो मणि झहेर खाय ॥ २३ ॥
सुमति कुम होणा भला कुमति बूरा कुमीन।
सुगंध कस्तुरी नीच कुल दुगंध यण के मीन ॥ २४ ॥
कुमति अधिकारी बूरा सुमति गराब ताहे देव।
बिछु ठाररोआ पानगर ग्राम हरे सत गव ॥ २५ ॥
कुमति हाय 'सहोदरा सो हिन में करे कुहेन।
ज्युं नाथ देय उपालभें अंने मुगु नैन ॥ २६ ॥
कुमति धनवना सोन का न होय मनोहर घस।
पक्या रहेणा निशदिना मांडो करे कलेस ॥ २७ ॥

कुमति बोम सहेज में महोत को करे अकाज।
ज्युं धड़कन्त धामो पंसोझौ सुपते बंदूक बयाज ॥२८॥
कुमति कु काइ शिष्य करे वा गुरु कुं करे खराब।
ज्युं मनि अगी किया साहु कु सो पीटाणा ताप ॥२९॥
कुमति माया कारण कछु अपणा रूप दिखाय।
ज्युं उलूक का बोलणा हुकमी फिकर कराय ॥३०॥
कुमति दूजा कर पसा संग ते समरत नाहि।
तर्पा न आवे ताप कु सदा पवत मन मांहि ॥३१॥
कछुआ कुमति एक गत भरत धुरम् होठ।
पानी में पच्या रहे करडा होय पेट पीठ ॥३२॥
कुमति माया सग में वो सारा बिगाड़्या पंथ।
धनिश्वर दुष्ट प देश पर त्यां बस्ती न रहे मध ॥३३॥
जब मोसण फूर्मा बन में तब पासम की जड़ जाय।
दर्जन दुनिया सबन को, कुमति रहया पसाई ॥३४॥
बिछुआ सांप उरजण भयी सो दुख देन को काज।
ताहु दूर ते परजपा मया। संग करो त्याज्य ॥३५॥

१०१

अथ आग्रस अंग

गहूं पयो वासि अडे इघु जड स्यम कास।
कनसी मद सींगि चडे स्यम राम चडे पोता पास ॥१॥
असमाध्य-सी वात ए जे कह्यो त्रण दृष्टांत।
बीजो माखी थोम थो जाणे तो जो ए वेदान्त ॥२॥
आम पणूं पिंडे उपजे पिंड पडमें ते जाय।
ते पिंड मुके पाकी परेशुं तो आत्मा परगट थाय ॥३॥

❋

अथ विदेह अंग

ए तो बिदेही चित्तमां देह को किया अभाव ।
खेलत बिचरत देखीए होय ज्युं का त्युं सभाव ॥१॥
जड के बहाने है अजब मत कोई भूलो मर्म ।
जड दृष्टे जड भासीए है चेतन नहीं धर्म ॥२॥
धर्म नाम चेतन धर्मी और चेतन के सब काम ।
ए ब्रह्मवेत्ता आप होत है पण अखा ! रमे सब राम ॥३॥
राम ठाई रमे अखा ! ताको चीह्नीये कोय ।
सो सद्गुरु का बालका जे समष्य जमे होय ॥४॥
संबकठो को चैन है जो देख चित्त के नैन ।
ए सद्गुरु की मौज, अखा ! देहदर्शी देखे चैन ॥५॥
देहदर्शी दुनिया अखा ! और आतमदर्शी कोय ।
जाको नेन सद्गुरु दिए, ताका आतमदर्शन होय ॥६॥
आतमदर्शन बिन अखा ! द्वैत न छोडे ध्यान ।
जो हरिहर ब्रह्मा हारिए ताथे बढता माय हमाल ॥७॥
जो ब्रह्म समानो जे थाके, तो सांसा न रहे लेश ।
अखा ! सो तो खटक न नीसरे जो हरिहर करे उपदेश ॥८॥
अखा ! जिन सद्गुरु मिल्या सो ठर्या निर्दोष ।
पण जीव गुरु जाको मिल्या सो ताको पायो पहाण ॥९॥
अखा ! कुबुद्धि जीवको नहीं चेतन पर प्रतीत ।
फिरी फिरी ताके देह को, ए मदमति की रीत ॥१०॥
अखा ! चंटी गुरु को, हरिहर भज ताई दाप ।
सद्गुरु नेन निमल करे तो चोर चढाता जोत ॥११॥
हरि गुरु संत को सेवते निरमल होवे नेत्र ।
नहीं तो जीव रहया, अखा ! ज्यों चढया अपारा खेत ॥१२॥

इन्द्रजीत उलपे, सखा ! न उदयो आतम सूर ।
मापोपूं उमुयते, मर्मे पढीओ मूर ॥१३॥
सखा ! उलट भेद है, सनज्या तो है सहेल ।
कपटया तो उलझन पड़े गहेन न छाड़े गेल ॥१४॥
सखा ! मरण का मैं नहीं और जीवण का भी नांहि ।
मरण जीवन तो मौज हैं चेतण सागर मांहि ॥१५॥
सेहेज सहेज बनी सखा ! भूला माया डोर ।
चटकी खप्पर खपगई, फोड़ पेंडा पाया और ॥१६॥
जिस पेंड चींटी ना चले, मीन उड़ न सके विहंग ।
सो पेंडे गुरु से चल्या, होकर एक ही अंग ॥१७॥
सबे चौथा धाम है जहाँ रज तज भी न समाय ।
ता मध्य सुरी जोड़ाइए, जा सदगुरु से जाय ॥१८॥
पग पेंडे पिया ना मिले, जो जावे पृथ्वी पार ।
सुरत चल ता सांई है अमखल्यो जोगा ! न जाननहार ॥१९॥

*

अथ नैराश अंग

आशा अरनी काटके, निज बोध निरधार।
दया ! सो पूरण काम नर, पाय रहो संसार ॥१॥
प्रभु पाया तब जानिए, जब निर्भय भया निरास।
इहलोक परलोक की, आशा तोलु दास ॥२॥
तन मन के सुख कारणे, पराधीन सब लोग।
तन-मन सौंप्या कामवर, तब हरि पाया योग ॥३॥
आशा मृगजल आपको, जे चैतन्य चिद्रूप।
दया ! चढ़त ज्यूं केहरी छाया देखिये कूप ॥४॥
दया ! सद्गुरु सेवना ठानी, पूरण निरास।
और भले संसार में बंधि माया के पास ॥५॥
दया ! एक सद्गुरु बिना सँग सकल उपाध।
परतख मात्र बिटबना, जड़ता तेरी ब्याध ॥६॥
ज्यूं नटनीरस्सा अंगकु साधे सीसा पनिहार।
सकल अंग सयम कीया, होत प्राण परिहार ॥७॥
समझे से दौलत बहु धन राम्या कोटि में एक।
मन अपने निमसा, होय दरशन दया छक ॥८॥
ऐसे बहाव मीस, दया ! ज्यू हाथी करे भूमि माय।
आग बुझ्या मंदर मग हो करी अभुक्त होग ॥९॥
बाह्याभ्यंतर निर्मला नेण बेण रस रूप।
एसा नर नारायणा जाने नहीं सहँयूप ॥१०॥
पूराकु है उपमा पूरापु है धीव।
और सो राजा रंक है, एवं मीच की मीच ॥११॥
पड़े गये पुनि रमोप तें, अहम्माय मा भाष।
आमिस रोग मिटे तबे, जब धम समीप मिटाय ॥१२॥

कथनी आवे ज्ञान की कोई ज्ञानी जन के संग।
पण अहम्व्याधि मीटे नहीं, भीतर वासना लिंग ॥१३॥
अगला जन को सीख दे, पण मन परमादे माहिं।
ज्युं दीप देखावत और का, पण तले अंधारा मांहि ॥१४॥
उपनिषद के अर्थ करे, श्लोक सुभाषितसार।
रसना निर्मल देखीए, पण अंतर घोर अधार ॥१५॥
जैसे फटक की काठडी भीतर भरी बहु रिध।
दूर सें दखी भया ! पण भाय न पेठा मध्य ॥१६॥
पूरण पद पहोंच्या बिना, अखा ! सत्र उरली बात।
आयुध दपडे कहा सडे ? शूर बिना साक्षात ! ॥१७॥
पूरण पद एसा अखा ! अग लिंग नयनीन।
आप नहीं और कहा कहे ? पूरा पद की चीहीन ॥१८॥
बिन पडपा कोइ मीरज्यो, के पडपा मीपज्या कोय।
दाप दरशन जब गया तब पूरण पद होय ॥१९॥
नैराशी ऐसा भया ! जैसे सूत निरास।
अरोगी सबको करे, भासी माया दास ॥२०॥
आया से बोलत नहीं, और न पापत आप।
सोही नर नीपज्या अखा ! जे देखे अपना आप ॥२१॥
गुरु ज्ञानी काइक अखा ! महान सो ताको पद।
चित्र सिंह सारे मखा ! साचे सिंह की बद ॥२२॥

*

अथ उदय कैवल्य अंग

भया ! बिचारी देखते सृष्ट सकल है राम।
ज्यूं सागुं घात अननो मध्ये पण यारी कीया आवे काम ॥ १ ॥
ज्ञान उन्य कवल्य भया । मा सो सुख-दुख पात्र।
ज्यूं मर उभ्या और जागता सरखा है ज्ञि राम ॥ २ ॥
ज्ञान उदय कवल्य, असा ! ज्यूं मोह तावा घट पात।
पारस परस्या हेम है ना तो काई खात ॥ ३ ॥
ज्ञान उदय कैवल्य भया ! ज्यूं भृंगी होत कीट।
भूचर से खेचर भया नां तो मोमी पीट ॥ ४ ॥
कमसो चगत सहराइए धनुप करत जग जान।
ज्ञान उदय कैवल्य भया ! सकल दोष जल जाइ।
ज्यूं रामस्नेही मुख फीण तें जगत को ज्हेर गमाइ ॥ ६ ॥
ज्ञान उदय कवल्य भया ! ज्यू बिना सूर निरय रात।
यात आशा नहीं कछु मन का सदा पसटात ॥ ७ ॥
नाम उन्र कवल्य भया । ज्यूं हीरा बिन ज्योत।
पाथर पसटघा जावे था सो ही भया उद त ॥ ८ ॥
ज्ञान उन्य कवल्य भया ! ता बिन सब सगार।
ज्यूं दर्शन पर बिहार सिरदा ! सा रहया मिमसदा हार ॥ ९ ॥
ज्ञान उदय कवल्य भया ! ज्यूं पूनम का चंद।
पाया घाया मेरवे तब भया सारा द्वन्द ॥ १० ॥
ज्ञान उन्य कवल्य भया ! ज्यूं सागर का नीर।
गगन मिल्या मीठा भया ना ता खारी ई हीर ॥ ११ ॥
ज्ञान उन्य कवल्य भया ! इरर निमस भव मांह।
कनक रणु मांय म पड़ता था जन दुख पाय ॥ १२ ॥

ज्ञान उदय कैवल्य भया ! ता बिन कासका अहार।
और कृत्य अमृत हूवणा प्राण हाण सरार ॥ १३ ॥
ज्ञान उदय कैवल्य भया ! रिधसिध न्यारी बात।
मोक्ष हूँ सेवा बड़ा आठु दिशा बहात ॥ १४ ॥
ज्ञान उदय कैवल्य भया ! अंग लिंग न्यारा सब।
ज्यूं सकल मेन में पूर है पण आप न्यारा जगपल ॥ १५ ॥

अथ कोप को अंग

भजा ! जो चाहे राम कु तो तु टम ना मत चूक ।
सा दुजा तारे तरे जब गम गया विष सूक ॥ १ ॥
हरि मोलन काहु न सड़ा तीन वात की हार ।
मनसा वाचा कर्मणा जान रहया किरतार ॥ २ ॥
हरि तो सन्त है हि है कहाँ जाय ? को ठौर ?
आपास नहीं मगु भी भजा । आप सदा होत भीर ॥ ३ ॥
पण मोंधा सबसे हो गया बिस पड़या हुमान ।
अहंता टारन कु भजा भक्ति भजन परान ।
मोह मूल मीठा भया जब इच्या नाम का नाग ॥ ५ ॥
जाग्रत अवस्था राम है स्वप्न अवस्था जीव ।
अहंता निर घोरी भजा ! तब जाग्रत राम सन्त ॥ ६ ॥
दूजा पावणा दाहमा पण आपा पावणा सहेल ।
अंग तो गोरा है भजा ! पण उडर्या चाहीए मस ॥ ७ ॥
राम बिना रीता नहीं सुई स्वभाव तें ठौर ।
बता ए उपटो भयो वे आपा मान्या भोर ॥ ८ ॥
दुग्न काई ना लगे कुडाग्र काई थाप ।
भजा ! अहंता दूसरो ताकु काई थाप ॥ ९ ॥
जथा तथा राम है और न दूजा कोप ।
सटका करते सट गया पोव कर्या पो साप ॥ १० ॥
आप अब मध्य राम है तो किप करुं कहु और ?
भजा ! इतनो समज म तब भागे सब दार ॥ ११ ॥
राम जान बिन भजा ! करेगा कौर उपाय ।
गुरु मादर भजवे भ्रम भया परतत आप गमाय ॥ १२ ॥

*

अथ भजन अंग

राम मिल तब जानीए जब देखे सर्वावास।
ज्यहाँ जैसा तैसा अखा। पोते प्रभु प्रकाश॥ १॥
राम बाणी सब वंदणा नहीं निंदणे ठौर।
सब मूरत है राम की अखा। न जाने और॥ २॥
लक्ष चोरासी जात है बूरा भला बहु भेद।
बहु फेल किरतार है अखा। करे मत खेद॥ ३॥
हाजर खेलया हर घड़ी मत चूके तुं दाव।
मेल ससामली राम की मुश्किल टिकना पाँव॥ ४॥
भमणा दमणा देह का जोग जाग सब सहेल।
पण कठण हाजरी राम की हाथ न आवे फेल॥ ५॥
सहेलो मूरति सेवणा मन मौज की सेव।
मन मारेमें पूजीए अखा। जे चेतन देव॥ ६॥
मन मौज की सेवतें, मन का पूजन होय।
मनातीत महाराज है, त्यहाँ तन-मन न रहे दोय॥ ७॥
बहु मुख बोले बोल जे, सब पचणा दिल माँह।
नराश पण की चाकरी, कछु भी चाहे नाँहि॥ ८॥
कही जागी कहीं भोगीया, कहीं दाना, नादान।
चरित सकल है एक के अखा। न देखया आन॥ ९॥
जब पहिछाने में अपा। पहेन चस साहाग।
नित्य भोग होवे नाथ सुं, ताके माथे भाग॥ १०॥

*

अथ फोम को अंग

अखा ! जो चाहे राम कु तो तु टस जा मत मूक।
सा तुंबा तारे तरे जब गर्भ गया बिच सूक ॥ १ ॥
हरि मीलन काहु न यद्या तीन बात की हार।
मनसा वाचा कर्मणा आप रह्या किरतार ॥ २ ॥
हरि तो सदा है हि है कहाँ जाय ? को ठौर ?
अखा ! ए अंतर पड्या आप लह्या होत और ॥ ३ ॥
आयास नहीं प्रभु मी अखा ! राम मीलन आसान।
पग मोंपा सबसे हो गया बिच पड्या हुमान ॥ ४ ॥
अहंता टारन कु अखा भक्ति भजन वराग।
सोंब सूग मीठा भया जब हस्या शाम का माग ॥ ५ ॥
जाग्रत अवस्था राम है स्वप्न अवस्था जीव।
अहंता निंद्र छांडो अखा ! तब जाग्रत राम सव्व ॥ ६ ॥
दूजा पावणा दोहला पण माया पावणा सहेल।
अंग तो गोरा है अखा ! पण उतर्या चाहीए मेल ॥ ७ ॥
राम बिना रीता नहीं गुई स्वभाव से ठौर।
असा ए उनटी भयी जे आपा माग्या और ॥ ८ ॥
कुग्न्न काई ना लगे कुडम्र काई थाप।
अखा ! अहंता दूसटी लागु काई थाप ॥ ९ ॥
जैसा था राम है और न दूजा कोय।
सटका परते सट गया जीव कर्या वो साय ॥ १० ॥
आद अंत मध्य राम है तो बिच क्यूं कहूं और ?
अखा ! ईतनो समज से तब भागे सब दोर ॥ ११ ॥
राम जान बिन अखा ! करेगा और उपाय।
ज्युं मादक भयते भ्रम भया परबस आप ममाय ॥ १२ ॥

*

अथ भजन अंग

राम मिले तब जाणीए जब देख सर्वांवास।
ज्यहाँ जैसा तैसा अखा। पोते प्रभु प्रकास ॥ १ ॥
राम जाणो सब वंदणा नहीं निंदण ठौर।
सब मूरत है राम की अखा। न जाने और ॥ २ ॥
लक्ष चोरासी जात है धूरा भला बहु भेद।
बहु फेन विस्तार है अखा। करे मत खेद ॥ ३ ॥
हाजर रहेणा हर घड़ी मत चूके तुं दाव।
गेल सगासुसी राम की मुश्किल टिकना पांव ॥ ४ ॥
भमणा दमणा देह का जोग जाग सब सहेल।
पण कठण हाजरी राम की हाथ न आवे फेल ॥ ५ ॥
सहेलां मूरति सेवणा मन गोम की सेव।
मन मारेथें पूजीए अखा। जे चेमन देव ॥ ६ ॥
मन मोज की सेवतें, मन का पूजन होय।
मनातीत महाराज है, त्यहाँ तन मन न रहे कोय ॥ ७ ॥
बहु मुख बोले बोल वे, सब पचणा दिल माँह।
मराध पण की चाकरी कछु की चाहे नाँहि ॥ ८ ॥
कहीं जोगी कहीं मानीमा कहीं दाना नादान।
चरित सकल है एक के अखा। न देखणा आन ॥ ९ ॥
कंथ पहिछाने नें अखा। पहेन चस साहाग।
नित्य भोग होवे नाथ सुं ताके माथे भाग ॥ १० ॥

आवेस अंग

कोई को माग्या भूत ज्यों त्यों मो को माग्या राम।
सुध भया साइयाँ सबे रह्या भया का नाम ॥ १ ॥
आठो पोहार अग माहै है पमक न छोड़त पास।
भसा एतने ते रह्या साइयाँ सांत उदास ॥ २ ॥
बिसरूँ भोर होवे कछू कछू मेरे हाथ कराई।
हुवा हाथ आवे नहीं मेक गेबी राई ॥ ३ ॥
मरत मरत बांधो परे टूटे लोह की पात।
अब अखा मा मीबना घ सूं मिस गई घात ॥ ४ ॥
तारो न आवे मीरम मुखा न आवे बोल।
धैसो अमाको योसणो कोई ओंग करो कि अमोल ॥ ५ ॥
बानी कोई समसत नहीं भसा देस की बाग्य।
समसत उवका आइया भे धमसत वन आन ॥ ६ ॥